सम-सामयिक

घटना चक्र

अतिरिक्तांक

Website : http//www.ssgcp.com/
https://www.facebook.com/ssgcpl
https://www.facebook.com/ssgc.gs.qa
https://plus.google.com./+Ssgcpssgcp
https://twitter.com/SamsamyikGhatna

2019

उ.प्र., म.प्र., उत्तराखण्ड, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखण्ड तथा राजस्थान की

सिविल जज

ए.पी.ओ. एवं एच.जे.एस.

परीक्षाओं हेतु उपयोगी

प्रिलिम्स प्वाइंटर

अध्ययन सामग्री एवं प्रश्नकोश



दण्ड प्रक्रिया संहिता

(Criminal Procedure Code)

विषय सूची

1.	प्रारम्भिक दण्ड न्यायालयों एवं कार्यालयों का गठन (धारा 1-5)	3 - 7
2.	दण्ड न्यायालयों एवं कार्यालयों का गठन (धारा 6-25 क)	7 - 14
3.	न्यायालयों की शक्ति (धारा 26-35)	15 - 18
4.	व्यक्तियों की गिरफ्तारी (धारा 41-60 क)	18 - 29
5.	हाजिर होने एवं चीजें पेश करने को विवश करने के लिए आदेशिकाएं (धारा 61-105)	29 - 44
6.	परिशान्ति कायम रखने के लिए और सदाचार के लिए प्रतिभूति (धारा 106-124)	44 - 47
7.	पत्नी, सन्तान एवं माता-पिता के भरण-पोषण के लिए आदेश (धारा 125-128)	47 - 54
8.	लोक व्यवस्था एवं प्रशान्ति बनाये रखना (धारा 29-148)	54 - 61
9.	पुलिस को इत्तिला और उनकी अन्वेषण करने की शक्तियां (धारा 154-176)	61 - 73
10.	जांचों और विचारणों में दण्ड न्यायालयों की अधिकारिता (धारा 177-189)	73 - 76
11.	कार्यवाहियां शुरू करने के लिए अपेक्षित शर्तें (धारा 190-199)	76 - 80
12.	मजिस्ट्रेट से परिवाद (धारा 200-203)	80 - 82
13.	मजिस्ट्रेटों के समक्ष कार्यवाही का प्रारम्भ किया जाना (धारा 204-210)	82 - 84
14.	आरोप (धारा 211-224)	84 - 90
15.	सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण (धारा 225-237)	91 - 93
16.	मजिस्ट्रेटों द्वारा वारण्ट-मामलों का विचारण (धारा 238-250)	94 - 97
17.	मजिस्ट्रेट द्वारा समन-मामलों का विचारण (धारा 251-259)	97 - 99
18.	संक्षिप्त विचारण (धारा 260-265)	99 - 101
19.	अभिवचन का संपणन (सौदेबाजी) (धारा 265-क से 265-ठ)	101 - 103
20.	कारागारों में परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्तियों की हाजिरी (धारा 266-271)	103 - 105
21.	जांचों और विचारणों में साक्ष्य (धारा 272-299)	105 - 109
22.	जांचों तथा विचारणों के बारे में साधारण उपबन्ध (धारा 300-327)	110 - 119
23.	विकृतचित अभियुक्त व्यक्तियों के बारे उपबन्ध (धारा 328-339)	119 - 122
24.	न्याय प्रशासन पर प्रभाव डालने वाले अपराधों के बारे में उपबंध (धारा 340-352)	122 - 125
25.	निर्णय (धारा 353-365)	125 - 131
26.	मृत्यु दण्डादेशों को पुष्टि के लिए प्रस्तुत किया जाना (धारा 366-371)	131 - 133
27.	अपीलें (धारा 372-394)	133 - 141
28.	निर्देश और पुनरीक्षण (धारा 395-405)	141 - 144
29.	आपराधिक मामलों का अन्तरण (धारा 406-412)	145 - 147
30.	दण्डादेशों का निष्पादन, निलंबन, परिहार और लघुकरण (धारा 413-435)	148 - 152
31.	जमानत और बन्धपत्रों के बारे में उपबन्ध (धारा 436-450)	152 - 161
32.	संपत्ति का व्ययन (धारा 451-459)	161 - 162
33.	अनियमित कार्यवाहियां (धारा 460-466)	163 - 166
34.	कुछ अपराधों का संज्ञान करने केलिए परिसीमा (धारा 467-473)	166 - 168
35.	प्रकीर्ण (धारा 474-484)	168 - 170
36.	दण्ड प्रक्रिया संहिता के विविध प्रावधानों पर निर्णीत महत्वपूर्ण वाद	171 - 176

अनुक्रमणिका

1. प्रारम्भिक दण्ड न्यायालयों एवं कार्यालयों का गठन (धारा 1-5)
2. न्यायालयों की शक्ति (धारा 1 से 25क एवं धारा 26-35)
3. व्यक्तियों की गिरफ्तारी (धारा 41-60 क)
4. हाजिर होने एवं चीजें पेश करने को विवश करने के लिए आदेशिकायें (धारा 61-105)
5. परिशान्ति कायम रखने के लिए और सदाचार के लिए प्रतिभूति (धारा 106-124)
6. पत्नी, सन्तान एवं माता-पिता के भरण-पोषण के लिए आदेश (धारा 125-128)
7. लोक व्यवस्था एवं प्रशान्ति बनाये रखना (धारा 29-148)
8. पुलिस को इत्तिला और उनकी अन्वेषण करने की शक्तियां (धारा 154-176)
9. जांचों और विचारणों में दण्ड न्यायालयों की अधिकारिता (धारा 177-189)
10. कार्यवाहियां शुरू करने के लिए अपेक्षित शर्तें (धारा 190-199)
11. मजिस्ट्रेट से परिवाद (धारा 200-203)
12. मजिस्ट्रेटों के समक्ष कार्यवाही का प्रारम्भ किया जाना (धारा 204-210)
13. आरोप (धारा-211-224)
14. सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण (धारा-225-237)
15. मजिस्ट्रेटों द्वारा वारण्ट-मामलों का विचारण (धारा 238-250)
16. मजिस्ट्रेट द्वारा समन-मामलों का विचारण (धारा 251-259)
17. अभिवचन का संपणन (सौदेबाजी) (धारा-265-क 265-ठ)
18. कारागारों में परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्तियों की हाजिरी (धारा 266-271)
19. जांचों और विचारणों में साक्ष्य (धारा-272-299)
20. जांचों तथा विचारणों के बारे में साधारण उपबन्ध (धारा 300-327)
21. विकृतचित अभियुक्त व्यक्तियों के बारे उपबन्ध (धारा 328-339)
22. न्याय प्रशासन पर प्रभाव डालने वाले अपराधों के बारे में उपबंध (धारा-340-352)
23. निर्णय (धारा 353-365)
24. मृत्यु दण्डादेशों को पुष्टि के लिए प्रस्तुत किया जाना (धारा 366-371)
25. अपीलें (धारा 372-394)
26. निर्देश और पुनरीक्षण (धारा-395-405)
27. आपराधिक मामलों का अन्तरण (धारा-406-412)
28. दण्डादेशों का निष्पादन, निलंबन, परिहार और लघुकरण (धारा 413-435)
29. जमानत और बन्धपत्रों के बारे में उपबन्ध (धारा 436-450)
30. संपत्ति का व्ययन (धारा-451-459)
31. अनियमित कार्यवाहियां (धारा 460-466)
32. कुछ अपराधों का संज्ञान करने केलिए परिसीमा (धारा 467-473)
33. प्रकीर्ण (धारा-474-484)
34. दण्ड प्रक्रिया संहिता से पूछे गए विविध प्रश्न
35. दण्ड प्रक्रिया संहिता के विविध प्रावधानों पर निर्णीत महत्वपूर्णवाद

प्रारम्भिक (Preliminary)

संक्षिप्त परिचय एवं परिभाषाएं
(A brief introduction and definitions)

वर्तमान दण्ड प्रक्रिया संहिता का प्राचीनतम रूप उच्चतम न्यायालय दण्ड प्रक्रिया संहिता अधिनियम, 1852 के रूप में संघटित हुआ, जिसे तत्पश्चात् उच्च न्यायालय दण्ड प्रक्रिया संहिता अधिनियम, 1865 के रूप में प्रतिस्थापित किया गया। ब्रिटिश भारत में प्रान्तों के लिए सर्व प्रथम दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1861 लागू किया गया, जिसे वर्ष 1882 में और बाद में 1898 में नये संहिता के रूप में पुनः प्रतिस्थापित किया गया।

भारत में पूर्व प्रवर्तित 1898 की दण्ड प्रक्रिया संहिता को निरसित करके वर्तमान दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973, 1अप्रैल, 1974 ई. से लागू की गयी। इस संहिता (1974 का अधिनियम संख्या 2) का विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य पर नहीं है और संहिता के अध्याय 8 (धारा 106 से 124, परिशान्ति बनाये रखने और सदाचार के लिए प्रतिभूति), अध्याय 10 (धारा 129 से 148, से 153 पुलिस के निवारक कार्य) के उपबन्ध ही नागालैण्ड राज्य और असम के जनजाति क्षेत्रों में लागू है। संहिता के शेष उपबन्धों को नागालैण्ड राज्य एवं असम के जनजाति क्षेत्रों में लागू करने के लिए सम्बन्धित राज्य सरकारों द्वारा अधिसूचना जारी किया जाना अपेक्षित है।

विषय वस्तु (Subject matter)

कुल 37 अध्यायों में वर्गीकृत इस संहिता में 484 धाराएं तथा दो अनुसूचियां हैं। प्रथम अनुसूची में अपराधों का वर्गीकरण है, जिसके अन्तर्गत अपराध के लिए निर्दिष्ट दण्ड, अपराध की प्रकृति (संज्ञेय/असंज्ञेय), जमानतीय या अजमानतीय तथा उक्त अपराध किस न्यायालय द्वारा विचारणीय है, का वर्णन किया गया है। द्वितीय अनुसूची में अपराधों की प्रकृति के अनुसार सम्बन्धित पक्षों को जारी किये जाने वाले **समन** (Summon), **वारण्ट** (Warrant)एवं **आदेश** (Order) के प्रारूप दिये गये हैं।

वर्तमान संहिता की प्रमुख विशेषतायें (Main Characteristics of present Cr. P.C.)

1. इसमें पूर्व विधियों की अपेक्षा प्रचुर मानव मूल्य अन्तर्ग्रस्त है।
2. नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों के अनुसार अभियुक्त के ऋजु-विचारण (Fair trial) का उपबन्ध किया गया है।
3. इसमें न्यायपालिका का कार्यपालिका से पृथक्करण है।
4. विचारण के दौरान न्यायिक अभिरक्षा में बीते समय को सजा में समायोजित किये जाने का प्रावधान है।
5. कुछ अपराधों में त्वरित न्याय प्रदान करने के लिए, अभियोजन के लिए कालावधि का निर्धारण किया गया है।
6. तृतीय श्रेणी के मजिस्ट्रेट का पद समाप्त कर दिया गया है।
7. जूरी विचारण की समाप्ति।
8. वादकालीन आदेशों के विरुद्ध **पुनरीक्षण** (Revision) का निषेध तथा सेशन न्यायाधीश को उच्च न्यायालय की भांति पुनरीक्षण की शक्ति प्रदान की गयी है।
9. मुकदमों के स्थगन कराने के प्रार्थना पत्र पर अन्य पक्षों को खर्चा दिलाये जाने की व्यवस्था एवं पंजीकृत डाक द्वारा भी समन भेजने का उपबन्ध किया गया है।
10. तुच्छ मामले के अभियुक्त द्वारा अपराध स्वीकृति की स्थिति में न्यायालय में उसकी व्यक्तिगत उपस्थिति के स्थान पर डाक द्वारा जुर्माना की धनराशि भेजने का प्रावधान।
11. निर्धन अभियुक्तों को प्रत्येक सेशन विचारण में राज्य की ओर से विधिक सहायता दिये जाने का उपबन्ध।
12. अग्रिम जमानत का प्रावधान (यह उत्तर प्रदेश राज्य में वर्ष 1976 ई. से निरसित है)

संशोधन (Amendment)–वर्तमान संहिता में संशोधन वर्ष 1978, 1980, 1983, 1988, 1990, 1993, 1999, 2005, 2006, 2008, 2010, 2013 तथा 2018 में किए गए। अन्तिम संशोधन 2018 को 21 अप्रैल, 2018 से प्रभावी बनाया गया है।

संहिता का विस्तार (Extension of code)–भारत राज्य क्षेत्र के अतिरिक्त संहिता भारतीय राज्य क्षेत्र के ऊपरी आकाश क्षेत्र, भारत में पंजीकृत वायुयान, भारतीय सामुद्रिक क्षेत्र, सरकारी अथवा निजी भारतीय पोतों (Ships)एवं विदेशों में स्थित भारतीय मिशनों के भवनों पर भी विस्तृत हैं।

संहिता में वर्णित 'भारत' पद से वह भारत अभिप्रेत है, जो संहिता के अधिनियमित किये जाने की तिथि पर अस्तित्ववान था। चूंकि सिक्किम, संहिता के अधिनियमित की तिथि 1 अप्रैल 1974 ई. के पश्चात् (वर्ष 1975 ई. में) भारत संघ में सम्मिलित हुआ; अतः संहिता के भारत पद के अन्तर्गत सिक्किम समाविष्ट नहीं है, **सिक्किम राज्य बनाम ग्याल्यों शेरिंग तमांग,** के वाद में अभिनिर्णीत किया गया कि, 'एक औपचारिक विस्तार के बिना दण्ड प्रक्रिया संहिता का विस्तार, सिक्किम में नहीं किया जा सकता।'

संहिता का अध्याय 1, धारा 2 परिभाषा खण्ड से सम्बन्धित है, जिसमें निम्नलिखित शब्दों को परिभाषित किया गया है–

जमानतीय अपराध (Bailable offence)–इसे संहिता की धारा 2(a) में परिभाषित किया गया है। इसके अनुसार संहिता की प्रथम अनुसूची में उल्लिखित जमानतीय अपराध अथवा अन्य विधियों

के विरुद्ध किये गये ऐसे अपराध जिनके लिए तीन वर्ष से कम के कारावास का दण्ड था, मात्र जुर्माने के दण्ड का प्रावधान है, जमानतीय अपराध के अन्तर्गत आते हैं।

अजमानतीय अपराध (Non-bailable offence)–सामान्यतः मृत्यु दण्ड, आजीवन कारावास या तीन वर्ष एवं उससे अधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध, अजमानतीय अपराध होते हैं।

बिना वारण्ट के गिरफ्तार अथवा बन्दी बनाये गये जमानतीय अपराध के अभियुक्त का यह अधिकार है कि उसे जमानत पर छोड़ दिया जाये। अजमानतीय अपराध के अभियुक्त द्वारा जमानत की मांग अधिकार के रूप में नहीं की जा सकती उसे जमानत पर छोड़ना न्यायालय के विवेक पर निर्भर होता है।

मोतीराम बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (A.I.R. 1978, S.C.) में न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने संप्रेक्षित किया है कि, 'जमानत एक नियम है, तथा कारावास एक अपवाद।'

आरोप (Charge)–आरोप को **धारा 2(ख)** में परिभाषित किया गया है, जिसके अनुसार 'आरोप' के अन्तर्गत, जब आरोप में एक से अधिक शीर्ष हों, आरोप का कोई भी शीर्ष है।

स्वयं आरोप को संहिता में परिभाषित नहीं किया गया है। सामान्यतः आरोप किसी व्यक्ति के विरुद्ध किए गए विशिष्ट दोषारोपण का प्रतिपादन होता है जिसे कारित अपराध के बाद उसकी जांच के पश्चात् सूत्रबद्ध किया जाता है।

संज्ञेय अपराध (Cognizable offence)–संज्ञेय अपराध को संहिता की **धारा 2 (c)** में परिभाषित किया गया है जिसके अनुसार 'संज्ञेय अपराध, ऐसा अपराध है, जिसके लिए पुलिस अधिकारी प्रथम अनुसूची के अथवा तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अनुसार बिना वारण्ट के गिरफ्तार कर सकता है।

संज्ञेय मामला (Cognizable case)–ऐसा मामला है, जिसमें पुलिस अधिकारी बिना वारण्ट के गिरफ्तारी कर सकता है।

सामान्यतः किसी भी विधि के तहत तीन वर्ष या उससे अधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध, संज्ञेय अपराध के अन्तर्गत आते हैं। पुलिस अधिकारी विधिक कर्तव्य के रूप में संज्ञेय अपराध के मामले में, मजिस्ट्रेट के किसी आदेश एवं निर्देश के बिना मामले का अन्वेषण कर सकता है। संज्ञेय अपराध के मामलों को न्यायालय के समक्ष लाना राज्य एवं पुलिस अधिकारी का दायित्व है।

असंज्ञेय अपराध (Non-Cognizable offence)–संज्ञेय अपराध की परिभाषा संहिता की **धारा 2(*l*)** में दी गयी है। ऐसे अपराध जिनमें पुलिस अधिकारी को वारण्ट के बिना गिरफ्तारी का प्राधिकार नहीं होता है।

असंज्ञेय अपराध के मामले तीन वर्षों से कम अवधि के कारावास से दण्डनीय होते हैं। पुलिस अधिकारी किसी न्यायिक मजिस्ट्रेट के प्राधिकार के बिना असंज्ञेय मामले का अन्वेषण नहीं कर सकता। कोई न्यायिक मजिस्ट्रेट किसी, असंज्ञेय मामले का अन्वेषण पुलिस द्वारा कराया जाने को वांछनीय समझे तो वह ऐसा करने का आदेश दे सकता है, ऐसी स्थिति में अन्वेषण के सन्दर्भ में, पुलिस अधिकारी को वह प्रत्येक शक्ति प्राप्त होती है जो कि वह एक संज्ञेय अपराध की स्थिति में प्रयोग में लाता।

परिवाद (Complaint)–परिवाद को संहिता की **धारा 2(d)** में परिभाषित किया गया है। 'किसी ज्ञात अथवा अज्ञात व्यक्ति द्वारा कारित अपराध का मजिस्ट्रेट द्वारा कार्यवाही किये जाने की दृष्टि से, उससे मौखिक या लिखित रूप से किया गया अभिकथन परिवाद है, किन्तु पुलिस रिपोर्ट परिवाद के अन्तर्गत नहीं आती।

पुलिस रिपोर्ट कब परिवाद समझी जाती है?

किसी ऐसे मामले में, जो अन्वेषण के बाद किसी असंज्ञेय अपराध का किया जाना प्रकट करे, पुलिस अधिकारी द्वारा की गयी रिपोर्ट परिवाद एवं ऐसी रिपोर्ट करने वाला पुलिस अधिकारी परिवादी समझा जाता है। (**धारा 2(d)** का स्पष्टीकरण)।

संयुक्त परिवाद (Joint Complaint)–एक से अधिक व्यक्तियों द्वारा किया गया परिवाद, 'संयुक्त परिवाद' कहलाता है।

परिवादी (Complainant)–मजिस्ट्रेट से कार्यवाही का निवेदन करने वाला व्यक्ति परिवादी होता है, (**नगरपालिका जयपुर बनाम प्रभुनारायण, 1969 R.L.W.)** विभागीय कार्यवाही के लिए की गयी प्रार्थना, परिवाद नहीं होती।

परिवाद और प्रथम सूचना रिपोर्ट

परिवाद के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट से कार्यवाही का निवेदन किया जाता है, किन्तु प्रथम सूचना (इत्तिला) में मजिस्ट्रेट को मात्र अपराध घटित होने की सूचना दी जाती है, कोई निवेदन नहीं किया जाता। परिवाद किये जाने पर मजिस्ट्रेट को दण्ड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के अनुसार कार्यवाही किया जाना आवश्यक हो जाता है। किन्तु सूचना मिलने पर मजिस्ट्रेट अपने विवेकानुसार कार्यवाही कर सकता है या नहीं। सूचना के आधार पर कार्यवाही करने का अधिकार प्रथम एवं विशेष रूप से सशक्त किये गये द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट को है। सूचना के आधार पर कार्यवाही किये जाने पर अभियुक्त को मामले को अन्य मजिस्ट्रेट के यहां अन्तरित करवाने का अधिकार प्राप्त होता है।

पुलिस रिपोर्ट (Police Report)–संहिता की **धारा 2 (r)** के अनुसार, धारा 173 (2) के अधीन पुलिस अधिकारी द्वारा मजिस्ट्रेट को प्रेषित की गयी रिपोर्ट, पुलिस रिपोर्ट कहलाती है। अन्वेषण कार्य पूर्ण होने के पश्चात् पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी राज्य

सरकार द्वारा विहित प्रारूप में, पुलिस रिपोर्ट पर अपराध का संज्ञान करने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट को, एक रिपोर्ट प्रेषित करता है।

जांच (Inquiry)–संहिता की **धारा 2(g)** के अनुसार विचारण से भिन्न ऐसी प्रत्येक जांच जो मजिस्ट्रेट अथवा न्यायालय द्वारा की जाये।

संहिता में **'विचारण' (Trial)** शब्द को परिभाषित नहीं किया गया है, जब कोई मजिस्ट्रेट या न्यायालय किसी अपराध के अभियुक्त के दोषी या निर्दोष होने के विनिश्चय के लिए, जांच कार्य करता है, तो यह जांच **धारा 2(g)** के अन्तर्गत 'जांच' न होकर विचारण मानी जायेगी।

अन्वेषण (Investigation)–पुलिस अधिकारी द्वारा या मजिस्ट्रेट द्वारा प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा साक्ष्य एकत्रित करने के लिए की जाने वाली कार्यवाहियाँ, अन्वेषण कहलाती है **(धारा 2(h))**।

न्यायिक कार्यवाही (Judicial Proceeding)–संहिता की **धारा 2(j)** के अनुसार 'न्यायिक कार्यवाही ऐसी कार्यवाही है, जिसके अनुक्रम में साक्ष्य वैध रूप से शपथ पर लिया जाता है, अथवा लिया जा सकता है।

अपराध (Crime)–'कोई ऐसा कार्य या लोप जो किसी विधि द्वारा दण्डनीय हो। पशु अतिचार अधिनियम 1871 की धारा 20 के अधीन परिवाद किया जा सकने वाला कार्य भी अपराध होगा **धारा 2(n)**।

समन मामला (Summon Case)–ऐसा मामला जो किसी अपराध से सम्बन्धित है, जो वारण्ट मामला नहीं है' **(धारा 2(w))**।

समन मामला परिवाद से शुरू होता है, समन मामले के तहत दो वर्ष तक का कारावास अथवा अर्थदण्ड या दोनों दण्डादेश दिया जा सकता है।

यदि न्यायालय समन मामले के अभियुक्त की उपस्थिति न्यायालय में सुनिश्चित करने के लिए उसकी गिरफ्तारी का वारण्ट जारी करना आवश्यक समझता है, तो कारणों को अभिलिखित करने के पश्चात् न्यायालय अभियुक्त की गिरफ्तारी के लिए वारण्ट जारी कर सकता है (धारा 87 दण्ड प्रक्रिया संहिता)।

किन्तु मजिस्ट्रेट द्वारा वारण्ट जारी कर दिये जाने मात्र से समन मामले की प्रकृति में परिवर्तन नहीं हो जाता। पद्मनाथ बनाम अहमद दोवी, 1970Cr. C.J.।

किसी समन मामले का वारण्ट मामले में सम्परिवर्तिन

यदि छह मास से अधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय किसी समन मामले के विचारण के दौरान, मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत हो कि न्याय-हित में इस मामले का विचारण वारण्ट मामले के विचारण प्रक्रियाके तहत किया जाना चाहिये, तो मजिस्ट्रेट, वारण्ट मामलों के विचारण के लिए, दण्ड प्रक्रिया संहिता में उपबन्धित रीति से ऐसे मामले की पुनः सुनवाई कर सकता है तथा परीक्षा किये जा चुके साक्षियों को पुनः बुला सकता है (धारा 259)।

एक से अधिक अपराध के लिए आरोपित अभियुक्त का यदि प्रत्येक अपराध के लिए निर्धारित दण्ड पृथक-पृथक दो वर्ष से अधिक नहीं है, तो ऐसे सभी आपराधिक मामले, समन मामले होंगे। सभी अपराधों के लिए निर्धारित दण्ड का योग मामले की प्रकृति को प्रभावित नहीं करेगा।

यदि अभियुक्त के ऊपर वारण्ट तथा समन अपराध सम्मिलित रूप से दर्ज है, तो ऐसी स्थिति में समस्त मामला वारण्ट मामला माना जायेगा।

वारण्ट मामला (Warrant Case)–'ऐसा मामला जो मृत्यु, आजीवन कारावास या दो वर्ष से ज्यादा अवधि के लिए कारावास से दण्डनीय किसी अपराध से सम्बन्धित है' वारण्ट मामला होता है। (धारा 2(*x*) दं.प्र.सं.)। समन तथा वारण्ट मामलों की कसौटी दण्डावधि है।

प्लीडर (Pleader)–'विधि द्वारा विधि व्यवसाय करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति तथा कोई अन्य व्यक्ति जो न्यायालय की कार्यवाही में कार्य करने के लिए न्यायालय की अनुज्ञा से नियुक्त किया गया है' प्लीडर अन्तर्गत आता है। **(धारा 2(q))**।

प्लीडर के अन्तर्गत, अधिवक्ता, वकील, मुख्तार, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायवादी (Attorney), उच्च न्यायालय के महाधिवक्ता (Advocate General) एवं किसी न्यायालय की कार्यवाही में कार्य करने के लिए न्यायालय की अनुज्ञा प्राप्त व्यक्ति आते हैं।

लोक अभियोजक (Public Prosecutory)–'दण्ड प्रक्रिया संहिता की **धारा 24** के अधीन नियुक्त व्यक्ति एवं लोक अभियोजक के निर्देशों के अन्तर्गत कार्य करने के लिए नियुक्त किया गया व्यक्ति' (**धारा 2(u) द.प्र.सं.**)।

लोक अभियोजक का पद, लोक पद है। अतः उसके सम्बन्ध में संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन, अधिकार पृच्छा रिट जारी किया जा सकता है (राजेन्द्र शंकर त्रिपाठी बनाम उ. प्र. राज्य तथा अन्य 1979 इलाहाबाद उच्च न्यायालय)।

पीड़ित (Victim)–दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 (अधिनियम संख्या 5, 2008 दिनांक 7 जनवरी, 2009) के द्वारा एक नयी **धारा 2(wa)** जोड़कर पीड़ित शब्द को परिभाषित किया गया है। इसके अनुसार

'शब्द पीड़ित' का अर्थ ऐसे व्यक्ति/व्यक्तियों से है जो ऐसे किसी कृत्य या लोप के कारण कारित हानि या क्षति से पीड़ित हुआ

है जिसके लिए अभियुक्त व्यक्ति को आरोपित किया गया है और पद 'पीड़ित' के अन्तर्गत उसका या उसकी संरक्षक अथवा विधिक उत्तराधिकारी भी सम्मिलित है।

अन्य शब्दों की परिभाषा–धारा 2 (म) के अनुसार उन शब्दों और पदों के, जो इस संहिता में प्रयुक्त हैं और परिभाषित नहीं हैं, किन्तु भारतीय दण्ड संहिता में परिभाषित हैं, वही अर्थ होंगे जो उनके उस संहिता में हैं। अतः वे शब्द जो दण्ड प्रक्रिया संहिता में प्रयुक्त तो हैं किन्तु परिभाषित नहीं हैं, यदि वे शब्द भारतीय दण्ड संहिता में परिभाषित हैं, तो उनका अर्थान्वयन उसी रूप में किया जायेगा।

संहिता की धारा 3 के अन्तर्गत निर्देशों का अर्थान्वयन वर्णित जिसमें विभिन्न वर्गों के मजिस्ट्रेटों के कार्यों एवं शक्तियों का उल्लेख है। धारा 4(1) के अनुसार भारतीय दण्ड संहिता के अधीन सब अपराधों का अन्वेषण, जांच, विचारण और उनके सम्बन्ध में अन्य कार्यवाही इसमें इसके पश्चात् अन्तर्विष्ट उपबंधों के अनुसार की जायेगी। किसी अन्य विधि के अधीन सब अपराधों का अन्वेषण, जांच, विचारण और उसके सम्बन्ध में अन्य कार्यवाही दण्ड प्रक्रिया संहिता तथा उस विधि में नियत कोई प्रक्रिया यदि कोई हो, के अनुसार किया जायेगा। धारा 5 के (व्यावृत्ति) के अन्तर्गत विशेष या स्थानीय विधियों को महत्व दिया गया है।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता किस दिनांक से प्रवृत्त हुई?
A. 1 अप्रैल, 1974 से।
Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 का विस्तार क्षेत्र क्या है?
A. जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय सम्पूर्ण भारत।
Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 पर राष्ट्रपति ने कब हस्ताक्षर किया?
A. 25 जनवरी, 1974 को।
Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 का अधिनियम संख्यांक क्या है?
A. अधिनियम संख्यांक (1974 का अधिनियम संख्यांक-2)।
Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता में कितनी धाराएं है?
A. 484।
Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की मुख्य विशेषता क्या है?
A. न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करना।
Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत जांच की जाती है?
A. मजिस्ट्रेट या न्यायालय द्वारा।
Q. निम्नलिखित कौन सी प्रक्रिया न्यायिक प्रक्रिया है?
A. जांच या विचारण।
Q. अन्वेषण के अन्तर्गत पुलिस अधिकारी के द्वारा की जाने वाली सब कार्यवाहियां होती हैं?
A. साक्ष्य एकत्र करने के लिए।
Q. कौन सा वाद त्रुटिपूर्ण अन्वेषण से सम्बन्धित है?
A. जाहिरा हबीबुल्लाह शेख बनाम गुजरात राज्य।
Q. दो वर्ष से अधिक के कारावास से दण्डनीय अपराध का सम्बन्ध किससे है?
A. वारण्ट मामले से।
Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 (संख्या 25/2005) को राष्ट्रपति की अनुमति कब मिली?
A. 23 जून, 2005।
Q. सौदा अभिवाक् (प्ली बारगेनिंग) का अध्याय दं.प्र.सं. में किस अधिनियम के द्वारा जोड़ा गया?
A. दाण्डिक विधि (संशोधन) अधिनियम, 2005 (अधिनियम संख्या 2/2006) के द्वारा।
Q. निम्न से क्या अभिप्रेत है :
(i) अजमानतीय अपराध (ii) जमानतीय अपराध
(iii) संज्ञेय अपराध (iv) असंज्ञेय अपराध
(v) समन मामला (vi) वारण्ट मामला
(vii) लोक अभियोजक
A. परिभाषा खंड देखें।
Q. नागालैण्ड राज्य को एवं जनजाति क्षेत्रों को इस संहिता के कौन से उपबन्ध लागू होंगे?
A. इस संहिता के अभ्यास 8, 10 एवं अध्याय 11। किन्तु सम्बद्ध राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा ऐसे उपबन्धों या उनमें से किसी को इन क्षेत्रों में लागू कर सकती है।
Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा में जमानतीय अपराध को परिभाषित किया गया है?
A. धारा 2 (क) में।
Q. जमानतीय अपराध क्या है?
A. यह ऐसा अपराध है जो प्रथम अनुसूची में जमानतीय के रूप में दिखाया गया है या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा जमानतीय बनाया गया है।
Q. जमानतीय और अजमानतीय अपराधों में क्या अंतर है?
A. 3 वर्ष से कम अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध जमानतीय एवं उससे अधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध अजमानतीय कहलाते हैं।

Q. असंज्ञेय अपराध एवं असंज्ञेय मामला दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा में परिभाषित है?

A. धारा 2 (ठ) के अनुसार।

Q. असंज्ञेय अपराध एवं असंज्ञेय मामला से क्या अभिप्रेत है?

A. संहिता की धारा 2 (ठ) के अनुसार, असंज्ञेय अपराध से अभिप्रेत है जिसके लिए पुलिस अधिकारी को वारण्ट के बिना गिरफ्तार करने का अधिकार नहीं होता है, तथा असंज्ञेय मामला से ऐसा मामला अभिप्रेत है जिसमें पुलिस अधिकारी को वारण्ट के बिना गिरफ्तारी करने का अधिकार नहीं होता है।

Q. **परिवाद (complaint)**, दण्ड प्रक्रिया संहिता के किस धारा में परिभाषित है?

A. धारा 2 (घ) में।

Q. **परिवाद (Complaint)** क्या है?

A. परिवाद से संहिता के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा कार्यवाही किये जाने की दृष्टि से मौखिक या लिखित रूप में उससे किया गया यह अभिकथन अभिप्रेत है कि किसी व्यक्ति ने चाहे वह ज्ञात हो या अज्ञात, अपराध किया है।

Q. क्या पुलिस रिपोर्ट परिवाद समझा जाता है?

A. समान्यतया नहीं! किन्तु **धारा 2 (घ)** के स्पष्टीकरण के अनुसार, ऐसे किसी मामले में, जो अन्वेषण के पश्चात्, किसी असंज्ञेय अपराध का किया जाना प्रकट करता है, पुलिस अधिकारी द्वारा की गयी रिपोर्ट परिवाद समझी जायेगी और वह पुलिस अधिकारी जिसके द्वारा ऐसी रिपोर्ट की गयी है, परिवादी समझा जायेगा।

Q. जांच से अन्वेषण की भिन्नता स्पष्ट कीजिए?

A. संहिता की **धारा 2 (छ)** से स्पष्ट है कि जांच मजिस्ट्रेट द्वारा किसी प्रश्न के निर्धारण हेतु होता है जबकि अन्वेषण के अंतर्गत, धारा 2 (ज) के अनुसार, वेसब कार्यवाहियाँ हैं जो इस संहिता के अधीन पुलिस अधिकारी द्वारा या (मजिस्ट्रेट से भिन्न) किसी भी ऐसे व्यक्ति द्वारा जो मजिस्ट्रेट द्वारा इस हेतु प्राधिकृत किया गया है, साक्ष्य एकत्र करने के लिए की जाए।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत न्यायिक कार्यवाही से क्या तात्पर्य है?

A. न्यायिक कार्यवाही के अंतर्गत कोई ऐसी कार्यवाही है, जिसके अनुक्रम में साक्ष्य वैध रूप से शपथ कर लिया जाता है, या लिया जा सकता है।

Q. 'पुलिस रिपोर्ट' को परिभाषित कीजिए?

A. संहिता की **धारा 2 (द)** के प्रकाश में धारा 173(2) के अंतर्गत पुलिस अधिकारी द्वारा संज्ञान करने हेतु सक्षम मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत की गयी रिपोर्ट पुलिस रिपोर्ट कहलाती है, इसमें अन्वेषण का निष्कर्ष सम्मिलित होता है।

Q. समन को दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अन्तर्गत परिभाषित किया गया है?

A. धारा 2(ब)।

Q. समन मामला किसे कहा जाता है?

A. 2 वर्ष तक के कारावास की अवधि से दण्डनीय मामला समन मामला कहलाता है।

Q. वारण्ट को दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अन्तर्गत परिभाषित किया गया है?

A. धारा 2 (य)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2010 किस तिथि से प्रवृत्त किया गया है?

A. 2 नवम्बर, 2010 से

दण्ड न्यायालयों एवं कार्यालयों का गठन
(Constitution of criminal Courts and Offices)

दण्ड न्यायालयों के वर्ग (Classes ofpenal courts)–दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 6 में, उच्च न्यायालय एवं इस संहिता से भिन्न किसी विधि के अधीन गठित न्यायालयों के अतिरिक्त चार प्रकार के दण्ड न्यायालयों की स्थापना का उपबन्ध किया गया है–

(1) सत्र न्यायालय (Session Court),

(2) प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट एवं महानगर क्षेत्र में महानगर मजिस्ट्रेट,

(3) द्वितीय वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट,

(4) कार्यपालक मजिस्ट्रेट
(Executive Magistrate)

संहिता में प्रारम्भिक स्तर से ही न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक करने के लिए मजिस्ट्रेटों को दो वर्गों (न्यायिक तथा कार्यपालक) में विभाजित किया गया है। पुनः न्यायिक मजिस्ट्रेटों को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है–

(i) प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट तथा

(ii) द्वितीय वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट।

न्यायिक मजिस्ट्रेटों को उच्च न्यायालय के अधीन एवं कार्यपालक मजिस्ट्रेटों को राज्य प्रशासन के अधीन रखकर न्यायपालिका एवं कार्यपालिका के मध्य **शक्ति सन्तुलन (Ballance of Power)** स्थापित किया गया है।

प्रादेशिक खण्ड (Territorial Part)–संहिता की धारा 7 के अनुसार प्रत्येक राज्य एक सेशन खण्ड होगा अथवा उसमें कई सेशन खण्ड होंगे एवं इस संहिता के प्रयोजनार्थ सेशन खण्ड एक जिला होगा अथवा उसमें कई जिले होंगे। किन्तु प्रत्येक **महानगर क्षेत्र (Metropolitan area)** एक अलग सेशन खण्ड तथा जिला माना जायेगा।

संहिता की धारा 8 के अनुसार राज्य सरकार किसी ऐसे क्षेत्र को अधिसूचना द्वारा महानगर घोषित कर सकती है, जिसकी जनसंख्या दस लाख से अधिक हो। संहिता के आरम्भ काल से ही मुम्बई, कलकत्ता (कोलकाता), मद्रास (चेन्नई) एवं अहमदाबाद को महानगर क्षेत्र घोषित किया गया है। महानगर क्षेत्र की सीमाओं को बढ़ाने, कम करने एवं सम्परिवर्तित करने का अधिकार राज्य सरकार में निहित है।

सत्र न्यायालय (Session Court)–संहिता की धारा 9 में राज्य सरकार द्वारा प्रत्येक सेशन खण्ड में सेशन न्यायालय स्थापित किये जाने का उपबन्ध किया गया है। ऐसे न्यायालय में उच्च न्यायालय एक पीठासीन न्यायाधीश नियुक्त करेगा। यह नियुक्ति पीठासीन न्यायाधीश की प्रथम नियुक्ति नहीं मानी जायेगी, ऐसी सेशन न्यायालय में अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए, उच्च न्यायालय, **अपर सेशन न्यायाधीशों (Additional Session Judges)** एवं **सहायक सेशन न्यायाधीशों (Assistant Session Judges)** की नियुक्ति कर सकता है [धारा 9(3)]।

धारा 9 में सेशन न्यायाधीश शब्द के अन्तर्गत 'अपर सेशन न्यायाधीश' भी सम्मिलित है।

अपर सेशन न्यायाधीश को दण्ड प्रक्रिया संहिता में प्रगणित अपराधों के विचारण के लिए सेशन न्यायाधीश की, सभी शक्तियाँ एवं अधिकारिता प्राप्त होती है **(अब्दुल मन्नान बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, 1996 S.S.C.)**।

असम राज्य बनाम रंग मुहम्मद (A.I.R. 1967, S.C.) के वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने विनिश्चय दिया था कि संविधान के अनुच्छेद 233 द्वारा यह अर्थ ध्वनित होता है कि राज्य सरकार ही किसी व्यक्ति की सेशन न्यायाधीश, अपर सेशन न्यायाधीश अथवा सहायक सेशन न्यायाधीश के रूप में प्रथम नियुक्त करती है एवं तत्पश्चात् उच्च न्यायालय ही स्थानान्तरण या नियुक्त करते हैं।

धारा 9 (द.प्र.सं.) में उपबन्धित 'नियुक्ति' राज्य सरकार द्वारा की गयी नियुक्ति न होकर, उच्च न्यायालय द्वारा की गयी नियुक्ति अथवा स्थापना है। (डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी)।

संविधान के अनुच्छेद 233 के अतिक्रमण में होने के आधार पर यदि किसी सेशन न्यायाधीश की नियुक्ति अविधिमान्य घोषित कर दी जाये तथा ऐसी घोषणा के पूर्व ऐसे न्यायाधीश द्वारा दिये गये निर्णय को इस आधार पर चुनौती दिये जाने पर कि ऐसे न्यायालय द्वारा किया गया विचारण, उस सेशन न्यायालय का विचारण नहीं हो सकता, जिसे दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 9 के अन्तर्गत अधिकारिता के प्रयोग के लिए, सम्यक रूप से नियुक्त किया गया है, चुनौती स्वीकार नहीं की जा सकती। न्यायाधीश द्वारा, उसकी नियुक्ति को अविधिमान्य घोषित किये जाने के पूर्व दिये गये निर्णय शून्य नहीं है। ऐसे प्रकरणों में 'वास्तविकता का सिद्धांत' लागू होता है जो ऐसे कार्यों को शून्य होने से बचाता है, क्योंकि सम्पार्श्विक कार्यवाहियों में त्रुटिपूर्ण नियुक्ति को चुनौती नहीं दी जा सकती (गोकराजू रंगराजू-बनाम आन्ध्रप्रदेश 1981, S.C.C.)।

सत्र न्यायालय की बैठक (Seat of Session Court)–उच्च न्यायालय सेशन न्यायालय की बैठक के लिए एक से अधिक स्थान निश्चित कर सकता है (धारा 9(6))।

उच्च न्यायालय किसी विशिष्ट मामले के लिए, अधिसूचना द्वारा सेशन न्यायालय की बैठक जेल में करने का निर्देश देने के लिए पूर्णतः सक्षम हैं **(रणजीत सिंह बनाम मुख्य न्यायमूर्ति, दिल्ली उच्च न्यायालय (Cr. L. J. 1986)**।

जब किसी विशेष मामले में सेशन न्यायालय की यह राय हो कि सेशन खण्ड में उसकी बैठक के साधारण स्थान से अन्यत्र बैठक करने से पक्षकारों तथा साक्षियों को सुविधा होगी वह अन्य स्थान पर बैठककर सकता है किन्तु यह मात्र तभी अनुज्ञेय है, जब उस मामले के पक्षकारों (अभियोजन तथा अभियुक्त) की सहमति ले ली गयी हो तथा इस विषय पर निर्णय स्वयं सेशन न्यायालय को लेना होता है (धारा 9(6) दण्ड प्रक्रिया संहिता एवं केहर सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन), 1988 S.C.C.)।

सहायक सेशन न्यायाधीश की अधीनस्थता (Subordination of Assistant Session Judges)

सभी सहायक सेशन न्यायाधीश उस सेशन न्यायाधीश के अधीन होते हैं, जिसके न्यायालय में वे अधिकारिता का प्रयोग करते हैं। (धारा 10(1))।

सेशन न्यायाधीश सहायक सेशन न्यायाधीशों को दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन, कार्यों का वितरण एवं तत्सम्बन्धी नियम बनाता है। (धारा 10(2))।

सामान्यतः सेशन न्यायाधीश द्वारा विचारणीय आवेदन का निपटारा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा नहीं किया जा सकता किन्तु अपनी अनुपस्थिति अथवा कार्य करने की असमर्थता की स्थिति में सेशन न्यायाधीश अति आवश्यक (Urgent) आवेदनों के निपटारे के लिए अपर, अथवा सहायक सेशन न्यायाधीश को अथवा इनके न होने की स्थिति में मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को अधिकृत कर सकता है (धारा 10(3))।

न्यायिक मजिस्ट्रेटों के न्यायालय (Courts of Judicial Magistrate)–महानगर क्षेत्र के अतिरिक्त, प्रत्येक जिले में राज्य सरकार द्वारा उच्च न्यायालय से परामर्श करने के बाद, प्रथम तथा द्वितीय वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों की स्थापना की जाती है। इन न्यायालयों में पीठासीन अधिकारी की नियुक्ति उच्च न्यायालय द्वारा की जाती है। (धारा 11)।

सिविल न्यायालय में न्यायाधीश के रूप में कार्यरत राज्य न्यायिक सेवा के किसी सदस्य को उच्च न्यायालय अपने विवेक से प्रथम वर्ग या द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट की शक्तियाँ प्रदान कर सकता है। (धारा 11(3))।

जिन मामलों के विचारण के लिए विशेष न्यायालय स्थापित किये जाते हैं, उनके सन्दर्भ में उस स्थानीय क्षेत्र के अन्य किसी न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय को विचारण की अधिकारिता नहीं होती हैं। (धारा 11 का परन्तुक) विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट का न्यायालय जिस स्थानीय क्षेत्र के लिए स्थापित किया गया है, उसके भीतर किसी भी स्थान पर अपनी बैठक कर सकता है। (धारा 14(1) द. प्र. सं. का परन्तुक) विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट का कार्यकाल एक समय में एक वर्ष (धारा 13(2))।

मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट तथा अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (Chief Judicial Magistrate and Additional Chief Judical Magistrate)–महानगर के अतिरिक्त उच्च न्यायालय प्रत्येक जिले में एक प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट नियुक्त करता है (धारा 12(1))। इसी प्रकार उच्च न्यायालय, किसी प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट को अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट नियुक्त करता है तथा इस प्रकार नियुक्त अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट उच्च न्यायालय के निर्देशानुसार मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट की सभी अथवा किसी शक्ति का प्रयोग कर सकता है। (धारा 12(2))।

उच्च न्यायालय, किसी उपखण्ड में किसी प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट को उपखण्ड न्यायिक मजिस्ट्रेट पदाभिहित कर सकता है जिसे मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के साधारण नियंत्रण में रहते हुये, उपखण्ड में नियुक्त (अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट से भिन्न)न्यायिक मजिस्ट्रेटों के काम पर पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण की शक्ति प्राप्त होती है। (धारा 13(3))।

महानगर मजिस्ट्रेट (Metropolitan Magistrate)–महानगर क्षेत्र (जिसकी जनसंख्या दस लाख से अधिक हो) में राज्य सरकार उच्च न्यायालय से परामर्श करने के पश्चात् ऐसे स्थानों और ऐसी संख्या में, जो राज्य सरकार आवश्यक समझे महानगर मजिस्ट्रेट न्यायालय स्थापित कर सकती है। ऐसे न्यायालय का **पीठासीन अधिकारी (Presiding Officer)** उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त किया जायेगा। महानगर मजिस्ट्रेट न्यायालय का क्षेत्राधिकार एवं शक्तियाँ सम्पूर्ण महानगर क्षेत्र पर होगी (धारा 16)। उच्च न्यायालय महानगर मजिस्ट्रेट में से किसी एक को महानगर क्षेत्र के लिए **मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट (Chief Metropolitan Magistrate)** तथा किसी महानगर मजिस्ट्रेट को **अपर मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट (Additional Chief Metropolitan Magistrate)** नियुक्त कर सकता है तथा उसे मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट की सभी अथवा कोई शक्ति दे सकता है। (धारा 17)

मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट एवं प्रत्येक अपर मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट सेशन न्यायाधीश के अधीनस्थ होगा और प्रत्येक अन्य महानगर मजिस्ट्रेट, सेशन न्यायाधीश के सामान्य नियंत्रण में रहते हुये मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट के अधीनस्थ होगा। (धारा 19)।

केन्द्रीय अथवा राज्य सरकार द्वारा उच्च न्यायालय से अनुरोध किये जाने पर उच्च न्यायालय किसी सरकारी सेवक या सेवानिवृत्त सरकारी सेवक को किन्हीं विशेष मामलों या विशेष वर्ग के मामलों के सम्बन्ध में, महानगर मजिस्ट्रेट की सभी अथवा कोई शक्ति प्रदान कर सकता है, किन्तु ऐसी शक्ति उसी व्यक्ति को प्रदान की जायेगी, जिसके पास उच्च न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट नियमों के अनुसार विधिक अर्हता या अनुभव हो। इस प्रकार नियुक्त किया गया मजिस्ट्रेट **विशेष महानगर मजिस्ट्रेट (Special Metropolitan Magistrate)** कहलाता है, तथा उसकी नियुक्ति एक समय में एक वर्ष के लिए की जाती है। उच्च न्यायालय या राज्य सरकार द्वारा विशेष महानगर मजिस्ट्रेट को महानगर क्षेत्र के बाहर किसी स्थानीय क्षेत्र में प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट की शक्तियों के प्रयोग के लिए सशक्त किया जा सकता है। (धारा 18)।

उच्चतम न्यायालय ने मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित एम. नारायन स्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य 1984 Cr.L.J. मामले के विनिश्चय को पलटते हुये कादरा पहाड़िया बनाम बिहार राज्य 1997 S.C.C. के मामले में दण्ड प्रक्रिया संहिता में उपबन्धित, विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट (धारा 13(1)) एवं विशेष महानगर मजिस्ट्रेट

(धारा 18(1))सम्बन्धी प्रावधान को संविधान के अनुच्छेद 14 (विधि के समक्ष समता) का उल्लंघन करने वाला न मानते हुये, इसकी सांविधानिक वैधता की अभिपुष्टि की है। न्यायालय ने यह भी निर्णीत किया कि विधिक मामलों के लिए नियुक्त किये जाने वाले व्यक्तियों की आवश्यक योग्यता एवं अनुभव के सन्दर्भ में विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

उच्च न्यायातय (High Court)–भारत के संविधान का अनुच्छेद 227 उच्च न्यायालय को सम्बन्धित राज्य के सभी न्यायालयों पर **अधीक्षण (superintendence)** की शक्ति प्रदान करता है। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 483 में न्यायिक मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों पर अधीक्षण का निरन्तर प्रयोग करने का उच्च न्यायालय का कर्त्तव्य प्रावधानित किया गया है, जिसके अनुसार उच्च न्यायालय से अपेक्षा की गयी है कि अपने अधीनस्थ न्यायिक मजिस्ट्रेटों के न्यायालय पर इस प्रकार अधीक्षण शक्ति का प्रयोग करे, जिससे मामलों का शीघ्र एवं उचित रूप से निपटारा किया जाना सुनिश्चित हो जाये। दण्ड प्रक्रिया संहिता उच्च न्यायालय को **निर्देश (Reference), अपील (Appeal), पुनरीक्षण (Revision)** तथा मामलों के अन्तरित (Transfer) करने की भी शक्ति प्रदान करती है। किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरूपयोग को रोकने एवं न्याय के लक्ष्य को सुनिश्चित करने के लिए, उच्च न्यायालय की **अन्तर्निहित शक्ति (Inherent power)** का प्रावधान (धारा 482) संहिता में किया गया है।

उच्चतम न्यायालय (Supreme Court)–उच्चन्यायालय द्वारा असाधारण दाण्डिक अधिकारिता के प्रयोग में दोषसिद्ध विचारित किया गया व्यक्ति उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकता है (धारा 374(I))।

यदि उच्च न्यायालय किसी अभियुक्त के दोषमुक्ति के आदेश को अपील में उलट कर उसे दोषसिद्ध करता है, और उसे मृत्युदण्ड अथवा आजीवन कारावास या दस वर्ष या अधिक की अवधि का दण्ड देता है, तो ऐसे आदेश से प्रभावित होने वाला व्यक्ति उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकता है। (धारा 379)।

दण्ड प्रक्रिया संहिता उच्चतम न्यायालय को न्याय हित में मामलों एवं अपीलों को अन्तरित (Transfer) करने की शक्ति प्रदान करती है (धारा 406)।

उच्चतम न्यायालय आपराधिक मामलों में अपीलीय क्षेत्राधिकार का प्रयोग, उच्चतम न्यायालय, (आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार का विस्तार) अधिनियम, 1970 के अन्तर्गत करता है।

कार्यपालक मजिस्ट्रेटों के न्यायालय
(Courts Executive Magistrates)

राज्य सरकार प्रत्येक जिले एवं महानगर क्षेत्र में कार्यकारी मजिस्ट्रेटों की नियुक्ति कर सकती है, तथा उनमें से एक को जिला मजिस्ट्रेट (D.M.) नियुक्त किया जायेगा। **अपर जिला मजिस्ट्रेट (Additional District Magistrate-A.D.M.)** एवं उपखण्ड (Sub-Division) के लिए **उपखण्ड मजिस्ट्रेट (Sub divisional Magistrate)** नियुक्त किया जा सकता है। (धारा 20)।

राज्य सरकार सामान्य अथवा विशेष आदेश द्वारा उपखण्ड मजिस्ट्रेट (S.D.M.) को नियुक्त करने का अपना अधिकार जिला मजिस्ट्रेट को प्रत्यायोजित कर सकती है। (धारा 20(4A))।

राज्य सरकार किसी महानगर क्षेत्र के सम्बन्ध में कार्यपालक मजिस्ट्रेट की सभी या उनमें से कुछ शक्तियाँ **पुलिस आयुक्त (Commissioner of Police)** को प्रदान कर सकती है। (धारा 20(5) द.प्र.सं.)। राज्य सरकार किन्हीं विशेष क्षेत्रों के लिए अथवा विशिष्ट कृत्यों के पालन के लिए **विशेष कार्यपालक मजिस्ट्रेट (Special Executive Magistrates)** की नियुक्ति कर सकती है (धारा 21)।

जब तक जिला मजिस्ट्रेट द्वारा परिनिश्चित (Define) न किया जाये, प्रत्येक कार्यपालक मजिस्ट्रेट की अधिकारिता (Jurisdiction) एवं शक्तियों का विस्तार जिले अथवा महानगर क्षेत्र में सर्वत्र होगा (धारा 22)।

अपर जिला मजिस्ट्रेट से भिन्न सभी कार्यपालक मजिस्ट्रेट जिला मजिस्ट्रेट के अधीनस्थ होंगे, तथा **उपखण्ड (Sub-division)** में शक्तियों का प्रयोग करने वाला प्रत्येक कार्यपालक मजिस्ट्रेट जिला मजिस्ट्रेट के सामान्य नियंत्रण में रहते हुये उपखण्ड मजिस्ट्रेट के अधीनस्थ होगा (धारा 23(1))।

स्थानापन्न हैसियत में नियुक्त जिला मजिस्ट्रेट दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 20(1) के अधीन राज्य सरकार द्वारा नियुक्त जिला मजिस्ट्रेट नहीं है, यद्यपि वह द.प्र.सं. की धारा 20(3) के अर्थान्तर्गत जिला मजिस्ट्रेट है। (सदानन्द त्रिपाठी उर्फ सन्त ज्ञानेश्वर, श्री सदानन्द परमहंस बनाम उ. प्र. राज्य, 1982 इलाहाबाद।

जिला मजिस्ट्रेट अपने अधीनस्थ कार्यपालक मजिस्ट्रेटों में कार्य-वितरण के सम्बन्ध में तथा अपर जिला मजिस्ट्रेट को कार्य आवंटन के सम्बन्ध में समय-समय पर नियम बना सकता है या विशेष आदेश दे सकता है। (धारा 23(2))।

अपर जिला मजिस्ट्रेट जिला मजिस्ट्रेट का अधीनस्थ नहीं है, किन्तु जिला मजिस्ट्रेट को अपर जिला मजिस्ट्रेट द्वारा किये जाने वाले कार्य का आबंटन करने की शक्ति उसे जिला मजिस्ट्रेट का

अधीनस्थ बनाती है, परन्तु जो कार्य अपर जिला मजिस्ट्रेट को आवंटित किया जाता है- उसे करने में वह जिला मजिस्ट्रेट का अधीनस्थ नहीं होता, क्योंकि उस कार्य को करने में उसकी शक्तियाँ जिला मजिस्ट्रेट के समान होती है।

विशेष कार्यपालक मजिस्ट्रेट की विधिक प्रास्थिति कार्यपालक मजिस्ट्रेट होती है। अतः वे दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन प्रदत्त शक्तियों का उसी प्रकार प्रयोग कर सकते हैं, जैसे कि अन्य कार्यपालक मजिस्ट्रेट करते हैं, किन्तु यदि राज्य सरकार किसी विशेष कार्यपालक मजिस्ट्रेट को धारा 107 की शक्तियाँ प्रदान करती है, तो ऐसा करना अनावश्यक है। (महाराष्ट्र राज्य बनाम मोहम्मद सलीमखान, 1991 S.C.C.)।

अभियोजक

अपराधों के मामले में राज्य, अभियुक्त के अभियोजन हेतु उत्तरदायी होता है। केन्द्र सरकार तथा प्रत्येक राज्य सरकार को अपनी ओर से उच्च न्यायालय, सत्र न्यायालय अथवा मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों में अभियोजन एवं अन्य **आपराधिक कार्यवाहियों (Criminal proceedings)** के संचालन के लिए अभियोजक नियुक्त करने की शक्ति होती है (धारा 24)।

एक जिले के लिए नियुक्त लोक अभियोजक अथवा अपर लोक अभियोजक को किसी अन्य जिले के लिए भी लोक अभियोजक या अपर लोक अभियोजक नियुक्त किया जा सकता है। (धारा 24(3) का परन्तुक)।

किसी जिले के लिए लोक अभियोजक अथवा अपर लोक अभियोजक नियुक्त किये जाने के योग्य व्यक्तियों के नामों का पैनल सेशन न्यायाधीश के परामर्श से, जिला मजिस्ट्रेट द्वारा तैयार किया जाता है। (धारा 24(4))।

राज्य में अभियोजन अधिकारियों का **नियमित काडर (Regular Cadre)** होने पर ऐसे काडर वाले व्यक्तियों में से ही लोक अभियोजक अथवा अपर लोक अभियोजक की नियुक्ति की जायेगी किन्तु यदि राज्य सरकार की राय में, ऐसे काडर में नियुक्ति के लिए उपयुक्त व्यक्ति अनुपलब्ध है, तो ऐसी स्थिति में, राज्य सरकार द्वारा जिला मजिस्ट्रेट द्वारा तैयार किये गये नामों के पैनल में से, किसी व्यक्ति को लोक अभियोजक या अपर लोक अभियोजक नियुक्त किया जा सकता है (धारा 24(6))।

न्यूनतम सात वर्ष तक अधिवक्ता के रूप में विधि व्यवसाय करने वाला व्यक्ति ही लोक अभियोजक या अपर लोक अभियोजक नियुक्त किया जा सकता है (धारा 24(7))।

केन्द्र सरकार अथवा राज्य सरकार किसी मामले अथवा किसी वर्ग के मामलों के प्रयोजनों के लिए, न्यूनतम 10 वर्ष तक अधिवक्ता के रूप में विधि व्यवसाय करने वाले व्यक्ति को **विशेष लोक अभियोजक (Special Public Prosecutor)** नियुक्त कर सकती है (धारा 24(8))।

अभियोजन अधिकारियों का ऐसा काडर, जिसमें लोक अभियोजक चाहे वह किसी नाम से ज्ञात हो का पद शामिल है तथा जिसमें उस पद पर सहायक लोक अभियोजक की पदोन्नति के लिए उपबन्ध किया गया है। (दारा 24(6))।

सीमा शुल्क अधिनियम तथा स्वर्ण नियंत्रण अधिनियम जैसे कानूनों के अन्तर्गत संवेदनशील ममलों का समनुदेशन मात्र ऐसे काउन्सेलों को समनुदिष्ट किया जाना चाहिए जिन्हें विधि की उस शाखा में अनुभव तथा योग्यता प्राप्त है, ताकि वे उन मामलों का ठीक प्रकार से प्रतिवाद कर सके जिससे न्याय का अवपीड़न न हो तथा राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को भी आघात न लग सके (के.आई. पैकुन्नी बनाम सहायक कलेक्टर 1997 SSC)।

लोक अभियोजक दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 24 के अधीन लोक अभियोजक के रूप में नियुक्त किया गया हो, अथवा वह इस प्रकार नियुक्त किये गये लोक अभियोजक के निदेशानुसार कार्य करता हो। (राजस्थान राज्य बनाम श्रीमती मनभर 1981 S.C.C.)।

दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 24 के अनुसार लोक अभियोजक का पद लोक पद है। अतः उसके सम्बन्ध में अधिकार पृच्छा का रिट जारी किया जा सकता है। (राजेन्द्र शंकर त्रिपाठी बनाम उ. प्र. राज्य 1979 इलाहाबाद उच्च न्यायालय)।

लोक अभियोजक के मुख्य कर्त्तव्य यह है कि दोषी व्यक्ति बचकर छूटने न पाये तथा किसी निर्दोष व्यक्ति को प्रपीड़ित न किया जाये (शिवनन्दन पासवान बनाम बिहार राज्य, 1987 S.C.C.) और श्रीलेखा विद्यार्थी (कुमारी) बनाम उ. प्र. राज्य, 1991 S.C.C.।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 के द्वारा धारा 24(4) के परन्तुक के पश्चात् निम्नलिखित स्पष्टीकरण जोड़ा गया है–

(क) ''अभियोजन अधिकारियों का नियमित काडर'' से अभियोजन अधिकारियों का वह नियमित काडर अभिप्रेत है, जिसमें लोक अभियोजक का, चाहे वह किसी भी नाम से ज्ञात हो, पद सम्मिलित है और जिसमें उस पद पर सहायक लोक अभियोजक की, चाहे वह किसी भी नाम से ज्ञात हो, पदोन्नति के लिए उपबंध किया गया है।

(ख) ''अभियोजन अधिकारी'' से लोक अभियोजक, अपर लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक के कृत्यों का निर्वहन करने के लिए इस संहिता के अधीन नियुक्त किया गया व्यक्ति अभिप्रेत है, चाहे वह किसी भी नाम से ज्ञात हो।

सहायक लोक अभियोजक (Assistant Public Prosecutor)–प्रत्येक जिले में मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों में अभियोजन का संचालन करने के लिए राज्य सरकार एक अथवा अधिक सहायक लोक अभियोजक नियुक्त करेगी (धारा 25(1)।

केन्द्रीय सरकार भी मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों में किसी मामले या मामलों के किसी वर्ग के संचालन के लिए एक या अधिक सहायक लोक अभियोजक नियुक्त कर सकती है। (दारा 25(1A))।

किसी विशिष्ट मामलों के प्रयोजनों के लिए कोई सहायक लोक अभियोजक अनुपलब्ध होने की स्थिति में जिला मजिस्ट्रेट किसी अन्य व्यक्ति को उस मामले का भारसाधक सहायक लोक अभियोजक नियुक्त कर सकता है। (धारा 25(3))

कोई पुलिस अधिकारी भारसाधक सहायक लोक अभियोजक तभी नियुक्त किया जा सकता है, जबकि उसे जिस अपराध के लिए अभियुक्त अभियोजित किया जा रहा है, उसके अन्वेषण में भाग न लिया हो, तथा वह निरीक्षक की पंक्ति से नीचे का न हो(धारा 25(3) का परन्तुक)। उत्तर प्रदेश सरकार ने धारा 25(2) में संशोधन करके सहायक लोक अभियोजकों को पुलिस अधिकारियों के प्रशासनिक नियंत्रण में रखा है।

द.प्र.सं. की धारा 25 के प्रयोजन के लिए आबकारी अधिकारी को भी पुलिस अधिकारी माना जा सकता है। अतः किसी मामले का अन्वेषण करने वाले आबकारी अधिकारी को सहायक लोक अभियोजक नियुक्त नहीं किया जा सकता (राजाराम बनाम बिहार राज्य AIR 1964 SC)।

अभियोजन निदेशालय (Directorate of Prosecution)–राज्य सरकार एक अभियोजन निदेशालय स्थापित कर सकती है, जिसमें एक **अभियोजन निदेशक (Director Prosecution)** तथा उतने **अभियोजन उपनिदेशक (Deputy Director of Prosecution)** होंगे, जितने राज्य सरकार उचित समझे। न्यूनतम दस वर्षों तक अधिवक्ता के रूप में व्यवसाय में रहे व्यक्ति को, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति की सहमति से, अभियोजन निदेशक अथवा अभियोजन उपनिदेशक नियुक्त किया जायेगा, अभियोजन निदेशक, अभियोजन-निदेशालय का प्रधान होगा जो राज्य मेंगृह विभाग के प्रशासनिक नियंत्रण के अधीन कार्य करेगा। प्रत्येक अभियोजन उपनिदेशक अभियोजन निदेशक के अधीनस्थ होगा। राज्य सरकार द्वारा उच्च न्यायालय में मामलों का संचालन करने के लिए नियुक्त प्रत्येक लोक अभियोजक, अपर लोक अभियोजक तथा विशेष लोक अभियोजक, अभियोजन निदेशक के अधीनस्थ होंगे किन्तु लोक अभियोजक के कृत्यों का पालन करते समय **महाधिवक्ता (Advocate General)** अभियोजन निदेशक अथवा अभियोजन उपनिदेशक के अधीनस्थ नहीं होगा।

राज्य सरकार द्वारा जिला न्यायालयों में मामलों का संचालन करने के लिए नियुक्त प्रत्येक लोक अभियोजक, अपर लोक अभियोजक एवं विशेष लोक अभियोजक तथा प्रत्येक सहायक लोक अभियोजन अभियोजक उपनिदेशक के अधीनस्थ होगा।

अभियोजन निदेशक तथा अभियोजन उपनिदेशक की शक्तियों तथा कार्य और अभियोजन उपनिदेशकों के क्षेत्रों का निर्धारण राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करेगी।

दण्ड प्रक्रिया संहिता में अभियोजन निदेशालय सम्बन्धी उपर्युक्त उपबन्ध, द. प्र. सं. संशोधन अधिनियम 2005 की धारा 4 द्वारा धारा 25क अन्तःस्थापित करके किया गया है।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता में वर्गीकृत कौन एक सही न्यायालय है?

A. सत्र न्यायालय। (धारा 6)।

Q. राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा राज्य के किसी ऐसे क्षेत्र को आपराधिक प्रक्रिया संहिता के प्रयोजनों के लिए महानगर क्षेत्र घोषित कर सकती है जिसकी जनसंख्या हो।

A. दस लाख। (धारा 8)।

Q. सत्र न्यायालय के न्यायाधीश का स्थानान्तरण किसके द्वारा किया जाता है?

A. उच्च न्यायालय के द्वारा। (धारा 9)।

Q. न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालयों के पीठासीन अधिकारियों की नियुक्ति किसके द्वारा की जाती है?

A. उच्च न्यायालय के द्वारा। (धारा 11(2)।

Q. ''अधिसूचना के अनुसरण में तिहाड़ जेल में सत्र न्यायालय की बैठकें करना अवैधानिक नहीं था''। यह किस वाद में धारित किया गया।

A. केहर सिंह बनाम राज्य (1989) Cr. L.J. SC. 1 में।

Q. अधीनस्थ न्यायिक मजिस्ट्रेट के कार्य के वितरण के विषय में कौन नियम बना सकते हैं या विशेष आदेश दे सकते हैं?

A. मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट। (धारा 15(2))।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 24 की उपधारा (1) में ''लोक अभियोजक'' शब्दों के बाद अन्तः स्थापित शब्द है–

A. एक या अधिक अतिरिक्त लोक अभियोजक।

Q. किसी जिले के लिए लोक अभियोजक नियुक्त करने के लिए कौन प्राधिकृत है?

A. राज्य शासन।

Q. कोई व्यक्ति लोक अभियोजक नियुक्त नहीं हो सकता है, यदि उसका नाम

A. जिला दण्डाधिकारी की सूची में न हो। (धारा 24(5)।

Q. कोई व्यक्ति अपर लोक अभियोजक नियुक्त किए जाने का पात्र तभी होगा, जब वह कम से कम कितने वर्ष तक अधिवक्ता के रूप में विधि व्यवसाय करता रहा हो?

A. सात वर्ष। (धारा 24(7)।

Q. विशेष लोक अभियोजक की नियुक्ति के लिए कितने वर्षों का विधि व्यवसाय आवश्यक होता है?

A. 10 वर्ष। (धारा 24(8)।

Q. मजिस्ट्रेट के न्यायालयों में अभियोजन को कौन संचालित करते हैं?

A. सहायक लोक अभियोजक।

Q. मफ्स्ट्रिेटों के न्यायालय के लिए एक पुलिस अधिकारी को सहायक लोक अभियोजक के रूप में कौन नियुक्त क सकता है?

A. जिला मजिस्ट्रेट। (धारा 25(3)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा धारा 24 कौन सा विशेष प्रावधान जोड़ा गया है?

A. धारा 24 के उपधारा(8) के उपबंध के पश्चात् निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा गया है :

'परन्तु इस उपधारा के अधीन अभियोजन को सहायता प्रदान करने के लिए अपने पसंद का अधिवक्ता नियुक्त करने के लिए न्यायालय पीड़ित व्यक्ति को अनुमति प्रदान कर सकता है।'

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता का अध्याय दो किससे सम्बन्धित है?

A. अध्याय 2 दण्ड न्यायालयों एवं कार्यालयों के गठन से सम्बन्धित प्रावधान करता है। (धारा 6 से 25क)।

Q. महानगर क्षेत्र की सीमाओं को कौन और कैसे घटा या बढ़ा सकता है?

A. महानगर क्षेत्र की सीमाओं को, राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा बढ़ा सकती है, कम कर सकती है या परिवर्तित कर सकती है।

Q. राज्य सरकार प्रत्येक सेशन खण्ड के लिए एक सेशन न्यायालय स्थापित करेगी, ऐसे सेशन न्यायालय का न्यायाधीश किसके द्वारा नियुक्त किया जायेगा?

A. संहिता की धारा 9 के अनुसार, ऐसे सेशन न्यायालय में का न्यायाधीश उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त किया जायेगा।

Q. प्रत्येक जिले में न्यायिक मजिस्ट्रेटों के कितने न्यायालय हो सकते हैं?

A. संहिता की धारा 11 के अनुसार, प्रत्येक जिले में प्रथम वर्ग और द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेटों के इतने न्यायालय हो सकते हैं, जितने और जो राज्य सरकार उच्च न्यायालय से परामर्श के पश्चात् अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करे।

Q. ऐसे प्रत्येक जिले, जो महानगर क्षेत्र नहीं हैं, में मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट की नियुक्ति किस प्रकार होती है?

A. उच्च न्यायालय ऐसे प्रत्येक जिले में एक प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट को, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट नियुक्त करेगा।

Q. विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट की नियुक्ति संहिता की किस धारा के अंतर्गत निर्धारित है, और उनकी नियुक्ति कौन करता है?

A. इन न्यायाधीशों की नियुक्ति उच्च न्यायालय केन्द्र सरकार के या राज्य सरकार के अनुरोध पर धारा 12 के अनुसार करती है।

Q. विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट की नियुक्ति किन मामलों के सम्बन्ध में होती है?

A. विशेष मामलों या विशेष वर्ग के मामलों के सम्बन्ध में।

Q. संहिता की धारा 13 के अंतर्गत विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट की नियुक्ति कितनी अवधि के लिए होती है?

A. एक वर्ष से अनधिक अवधि के लिए।

Q. उच्च न्यायालय के नियंत्रण के अधीन रहते हुए कौन मजिस्ट्रेट समय-समय पर उन क्षेत्रों की स्थानीय परिसीमा परिनिश्चित कर सकता है जिनके अन्तर्गत धारा 13 या 11 के अन्तर्गत नियुक्त मजिस्ट्रेट अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकेंगे?

A. मुख्य न्यायिक मजिट्रेट। (धारा 14)।

Q. महानगर क्षेत्र में महानगर मजिस्ट्रेटों के न्यायालय राज्य सरकार किसके परामर्श से स्थापित करती है?

A. उच्च न्यायालय के परामर्श से। (धारा 16)।

Q. विशेष महानगर मजिस्ट्रेट की नियुक्ति कौन करता है और कब?

A. इनकी नियुक्ति उच्च न्यायालय द्वारा केन्द्रीय या राज्य सरकार द्वारा अनुरोध किये जाने पर की जाती है।

Q. विशेष महानगर मजिस्ट्रेट कितनी अवधि के लिए नियुक्त किये जायेंगे?

A. संहिता की धारा 18 के अनुसार, नियुक्त किये गये विशेष महानगर मजिस्ट्रेट की नियुक्ति एक समय में एक वर्ष से अनधिक समय के लिए होगी।

Q. मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट और प्रत्येक अपर मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट किसके अधीनस्थ होंगे?

A. मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट एवं अपर मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट सेशन न्यायाधीश के अधीनस्थ होंगे।

Q. संहिता की किस धारा के अंतर्गत राज्य सरकार को प्रत्येक जिले एवं महानगर क्षेत्र में कार्यपालक मजिस्ट्रेट एवं उनमें से एक को जिला मजिस्ट्रेट नियुक्त करने की शक्तियाँ प्राप्त हैं?

A. धारा 20 के अंतर्गत।

Q. संहिता में लोक अभियोजक से सम्बन्धित उपबंध कब योजित किया गया?

A. दण्ड प्रक्रिया संहिता, संशोधन, अधिनियम, 1978 द्वारा सन् 1978 में।

Q. संहिता की किस धारा में लोक अभियोजक की नियुक्ति से सम्बन्धित उपबंध है?

A. धारा 24 में।

Q. लोक अभियोजकों की नियुक्ति कौन और किस लिए करता है?

A. इनकी नियुक्ति, केन्द्र सरकार या राज्य उस उच्च न्यायालय के परामर्श से किसी उच्च न्यायालय में करती है, जो किसी अभियोजन में अपील या अन्य कार्यवाही में राज्य या केन्द्र सरकार की ओर से संचालन करते हैं।

Q. संहिता की किस धारा के अंतर्गत विशेष लोक अभियोजक की नियुक्ति की व्यवस्था है?

A. संहिता की धारा 24 के खण्ड (8) में।

Q. केन्द्रीय या राज्य सरकार किसी अधिवक्ता को किसी मामले या वर्ग के मामलों के प्रयोजनों हेतु विशेष लोक अभियोजक नियुक्त कर सकती है, परन्तु कब?

A. जबकि ऐसे अधिवक्ता ने कम से कम 10 वर्ष तक विधि व्यवसाय लगातार किया हो।

Q. सहायक लोक अभियोजकों की नियुक्ति से सम्बन्धित उपबंध दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा में व्यवस्थित है?

A. धारा 25 में।

Q. सहायक लोक अभियोजकों की नियुक्ति कौन और किस लिए करता है?

A. इनकी नियुक्ति राज्य सरकार मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों में अभियोजनों का संचालन करने के लिए करती है।

Q. मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों में किसी मामले या किसी वर्ग के मामले का संचालन करने के प्रयोजन के लिए एक या अधिक सहायक लोक अभियोजक की नियुक्ति कौन कर सकता है?

A. केन्द्रीय सरकार (धारा 25)।

Q. यदि कोई सहायक लोक अभियोजक किसी विशेष मामले के प्रयोजन के लिए उपलब्ध नहीं है, तो किसी अन्य व्यक्ति को उस मामले का भार साधक सहायक लोक अभियोजक कौन नियुक्त कर सकता है?

A. जिला मजिस्ट्रेट।

Q. कोई पुलिस अधिकारी कब सहायक लोक अभियोजक नियुक्त किया जा सकता है?

A. संहिता की धारा 25(3) के परन्तुक के अनुसार–कोई पुलिस अधिकारी निम्नलिखित दो परिस्थितियों में सहायक लोक अभियोजक नियुक्त किया जा सकता है–

(a) यदि उसने उस अपराध के अन्वेषण में भाग नहीं लिया है, जिसके बारे में अभियुक्त अभियोजित किया जा रहा है। या

(b) यदि वह निरीक्षक की पंक्ति से नीचे का नहीं है।

Q. संहिता की धारा 25 पर राजाराम बनाम बिहार राज्य, AIR 1964 SC. का मामला क्या प्रकाश डालता है?

A. इस प्रकरण में यह कहा गया है कि आबकारी अधिकारी को भी धारा 25 के प्रयोजन के लिए पुलिस अधिकारी माना जा सकता है। इसलिए ऐसा आबकारी अधिकारी जिसने किसी मामले का अन्वेषण किया है, सहायक लोक अभियोजक के रूप में नियुक्त नहीं किया जा सकता है।

Q. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम जयपाल सिंह नरेश का प्रकरण किस बिन्दु पर है?

A. यह वाद संहिता की धारा 25 (2) के परन्तुक, जिसके द्वारा राज्य सरकार को यह शक्ति प्रदान की गयी है कि वह लोक अभियोजकों को पुलिस अधिकारियों के नियंत्रण के अधीन रख सकती है के विषय पर है। यह संशोधन द्वारा उत्तर प्रदेश हेतु 1976 में योजित किया गया।

न्यायालयों की शक्ति (Power of Courts)

न्यायालयों की शक्ति अध्याय 3, धारा 26 से 35 में वर्णित है। भारतीय दण्ड संहिता के अधीन किये गये अपराध का विचारण उच्च न्यायालय द्वारा अथवा सेशन न्यायालय द्वारा या किसी ऐसे अन्य न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, जिसे दण्ड प्रक्रिया संहिता की प्रथम अनुसूची में दर्शित किया गया है।

जब किया गया अपराध भारतीय दण्ड संहिता से भिन्न किसी अन्य विधि के अधीन किया गया हो तब उसका विचारण उस न्यायालय द्वारा किया जायेगा जो उस विधि में उल्लिखित हो। उक्त विधि में किसी न्यायालय का उल्लेख न होने की स्थिति में, ऐसे अपराध का विचारण उच्च न्यायालय द्वारा अथवा द.प्र.सं. की प्रथम अनुसूची में दर्शित किसी अन्य न्यायालय द्वारा किया जा सकता है (धारा 26)।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा धारा 26 के उपखण्ड (क) के अन्त में परन्तुक जोड़ा गया जिसमें 2013 और 2018 में भी संशोधन किया गया है जो इस प्रकार है- 'भारतीय दंड संहिता की धारा 376, धारा 376 क, धारा 376 कख, धारा 376 ख, धारा 376 ग, धारा 376 घ, धारा 376 घक, धारा 376 घख या धारा 376 ङ के अधीन किसी अपराध का विचारण यथासाध्य ऐसे न्यायालय द्वारा किया जाएगा, जिसमें महिला पीठासीन अधिकारी हों'।

किशोर अपराधियों का विचारण (Trial of Juvenile Offenders)–ऐसा व्यक्ति जिसकी आयु न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने या लाये जाने के समय यदि 16 वर्ष से कम है और उसके द्वारा किया गया अपराध मृत्यु दण्ड अथवा आजीवन कारावास से दण्डनीय नहीं है तो ऐसे किशोर द्वारा कारित अपराध का विचारण या तो मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा अथवा बाल अधिनियम 1960 द्वारा या किशोर अपराधियों के उपचार प्रशिक्षण एवं पुनर्वास के लिए उपबन्ध करने वाली किसी अन्य विधि के अधीन विशेष रूप से सशक्त किये गये न्यायालय द्वारा किया जा सकता है। (धारा 27)।

किशोरों के सन्दर्भ में अधिकारिता के प्रयोग के लिए किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 वर्तमान में प्रभावी है।

न्यायालयों द्वारा दण्डादेश दिये जाने की अधिकारिता (Power of Courts to pass sentences)–उच्च न्यायालय विधि द्वारा प्राधिकृत कोई दण्डादेश दे सकता है। सेशन न्यायाधीश अथवा अपर सेशन न्यायालय भी विधि द्वारा प्राधिकृत कोई दण्ड दे सकता है। किन्तु उसके द्वारा मृत्यु दण्डादेश दिये जाने पर उच्च न्यायालय को उसे पुष्ट (Confirm) करना होगा (धारा 366 से 371)।

सहायक सेशन न्यायाधीश दस वर्ष तक की अवधि के कारावास तथा जुर्माने का दण्डादेश दे सकता है। (धारा 28)।

मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट एवं मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट सात वर्ष तक की अवधि के कारावास एवं जुर्माने का दण्डादेश दे सकता है।

प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट तथा महानगर मजिस्ट्रेट तीन वर्ष तक की अवधि का कारावास अथवा दस हजार रुपये जुर्माना या दोनों का दण्डादेश दे सकता है।

द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट एक वर्ष तक की अवधि का कारावास अथवा पाँच हजार रुपये जुर्माना या दोनों का दण्डादेश दे सकता है। (धारा 29)।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 के द्वारा संहिता की धारा 29 के उपधारा (2) में शब्द पाँच हजार रुपये के स्थान पर शब्द ''दस हजार रुपये'' तथा उपधारा (3) में शब्द ''एक हजार रुपये'' के स्थान पर शब्द ''पाँच हजार रुपये'' प्रतिस्थापित किया गया है।

किसी सिद्धदोष व्यक्ति द्वारा जुर्माना देने में व्यतिक्रम (Default) करने में न्यायिक मजिस्ट्रेट का न्यायालय ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध उतनी अवधि का कारावास अधिनिर्णीत कर सकता है, जो विधि द्वारा प्राधिकृत है, किन्तु मजिस्ट्रेट द्वारा इस रूप में निर्णीत कारावास उतनी अवधि से अधिक नहीं होगा, जितनी तक के लिए मजिस्ट्रेट धारा 29, द.प्र.सं. के अधीन सशक्त किया गया है। कारावास मुख्य दण्डादेश के एक भाग के रूप में दिये जाने की स्थिति में उस कारावास की अवधि के एक चौथाई से अधिक नहीं होगा, जिसको मजिस्ट्रेट उस अपराध के लिए देने के लिए सक्षम है, न कि जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर। दण्ड के तौर पर जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर अधिनिर्णीत कारावास, सम्बन्धित मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 29, (द.प्र.सं.) के अधीन अधिनिर्णीत की जा सकने वाली अधिकतम अवधि के कारावास के मुख्य दण्डादेश के अतिरिक्त हो सकता है (धारा 30)।

यदि अपराध भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत किया गया ऐसा अपराध है, जो मात्र जुर्माने से दण्डनीय है तो जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने के स्थिति में अधिरोपित कारावास सादा होगा तथा जुर्माना की धनराशि पचास रुपये तक होने पर अधिकतम दो मास का कारावास, जुर्माना धनराशि एक सौ रुपये होने पर अधिकतम चार मास का कारावास और किसी अन्य स्थिति में अधिकतम छह मास का कारावास अधिरोपित किया जायेगा।

किसी अभियुक्त को एक ही विचारण में एक से अधिक अपराधों के लिए दोषसिद्ध किये जाने पर न्यायालय भारतीय दण्ड संहिता की धारा 71 के अधीन रहते हुये उसे विभिन्न अपराधों के लिए उपबन्धित दण्डों में से वह दण्ड दे सकता है, जिसके लिए वह प्राधिकृत है। न्यायालय द्वारा एक साथ भोगे जाने का निदेश न दिये जाने पर, ऐसे विभिन्न दण्ड एक क्रम से प्रणीत होंगे। कई अपराधों के लिए एक साथ दिये गये विभिन्न दण्डादेशों का कुल योग उस मात्रा से अधिक हो जाने पर जिसके लिये वह न्यायालय सक्षम है, न्यायालय के लिए उस अपराधी को विचारण के लिए उच्चतर न्यायालय के समक्ष भेजना आवश्यक नहीं है किन्तु इस प्रकार विभिन्न अपराधों के लिए दिये गये दण्ड की कुल मात्रा चौदह वर्ष के कारावास के दण्ड से अधिक नहीं होगी एवं कुल दण्ड की मात्रा उस दण्ड की मात्रा के दुगुने से अधिक नहीं होगी, जिसे एक अपराध के लिए देने के लिए वह न्यायालय सक्षम है।

किन्तु दोषसिद्धि के पश्चात् अपराधी द्वारा दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील के प्रयोजन के लिए विभिन्न अपराधों के लिए दिये गये दण्डादेशों का कुल योग मिलाकर एक दण्डादेश समझा जायेगा।

प्रश्नकोश

Q. आजीवन कारावास का दण्डादेश (निम्न में से) किसके द्वारा पारित किया जा सकता है?

A. सत्र न्यायाधीश। (धारा 28(2)।

Q. हत्या के वाद में परीक्षण (निम्न में से) कौन न्यायालय कर सकता है?

A. अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश।

Q. दस वर्ष की अवधि तक के कारावास का दण्डादेश किसके द्वारा दिया जा सकता है?

A. सहायक सत्र न्यायाधीश। (धारा 28(3)।

Q. किसी सहायक सत्र न्यायाधीश के द्वारा दिया गया आजीवन कारावास का दण्ड कैसा माना जायेगा?

A. उसके शक्ति के बाहर।

Q. द्वितीय श्रेणी के दण्डाधिकारी द्वारा छल के अपराध के लिए अभियुक्त को 1 वर्ष का कारावास और 1000/- रुपये के जुर्माने से दण्डित किया जाता है। जुर्माना भुगतान न करने पर दण्डाधिकारी के द्वारा उसके बदले कारावास की अवधि अधिकतम कितनी हो सकती है?

A. तीन माह। (धारा 30(1) (ख)।

Q. भारतीय दण्ड संहिता के अधीन किये गये अपराध का विचारण कौन से न्यायालयों द्वारा किया जा सकता है?

A. संहिता की धारा 26 के अनुसार–जब किया गया अपराध भारतीय दण्ड संहिता के अधीन हो, तब उसका विचारण–

(1) उच्च न्यायालय द्वारा, या

(2) सेशन न्यायालय द्वारा, अथवा

(3) किसी ऐसे अन्य न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, जिसे इस संहिता की प्रथम अनुसूची में दर्शित किया गया है।

Q. किसी अन्य विधि के अधीन किये गये अपराध का विचारण किन न्यायालयों द्वारा किया जा सकेगा?

A. किसी अन्य विधि के अधीन अपराध की दशा में, उसका विचारण उस न्यायालय द्वारा होगा, जो कि उस विधि में उल्लिखित हो, और जब कोई न्यायालय इस प्रकार उल्लिखित नहीं किया गया है, तब उसका विचारण–

(1) उच्च न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, या

(2) किसी ऐसे अन्य न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, जो कि इस संहिता की प्रथम अनुसूची में दर्शित है।

Q. किशोर अपराधियों के विचारण के सम्बन्ध में व्यवस्था संहिता की किस धारा में की गयी है?

A. धारा 27 में।

Q. किशोर अपराधी से आप क्या समझते हैं?

A. न्यायालय के समक्ष हाजिर होने की तारीख को 16 वर्ष से कम आयु के अपराधी, किशोर अपराधी कहलाते हैं।

Q. किसी ऐसे अपराध का विचारण, जो ऐसे व्यक्ति द्वारा किया गया है, जिसकी आयु न्यायालय के समक्ष हाजिर होने की तारीख को 16 वर्ष से कम हो, किस न्यायालय द्वारा किया जायेगा?

A. मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय द्वारा या बालक अधिनियम, 1860 या किशोर अपराधियों के उपचार प्रशिक्षण और पुनर्वास के लिए उपबंध करने वाली किसी अन्य विधि के अधीन विशेष रूप से सशक्त किये गये न्यायालय द्वारा किया जायेगा। (धारा 27)।

Q. संहिता की धारा 27 के अंतर्गत 16 वर्ष से कम आयु के किशोर द्वारा कौन सा अपराध नहीं किया गया होना चाहिए?

A. ऐसा अपराध जो मृत्यु या आजीवन कारावास से दण्डनीय हो।

Q. संहिता की कौन सी धारा न्यायालयों के दाण्डिक क्षेत्राधिकार के विषय में उपबन्ध करती है?

A. धारा 28, 29, 30 एवं 31।

Q. दण्डादेश जो उच्च न्यायालय और सेशन न्यायाधीश दे सकेंगे, किस धारा में निहित है?

A. धारा - 28।

Q. किसी मामले में अधिकतम दण्ड दिया जाय या उससे कम, यह किस पर निर्भर करता है?

A. न्यायाधीश के विवेक पर।

Q. गम्भीर अपराध के लिए दण्ड का उद्देश्य ऐसे अपराध के लिए कड़ा (चेतावनी पूर्ण) दण्ड देकर ऐसे अपराध की पुनरावृत्ति को रोकना है यह किस वाद में अभिनिर्धारित किया गया है?

A. जुल्फिकार अली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य दा. नि. प्र. 1996 : 2235 (इलाहाबाद)।

Q. उच्च न्यायालय का दाण्डिक क्षेत्राधिकार क्या है?

A. उच्च न्यायालय विधि द्वारा प्राधिकृत कोई भी दण्डादेश दे सकता है। (धारा 28(1))।

Q. सेशन न्यायाधीश या अपर सेशन न्यायाधीश किस प्रकार का दण्डादेश दे सकते हैं?

A. सेशन न्यायाधीश या अपर सेशन न्यायाधीश भी विधि द्वारा प्राधिकृत कोई भी दण्डादेश दे सकता है।

Q. सेशन न्यायाधीश के दाण्डिक शक्ति की क्या सीमा है?

A. सेशन न्यायाधीश द्वारा मृत्यु दण्डादेश दिये जाने की स्थिति में उसकी उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किया जाना आवश्यक होगा। (धारा 28(2))।

Q. सहायक सेशन न्यायाधीश का दाण्डिक क्षेत्राधिकार क्या है?

A. संहिता की धारा 28(3) के अनुसार सहायक सेशन न्यायाधीश मृत्यु या आजीवन कारावास या दस वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास के दण्डादेश के सिवाय विधि द्वारा प्राधिकृत कोई दण्डादेश दे सकता है।

Q. संहिता की कौन सी धारा मजिस्ट्रेटों के दाण्डिक क्षेत्राधिकार के बारे में उपबन्ध करती है?

A. धारा 29।

Q. मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट किस प्रकार का दण्डादेश दे सकेंगे?

A. धारा 29(1) के अनुसार–मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट 7 वर्ष से अनधिक अवधि तक विधि द्वारा प्राधिकृत कोई भी दण्डादेश दे सकेंगे।

Q. प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट का दाण्डिक क्षेत्राधिकार क्या है?

A. धारा 29 (2) के अनुसार–प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट का न्यायालय तीन वर्ष से अनधिक अवधि के लिए कारावास का या दस हजार रुपये से अनधिक जुर्माने का या दोनों का दण्डादेश दे सकता है।

Q. द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट का न्यायालय किस प्रकार का दण्डादेश दे सकेंगे?

A. ये एक वर्ष से अनधिक अवधि के लिए कारावास का या 5000 रुपये से अनधिक जुर्माने का या दोनों का दण्डादेश दे सकेंगे।

Q. जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर मजिस्ट्रेट क्या दण्डादेश दे सकेंगे?

A. धारा 30 के अनुसार–किसी मजिस्ट्रेट का न्यायालय जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर इतनी अवधि का कारावास अधिनिर्णीत कर सकता है, जो विधि द्वारा प्राधिकृत है, परन्तु वह अवधि, धारा 29 में दी गयी मजिस्ट्रेट की शक्ति से अधिक नहीं होगी।

Q. जहां कारावास मुख्य दण्डादेश के भाग के रूप में अधिनिर्णीत किया जाता है, वहां उस कारावास की अवधि कितनी होगी?

A. ऐसी स्थिति में वह उस कारावास की अवधि के एक चौथाई से अधिक न होगी जिसको मजिस्ट्रेट उस अपराध के लिए न कि जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर, दण्ड के तौर पर देने में सक्षम है।

Q. धारा 30 के अन्तर्गत जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर क्या कारावास मुख्य कारावास के साथ होगा?

A. धारा 30 के अंतर्गत दिया गया कारावास उस मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 29 के अधीन निर्णीत की जा सकने वाली अधिकतम अवधि के कारावास के मुख्य दण्डादेश के अतिरिक्त होगा।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 31 में क्या उपबंध है?

A. इस धारा के अनुसार–

(1) यदि किसी व्यक्ति पर एक से अधिक धाराओं का आरोप है तो सबके लिए अलग-अलग सजा भोगी जायेगी, जब तक अन्यथा निर्दिष्ट न हो,

(2) यदि दण्ड का योग मजिस्ट्रेट की क्षमता से अधिक होता है तो केवल उसी के लिए अन्य न्यायालय में अन्तरित करने की आवश्यकता नहीं होगी।

(3) अपील के सम्बन्ध में यदि जोड़ने से कारावास की अवधि अधिक होती है, तो अपील हो सकेगी।

(4) इकट्ठा अवधि 14 वर्ष से अधिक नहीं होगी और वह संकलित दण्ड की मात्रा मजिस्ट्रेट की क्षमता के दोगुने से अधिक नहीं होगी।

Q. जबकि अपराध केवल जुर्माने से दण्डनीय है तब जुर्माना न अदा करने पर कारावास की प्रकृति और अवधि क्या होगी?

A. संहिता की धारा 30 के प्रकाश में यदि अपराध केवल जुर्माने से दण्डनीय है, तब जुर्माना न अदा करने पर कारावास की प्रकृति सादा होगी। यदि जुर्माना 1 से 50 रुपये तक है, तो कारावास की अवधि 2 माह की, और यदि 50 से अधिक और 100 रुपये तक जुर्माऐना है, तो कारावास की अवधि 4 माह की होगी, यदि जुर्माना 100 रु. से अधिक कितना भी है तो, कारावास की अवधि 6 माह की होगी। लेकिन 6 महीने से अधिक सजा किसी भी दशा में नहीं होगी।

Q. न्यायाधीशों और मजिस्ट्रेटों की शक्तियों का उनके पद-उत्तरवर्तियों द्वारा प्रयोग किया जा सकना, किस धारा में निहित है?

A. धारा 35

नोट–संहिता का अध्याय 4, धारा 36 से 40 में वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों की शक्तियों (धारा 36), जनता द्वारा मजिस्ट्रेट और पुलिस अधिकारियों की सहायता किए जाने की आबद्धता (धारा 37), वारण्ट निष्पादक की सहायता (धारा 38), जनता द्वारा कुछ अपराधों की सूचना दिया जाना (धारा 39) और ग्राम के मामलों में नियोजित अधिकारियों का रिपोर्ट के कर्त्तव्य (धारा 40) के बारे में उपबंध किया गया है।

व्यक्तियों की गिरफ्तारी (Arrest of Persons) (धारा 41-60)

दण्ड प्रक्रिया संहिता में गिरफ्तारी को परिभाषित नहीं किया गया है किन्तु सामान्य अर्थ में 'विधिक प्राधिकार के अन्तर्गत किसी व्यक्ति को दैहिक स्वतन्त्रता से वंचित करने को गिरफ्तारी कहते हैं।

वास्तव में राज्य में विधि-व्यवस्था' बनाये रखने का प्राथमिक उत्तरदायित्व पुलिस का होता है। इस क्रम में समाज में कारित अपराधों पर नियंत्रण करना उसकी प्रथम उत्तरदायित्व बनता है, जिसे वह अपराधी/अभियुक्त को उसके द्वारा कारित अपराध के आरोप/संदेह में गिरफ्तार करके तथा दण्ड-न्यायालयों में उसे अभियोजित और दण्डित कराके पूर्ण करती है।

गत कुछ दशकों से पुलिस की गिरफ्तारी-प्रक्रिया और गिरफ्तार व्यक्ति के अधिकारों पर अनेक विवाद राष्ट्र के समक्ष उत्पन्न हुए जिनका निस्तारण समय-समय पर उच्चतम न्यायालय अपने मार्गदर्शक निर्णयों के माध्यम से करता रहा। इस बीच विधि आयोग की 177वीं रिपोर्ट पर विचार करते हुए केन्द्र सरकार के द्वारा गिरफ्तारी से सम्बन्धित विधि/विधियों की समीक्षा करते हुए दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 5 (धारा 41 से 60) में व्यापक परिवर्तन किया गया है। इस संशोधन के द्वारा न केवल धारा 41 में संशोधन किया गया है बल्कि नयी धारा 41 क, 41 ख, 41 ग और 41 घ भी जोड़ा गया है। इसके अतिरिक्त धारा 46 में संशोधन, धारा 54 के स्थान पर नयी धारा और धारा 55 क और 60 क भी नयी धारा के रुप में जोड़ा गया है। गिरफ्तारी सम्बन्धी अनेक कठिनाइयों को देखते हुए पुनः दण्ड प्रक्रिया संहिता संशोधन अधिनियम, 2010 के द्वारा धारा 41 में संशोधन किया गया।

पुलिस वारण्ट के बिना कब गिरफ्तार कर सकेगी–

संहिता की धारा 41 के अन्तर्गत किसी व्यक्ति के गिरफ्तारी के लिए व्यापक शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं। वर्ष 2008के संशोधन के द्वारा धारा 41 के उपधारा (1) के खण्ड (क) और (ख) तथा उपधारा (2) को पूरी तरह से परिवर्तित कर दिया गया है। अतः संशोधित रुप में निम्नलिखित परिस्थितियों में ''कोई पुलिस अधिकारी मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना और वारण्ट के बिना किसी ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकता है–

(i) जो पुलिस अधिकारी की उपस्थिति में कोई संज्ञेय अपराध कारित करता है; (उपधारा (क))

(ii) जिसके विरुद्ध कोई युक्तियुक्त परिवाद किया गया है या विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई हो या युक्तियुक्त संदेह हो कि उसने ऐसी अवधि के कारावास से दण्डनीय संज्ञेय अपराध किया है जिसकी अवधि सात वर्ष से अनधिक की हो सकेगी, चाहे जुर्माना सहित या रहित। परन्तु इस उपधारा के अधीन गिरफ्तारी निम्नलिखित के लिए निम्न शर्तें पूर्ण होना आवश्यक है–

(i) पुलिस अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत परिवाद, सूचना या संदेह ऐसा हो कि उसके समक्ष विश्वास करने का कारण विद्यमान है कि ऐसे व्यक्ति ने ही उक्त अपराध किया है;

(ii) पुलिस अधिकारी को यह भी समाधान हो जाना चाहिए कि ऐसी गिरफ्तारी निम्न कारणों से अपेक्षित हैं–

(क) कोई अग्रेतर अपराध कारित करने से ऐसे व्यक्ति को रोकने के लिए; या

(ख) अपराध का उचित अन्वेषण करने के लिए; या

(ग) ऐसे व्यक्ति को अपराध से सम्बन्धित साक्ष्य को नष्ट करने अथवा छेड़छाड़ करने से रोकने के लिए;

(घ) ऐसे व्यक्ति को मामले के तथ्यों से अवगत किसी व्यक्ति को कोई उत्प्रेरणा, धमकी, या वचन देने से निवारित करने के लिए; या

(ङ) ऐसे व्यक्ति को न्यायालय उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए।

यह भी आवश्यक है कि सम्बन्धित पुलिस अधिकारी अपने समाधान के कारणों को लेखबद्ध करेगा। (उपधारा (ख))।

इस खण्ड में दण्ड प्रक्रिया सहिता (संशोधन) अधिनियम, 2010 जो 2-11-2010 से प्रभावी भी हो गया है, के द्वारा निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा गया है-

''परन्तु यह तब जबकि कोई पुलिस अधिकारी, उन सभी मामलों में जहां किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी की इस उपधारा के उपबंधों के अधीन अपेक्षा नहीं की जाती है वहां गिरफ्तारी न करने के कारणों को अभिलिखित करेगा''।

(iii) जिसके विरुद्ध विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई है कि उसने ऐसे दण्ड से दण्डनीय अपराध किया है, जिसमें दण्डादेश सात वर्ष से अधिक का कारावास या मृत्युदण्ड हो सकता है, चाहे जुर्माना रहित या सहित, और पुलिस अधिकारी के पास ऐसा विश्वास करने का कारण है कि ऐसे व्यक्ति ने उक्त अपराध किया है; (उपधारा (ख, क))।

(iv) जो इस संहिता के अधीन या राज्य सरकार के द्वारा उद्घोषित अपराधी है; (धारा 41 (1)(ग))।

(v) जिसके कब्जे में कोई ऐसी चीज पायी जाती है जिसके विरुद्ध चुराई हुई सम्पत्ति होने का या जिस पर ऐसी चीज के बारे में अपराध करने का उचित रुप से संदेह किया जा सकता है; (धारा 41 (1) (घ))।

(vi) जो पुलिस अधिकारी को उसके कर्त्तव्य निर्वहन में बाधा पहुँचाता है या जो विधिपूर्ण अभिरक्षा से निकल भागा है या निकल भागने का प्रयत्न करता है; (धारा 41 (1)(ङ))।

(vii) जिस पर संघ के किसी सशस्त्र बल से अभित्याजक होने का उचित संदेह है; (धारा 41 (1)(च))।

(viii) जो भारत से बाहर भारत में दण्डनीय अपराध कारित करन के लिए प्रत्यर्पण के अधीन या भारत में अन्यथा पकड़े जाने का या अभिरक्षा में निरुद्ध किए जाने का भागी है या ऐसे सम्बद्ध रह चुका है या जिसके बारे में ऐसा परिवाद/इत्तिला/उचित संदेह है कि वह ऐसे सम्बद्ध रह चुका है; (धारा 41 (1)(छ))।

(ix) जो छोड़े गए सिद्ध दोष होते हुए धारा 356 (5) के अधीन किसी नियम का उल्लंघन करता है; (धारा 41 (1)(ज))।

(x) जिसकी गिरफ्तारी के लिए किसी अन्य पुलिस से लिखित या मौखिक अध्यपेक्षा प्राप्त हो चुकी है (धारा 41 (1) (झ))''।

संहिता में वर्ष 2008 के संशोधन के द्वारा धारा 41 (2) को भी नये उपबंधों के साथ अन्तः स्थापित किया गया है, जिसमें प्रावधान किया गया है कि धारा 42 के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, किसी भी ऐसे व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के वारण्ट या आदेश के सिवाय गिरफ्तार नहीं किया जायेगा जो किसी असंज्ञेय अपराध से सम्बन्धित है या जिसके विरुद्ध परिवाद किया गया है या विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई है या उसके इस प्रकार सम्बद्ध होने की युक्तियुक्त संदेह विद्यमान है। इसी के साथ-साथ धारा 41 क, ख, ग और घ को भी जोड़ा गया, जिनमें निम्न प्रावधान किए गए हैं–

1. पुलिस अधिकारी के समक्ष उपस्थित होने के लिए सूचना–

(1) उन सभी मामलों में, जिनमें धारा 41 (1) के प्रावधानों के अधीन किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी आवश्यक नहीं है, पुलिस अधिकारी, उस व्यक्ति को जिसके विरुद्ध युक्तिमुक्त परिवाद किया गया है या विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई है या युक्तियुक्त संदेह विद्यमान है कि उसने संज्ञेय अपराध कारित किया है, अपने समक्ष या अन्य स्थान पर उपस्थिति होने का निर्देश करने वाला सूचना जारी कर सकता है, जैसा कि सूचना में विनिर्दिष्ट किया जाये।

(2) जहां किसी व्यक्ति को उपधारा (1) के अधीन ऐसी सूचना जारी किया जाता है, उस व्यक्ति का यह कर्त्तव्य होगा कि वह सूचना के शर्तों का अनुपालन करे।

(3) जहां ऐसा व्यक्ति सूचना का अनुपालन करता है या अनुपालन निरन्तर करता रहता है, तब उसे अपराध के सम्बन्ध में, जिसे सूचना में निर्दिष्ट किया गया है, गिरफ्तार नहीं किया जायेगा, जब तक कि लेखबद्ध किए गए कारणों से पुलिस अधिकारीगण में यह राय न हो कि उसे गिरफ्तार किया जाना चाहिए।

(4) जहां ऐसा व्यक्ति, सूचना में निर्दिष्ट शर्तों का अनुपालन करने में विफल रहता है, तब पुलिस अधिकारी के लिए यह वैध होगा कि वह ऐसे आदेशों जैसा सक्षम न्यायालय के द्वारा इस निमित्त जारी किए जाये, के अधीन रहते हुए, सूचना में निर्दिष्ट अपराधों के लिए उस व्यक्ति को गिरफ्तार कर ले। (धारा 41क)।

वस्तुतः यह नव स्थापित धारा पुलिस को उन मामलों में किसी अपराधी या अपराधी प्रतीत होने वाले व्यक्ति की गिरफ्तारी के लिए उन मामलों में सशक्त करती है जब परिस्थितियाँ ऐसी हो कि उसे धारा 41 (1) के अन्तर्गत वारण्ट के बिना गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है। ऐसे मामलों में गिरफ्तारी न्यायालय के आदेश से ही किया जा सकता है।

गिरफ्तारी की प्रक्रिया तथा गिरफ्तार करने वाले अधिकारी के कर्त्तव्य

नव स्थापित धारा 41 ख के अनुसार प्रत्येक पुलिस अधिकारी कोई गिरफ्तारी करने के दौरान निम्नलिखित प्रक्रियाओं का अनुपालन करेगा–

(क) अपने नाम का सही, दृश्यमान तथा पहचान धारण करेगा जिससे उसकी पहचान सहज हो सके।

(ख) गिरफ्तारी का एक ऐसा ज्ञापन तैयार करेगा जिसे कम से कम एक ऐसे साक्षी के द्वारा प्रमाणित किय जायेगा जो गिरफ्तार किए गए व्यक्ति के परिवार का सदस्य हो वह उस मुहल्ले का सम्मानित सदस्य हो, जहां गिरफ्तारी किया गया। ऐसे ज्ञापन पर गिरफ्तार व्यक्ति का भी हस्ताक्षर कराया जायेगा।

(ग) गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को सूचित करेगा कि उसे अपने गिरफ्तारी के विषय में उसके द्वारा नामित किसी नातेदार या मित्र को सूचित किए जाने का अधिकार है।

नियंत्रण कक्षों की स्थापना

नव स्थापित धारा 41 ग के अन्तर्गत यह उपबंध किया गया है कि राज्य सरकार राज्य के प्रत्येक जनपदों में तथा राज्य स्तर एक पुलिस नियंत्रण कक्ष की स्थापना करेगी। ऐसे नियंत्रण कक्षों के बाहर एक सूचना पट्ट पर गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों के नाम तथा पता और उन पुलिस अधिकारियों के नाम तथा पदनाम राज्य द्वारा प्रदर्शित किया जायेगा, जिन्होंने गिरफ्तारी किया है।

इसी प्रकार उपधारा (3) में यह उपबंधित किया गया है कि राज्य सरकार राज्य स्तरीय नियंत्रण कक्ष समय-समय पर गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों के विवरण, अपराध की प्रकृति, जिसके लिए वे आरोपित किए गए हैं, को एकत्र करेगी और जन सामान्य की सूचना के लिए एक आकड़ा आधार अनुरक्षित करेगी।

पूछताछ के दौरान अपने अधिवक्ता से मिलने का अधिकार

जब किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किया जाता है और पुलिस के द्वारा उससे पूछताछ किया जाता है तब पूछताछ के दौरान, उसे पसन्द के अधिवक्ता से मिलने का अधिकार होगा, किन्तु यह अधिकार सम्पूर्ण पूछताछ के अवधि के दौरान प्राप्त नहीं होगा। (धारा 41 घ)।

उपर्युक्त संशोधनों एवं नव स्थापित प्रावधानों के अतिरिक्त गिरफ्तारी से सम्बन्धित अन्य संबंध यथावत् रखे गये हैं। इस अध्याय के अन्तर्गत जो अन्य संशोधन/परिवर्तन किये गये हैं, वे यथोचित स्थान पर वर्णित हैं।

नाम और निवास बताने से इंकार करने पर गिरफ्तारी

जब कोई व्यक्ति, जिसने पुलिस अधिकारी की उपस्थिति में संज्ञेय अपराध किया है या उस पर ऐसा अपराध करने का अभियोग लगाया गया है, उस अधिकारी की मांग पर अपना नाम और निवास बताने से इंकार करता है या मिथ्या नाम या निवास को प्रकट करता है, तब नाम और निवास को अभिनिश्चित करने के लिए उस व्यक्ति को उक्त पुलिस अधिकारी गिरफ्तार कर सकता है, किन्तु नाम और पता के सुनिश्चित हो जाने पर उसे प्रतिभूओं सहित या रहित छोड़ दिया जायेगा। यदि उपर्युक्त प्रक्रिया का 24घंटे के भीतर अनुपालन विफल रहती है तो गिरफ्तार व्यक्ति को निकटतम मजिस्ट्रेट के पास भेजा जायेगा। (धारा 43)।

प्राइवेट व्यक्ति द्वारा (बिना वारण्ट) गिरफ्तारी (Arrest without a warrant by a Private Person)– प्राइवेट व्यक्ति अपनी उपस्थिति मे अजमानतीय एवं संज्ञेय अपराध करने वाले व्यक्ति को अथवा किसी उद्घोषित अपराधी (Proclaimed offender) को गिरफ्तार कर सकता है। (धारा 43 (1))।

मजिस्ट्रेट द्वारा (बिना वारण्ट) गिरफ्तारी (Arrest without a warrant by a Magistrate)–कोई मजिस्ट्रेट कार्यपालक (Executive) या न्यायिक किसी व्यक्ति को बिना वारण्ट के गिरफ्तार कर सकता है, जो उसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्तर्गत या उसकी उपस्थिति में कोई अपराध करता है, अथवा अपनी स्थानीय अधिकारिता के अन्तर्गत जिस व्यक्ति की गिरफ्तारी का वारण्ट जारी करने के लिए वह (मजिस्ट्रेट) सक्षम है। (धारा 44)।

गिरफ्तारी से संरक्षण (Protiection from arrest) – अपने पदीय कर्तव्य के निर्वहन में, सशस्त्र बल के किसी सदस्य द्वारा की गयी अथवा किये जाने के लिए तात्पर्यित किसी बात के लिए उसे तब तक गिरफ्तार नहीं किया जायेगा, जब तक कि सशस्त्र बल को नियंत्रित करने वाली सरकार की सहमति न प्राप्त कर ली गयी हो। (धारा 45)।

अधीनस्थ न्यायिक अधिकारियों की गिरफ्तारी पर अपनायी जाने वाली प्रक्रिया

यदि किसी अपराध के लिए किसी न्यायिक अधिकारी को गिरफ्तार किया जाना है, तो इसकी सूचना यथास्थिति जिला न्यायाधीश या उच्च न्यायालय को दी जानी चाहिए।

उच्चतम न्यायालय के द्वारा इस विषय पर निम्न मानक नियत किए गए हैं-

- अधीनस्थ न्यायापालिका के किसी न्यायिक अधिकारी की यथाशीघ्र गिरफ्तारी अपेक्षित होने पर ही उसकी औपचारिक (Formal of Technical) गिरफ्तारी की जानी चाहिए।
- इस गिरफ्तारी की सूचना यथाशीघ्र सम्बन्धित जिले के जिला एवं सत्र न्यायाधीश तथा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को दी जानी चाहिए।
- इस प्रकार गिरफ्तार किये गये न्यायिक अधिकारी को सम्बन्धित जिले के जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पूर्व आदेश या निर्देश के बिना थाना (Police Station) नहीं ले जाया जायेगा।

- गिरफ्तार न्यायिक अधिकारी को यथाशीघ्र अपने परिजनों (Family members) विधिक सलाहकारों तथा जिल एवं सत्र न्यायाधीश सहित न्यायिक अधिकारियों को सूचना देने के लिए सुविधा उपलब्ध करायी जायेगी।
- गिरफ्तार न्यायिक अधिकारी के विधिक सलाहकार अथवा समान या उच्च स्तर के किसी अन्य न्यायिक अधिकारी की उपस्थिति को बिना गिरफ्तार न्यायिक अधिकारी का न तो कोई कथन अभिलिखित किया जायेगा न पंचनामा भरा जायेगा तथा न ही चिकित्सकीय परीक्षण किया जायेगा।
- गिरफ्तारी न्यायिक अधिकारी को हथकड़ी नहीं लगायी जायेगी, यदि गिरफ्तारी का हिंसक प्रतिरोध किया जाता है, या गिरफ्तारी करने वाले व्यक्ति के जीवन एवं अंग की तत्काल खतरे से बचाने के लिए आवश्यक हो तो बल प्रयोग एवं हथकड़ी लगायी जा सकती है किन्तु ऐसी स्थिति में इसकी सूचना तत्काल सम्बन्धित जिला एवं सत्र न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को भी दी जायेगी।
- गिरफ्तारी एवं हथकड़ी **औचित्यहीन (Unjustified)** होने की स्थिति में, गिरफ्तारी करने वाला पुलिस अधिकारी **दुराचरण (Misconduct)** का दोषी होगा तथा उच्च न्यायालय द्वारा संक्षेपतः विचारण के अनुसार मुआवजा या क्षतिपूर्ति (Damage) के लिए व्यक्तिशः (Personally) दायी होगा। (दिल्ली न्यायिक सेवा संघ, तीस हजारी न्यायालय बनाम गुजरात राज्य, 1991, S.C.C.)।

महिला की गिरफ्तारी

उच्चतम न्यायालय के अनुसार किसी महिला की गिरफ्तारी के समय एक महिला कान्सटेबिल की उपस्थिति के सभी प्रयास किये जाने चाहिए किन्तु ऐसी स्थितियों में जहां गिरफ्तारी करने वाला अधिकारी युक्तियुक्ततः सन्तुष्ट हो कि महिला कान्सटेबिल की उपस्थिति उपलब्ध नही है तथा महिला कान्स्टेबिल की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए गिरफ्तारी में होने वाला विलम्ब अन्वेषण में बाधक होगा, तो ऐसी स्थिति में गिरफ्तारी करने वाला अधिकारी, गिरफ्तारी के कारणों को अभिलिखित करते हुये, मामले की परिस्थितियों के अनुसार किसी महिला कान्सटेबिल की उपस्थिति के बिना, रात या दिन किसी भी समय, किसी अपराध में आरोपित महिला को गिरफ्तार करवा सकता है, **(महाराष्ट्र राज्य बनाम क्रिश्चियन कम्युनिटी वेलफेयर काउंसिल ऑफ इण्डिया S.C.C. 2004)।**

वर्ष 2005 ई. में दण्ड प्रक्रिया संहिता में जोड़ी गयी धारा 46 (4) के अनुसार, 'अपवादक स्थितियों के अतिरिक्त किसी महिला को सूर्यास्त के पश्चात् एवं सूर्योदय के पूर्व गिरफ्तार नहीं किया जाना चाहिए, और जहां ऐसी अपवादक परिस्थितियाँ अस्तित्ववान हो वहां महिला पुलिस अधिकारी को, न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, जिसके क्षेत्राधिकार में अपराध हुआ है या गिरफ्तारी की जानी है की पूर्वानुमति प्राप्त करना चाहिए।

गिरफ्तारी की प्रक्रिया (Precedure for arrest) – गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति के शरीर को वस्तुतः छूकर या उसे परिरुद्ध (Confine) कर गिरफ्तारी की जाती है किन्तु गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति को परिरुद्ध तभी किया जाता है जब वह अपने वचन अथवा कर्म द्वारा स्वयं को अभिरक्षा में समर्पित न कर दे, (धारा 46 (1))।

किन्तु दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) 2008 के द्वारा धारा 46 (1) में यह परन्तुक जोड़ा गया है कि जहां किसी स्त्री को गिरफ्तार किया जाता है, जब तक परिस्थितियाँ प्रतिकूल संकेत न दे, तब तक गिरफ्तारी की मौखिक सूचना पर अभिरक्षा में उसके समर्पण की उपधारणा की जायेगी और जब तक परिस्थितियाँ अन्यथा अपेक्षा न करे अन्यथा जब तक पुलिस अधिकारी महिला न हो, पुलिस अधिकारी, स्त्री की गिरफ्तारी के लिए उसके शरीर को स्पर्श न करे।

गिरफ्तार व्यक्ति को निकल भागने से रोकने के लिए आवश्यक मात्रा से अधिक **अवरुद्ध (Restraint)** नहीं किया जायेगा। (धारा 49)।

गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति द्वारा बलपूर्वक गिरफ्तारी का प्रतिरोध किये जाने अथवा गिरफ्तारी से बचने का प्रयास किये जाने पर, उसके विरुद्ध प्रत्येक आवश्यक साधन का प्रयोग किया जा सकता है, (धारा 46 (2)द.प्र.सं.) किन्तु गिरफ्तार किये जा रहे व्यक्ति पर इतना बल प्रयोग नहीं किया जा सकता कि उससे, उसकी मृत्यु हो जाये, ऐसा उसी स्थिति में किया जा सकता है, जब गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति पर ऐसे अपराध का आरोप है, जिसके लिए उसे मृत्यु अथवा आजीवन कारावास का दण्ड दिया जा सकता है। (धारा 46 (3))।

किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने के लिए मात्र इतना ही पर्याप्त है कि गिरफ्तार किया जाने वाला व्यक्ति अपने वचन या कर्म द्वारा स्वयं को अभिरक्षा में समर्पित कर दे। **(गुरुबख्श सिंह सिब्बिया बनाम पंजाब राज्य, 1980, S.C.C.)।**

गिरफ्तार किये जाने व्यक्ति से यह कहना मात्र कि, ''तुम्हें गिरफ्तार किया जाता है'' गिरफ्तारी की संरचना नहीं करता है चारों ओर से घेर लेना या 'निगरानी रखना' भी गिरफ्तारी निर्मित नहीं करता है। गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को **हथकड़ी (Handcuff)** अपवाद स्वरुप ही लगायी जानी चाहिए।

जेल से न्यायालय के बीच कैदी को लाने तथा ले जाने के समय हथकड़ी नहीं लगायी जानी चाहिए तथा यदि हथकड़ी लगाना आवश्यक हो तो उसे लगाने के कारणों को अभिलिखित करते हुये उसके औचित्य को बताया जाना चाहिए। यदि हथकड़ी लगाने का आदेश देने वाले प्राधिकारी के कारणों तथा औचित्यों को न्यायालय अपना अनुमोदन प्रदान नहीं करता तो हथकड़ी लगाया जाना अवैध होगा। **बेड़ी (Fetters)** का प्रयोग भी, मजिस्ट्रेट के आदेश के अधीन ही किया जाना चाहिए (सिटिजन्स फॉर डेमोक्रेसी बनाम असम राज्य 1995, S.C.C.)।

उच्चतम न्यायालय ने किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी अथवा निरोध में रखने के लिए दिलीप के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1997, S.C.C.) के बाद में 11 सूत्रीय निर्देश अभिधारित किये हैं जो निम्न हैं–

(i) गिरफ्तारी कर रहे एवं गिरफ्तार व्यक्ति से पूछताछ कर रहे पुलिस कर्मियों को अपने पद नाम के साथ अपने नाम की पटिटका का (Name-Tag) तथा यथार्थ दृष्टिगोचर एवं स्पष्ट पहचान धारण करना चाहिए। गिरफ्तार व्यक्ति से पूछताछ कर रहे पुलिस कर्मियों की विवरणियों को एक पंजिका (Register) में अभिलिखित करना होगा।

(ii) गिरफ्तारी कर रहे पुलिस कर्मियों को गिरफ्तारी के समय एक ज्ञापन (Memo) तैयार करना होगा, जिसे न्यूनतम एक साक्षी द्वारा साक्ष्यांकित करना होगा जो गिरफ्तार किये गये व्यक्ति के परिवार का एक सदस्य होगा, या गिरफ्तारी किये जाने वाले स्थान का एक प्रतिष्ठित व्यक्ति होगा। ज्ञापन गिरफ्तार किये गये व्यक्ति द्वारा भी प्रति हस्ताक्षरित होगा एवं उस पर गिरफ्तारी का समय तथा तिथि भी उल्लिखित होगी।

(iii) गिरफ्तार किये गये अथवा निरोध में थाने (Police Station) या पूछताछ केन्द्र (Interrogation Centre)अथवा हवालात (Lockup) में अभिरक्षा में रखे गये व्यक्ति को यह अधिकार है कि व्यवहार्यतः यथा शीघ्र उसके किसी मित्र या नातेदार अथवा उसके कल्याण में अभिरुचि रखने वाले व्यक्ति को उसकी गिरफ्तारी तथा निरुद्ध किये गये स्थान की सूचना दी जाये जबकि गिरफ्तारी ज्ञापन का साक्ष्यांकन, साक्षी स्वयं गिरफ्तार-व्यक्ति का मित्र अथवा नातेदार न हो।

(iv) यदि गिरफ्तार किये गये व्यक्ति का निकटतम मित्र या नातेदार उस जिले अथवा नगर के बाहर रहते हो तो उसकी गिरफ्तारी का समय, स्थान तथा उसकी अभिरक्षा का स्थान पुलिस द्वारा, गिरफ्तार (Arrestee) व्यक्ति के मित्र या नातेदार को, गिरफ्तारी के पश्चात् 08 से 12 घण्टे की अवधि के अन्दर अधिसूचित किया जाना चाहिए।

(v) गिरफ्तार किये गये व्यक्ति की गिरफ्तारी अथवा निरोध के पश्चात् यथाशीघ्र उसे इस अधिकार की सूचना दी जानी चाहिए कि वह अपनी गिरफ्तारी अथवा निरोध की सूचना किसी को दे सकता है।

(vi) निरोध के स्थान पर, गिरफ्तार व्यक्ति के उस निकटतम मित्र का नाम जिसे गिरफ्तारी की सूचना दी गयी, एवं उन पुलिस अधिकारियों का नाम तथा विवरण जिनकी अभिरक्षा में गिरफ्तार व्यक्ति रखा गया है, की प्रविष्टि एक डायरी में की जायेगी।

(vii) गिरफ्तार व्यक्ति के निवेदन पर गिरफ्तारी के समय उसकी क्षतियों (Injuries) की परीक्षा करायी जायेगी, जो उसके शरीर पर पायी जाये तथा उसे अभिलिखत किया जायेगा, उस निरीक्षण ज्ञापन पर गिरफ्तार व्यक्ति तथा गिरफ्तारी करने वाले पुलिस अधिकारी के हस्ताक्षर होंगे, एवं उसकी एक प्रति गिरफ्तार व्यक्ति को दी जायेगी।

(viii) अभिरक्षा में निरोध (Detention) के दौरान गिरफ्तार व्यक्ति की प्रति 48 घण्टे पर सम्बन्धित राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के निदेशक स्वास्थ्य सेवाओं द्वारा नियुक्त अनुमोदित चिकित्सकों के पैनल (Panel) के एक प्रशिक्षित चिकित्सक द्वारा चिकित्सकीय परीक्षा करायी जायेगी।

निदेशक स्वास्थ्य सेवायें सभी तहसीलों एवं जिलों के लिए प्रशिक्षित चिकित्सकों का पैनल तैयार करेगा।

(ix) गिरफ्तारी का ज्ञापन (Memo ofarrest) सहित समस्त कागजातों की प्रतियां, इलाका मजिस्ट्रेट को उसके अभिलेख के (Record) के लिए भेजी जायेगी।

(x) गिरफ्तार व्यक्ति को पूछताछ के दौरान, न कि पूछताछ की सम्पूर्ण अवधि में, अपने वकील (Lawyer) से मिलने की अनुमति दी जा सकती है।

(xi) प्रत्येक जिलों तथा राज्य मुख्यालय पर एक पुलिस नियंत्रण कक्ष (Police Control Room) स्थापित करना होगा, जहां गिरफ्तारी करने वाले अधिकारी द्वारा गिरफ्तारी तथा गिरफ्तार व्यक्ति के अभिरक्षा के स्थान की सूचना गिरफ्तारी के 12 घण्टे के भीतर दी जायेगी, तथा पुलिस नियंत्रण कक्ष में इसे किसी सहज दृश्य सूचना पटल (Conspicuous notice board) पर प्रदर्शित किया जायेगा।

उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त आदेश का अनुपालन न करने वाले अधिकारी विभागीय कार्यवाही के साथ ही न्यायालय अवमान के लिए भी दण्डित किये जा सकते हैं तथा न्यायालय अवमान की कार्यवाही मामले पर अधिकारिता (Jurisdiction) रखने वाले उच्च न्यायालय में संस्थित की जा सकती है।

उपरोक्त निर्देश उन प्राधिकारियों (Authorities) पर भी लागू है, जिन्हें पूछताछ के लिए व्यक्तियों को गिरफ्तार एवं निरोध (Detain) करने की शक्ति प्राप्त है यथा राजस्व अभिसूचना, निदेशालय (D.R.I.) प्रवर्तन निदेशालय (E.D.), केन्द्रीय जांच ब्यूरो (C.B.I.) आपराधिक अभिसूचना विभाग (C.I.D.) केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल (C.I.S.F.) रेलवे सुरक्षा बल (R.P.F.) आदि।

अवैध गिरफ्तारी एवं निरोध से पीड़ित व्यक्ति के मुआवजे के अधिकार (Right to Compensation) प्राप्त हैं। (नीलावती बेहरा बनाम उड़ीसा राज्य, 1993, S.C.C.)। ऐसा व्यक्ति, भारतीय दण्ड संहिता में उपबन्धित धारा 96से 106 के प्रावधानों के अनुसार आत्मरक्षा के अधिकार का भी प्रयोग कर सकता है। गिरफ्तारी का प्राधिकार रखने वाले लोक सेवक द्वारा जानबूझकर (Knowingly) विधि के उल्लंघन में, किसी व्यक्ति को अवैध रुप से गिरफ्तार किये जाने पर ऐसे लोक सेवक को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 220 के अन्तर्गत अभियोजित किया जा सकता है तथा पुलिस अधिकारी को पुलिस अधिनियम, 1861 की धारा 29 के अन्तर्गत भी दण्डित किया जा सकता है।

किसी व्यक्ति द्वारा किसी अन्य व्यक्ति को अवैध रुप से गिरफ्तार किये जाने पर इस प्रकार अवैध गिरफ्तारी करने वाले व्यक्ति को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 342 के अन्तर्गत सदोष परिरोध (Wrongful Confinement) के लिए दण्डित किया जा सकता है। साथ ही पीड़ित व्यक्ति अवैध गिरफ्तारी करने वाले व्यक्ति के विरुद्ध अपकृत्य विधि के अन्तर्गत मिथ्या कारावास (False imprisonment) के लिए नुकसानी का वादा भी ला सकता है।

गिरफ्तारी के प्रयास

(Attempt for arrest)

जिस स्थान पर गिरफ्तार किया जाने वाला व्यक्ति प्रविष्ट हुआ है, उसकी तलाशी लेने का प्राधिकार उसे वारण्ट के अधीन गिरफ्तार करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति या पुलिस अधिकारी को होता है, (धारा 47 (1) द.प्र.सं.) तथा अपने प्रयोजन की सूचना देने एवं प्रवेश की मांग करने के बाद भी यदि ऐसे स्थान पर गिरफ्तारी के लिए प्राधिकृत व्यक्ति एवं पुलिस अधिकारी को प्रवेश न दिया जाये तो ऐसे स्थान में प्रवेश के लिए पुलिस अधिकारी को प्रवेश न दिया जाये तो ऐसे स्थान में प्रवेश के लिए पुलिस अधिकारी उसके किसी बाहरी या भीतरी द्वार अथवा खिड़की को तोड़कर, खोलकर उसमें प्रवेश कर उसकी तलाशी ले सकते हैं, किन्तु यदि ऐसा कोई स्थान, गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति से भिन्न, ऐसा कमरा है, जो रुढ़ि के अनुसार लोगों के सामने न आने वाली स्त्री के वास्तविक अधिभोग में है, तो गिरफ्तारी के लिए प्राधिकृत व्यक्ति, अथवा पुलिस अधिकारी उस स्त्री को वहां से हट जाने की सूचना एवं सुविधा देने के पश्चात् उस कमरे को तोड़कर खोल सकता है, तथा उसमें प्रवेश कर सकता है, (धारा 47 (2)) और इस प्रकार तलाशी लेने के दौरान गिरफ्तारी के लिए प्राधिकृत व्यक्ति अथवा पुलिस अधिकारी स्वयं को या किसी अन्य व्यक्ति को जो गिरफ्तार करने के प्रयोजन से विधिपूर्ण प्रवेश करने के बाद किसी गृह अथवा स्थान में निरुद्ध है, को मुक्त करने के लिए ऐसे घर या स्थान की कोई बाहरी अथवा भीतरी द्वार या खिड़की तोड़कर खोल सकते हैं। (धारा 47(3))।

विधिपूर्ण अभिरक्षा से निकल भागने वाले या छुड़ा लिये जाने वाले व्यक्ति की गिरफ्तारी के लिए यदि यह विश्वास करने का कारण है कि इस प्रकार निकल भागने वाला या छुड़ा लिया जाने वाला व्यक्ति किसी स्थान में प्रविष्ट हुआ है, अथवा उसके अन्दर है, तो उसकी गिरफ्तारी के लिए उपरोक्त प्रकार से तलाशी ली जा सकती है चाहे ऐसी गिरफ्तारी करने वाला व्यक्ति वारण्ट के अधीन कार्य न कर रहा हो तथा ऐसा पुलिस अधिकारी हो जिसे गिरफ्तार करने का प्राधिकार न हो। (धारा 60 (2))।

यदि कोई व्यक्ति, किसी अधिकारी की विधिपूर्ण अभिरक्षा से निकल भागता है, अथवा छुड़ा लिया जाता है, तो उसे अभिरक्षा में लेने वाला अधिकारी उसका तुरन्त पीछा कर, उसे भारत के किसी भी स्थान में गिरफ्तार कर सकता है। (धारा 60 (1) द.प्र.सं.)।

किन्तु गिरफ्तारी के लिए वांछित अथवा अभिरक्षा से निकल भागने या छुड़ा लिये जाने वाले व्यक्ति का पीछा करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति मात्र भारत की सीमा के अन्दर तक सीमित है, ऐसे व्यक्ति की गिरफ्तारी के लिए वह भारत से बाहर किसी अन्य राष्ट्र की सीमा में प्रवेश नहीं कर सकता। (राधा किशन बनाम इम्परर, A.I.R. 1920 लाहौर)।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा धारा 60 के बाद एक नयी धारा 60क अन्तःस्थापित करके यह स्पष्ट प्रावधान किया गया है कि

''कोई भी गिरफ्तारी इस संहिता अथवा गिरफ्तारी का प्रावधान करने के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के प्रावधानों के सिवाय नहीं की जायेगी''।

किसी व्यक्ति को बिना वारण्ट गिरफ्तार करने के लिए, कोई पुलिस अधिकारी, गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति के अपराध अथवा अन्य कारण का लिखित उल्लेख करते हुए अपने किसी अधीनस्थ अधिकारी को उसे गिरफ्तार करने के लिए प्रतिनियुक्त कर सकता है। इस प्रकार प्रतिनियुक्त किया गया अधिकारी गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति को गिरफ्तार करने के पहले अपने उच्चाधिकारी के आदेश का सार उसे बात कर तथा गिरफ्तार किये जाने वाले

व्यक्ति द्वारा मांग किये जाने पर उस आदेश को दिखाकर, उसे गिरफ्तार कर सकता है। (धारा 55,द.प्र.सं.)।

बिना वारण्ट के गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति को उसकी गिरफ्तारी करने वाले पुलिस अधिकारी अथवा अन्य व्यक्ति द्वारा उसके गिरफ्तारी के कारण यथाशीघ्र बताने होंगे (धारा 50(1)द.प्र.सं.)। यह प्रावधान भारत के संविधान में प्रत्याभूत इस मौलिक अधिकार का अनुसरण करता है कि किसी व्यक्ति को गिरफ्तारी के कारण बताये बिना अभिरक्षा में नहीं रखा जायेगा (अनुच्छेद 22(1)। अतः वारण्ट के बिना गिरफ्तार किये व्यक्ति को उसकी गिरफ्तारी के कारणों से अवगत नहीं कराने की स्थिति में उसकी गिरफ्तारी अवैध होगी।

उच्चतम न्यायालय द्वारा दिलीप कुमार बसु वाद (1997 S.C.C.) में दिये गये विनिश्चय के अनुरुप दण्ड प्रक्रिया संहिता संशोधन अधिनियम 2005 द्वारा संहिता में धारा 50A अन्तःस्थापित करके 'गिरफ्तारी करने वाले व्यक्ति को, गिरफ्तारी आदि के बारे में नामित व्यक्ति को जानकारी देने की बाध्यता' का प्रावधान किया गया है। इस सन्दर्भ में गिरफ्तार व्यक्ति जिस मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है उस पर यह कर्तव्य अधिरोपित किया गया है कि वह (मजिस्ट्रेट) अपना समाधान करे कि, गिरफ्तार व्यक्ति की गिरफ्तारी आदि के बारे में नामित व्यक्ति को समुचित जानकारी दी गयी है, अथवा नहीं (धारा 50A)।

बिना वारण्ट गिरफ्तार किये गये जमानतीय अपराध के अभियुक्त को गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारी का यह दायित्व है कि वह ऐसे व्यक्ति को यह सूचित करे कि वह जमानत पर छोड़े जाने का हकदार है तथा इसके लिए **प्रतिभुओ (Sureties)** का प्रबन्ध करे (धारा 50(2))। थाने का भारसाधक अधिकारी कुछ स्थितियों में जमानतीय अपराधों में भी धारा 437 के अधीन जमानत लेने के सक्षम बनाया गया है।

जमानत पर नहीं छोड़े जाने वाले गिरफ्तार व्यक्ति की पुलिस अधिकारी तलाशी लेकर, पहनने के आवश्यक वस्त्रों को छोड़कर, उसके पास पायी गयी प्रत्येक वस्तु को सुरक्षित अभिरक्षा में रखेगा, तथा अभिगृहीत एवं कब्जे में ली गयी सभी वस्तुओं को दर्शित करने वाली एक रसीद गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को देगा (धारा 51 (1))।

स्त्री की तलाशी, अन्य स्त्री द्वारा शिष्टतापूर्वक ली जायेगी (धारा 51 (2))।

गिरफ्तारी करने वाला अधिकारी या व्यक्ति गिरफ्तार किये गये व्यक्ति के शरीर पर पाये गये आक्रामक आयुधों को लेकर, गिरफ्तार व्यक्ति को पेश करने के लिए अपेक्षित न्यायालय अथवा अधिकारी को उन्हें परिदत्त करेगा (धारा 52)।

तलाशी लेते समय साक्षियों की मौजूदगी जरुरी नहीं है किन्तु उत्तर प्रदेश पुलिस रेगुलेशन (पैरा 154) के अन्तर्गत साक्षियों के उपलब्ध होने पर उनके सामने तलाशी ली जानी चाहिए।

चिकित्सकीय परीक्षण (Medical Examination)– पुलिस अधिकारी की प्रार्थना पर चिकित्सा व्यवसायी द्वारा अभियुक्त की परीक्षा का प्रावधान, संहिता की धारा 53, बलात्संग के अपराधी व्यक्ति की चिकित्सा व्यवसायी द्वारा परीक्षा का प्रावधान धारा 53A एवं गिरफ्तार व्यक्ति की प्रार्थना पर गिरफ्तार व्यक्ति की चिकित्सा व्यवसायी द्वारा परीक्षा का प्रावधान धारा 54 में किया गया है।

यदि अभिकथित अपराध की प्रकृति या परिस्थितियों से यह युक्तियुक्त आधार उत्पन्न होता है कि चिकित्सकीय परीक्षण कराने से अपराध घटित होने का सबूत (Evidence) मिल सकता है, तो धारा 53 के अन्तर्गत पुलिस अधिकारी (जो उपनिरीक्षक से नीचे की पंक्ति का न हो) अभिरक्षा में रखे गये अभियुक्त को चिकित्सकीय जांच के लिए विवश कर सकता है। इसी प्रकार बलात्संग (Rape) अथवा बलात्संग का प्रयत्न करने के आरोप में गिरफ्तार व्यक्ति की चिकित्सकीय परीक्षा से अपराध के बारे में साक्ष्य प्राप्त करने के उचित आधार होने पर, पुलिस अधिकारी बलात्संग के अभियुक्त को चिकित्सकीय जांच के लिए विवश कर सकता है।

विधि आयोग ने काठी कालू औघड़ बनाम राज्य, A.I.R. 1961, S.C. के बाद में दिये गये विनिश्चय पर विचार करते हुये अपने 37वें प्रतिवेदन में यह अभिमत व्यक्त किया था कि उक्त विनिश्चय ने अनुच्छेद 20 (3) के अन्तर्गत प्रत्याभूत विशेषाधिकार को मात्र लिखित या मौखिक परिसाक्ष्य तक ही सीमित रखा है। चिकित्सकीय परीक्षण कराने वाला उपबन्ध अनुच्छेद 20 (3) के अन्तर्गत न्यायिक परिनिरीक्षण से गुजर सकता है।

विधिवेत्ताओं का मत था कि चिकित्सकीय जांच के कई रुप हो सकते हैं। कभी-कभी यह अभियुक्त के लिए कष्टकारक भी हो सकती है। अतः बेहतर होता कि न्यायालय ऐसी व्यवस्था दे कि किस प्रकार की जांच धारा 53 के प्रयोजनों के लिए युक्तियुक्त आवश्यक मानी जा सकती है।

अब विधायिका ने दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 द्वारा विधिवेत्ताओं के उक्त मत को व्यावहारिक स्वरुप प्रदान करते हुये धारा 53 (2) में स्पष्टीकरण (क) प्रतिस्थापित (Substitute) करके जांच के प्रकारों का स्पष्ट उल्लेख कर दिया है तथा नयी अन्तःस्थापित (Insert) की गयी धारा 53 A की उपधारा (2) में परीक्षा की रिपोर्ट में दी जाने वाली विशिष्टियों (Particulars) को भी सुस्पष्ट कर दिया है। अतः अब धारा 53 एवं 53A के उपबन्ध आत्म अभिशंसन के विरुद्ध सांविधानिक विशेषाधिकार का अतिक्रमण नहीं करते हैं।

मूल अधिनियम की धारा 54 जिसे वर्ष 2005 के संशोधन के द्वारा संशोधित भी किया गया था, को वर्ष 2008 में दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम के धारा 8 के द्वारा पुनः बिल्कुल नये प्रावधानों के साथ अन्तः स्थापित किया गया है, जो निम्नवत् है:

''गिरफ्तार किए गए व्यक्ति की चिकित्साधिकारी द्वारा परीक्षा–

(1) जब किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किया जाता है, तब गिरफ्तार किए जाने के तुरन्त बाद उसका परीक्षण किसी ऐसे चिकित्सा अधिकारी के द्वारा जो केन्द्रीय अथवा राज्य सरकार की सेवा में और यदि चिकित्सा अधिकारी उपलब्ध नहीं है, तब पंजीकृत चिकित्सा व्यवसायी के द्वारा किया जायेगा;

परन्तु यदि गिरफ्तार किया गया व्यक्ति कोई महिला है तब उसके शरीर का परीक्षण केवल महिला चिकित्सा-अधिकारी के द्वारा या उसके पर्यवेक्षण में और यदि महिला चिकित्सा अधिकारी उपलब्ध नहीं है तब किसी पंजीकृत महिला चिकित्सा व्यवसायी के द्वारा किया जायेगा।

(2) गिरफ्तारी किए गए व्यक्ति का इस प्रकार परीक्षण करने वाला चिकित्सा अधिकारी अथवा चिकित्सा व्यवसायी ऐसे परीक्षण का अभिलेख, गिरफ्तार किए गए व्यक्ति के शरीर पर किसी हिंसा या क्षति के चिन्ह और वह अनुमानित समय जब ऐसी हिंसा या क्षतियाँ कारित की गयी, का उल्लेख करते हुए तैयार करेगा।

(3) जहां उपधारा (1) के अन्तर्गत कोई परीक्षण किया जाता है, तब ऐसे परीक्षण की रिपोर्ट का एक प्रति चिकित्सा अधिकारी या पंजीकृत चिकित्सा व्यवसायी के द्वारा गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को या ऐसे गिरफ्तार किए गए व्यक्ति के द्वारा नामित किसी व्यक्ति को प्रदान की जायेगी।

वर्तमान संशोधन का विधायिका का आशय स्पष्ट है कि किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किए जाने के बाद उसका चिकित्सकीय परीक्षण कराया जाना तथा चिकित्सा जांच की रिपोर्ट की प्रति गिरफ्तार व्यक्ति को प्रदान किया जाना आज्ञापक है।

शिनाख्त परेड (परीक्षण) –

उत्तर प्रदेश सरकार ने संहिता में 1984 ई. में किये गये संशोधन में नयी धारा 54A अन्तःस्थापित कर अभियुक्त की शिनाख्त परीक्षण का प्रावधान किया था। केन्द्रीय विधायिका द्वारा भी दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 द्वारा धारा 54A अन्तःस्थापित कर 'गिरफ्तार व्यक्ति की शिनाख्त' का प्रावधान किया है, किन्तु उ.प्र. राज्य संशोधन की धारा 54A के अन्तर्गत गिरफ्तार व्यक्ति का किसी, अधिकारिता रखने वाले न्यायालय द्वारा शिनाख्त परीक्षण, किसी साक्षी द्वारा आवश्यक समझे जाने पर, ऐसे न्यायालय के निर्देश के अधीन, गिरफ्तार व्यक्ति का शिनाख्त परीक्षण कार्यापालक मजिस्ट्रेट द्वारा करने का उपबन्ध किया गया है, जबकि केन्द्रीय विधायिका द्वारा किये गये संशोधन के अनुसार अन्तः स्थापित की गयी, धारा 54A में गिरफ्तार व्यक्ति की शिनाख्त किसी अन्य व्यक्ति अथवा व्यक्तियों द्वारा, अपराध के अन्वेषण के लिए आवश्यक समझे जाने पर, अधिकारिता रखने वाला न्यायालय, पुलिस थाने के भार साधक अधिकारी के निवेदन पर, किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा, गिरफ्तार व्यक्ति की शिनाख्त का आदेश दे सकता है' अतः स्पष्ट है कि उ.प्र. राज्य संशोधन की तुलना में केन्द्रीय विधायिका द्वारा अन्तः स्थापित धारा अधिक विस्तृत है।

दण्ड विधि (संशोधन) अधिनियम, 2013 द्वारा धारा 54 क में दो परंतुक जोड़े गए हैं, वे इस प्रकार हैं- परंतु यदि गिरफ्तार किए गए व्यक्ति की शिनाख्त करने वाला व्यक्ति मानसिक या शारीरिक रूप से निःशक्त है, तो शिनाख्त करने की ऐसी प्रक्रिया न्यायिक मजिस्ट्रेट के पर्यवेक्षण के अधीन होगी जो यह सुनिश्चित करने के लिए समुचित कदम उठाएगा कि उस व्यक्ति द्वारा गिरफ्तार किए गए व्यक्ति की उन पद्धतियों का प्रयोग करते हुए शिनाख्त की जाए, जो उस व्यक्ति के लिए सुविधापूर्ण हो।

परंतु यह और कि यदि गिरफ्तार किए गए व्यक्ति की शिनाख्त करने वाला व्यक्ति मानसिक या शारीरिक रूप से निःशक्त है, तो शिनाख्त किए जाने की प्रक्रिया की वीडियो फिल्म तैयार की जाएगी।

उच्चतम न्यायालय के द्वारा अनेक वादों में गम्भीर चिन्ताओं और टिप्पणियों से प्रेरित होकर केन्द्र सरकार ने दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा संहिता की धारा 55 के बाद नयी धारा 55क अन्तः स्थापित किया है जिसमें प्रावधान किया गया है कि किसी अभियुक्त की अभिरक्षा रखने वाले व्यक्ति का यह कर्त्तव्य होगा कि वह अभियुक्त के स्वास्थ्य तथा सुरक्षा का युक्तियुक्त देख-रेख करे। यह प्रावधान वस्तुतः अभिरक्षा के दौरान होने वाली अभियुक्त व्यक्ति हत्या अथवा मृत्यु को दृष्टिगत रखते हुये किया गया है।

यह संशोधन मुख्यतः ब्रिटेन के साथ भारत के द्वारा किए गए प्रत्यर्पण संधि को प्रवर्तित कराने के लिए किया गया है। इस निमित्त इस अध्याय में धारा

यह संशोधन मुख्यतः ब्रिटेन के साथ भारत के द्वारा किए गए प्रत्यर्पण संधि को प्रवर्तित कराने के लिए किया गया है। इस निमित्त इस अध्याय में धारा 104-क से धारा 105-ठ तक जोड़कर उसमें विशेष प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है।

बिना वारण्ट के गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को यथाशीघ्र मजिस्ट्रेट अथवा पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी के समक्ष ले जाया जाना चाहिए (धारा 56,द.प्र.सं.)। संविधान के अनुच्छेद 22(2) में प्रत्याभूत इस मूलाधिकार कि, 'किसी व्यक्ति को गिरफ्तारी से चौबीस घण्टे की अवधि में, निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया जायेगा' द.प्र. संहिता की धारा 57 में उक्त मूलाधिकार को अभिपुष्ट करते हुये गिरफ्तारी से चौबीस घण्टे के अन्दर गिरफ्तार व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया जायेगा, का उपबन्ध किया गया है तथा चौबीस घण्टे के अन्दर अन्वेषण पूरा न हो सकने पर पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी अथवा अन्वेषणकर्ता पुलिस अधिकारी, जो उपनिरीक्षक स्तर (Rank) से नीचे का न हो, न्यायालय से गिरफ्तार व्यक्ति के और अधिक निरुद्ध करने की नियुक्त करने की अनुमति का अनुरोध कर सकता है (अन्तर्गत धारा 167, द.प्र.सं.)।

पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी का यह दायित्व है कि वह अपने थाने की सीमा के अन्दर, बिना वारण्ट के गिरफ्तार किये गये सब व्यक्तियों के बारे में जिला मजिस्ट्रेट अथवा उसके निर्देश पर **उपखण्ड मजिस्ट्रेट (Sub-divisional Magistrate)** को सूचना करें, चाहे गिरफ्तार व्यक्तियों की जमानत ले ली गयी हो, अथवा नहीं (धारा 58 द.प्र.सं.)।

गिरफ्तार किये गये व्यक्ति का उन्मोचन उसी के बन्धपत्र (Bond) पर अथवा जमानत पर या मजिस्ट्रेट के विशेष आदेश के अधीन किया जा सकता है। (धारा 59द.प्र.सं.)।

गिरफ्तार व्यक्ति को 24 घण्टे से अधिक समय तक निरुद्ध किये जाने पर उसे गिरफ्तार करने वाला अधिकारी या व्यक्ति अवैध अभिरक्षा के लिए दायित्वाधीन होगा (शरीफ भाई बनाम अब्दुल रज्जाक AIR 1961 बाम्बे) अवैध रुप से गिरफ्तार किया जा रहा व्यक्ति ऐसी गिरफ्तारी के निवारण के लिए आत्मरक्षा के अधिकारी का प्रयोग कर सकता है। (जोगेन्द्र नाथ मुखर्जी 1897 कलकत्ता)।

प्रश्नकोश

प्र.– किस धारा के अधीन अपराध की जानकारी होने पर भी जानने वाले व्यक्ति के लिए यह आबद्ध कर है कि वह निकट के मजिस्ट्रेट या पुलिस अधिकारी को उसकी सूचना दे?

उ.– धारा 39 (1)।

प्र. – दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अन्तर्गत पुलिस अभियुक्त को बिना वारण्ट के गिरफ्तार कर सकती है?

उ. – धारा 41।

प्र.– कौन सा पुलिस अधिकारी वारण्ट के बिना ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकता है जिस पर संघ के सशस्त्रों बलों से भाग जाने का संदेह है?

उ.– कोई भी पुलिस अधिकारी। (धारा 41 (1) (च)।

प्र.– 'अ' एक मजिस्ट्रेट अपनी स्थानीय अधिकारिता के भीतर जब सुबह टहलने जाता है, तो उसके सामने कत्ल हो जाता है, क्या वह अपराधी को स्वयं गिरफ्तार कर सकता है?

उ.– हां धारा 44 (1)।

प्र.– असाधारण परिस्थितियों के सिवाय, कोई भी स्त्री सूर्यास्त के पश्चात् और सूर्योदय के पूर्व गिरफ्तार नहीं की जायेगी और जहां ऐसी गिरफ्तारी की असाधारण परिस्थितियाँ विद्यमान हैं, वहां महिला पुलिस अधिकारी किसकी पूर्व अनुज्ञा प्राप्त करेगी?

उ.– प्रथम श्रेणी के न्यायिक दण्डाधिकारी। धारा 46 (4)। द.प्र.सं. (सं.) अधि. 2005 द्वारा अन्तःस्थापित)।

प्र.– दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 50 यह उपबंध करती है कि बिना वारण्ट गिरफ्तार व्यक्ति को गिरफ्तारी के आधार और यदि गिरफ्तारी जमानतीय अपराध के लिए हुई हो तो उसके जमानत के अधिकार संसूचित किए जायेंगे। इस धारा के उपबंधों के अननुपालन का क्या प्रभाव होता है?

उ.– इससे सम्बन्धित व्यक्ति की गिरफ्तारी एवं निरोध अवैध हो जायेगी तथा गिरफ्तार व्यक्ति को अपनी रिहाई हेतु बंदी प्रत्यीक्षकरण समावेदन करने के लिए समर्थ बना देंगे।

प्र.– किसी चिकित्सा व्यवसायी द्वारा अभियुक्त का बलात् परीक्षण की प्रकृति क्या होगी?

उ.– विधि द्वारा अधिकृत। (धारा 53(1))।

प्र.– बिना वारण्ट के गिरफ्तार करने के बाद, मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना पुलिस अधिकारी द्वारा गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को अभिरक्षा में रखने की अवधि कितनी हो सकती है?

उ.– 24 घंटे। (धारा 57)।

प्र.– बिना वारण्ट के गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों की सूचना थाने के भारसाधक अधिकारी के द्वारा किसे दी जायेगी?

उ.– जिला दण्डाधिकारी या उप खंड दण्डाधिकारी को। (धारा 58)।

अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के किस धारा के अन्तर्गत यह प्रावधान किया गया है कि किसी अभियुक्त की अभिरक्षा रखने वाले व्यक्ति का यह कर्त्तव्य होगा कि वह अभियुक्त के सुरक्षा की युक्तियुक्त देख-रेख करे?

A. धारा 55क।

Q. प्रत्येक जिला मुख्यालयों पर एक नियंत्रण कक्ष की स्थापना किसके द्वारा किया जायेगा?

A. राज्य सरकार के द्वारा। (धारा 41ग)।

Q. किसी गिरफ्तार किए गए ब्यक्ति की चिकित्सकीय परीक्षण की रिपोर्ट अभियुक्त व्यक्ति को किसके द्वारा प्रदान किया जायेगा?

A. चिकित्साधिकारी या पंजीकृत चिकित्सा व्यवसायी के द्वारा जिसने परीक्षण किया। (धारा 54(3)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 के किस अध्याय में धाराओं में व्यक्तियों की गिरफ्तारी के सम्बन्ध में उपबन्ध किये गये हैं?

A. संहिता के अध्याय 5 (धारा 41 से लेकर 60 तक)।

Q. संहिता की धारा 41 में क्या प्रावधान किये गये हैं?

A. धारा 41 में उन स्थितियों का उल्लेख किया गया है, जिनमें मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना और वारण्ट के बिना पुलिस अधिकारी किसी व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकती है।

Q. गिरफ्तारी क्या है?

A. जब किसी व्यक्ति को उसकी स्वतंत्रता से विधिक आधार पर विधिक प्रक्रिया के माध्यम से परिरुद्ध किया जाता है या निरुद्ध किया जाता है, तो उसे गिरफ्तार किया जाता है, यह कहा जाता है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अंतर्गत प्राइवेट व्यक्ति द्वारा गिरफ्तारी की जा सकती है?

A. धारा 43 के अंतर्गत।

Q. कोई प्राइवेट व्यक्ति किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी किन दशाओं में कर सकता है?

A. जब गिरफ्तार किया जाने वाला व्यक्ति ऐसे व्यक्ति की उपस्थिति में अजमानतीय और संज्ञेय अपराध करता है या कोई उद्घोषित अपराधी है।

Q. संहिता की धारा 44 के अंतर्गत अपराधियों की गिरफ्तारी कौन से लोग कर सकते हैं?

A. इस धारा के अंतर्गत कार्यपालक मजिस्ट्रेट या न्यायिक मजिस्ट्रेट की उपस्थिति में और उनकी स्थानीय अधिकारिता के अंदर अपराध किये जाने पर अपराधी को उनके द्वारा गिरफ्तार किया जा सकता है या गिरफ्तारी हेतु अन्य व्यक्तियों को आदेश दे सकते हैं।

Q. यदि मजिस्ट्रेट यह पाता है कि किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने के लिए वारण्ट जारी किया जाना चाहिए तो वह क्या कर सकता है?

A. धारा 44 (2) के अंतर्गत ऐसी दशा में वह ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकता है या अपनी उपस्थिति में उसकी गिरफ्तारी का निदेश दे सकता है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अंतर्गत गिरफ्तारी की रीति बतायी गयी है?

A. धारा 46 के अंतर्गत।

Q. गिरफ्तारी के सम्बन्ध में हरमोहन लाल बनाम इम्परर, 1929 क्रि. लॉ. जर्नल के बाद में क्या अभिमत व्यक्त किया गया?

A. इस प्रकरण में यह कहा गया कि यदि गिरफ्तार करने वाले व्यक्ति से यह कहा जाता है कि ''तुम्हें गिरफ्तार किया जाता है तो मात्र यह कह देना ही गिरफ्तारी की संरचना नहीं कर देता''। जब तक कि इस शब्दोच्चारण के बाद व्यक्ति अपने को अभिरक्षा में समर्पित नहीं कर देता।

Q. किस प्रकरण में विचाराधीन कैदियों के सम्बन्ध में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह कहा गया कि ''कारागार से न्यायालय के बीच कैदी को लाने और ले जाने के समय हथकड़ी से छूट होनी चाहिए हथकड़ी अपवाद स्वरुप ही लगायी जाये और उसके लगाने के कारणों को स्पष्ट अभिलिखित करते हुए उसके औचित्य को बताया जाना चाहिए''?

A. प्रेमशंकर शुक्ला बनाम दिल्ली प्रशासन, 1980 SC. के प्रकरण में।

Q. गिरफ्तारी के समय आवश्यक साधनों का प्रयोग करते समय गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति की मृत्यु कब कारित की जा सकती है?

A. धारा 46 के खण्ड (3) के अनुसार - जब गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति पर उस अपराध को करने का अभियोग है, जिसके लिए मृत्यु या आजीवन कारावास का दण्ड दिया जा सकता हो, तो आवश्यक बल का प्रयोग करते समय ऐसे व्यक्ति की मृत्यु कारित की जा सकती है।

Q. गिरफ्तार व्यक्तियों के क्या अधिकार हैं?

A. आवश्यकता से अधिक निरुद्ध न किये जाने, गिरफ्तारी का आधार जानने, जमानत की सूचना पाने, विधि सम्मत तलाशी लिये जाने, चिकित्सीय परीक्षण कराने, निःशुल्क विधिक सहायता पाने जैसे प्राइवेट व्यक्तियों के ही अधिकार प्राप्त है। (धारा 49, 50, 51, 54, 57, 303 एवं 304 इत्यादि)।

Q. संहिता की धारा 47 में क्या उपबंध किया गया है?

A. इस धारा के उपबंध गिरफ्तारी करने वाले व्यक्ति या पुलिस अधिकारी को उस स्थान की तलाशी लेने के लिए सशक्त करते हैं जिससे वह व्यक्ति प्रविष्ट हुआ है जिसकी गिरफ्तारी की जानी है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 49 क्या उपबंध करती है?

A. धारा 49 के अनुसार - गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को उससे अधिक अवरुद्ध न किया जायेगा जितना उसको निकल भागने से रोकने के लिए आवश्यक है।

Q. संहिता की धारा 49 में अन्तर्विष्ट नियम अनावश्यक अवरोध न करने से सम्बन्धित प्रमुख वाद कौन-कौन से हैं?

A. सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन, 1978 S.C., प्रेम शंकर शुक्ल बनाम दिल्ली प्रशासन, 1980 S.C. एवं डी. के. बासू बनाम वेस्ट बंगाल, 1997।

Q. संहिता की धारा 50 में गिरफ्तारी के सम्बन्ध में क्या उपबंध किया गया है?

A. धारा 50 खण्ड (1) में गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को गिरफ्तारी का आधार संसूचित किये जाने का अधिकार एवं धारा 50(2) में जमानत के आधार को सूचित किये जाने का अधिकार उपबंधित है।

Q. गिरफ्तारी के विषय पर अजीत कुमार शर्मा बनाम स्टेट ऑफ असम, 1976 सी. आर. एल. जे. के वाद में क्या अवधारित किया गया?

A. इस वाद में यह अवधारित किया गया कि यदि गिरफ्तार व्यक्ति शपथ पर यह कह दे कि उसे जमानत का आधार नहीं बतलाया गया तो यह सिद्ध किये जाने का भार पुलिस पर चला जायेगा।

Q. संहिता की धारा 53 में अभियुक्त की शारीरिक परीक्षा के लिए आवेदन कौन कर सकता है?

A. पुलिस अधिकारी जो उप-निरीक्षक की पंक्ति से नीचे का न हो।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत गिरफ्तार व्यक्ति की प्रार्थना पर गिरफ्तार व्यक्ति की चिकित्सा व्यवसायी द्वारा परीक्षा कराने की व्यवस्था है?

A. धारा 54 के अंतर्गत।

Q. संहिता की धारा 54 के अंतर्गत् गिरफ्तार व्यक्ति द्वारा अपने शरीर की चिकित्सीय परीक्षण कराने के लिए मजिस्ट्रेट से प्रार्थना करने की पीछे मूल उद्देश्य क्या है?

A. इसके पीछे मूल उद्देश्य है यह कि गिरफ्तार व्यक्ति के शरीर की परीक्षा से ऐसा साक्ष्य प्रकट होगा जो उसके द्वारा किसी अपराध के किये जाने को नासाबित कर देगा या जो साबित करेगा कि उसके शरीर के विरुद्ध किसी अन्य व्यक्ति ने कोई अपराध किया था।

Q. संहिता की धारा 54 के सम्बन्ध में किस वाद में यह कहा गया कि शारीरिक परीक्षण में बाहरी और आन्तरिक परीक्षण शामिल हैं?

A. जमशेद बनाम स्टेट ऑफ यू. पी., 1976 के वाद में।

Q. शीला बनाम स्टेट ऑफ महाराष्ट्र, 1983 के प्रकरण में क्या अवधारित किया गया?

A. इस प्रकरण में यह अवधारित किया गया कि मजिस्ट्रेट का यह कर्तव्य है कि वह गिरफ्तार व्यक्ति को यह बताये कि उन्हें अपने शारीरिक परीक्षण का अधिकार है, और वे चाहे तो निवेदन कर सकते हैं।

Q. शिनाख्त परीक्षण से सम्बन्धित उपबंध संहिता की किस धारा में व्यवस्थित है?

A. धारा 54 (क) में।

Q. संहिता की धारा 55 में क्या उपबंध किया गया है?

A. पुलिस अधिकारी द्वारा वारण्ट के बिना गिरफ्तार करने के लिए अपने अधीनस्थ की प्रतिनियुक्ति की व्यवस्था है। तब वह अधिकारी अपने अधीनस्थ को उस व्यकति का नाम, अपराध का कारण जिसके लिए गिरफ्तार किया जाना है, लिखित रुप में आदेश पारित करेगा और ऐसा अधीनस्थ अधिकारी गिरफ्तारी के पहले उस व्यक्ति को सूचित करेगा और माँगे जाने पर लिखित आदेश दिखा भी देगा।

Q. संहिता की धारा 57 क्या व्यवस्था करती है?

A. धारा 57 के अनुसार – जब तक कि धारा 167 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन अभियुक्त को प्रतिप्रेषण पर न ले लिया जाय, अभियुक्त व्यक्ति को 24 घण्टे से अधिक अवधि के लिए निरुद्ध नहीं किया जा सकता। इस 24 घण्टे में से गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट के समक्ष तक की यात्रा के लिए आवश्यक समय को निकाल दिया जायेगा।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 57 के उपबंध किस सांविधानिक प्रत्याभूति को प्रभावी बनाते हैं?

A. धारा 57 के उपबंध संविधान के अनुच्छेद 22 (2) के प्रावधान अर्थात् गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को 24 घण्टे से अधिक अवधि तक निरुद्ध न किया जायेगा, को प्रभावी बनाते हैं।

Q. शरीफ बाई बनाम अब्दुल रज्जाक, ए. आई. आर. 1961 बाम्बे, के प्रकरण में संहिता की धारा 57 के सम्बन्ध में क्या विचार प्रकट किये गये?

A. इस वाद में कहा गया कि 24 घण्टे से अधिक निरुद्ध किये जाने पर ऐसा गिरफ्तार करने वाला व्यक्ति अवैध हिरासत का दोषी होगा।

Q. किस वाद में यह मत व्यक्त किया गया कि अवैध गिरफ्तारी के विरुद्ध गिरफ्तार व्यक्ति को आत्मरक्षा की शक्ति के प्रयोग का अधिकार है?

A. यह मत जोगेन्द्र नाथ मुखर्जी जर्नल, 1897 कलकत्ता के वाद में प्रकट किया गया।

Q. बिना वारण्ट की गिरफ्तारी का तार्किक आधार क्या है?

A. मजिस्ट्रेट द्वारा वारण्ट जारी किये जाने तक ऐसा व्यक्ति अपने को छिपा सकता है या भाग सकता है या अपनी सुरक्षा का कोई अन्य उपाय ढूढ़ सकता है।

Q. संहिता की धारा 58 में क्या उपबंध किया गया है?

A. इस धारा के अनुसार - पुलिस थानों के भारसाधक अधिकारी अपने-अपने थानों की सीमाओं के अंदर बिना वारण्ट गिरफ्तार किये गये व्यक्तियों के मामलों की रिपोर्ट, जिला मजिस्ट्रेट को या उसके निदेश पर उपखण्ड मजिस्ट्रेट को करेंगे।

Q. संहिता की धारा 59 के अंतर्गत पुलिस अधिकारी द्वारा गिरफ्तार किये गये किसी व्यक्ति का उन्मोचन किन आधारों पर किया जा सकेगा?

A. ऐसे व्यक्ति का उन्मोचन, उसी के बन्धपत्र पर या जमानत पर या मजिस्ट्रेट के विशेष आदेश के अधीन ही किया जा सकेगा।

Q. यदि कोई व्यक्ति विधिपूर्ण अभिरक्षा में से निकल भागता है या छुड़ा लिया जाता है तो वह व्यक्ति जिसकी अभिरक्षा में से वह निकल भागता है या छुड़ा लिया जाता है क्या कर सकता है?

A. ऐसा व्यक्ति उसका तुरन्त पीछा कर सकता है और भारत के किसी स्थान में उसे गिरफ्तार कर सकता है।

हाजिर होने एवं चीजें पेश करने को विवश करने के लिए आदेशिकाएं (Process to compel appearance) (धारा 61-105)

समन (Summons)

समन को संहिता में परिभाषित नहीं किया गया है। धारा 2 (ब) के अन्तर्गत 'समन-मामला' के सम्बन्ध में यह कहा गया है कि समन मामला से ऐसा मामला अभिप्रेत है जो किसी अपराध से सम्बन्धित और जो वारण्ट मामला (अर्थात् मृत्यु, आजीवन कारावास या दो वर्ष से अधिक की अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध) नहीं है। अतः ऐसे किसी समनीय-मामले में न्यायालय के समक्ष हाजिर होने के लिए जब कभी न्यायालय के द्वारा कोई आदेशिका जारी किया जाता है तो उसे समन कहा जाता है। दूसरे शब्दों में समन एक ऐसी आदेशिका है, जिसके द्वारा किसी व्यक्ति से न्यायालय में हाजिर होने की अपेक्षा की जाती है। यह आदेशिका **लिखित (In writting)** दो प्रतियों में जारी करने वाले न्यायालय के पीठासीन अधिकारी या उच्च न्यायालय के नियम द्वारा विनिर्दिष्ट अन्य अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित एवं न्यायालय की **मुद्रा (Seal)** युक्त होनी चाहिए (धारा 61 द.प्र.सं.)।

अभियुक्त को समन संहिता की द्वितीय अनुसूची के प्रारुप संख्या-I के अनुसार परिशान्ति भंग की सम्भावना की सूचना पर समन प्रारुप संख्या (Form no. 14) के अनुसार छोटे अपराध के अभियुक्त को विशेष समन प्रारुप संख्या-30 के अनुसार एवं साक्षी को समन प्रारुप संख्या 33 के अनुसार जारी किया जायेगा।

समन की तामील (Service of summon)–धारा 62 से 67 एवं 69 : समन की तामील पुलिस अधिकारी द्वारा अथवा राज्य सरकार द्वारा बनाये गये नियमों के अधीन, इसे जारी करने वाले न्यायालय के किसी अधिकारी द्वारा या किसी अन्य लोक सेवक द्वारा की जायेगी। समन किये गये व्यक्ति पर समन की तामील उसे वैयक्तिक रुप से समन की एक प्रति का परिदान अथवा **निविदान**

(tending) करके किया जायेगा तथा ऐसा व्यक्ति तामील करने वाले अधिकारी द्वारा अपेक्षा किये जाने पर समन की द्वितीय प्रति के पृष्ठभाग पर रसीद के रुप में अपना हस्ताक्षर करेगा। (धारा 62 द.प्र.सं.)।

समन लेने से इन्कार या उसकी अभिप्राप्ति से इन्कार करना भारतीय दण्ड संहिता की धारा 173 के अन्तर्गत अपराध नहीं है। क्वीन इम्प्रेस बनाम कृष्ण गोविन्द दास I.L.R. 1920 कलकत्ता।

किसी निगम जिसके अन्तर्गत कोई निगमित कम्पनी या अन्य निगमित निकाय (Other Body Corporate) एवं सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के अधीन पंजीकृत सोसाइटी भी है, पर समन की तामील उसके सचिव, स्थानीय प्रबन्धक अथवा अन्य प्रधान अधिकारी पर तामील करके की जायेगी अथवा भारत में निगम के मुख्य अधिकारी के पते पर पंजीकृत डाक द्वारा भेज कर समन की तामील की जा सकती है, (धारा 63)।

जब समन किया गया व्यक्ति सम्यक् तत्परता बरतने पर भी न मिल सके तो समन की तामील उस व्यक्ति के परिवार के किसी पुरुष सदस्य जो उसके साथ रहता है को समन की एक प्रति देकर की जा सकती है। (धारा 64)।

'कुटुम्ब' (Family) में नौकर सम्मिलित नहीं है तथा कुटुम्ब की किसी स्त्री को समन नहीं दिया जा सकता।

जब समन की तामील व्यक्तिगत रुप से निगम की स्थिति में उत्तरदायी। अधिकारियों पर एवं परिवार के पुरुष सदस्य पर न की जा सके तो तामील करने वाला अधिकारी समन की एक प्रति उस गृह अथवा निवास स्थान के किसी सहजदृश्य भाग से लगा देगा, जिसमें समन किया व्यक्ति सामान्यतया रहता है। न्यायालय यदि जांच करना चाहे तो जांच करने के पश्चात् वह यह घोषित कर सकता है कि समन की सम्यक् तामील हूई है, या नहीं अथवा वह किसी अन्य रीति से समन की तामील का आदेश दे सकता है। (धारा 65)।

जब समन की तामील ऐसे व्यक्ति पर करना हो जो सरकार की सक्रिय सेवा में (सरकारी सेवक) हो तो न्यायालय समन की दो प्रतियाँ उस कार्यालय के प्रधान के पास भेजता है, जिसमें वह व्यक्ति सेवक है, तथा प्रधान लोक सेवक के रुप में समन की तामील करायेगा और अपने हस्ताक्षर, पृष्ठांकन सहित करके समन की द्वितीय प्रति न्यायालय को वापस कर देगा, कार्यालय के प्रधान का हस्ताक्षर, समन की तामील का साक्ष्य होगा (धारा 66)।

प्रधान अधिकारी द्वारा समन की तामील न किया जाना न्यायालय की अवमानना मानी जायेगी (ब्रजवल्लभ बनाम ए.आर.या A.I.R. 1958, राजस्थान)।

जब न्यायालय द्वारा जारी किये गये समन की तामील उसकी स्थानीय अधिकारिता के बाहर की जानी हो तो न्यायालय समन दो प्रतियों में उस मजिस्ट्रेट को भेजेगा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर उसे तामील किया जाना है, अथवा समन किया गया व्यक्ति रहता है (धारा 67)।

साक्षी के लिए समन जारी करने वाला न्यायालय समन जारी करने के साथ ही उसके अतिरिक्त उसकी एक प्रति पंजीकृत डाक द्वारा तामील के लिए साक्षी के उस पते पर भेजने का निदेश दे सकता है, जहां साक्षी सामान्यतया निवास करता है, अथवा कोई कारबार करता है या लाभ के लिए स्वयं कोई कार्य करता है।

साक्षी द्वारा समन मिलने की हस्ताक्षरित अभिस्वीकृति अथवा डाककर्मी द्वारा किया गया यह पृष्ठांकन कि साक्षी ने समन लेने से मना कर दिया है, मिल जाने पर समन जारी करने वाला न्यायालय समन के तामील की घोषणा कर सकता है (धारा 69)।

साक्षी यह साबित करके कि उसने समन लेने से मना नहीं किया था तथा न ही अभिस्वीकृति पर हस्ताक्षर किया है, समन की तामील होने से इन्कार कर सकता है।

तामील का सबूत (Proof of Service) – जब समन की तामील न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता के बाहर की गयी हो, अथवा समन तामील करने वाला अधिकारी सुनवाई के समय न्यायालय में अनुपस्थित हो तो समन की तामील जानने के लिए निम्नलिखित साक्ष्य आवश्यक होते हैं–

(i) समन तामील करने वाला अधिकारी मजिस्ट्रेट के समक्ष इस आशय का शपथपत्र दे कि उसने समन तामील कर दिया है।

(ii) समन लेने वाले व्यक्ति का समन की द्वितीय प्रति पर हस्ताक्षर एवं समन तामील करने वाले अधिकारी का पृष्ठांकन तथा हस्ताक्षर इस बात का सबूत होगा कि समन तामील कर दिया गया है। (धारा 68)।

कोई व्यक्ति शपथ पत्र के कथन एवं समन की द्वितीय प्रति में हस्ताक्षर एवं पृष्ठांकन को असत्य साबित करके, समन तामील किये जाने की अभिधारणा को अभिखण्डित कर सकता है।

किसी विशिष्ट मामले की परिस्थितियों के अनुसार, मजिस्ट्रेट कारणों को अभिलिखित करने के पश्चात् समन मामले में समन के स्थान पर वारण्ट (अन्तर्गत धारा 87) अथवा वारण्ट मामले में वारण्ट अथवा उचित समझने पर समन जारी कर सकता है। (अन्तर्गत धारा 204(1)(b))।

ऐसा समन जिसमें हाजिर होने का समय, स्थान तथा अपराध का विवरण उल्लिखित न हो ऐसा समन विधिपूर्ण समन नहीं माना जायेगा (इम्परर बनाम कुँवर रणन्जय सिंह ऑफ अमेठी, AIR

1928 इलाहाबाद) साथ ही समन पर न्यायालय की मुद्रा (Seal) अंकित न होना भी अविधिपूर्ण है। (अब्दुल रहीम वेग का वाद AIR 1920 मद्रास)।

किसी समन में प्रविष्टियों की अनियमिततायें (Irregularties ofentries) कार्यवाही को विधि विरुद्ध बना सकती हैं जब इनसे अभियुक्त पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो (म्यूनिस्पल बोर्ड वृन्दावन बनाम राज्य, AIR 1952 इलाहाबाद)।

गिरफ्तारी का वारण्ट (Warrant of Arrest)

दण्ड प्रक्रिया संहिता में गिरफ्तारी के वारण्ट को परिभाषित नहीं किया गया है किन्तु संहिता की द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित प्रारुप संख्या-2 से स्पष्ट होता है कि 'गिरफ्तारी का वारण्ट किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी के लिए सक्षम मजिस्ट्रेट द्वारा दिया जाने वाला लिखित प्राधिकार है।'

गिरफ्तारी का वारण्ट लिखित, न्यायालय के पीठासीन अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित एवं न्यायालय की मुद्रा (Seal) युक्त होना चाहिए। इसमें गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति की सही पहचान के लिए उसका पूर्ण विवरण यथा नाम, पिता का नाम, निवास स्थान आदि का उल्लेख किया जाना चाहिए साथ ही गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति द्वारा किये गये अभिकथित अपराध का भी उल्लेख होना चाहिए। इसमें उस पुलिस अधिकारी या व्यक्ति का नाम लिखा होना चाहिए जिसे यह निर्दिष्ट है तथा जिसे वारण्ट का निष्पादन करना है।

गिरफ्तारी का वारण्ट तब तक प्रवर्तन में रहता है जब तक कि वह जारी करने वाले न्यायालय द्वारा रद्द नहीं कर दिया जाता, अथवा जब तक उसे निष्पादित नहीं कर दिया जाता (धारा 70)।

जमानतीय वारण्ट (Bailable Warrant) – धारा 71 के अनुसार इस प्रकार के वारण्ट में न्यायालय अपने विवेक से पृष्ठांकन द्वारा यह निर्देश दे सकता है कि यदि गिरफ्तार किया जाने वाले व्यक्ति न्यायालय के समक्ष विनिर्दिष्ट समय पर एवं तत्पश्चात् न्यायालय के निर्देशानुसार उपस्थित होने के लिए पर्याप्त प्रतिभुओं सहित बन्धपत्र निष्पादित करता है तो वारण्ट निष्पादित करने वाला अधिकारी ऐसी प्रतिभूति लेकर उसे अपनी अभिरक्षा से मुक्त कर देगा। इस प्रकार ली गयी प्रतिभूति एवं निष्पादित किया गया बन्धपत्र वारण्ट निष्पादित करने वाले अधिकारी द्वारा न्यायालय के पास भेज दिया जाता है। गिरफ्तारी का वारण्ट सामान्यतया किसी एक या अधिक पुलिस अधिकारियों को निर्दिष्ट होगा, किन्तु वारण्ट का यथाशीघ्र निष्पादन आवश्यक होने पर तथा तत्काल पुलिस अधिकारी अनुपलब्ध होने पर, न्यायालय वह वारण्ट किसी अन्य व्यक्ति अथवा व्यक्तियों को निर्दिष्ट कर सकता है और इस प्रकार निर्दिष्ट व्यक्ति उस वारण्ट का निष्पादन करेंगे।

एक से अधिक अधिकारियों अथवा व्यक्तियों को वारण्ट निर्दिष्ट किये जाने की स्थिति में उस वारण्ट का निष्पादन उन सबके द्वारा अथवा उनमें से किसी एक या अधिक के द्वारा किया जा सकता है (धारा 72)। मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट अथवा प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट निकल भागे सिद्धदोष अपराधी (Escaped Convict), उद्घोषित अपराधी (Proclaimed offender) अथवा गिरफ्तारी से बच रहे किसी अजमानतीय अपराध के अभियुक्त (Accused ofnon-bailable offence, evading arrest) की गिरफ्तारी के लिए अपनी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर किसी भी व्यक्ति को वारण्ट निर्दिष्ट कर सकता है।

इस प्रकार निर्दिष्ट किया गया व्यक्ति वारण्ट की प्राप्ति को लिखित रुप में अभिस्वीकृति करेगा और गिरफ्तार किया जाने वाला व्यक्ति यदि उसके भारसाधन के अधीन किसी भूमि अथवा सम्पत्ति में है, या प्रवेश करता है तो वह वारण्ट के निष्पादन में उस व्यक्ति को गिरफ्तार करके उसे वारण्ट सहित निकटतम पुलिस अधिकारी को सुपुर्द कर देगा तब ऐसा पुलिस अधिकारी यदि धारा 71 के अधीन प्रतिभूति लेने के लिए निर्दिष्ट नहीं किया गया है, गिरफ्तार व्यक्ति को उस मामले में अधिकारिता रखने वाले मजिस्ट्रेट के समक्ष भिजवायेगा। (धारा 73)।

धारा 73 के अधीन मजिस्ट्रेट अन्वेषण के दौरान भी अभियुक्त को न्यायालय के समक्ष उपस्थित करने के लिए, वारण्ट जारी कर सकता है न कि अन्वेषण की सहायतार्थ पुलिस के समक्ष।

किसी पुलिस अधिकारी को निर्दिष्ट, किसी वारण्ट का निष्पादन किसी अन्य ऐसे पुलिस अधिकारी द्वारा भी किया जा सकता है, जिसका नाम वारण्ट पर उस अधिकारी द्वारा पृष्ठांकित कर दिया जाये, जिसे वह वारण्ट निर्दिष्ट अथवा पृष्ठांकित है। (धारा 174)।

वारण्ट का निष्पादन (Execution of Warrant) – संहिता की धारा 77 के अनुसार गिरफ्तारी का वारण्ट भारत के किसी भी भाग में निष्पादित किया जा सकता है, यहां भारत से तात्पर्य उन राज्य क्षेत्रों से है जिन पर इस संहिता का विस्तार है (अन्तर्गत धारा 2(ñ)। साथ ही संहिता की धारा 1(2) के अनुसार 'इस संहिता का विस्तार जम्मू कश्मीर राज्य के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर है।' अत: उपरोक्त प्रावधानों के अनुरुप स्थान पर ही गिरफ्तारी वारण्ट निष्पादित किया जा सकता है।

गिरफ्तारी वारण्ट का निष्पादन इसे जारी करने वाले न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता के बाहर किये जाने की स्थिति में न्यायालय वारण्ट को डाक द्वारा अथवा अन्य किसी रीति से उस कार्यपालक

मजिस्ट्रेट अथवा जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त को भेज सकता है, जिसकी स्थानीय अधिकारिता की सीमाओं के अन्दर उसका निष्पादन किया जाना है तथा वह कार्यपालक मजिस्ट्रेट अथवा जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त उस वारण्ट पर अपना नाम पृष्ठांकित करेगा तथा उसका निष्पादन करायेगा।

अधिकारिता के बाहर निष्पादन के लिए वारण्ट जारी करने वाला न्यायालय वारण्ट के साथ ऐसी सामग्री भी प्रेषित करेगा, जो धारा 81 के अधीन कार्यवाही करने वाले न्यायालय को यह विनिश्चित करने में सहायक हो कि गिरफ्तार कि गये व्यक्ति की जमानत स्वीकृत की जाये अथवा नहीं (धारा 78)।

धारा 78 के उपबन्ध निदेशात्मक है। **(इम्परर बनाम करीम बख्श रहमतन AIR 1940 सिन्ध)॥**

कोई वारण्ट पुलिस अधिकारी को उसकी अधिकारिता के बाहर निर्दिष्ट किये जाने पर ऐसा निर्दिष्ट किया गया पुलिस अधिकारी उस वारण्ट पर पृष्ठांकन के लिए उसे उस कार्यपालक मजिस्ट्रेट अथवा थाने के भारसाधक अधिकारी से अनिम्न पंक्ति के, पुलिस अधिकारी के पास ले जाता है, जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के अन्दर वारण्ट निष्पादित किया जाना है और जब उक्त कार्यपालक मजिस्ट्रेट अथवा पुलिस अधिकारी वारण्ट पर अपना नाम पृष्ठांकित कर देता है, तो वह पृष्ठांकन निर्दिष्ट पुलिस अधिकारी के लिए निष्पादन का प्राधिकार बन जाता है तथा अपेक्षा करने पर स्थानीय पुलिस उसकी सहायता करती है, परन्तु निर्दिष्ट पुलिस अधिकारी देरी के कारण निष्पादन न हो सकने की स्थिति का आंकलन पर पृष्ठांकन कराये बिना वारण्ट निष्पादित कर सकता है। (धारा 79)।

गिरफ्तारी के वारण्ट का निष्पादन करने वाले पुलिस अधिकारी अथवा अन्य व्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि वह गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति को वारण्ट का सार सूचित करे तथा मांग किये जाने पर उस व्यक्ति को वारण्ट भी दिखा दे (धारा 75)।

गिरफ्तारी के पश्चात् प्रक्रिया (Process after arrest) – धारा 76 में धारा 57 में उपबन्धित प्रावधान की अभिपुष्टि की गयी है कि यदि गिरफ्तार व्यक्ति को प्रतिभूति सहित बन्धपत्र पर छोड़ा नहीं जाता तो उसे न्यायालय के समक्ष चौबीस घण्टे के अन्दर लाया जायेगा, जिसके समक्ष उसे पेश किया जाना है। जब गिरफ्तारी वारण्ट का निष्पादन जिस जिले में वारण्ट जारी किया गया था उस जिले के बाहर किसी अन्य जिले में किया जाता है तो ऐसी स्थिति में गिरफ्तार व्यक्ति को उसी जिले के कार्यपालक मजिस्ट्रेट अथवा जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त के समक्ष ले जाया जायेगा, किन्तु निम्न स्थितियों में गिरफ्तार व्यक्ति को जिस जिले की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं में गिरफ्तार किया गया है, वहां के कार्यपालक मजिस्ट्रेट अथवा जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त के समक्ष नहीं ले जाया जायेगा यदि–

(क) गिरफ्तारी का वारण्ट जारी करने वाला न्यायालय गिरफ्तारी के स्थान से तीस किलोमीटर के अन्दर है।

(ख) यदि गिरफ्तारी का वारण्ट जारी करने वाला न्यायालय उस कार्यपालक मजिस्ट्रेट जिला पुलिस अधीक्षक अथवा पुलिस आयुक्त से अधिक निकट है, जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के अन्दर गिरफ्तारी की गयी है।

उपरोक्त स्थितियों में गिरफ्तार किया गया व्यक्ति वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय के समक्ष ले जाये जायेगा॥

(ग) यदि गिरफ्तार व्यक्ति के धारा 71 के अन्तर्गत प्रतिभूति ले ली गयी है तो भी उसे गिरफ्तार किये जाने वाले जिले के कार्यपालक मजिस्ट्रेट अथवा जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त के समक्ष नहीं ले जाया जायेगा; अपितु वह व्यक्ति नियत तिथि पर वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय के समक्ष उपस्थित होगा (धारा 80)॥

यदि गिरफ्तार किया गया व्यक्ति कार्यपालक मजिस्ट्रेट या जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त के पास लाया जाता है तो कार्यपालक मजिस्ट्रेट या जिला पुलिस अधीक्षक अथवा पुलिस आयुक्त यह सुनिश्चित करते हैं कि गिरफ्तार किया गया व्यक्ति वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय द्वारा आशयित व्यक्ति ही है तत्पश्चात् यदि अपराध जमानतीय है तथा गिरफ्तार किया गया व्यक्ति जमानत देने के लिए तैयार एवं सहमत है अथवा वारण्ट पर धारा 71 के अधीन प्रतिभूति लेने का निदेश पृष्ठांकित है तथा गिरफ्तार व्यक्ति अपेक्षित प्रतिभूति देने के लिए तैयार एवं रजामन्द है तो कार्यपालक मजिस्ट्रेट अथवा जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त जमानत अथवा प्रतिभूति लेकर **बन्धपत्र (Bond)** वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय को भेज देगा।

अपराध अजमानतीय होने की स्थिति में जिस जिले में गिरफ्तारी की गयी है उस जिले का मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (धारा437 के उपबन्धों के अन्तर्गत) अथवा सेशन न्यायाधीश संहिता की धारा 78(2) में निर्दिष्ट जानकारी तथा दस्तावेजों पर विचारोपरान्त गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को छोड़ सकता है।

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा धारा 81(1) में जोड़े गये तृतीय परन्तुक के अनुसार जहां गिरफ्तार व्यक्ति जमानत पर नहीं छोड़ा जाता अथवा प्रतिभूति देने में असफल रहता है, ऐसी स्थिति में अपराध अजमानतीय होने पर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या जमानतीय होने पर कोई न्यायिक मजिस्ट्रेट उसे उतने समय तक अभिरक्षा में

लेने का आदेश जारी कर सकता है, जितना की वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय से हटाने के लिए आवश्यक समझे।

धारा 71 के उपबन्धों के अन्तर्गत पुलिस अधिकारी भी प्रतिभूति ले सकता है। यदि उपरोक्त प्रक्रमों से नहीं गुजरना पड़ा तो कार्यपालक मजिस्ट्रेट अथवा जिला पुलिस अधीक्षक या पुलिस आयुक्त गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय के पास अभिरक्षा में भेजने का निर्देश देगा (धारा 81)।

वारण्ट पर अभियुक्त को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर देने पर, न्यायालय अभियुक्त के निरोध को पुलिस अभिरक्षा में तब प्राधिकृत कर सकता है जब न्यायालय ने अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग किया हो, न कि मात्र पुलिस की अपेक्षा पर (राज्य बनाम दाउद इब्राहीम कास्कर 2000 S.C.C.)।

गिरफ्तारी वारण्ट का निष्पादन पुलिस के किसी सिपाही द्वारा भी किया जा सकता है (इन्दर मण्डल बनाम बिहार राज्य (AIR 1967पटना)।

उद्घोषणा एवं कुर्की
(Proclamation and Attachment)

जहां किसी अभियुक्त को गिरफ्तार करने का वारण्ट जारी किया जा चुका है तथा न्यायालय को यह विश्वास करने का कारण है कि अभियुक्त या तो **फरार (Absconded)** हो गया है, अथवा वारण्ट का निष्पादन न होने देने के लिए स्वयं को छिपा रहा है, वहां न्यायालय एक लिखित उद्घोषणा प्रकाशित कर ऐसे व्यक्ति से अपेक्षा कर सकता है, कि वह उद्घोषणा के प्रकाशन की तिथि से न्यूनतम तीस दिन पश्चात् तक उसके समक्ष उपस्थित हो।

ऐसी उद्घोषणा उस नगर अथवा ग्राम के किसी सहजदृश्य स्थान में जिसमें ऐसा व्यक्ति सामान्यतया रहता है, सार्वजनिक रुप से पढ़ी जायेगी या उस घर अथवा वासस्थान के किसी सहजदृश्य भाग पर अथवा ऐसे नगर या ग्राम के किसी सहजदृश्य स्थान पर लगायी जायेगी जिसमें ऐसा व्यक्ति सामान्यतः रहता है।

उद्घोषणा की एक प्रति **न्याय सदन (Court house)** के किसी सहजदृश्य भाग पर लगायी जायेगी। न्यायालय उचित समझने पर उद्घोषणा की एक प्रति उस स्थान में परिचालित किसी दैनिक समाचार पत्र में प्रकाशित किये जाने का निदेश दे सकता है। जहां ऐसा व्यक्ति सामान्यता रहता है।

यदि उद्घोषणा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302, 304, 364, 367, 382, 392, 393, 394, 395, 396, 397, 398, 399, 400, 402, 436, 449, 459 या 460 के अधीन दण्डनीय अपराध के अभियुक्त के सम्बन्ध में है, तथा वह अपेक्षित स्थान एवं समय पर उपस्थित होने में विफल रहता है तो न्यायालय उचित जांच करने के पश्चात् उसे **उद्घोषित अपराधी (Proclaimed offender)** घोषित कर सकता है। (धारा 82 (4) संशोधन, 2005)।

उद्घोषणा जारीकर्ता न्यायालय द्वारा यह लिखित कथन कि उद्घोषणा विनिर्दिष्ट दिन सम्यक् रुप से प्रकाशित कर दी गयी है, इस बात का निश्चायक साक्ष्य है कि उद्घोषणा उस दिन प्रकाशित कर दी गयी थी। (धारा 82)।

अभियुक्त की उपस्थिति की अपेक्षा करने वाली उद्घोषणा संहिता की द्वितीय अनुसूची में प्रारुप संख्या 4 से तथा साक्षी की उपस्थिति की अपेक्षा करने वाली उद्घोषणा प्रारुप संख्या 5 से सम्बन्धित है। फरार व्यक्ति की न्यायालय में उपस्थिति के लिए उद्घोषणा जारी किये जाने पर भी यदि ऐसा व्यक्ति न्यायालय में उपस्थित नहीं होता तो उसे न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने को विवश करने के लिए उसकी सम्पत्ति कुर्क की जा सकती है।

अभियुक्त को न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने को विवश करने के लिए उद्घोषणा जारी करने वाला न्यायालय ही उसकी सम्पत्ति की कुर्की का आदेश निकाल सकता है। इसके लिए न्यायालय को जिन कारणों से अभियुक्त की सम्पत्ति कुर्क करना अपरिहार्य मानी गयी है, को लेखबद्ध करना होगा। सामान्यतः कुर्की का आदेश उद्घोषणा जारी करने के बाद ही निकाला जा सकता है किन्तु निम्नलिखित अपवादित स्थितियों में इसे जारी करने के साथ ही निकाला जा सकता है–

(1) यदि उद्घोषणा जारी करते समय न्यायालय का शपथ पत्र द्वारा अथवा अन्यथा यह समाधान हो जाता है कि जिस व्यक्ति के सम्बन्ध में उद्घोषणा जारी की जा रही है, वह अपनी समस्त सम्पत्ति अथवा उसके किसी भाग का व्ययन करने वाला है, या

(2) अपनी समस्त सम्पत्ति अथवा उसके किसी भाग को उस न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता से हटाने वाला है।

कुर्की के आदेश का प्रवर्तन दो रुपों में होता है–

(1) कुर्की का आदेश जिस जिले में दिया गया है उसमें उद्घोषित व्यक्ति की किसी भी सम्पत्ति की कुर्की को प्राधिकृत करता है; तथा

(2) यह आदेश जिले के बाहर, उद्घोषित व्यक्ति की किसी सम्पत्ति की कुर्की को तब प्राधिकृत करता है जब वह उस जिला मजिस्ट्रेट द्वारा जिसके जिले में ऐसी सम्पत्ति स्थित है, पृष्ठांकित कर दिया जाये।

उद्घोषित व्यक्ति की जंगम अथवा स्थावर दोनों प्रकार की किसी भी सम्पत्ति को कुर्क किया जा सकता है किन्तु कुर्की तभी प्रभावी हो सकती है जब कुर्क की गयी सम्पत्ति किसी विधि के अधीन अन्तरित की जा सकती है। अनन्तरणीय सम्पत्ति (Non transferable property) कुर्क नहीं की जा सकती।

धारा 83 में विभिन्न प्रकार की सम्पत्ति की कुर्की के तरीके उपबन्धित किये गये हैं तथा ऋण अथवा अन्य जंगम सम्पत्ति की कुर्की निम्नलिखित रीति से की जा सकती है–

(a) सम्पत्ति का अधिग्रहण (छीन लिया जाये अथवा उस पर कब्जा कर लिया जाये) करके या

(b) प्रापक (receiver) की नियुक्ति करके अथवा

(c) उद्घोषित व्यक्ति को अथवा उसके निमित्त किसी को भी उस सम्पत्ति के परिदान का प्रतिषेध करने वाला लिखित आदेश देकर या

(d) न्यायालय के विवेकानुसार उपर्युक्त सभी रीतियों अथवा किन्हीं दो रीतियों से राज्य सरकार को राजस्व देने वाली भूमि की कुर्की उस जिले के कलेक्टर के माध्यम से की जाती है, जिसमें वह भूमि स्थित है।

अन्य स्थावर सम्पत्ति की कुर्की निम्नलिखित प्रकार से की जा सकती है–

(क) ऐसी स्थावर सम्पत्ति पर कब्जा करके; या

(ख) प्रापक (Receiver) की नियुक्ति करके; या

(ग) उद्घोषित व्यक्ति को अथवा उसके निमित्त किसी को भी सम्पत्ति का किराया देने अथवा उस सम्पत्ति का परिदान करने का प्रतिषेध करने वाले लिखित आदेश द्वारा या

(घ) न्यायालय के विवेकानुसार उपरोक्त सभी रीतियों या किन्हीं दो रीतियों से न्यायालय यदि उचित समझे तो **जीवधन (Live stock)** अथवा विनश्वर प्रकृति की सम्पत्ति के कुर्की के ठीक बाद उनकी बिक्री का आदेश दे सकता है एवं बिक्री से प्राप्त धनराशि कुर्क कर ली जायेगी। कुर्की के आदेश के प्रवर्तन में न्यायालय द्वारा नियुक्त **प्रापक (Reciver)** की शक्तियाँ कर्तव्य एवं दायित्व वही होती है जो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अन्तर्गत नियुक्त प्रापक के होते हैं (धारा 83)।

प्रापक द्वारा अपने दायित्वों का निर्वहन न किये जाने पर न्यायालय उसकी सम्पत्ति को कुर्क अथवा नीलाम करके उससे प्राप्त धनराशि सम्पत्ति को होने वाली क्षतिपूर्ति में लगा सकता है।

धारा 83 के अधीन कुर्क की गयी सम्पत्ति के बारे में उद्घोषित व्यक्ति से भिन्न कोई ऐसा व्यक्ति दावा कर सकता है जिसका उस सम्पत्ति में कोई हित अन्तर्वलित है कि ऐसे हित की कुर्की नहीं की जा सकती। दावेदार अथवा आपत्तिकर्ता द्वारा ऐसा दावा कुर्की की तिथि से छह माह के अन्दर किया जाना चाहिए। ऐसी स्थिति में दावेदार अथवा आपत्तिकर्ता की मृत्यु हो जाने पर, उसके विधिक प्रतिनिधि द्वारा दावा या आपत्ति की कार्यवाही चालू रखी जा सकती है। ऐसा दावा अथवा आपत्ति कुर्की का आदेश जारी करने वाले न्यायालय में प्रस्तुत की जायेगी और यदि कुर्की का आदेश जिले के बाहर स्थित किसी सम्पत्ति के लिए दिया गया है, तो इसके सन्दर्भ में दावा या आपत्ति सम्बन्धित जिले के मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (C.J.M.) के न्यायालय में की जायेगी।

प्रस्तुत दावा या आपत्ति की जांच कुर्क की गयी सम्पत्ति उसी जिले में होने पर कुर्की का आदेश जारी करने वाले न्यायालय द्वारा की जायेगी तथा अन्य जिले में होने पर सम्बन्धित जिले के मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा की जायेगी किन्तु मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट अपने अधीनस्थ किसी भी न्यायाधीश को उस दावे या आपत्ति को निपटारे के लिए सौंप सकता है। न्यायालय द्वारा जांच किये जाने के पश्चात् दावे अथवा आपत्ति को पूर्णतः या भागतः मंजूर अथवा नामंजूर किया जा सकता है।

न्यायालय द्वारा दावे अथवा आपत्ति को पूर्णतः या भागतः नामन्जूर किये जाने पर, विवादग्रस्त सम्पत्ति पर अपना अधिकार सिद्ध करने के लिए दावेदार या आपत्तिकर्ता द्वारा नामन्जूरी के आदेश की तिथि से एक वर्ष की अवधि के अन्दर वाद संस्थित कर सकता है, किन्तु नामन्जूरी का आदेश ऐसे वाद के किसी परिणाम के अधीन रहते हुये निश्चायक माना जायेगा। (धारा 84(4))।

कुर्क सम्पत्ति की **निर्मुक्ति (Release)**, विक्रय एवं उसे **वापस करने (Restoration)** के सम्बन्ध में उपबन्ध संहिता की धारा 85 में किये गये हैं। यदि उद्घोषित व्यक्ति उद्घोषणा में विनिर्दिष्ट समय के अन्दर न्यायालय में उपस्थित हो जाता है, तो न्यायालय सम्पत्ति की कुर्की से निर्मुक्ति का आदेश दे सकता है।

उद्घोषणा में विनिर्दिष्ट समय के अन्दर उद्घोषित व्यक्ति के उपस्थित न होने पर कुर्क सम्पत्ति राज्य सरकार के व्ययनाधीन हो जाती है तथा राज्य सरकार कुर्की की तिथि से छह मास बीत जाने पर एवं धारा 84 के अधीन किये गये किसी दावे अथवा आपत्ति का निपटारा हो जाने पर, ऐसी सम्पत्ति को बेच सकती है किन्तु यदि कुर्क की गयी सम्पत्ति शीघ्रतया तथा प्रकृत्या क्षयशील है अथवा न्यायालय के मतानुसार सम्पत्ति का विक्रय कर देना स्वामी के लिए हितप्रद होगा, तो न्यायालय अपने विवेकानुसार सम्पत्ति की बिक्री करा सकता है।

कुर्क की गयी सम्पत्ति उद्घोषित व्यक्ति के लिए मात्र दो वर्षों तक ही सुरक्षित रखी जा सकती है। उद्घोषित व्यक्ति यदि कुर्की की तिथि से दो वर्ष के अन्दर सम्पत्ति की कुर्की का आदेश देने वाले न्यायालय के समक्ष या उस न्यायालय के समक्ष जिसके ऐसा न्यायालय अधीनस्थ है, स्वेच्छया उपस्थित हो जाता है, अथवा पकड़ कर लाया जाता है एवं उस न्यायालय को समाधानप्रद रुप में साबित कर देता है कि वह वारण्ट के निष्पादन से बचने के लिए

फरार नहीं हुआ था अथवा छिपा नहीं था तथा यह कि उसे उद्घोषणा की ऐसी सूचना नहीं मिली जिससे वह उसमें विनिर्दिष्ट समय के अन्दर उपस्थित हो सकता है तो ऐसी स्थिति में विक्रय के शुद्ध आगमों का अथवा यदि उसका मात्र कुछ भाग विक्रय किया गया है तो ऐसे विक्रय के शुद्ध आगमों एवं अवशिष्ट सम्पत्ति का कुर्की के फलस्वरुप हुये सभी खर्चों को उसमें से घटाकर शेष उसे दे दिया जायेगा।

न्यायालय को समाधानप्रद रुप से साबित कर देने के पश्चात् भी यदि उद्घोषित व्यक्ति को कुर्क की गयी सम्पत्ति अथवा उसके विक्रय के आगमों को नहीं दिया जाता तो वह ऐसे न्यायालय में अपील कर सकता है, जिसमें कुर्की का आदेश देने वाले न्यायालय के दण्डादेश से सामान्यतया अपीलें होती हैं (धारा 86द.प्र.सं.)।

न्यायालय को उद्घोषणा जारी करने के पूर्व वारण्ट की तामील करने वाले अधिकारी का परीक्षण करके या किसी अन्य प्रकार से स्वयं को सन्तुष्ट कर लेना चाहिए कि गिरफ्तारी वारण्ट जारी किया जा चुका है तथा अभियुक्त फरार हो गया है, अथवा स्वयं को छिपा रहा है या वारण्ट का निष्पादन नहीं होने दे रहा है। (विशुन दयाल बनाम इम्परर AIR 1943 पटना)।

संहिता की धारा 87, 88, 89 और 90 में आदेशिकाओं से सम्बन्धित अन्य नियम दिए गए हैं। धारा 87 के अनुसार निम्नलिखित परिस्थितियों में सम्बन्धित न्यायालय समन के स्थान पर या उसके अतिरिक्त वारण्ट जारी कर सकता है–

(क) यदि वांछित व्यक्ति फरार हो गया है या न्यायालय के समक्ष विश्वास करने का कारण है कि वह समन का पालन नहीं करेगा; या

(ख) यदि वह व्यक्ति नियत समय पर समन की सम्यक् तामील के बाद भी हाजिर होने में असफल रहता है।

सम्बन्धित व्यक्ति यदि न्यायालय में हाजिर है तब न्यायालय के द्वारा उस व्यक्ति से उसकी हाजिरी के लिए बंधपत्र, प्रतिभूओं सहित या रहित, निष्पादित करने की अपेक्षा कर सकता है (धारा 88)। बन्ध पत्र के द्वारा न्यायालय में हाजिर होने के लिए आबद्ध होते हुए भी यदि ऐसा व्यक्ति हाजिरी के बंधपत्र का भंग करता है तब सम्बन्धित न्यायालय उसकी गिरफ्तारी का वारण्ट जारी कर सकता है। (धारा 89)। इस अध्याय के उपबंध सभी समन और वारण्ट पर लागू होंगे (धारा 90)।

चीजें पेश करने को विवश करने के लिए आदेशिकाएं (धारा 91-105)

यदि कोई दस्तावेज या कोई अन्य चीज जो किसी अन्वेषण, जांच, विचारण अथवा किसी अन्य कार्यवाही के लिए अपेक्षित है, तथा ऐसे सुसंगत दस्तावेज या चीज को रखने वाला व्यक्ति अपेक्षा किये जाने पर उन्हें प्रस्तुत नहीं करता तो, उन्हें प्रस्तुत करने के लिए न्यायालय समन या अन्वेषणकर्त्ता/जांच अधिकारी/पुलिस थाने का भार साधक अधिकारी लिखित आदेश जारी कर सकता है। (अन्तर्गत धारा 91(1))।

जिस व्यक्ति से कोई दस्तावेज या कोई अन्य चीज प्रस्तुत करने की अपेक्षा की गयी है, यदि वह स्वयं उपस्थित होकर उसे प्रस्तुत करने के बजाय उस दस्तावेज या चीज को **प्रस्तुत (Produced)** करवा देता है, तो इसे अपेक्षा का समुचित अनुपालन माना जाता है (धारा 91(2))।

दस्तावेज अथवा अन्य चीज पेश करने के लिए समन जारी किये जाने का प्रावधान (अन्तर्गत धारा 91,द.प्र.सं.) भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 123 एवं 124 अथवा बैंककार वही साक्ष्य अधिनियम, 1891 पर प्रभावी नहीं होता।

डाक अथवा तार प्राधिकारी की अभिरक्षा में किसी पत्र, पोस्टकार्ड, तार अथवा अन्य दस्तावेज या किसी पार्सल की वस्तु पर भी धारा 91 लागू नहीं होती है। (धारा 91(3))।

धारा 91 में प्रयुक्त **'व्यक्ति' (Person)** शब्द, जिसके कब्जे अथवा शक्ति में किसी दस्तावेज या चीज के होने का विश्वास है, के अन्तर्गत अभियुक्त नहीं आता है (**गुजरात राज्य बनाम लाला** A.I.R. 1965 S.C.)।

उच्चतम न्यायालय 'दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने के लिए समन जारी करने की न्यायालय की विवेकीय शक्ति के प्रयोग में तभी हस्तक्षेप कर सकता है, जब इस शक्ति का प्रयोग न ही विवेकशील एवं न ही न्यायपूर्ण हो तथा उसका प्रयोग घोर अनुचित तरीके से किया गया हो एवं देखने से ही वह अयुक्तियुक्त प्रतीत हो रहा हो (ओम प्रकाश शर्मा बनाम सी.बी.आई. (2000) S.C.C.)। यदि धारा 91 का अर्थान्वयन इस प्रकार किया जाये कि उसमें अभियुक्त व्यक्ति को भी सम्मिलित किया जा सके, तो यह अर्थान्वयन अभियुक्त व्यक्ति के लिए घोर कठिनाईयाँ उत्पन्न करने वाला सिद्ध होगा एवं इसके लिए अन्वेषण जांच या विचारण ऋजुहीन साबित होगा। (बाम्बे राज्य बनाम काठी लालू औघड़ A.I.R. 1961,S.C.)।

कोई दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने के लिए **समनित व्यक्ति (Summoned Person)** यदि अपने कब्जे में अपेक्षित दस्तावेज अथवा चीज होने से इन्कार करता है, तथा वह सम्बन्धित मामले में साक्षी भी नहीं है, तो उसे न्यायालय में उपस्थित होने के लिए विवश नहीं किया जा सकता। उसे शपथ पर यह कहने के लिए विवश नहीं किया जा सकता है उसके कब्जे में अपेक्षित दस्तावेज या अन्य चीज नहीं है एवं न ही न्यायालय या काउन्सिल द्वारा उसकी

प्रति परीक्षा ही की जा सकती है (परमेश्वरी देवी बनाम राज्य, (1977), S.C.C.)।

बिना किसी उचित प्रतिहेतु के द.प्र.सं. की धारा 91 के तहत, दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने के लिए जारी किये गये समन अथवा आदेश का अनुपालन करने वाले व्यक्ति को द.प्र.सं. की धारा 349 के अन्तर्गत सात दिन का साधारण कारावास अथवा न्यायालय के किसी अधिकारी की अभिरक्षा (Custody) जो अधिकतम सात दिन की होगी, के लिए सुपुर्द किया जा सकेगा।

धारा 91 के अधीन अपेक्षित दस्तावेज अथवा अन्य चीज प्रस्तुत करने में साशय लोप करने वाला व्यक्ति भा.द.सं. (I.P.C.) की धारा 175 के अन्तर्गत दण्डनीय होता है।

डाक या तार वे सम्बन्ध में प्रक्रिया

दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत किसी अन्वेषण, जांच, विचारण अथवा अन्य कार्यवाही के प्रयोजनार्थ, डाक या तार अधिकारी की अभिरक्षा में रखे गये किसी दस्तावेज, पार्सल अथवा चीज के अपेक्षित होने पर, जिला मजिस्ट्रेट (D.M.) मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (C.J.M.) सेशन न्यायालय, अथवा उच्च न्यायालय, सम्बन्धित डाक-तार प्राधिकारी से अपेक्षा कर सकता है कि वह मजिस्ट्रेट अथवा न्यायालय द्वारा निदेशित व्यक्ति को उक्त दस्तावेज, पार्सल या चीज प्रदत्त कर दे (धारा 92(1))।

यदि जिला मजिस्ट्रेट अथवा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट से इतर किसी अन्य कार्यपालक (Executive) या न्यायिक मजिस्ट्रेट अथवा किसी पुलिस आयुक्त या पुलिस अधीक्षक की राय में (Opinion) में, डाक या तार प्राधिकारी की अभिरक्षा में रखा गया कोई दस्तावेज, पार्सल या चीज किसी अन्वेषण, जांच, विचारण अथवा अन्य कार्यवाही के प्रयोजन के लिए अपेक्षित हो तो ऐसा मजिस्ट्रेट या पुलिस अधिकारी **डाक अथवा तार प्राधिकारी (Postal or Telegraph Authority)** से यह **अपेक्षा (Requisite)** कर सकेगा कि वह उस दस्तावेज, पार्सल अथवा चीज के लिए तलाशी कराये तथा उसे जिला मजिस्ट्रेट, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या न्यायालय के आदेशों के मिलने तक अपने पास निरुद्ध रखे (धारा92 (2))।

धारा 92 में 'प्रयुक्त' दस्तावेज (Document) अथवा 'चीज' (Thing) शब्द के अन्तर्गत कोई डाक, पत्र या धनादेश (Money Order) भी सम्मिलित है (कैलाश चन्द्र शर्मा बनाम अधीक्षक, डाक, नई दिल्ली; A.I.R. 1960, पंजाब)।

जिला मजिस्ट्रेट अथवा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट से भिन्न कोई अन्य मजिस्ट्रेट डाक या तार प्राधिकारी की अभिरक्षा में किसी दस्तावेज, पार्सल अथवा अन्य चीज की तलाशी के लिए वारण्ट जारी नहीं कर सकते। (अन्तर्गत धारा 93 (3))।

तलाशी वारण्ट (Search-Warrant) – 'तलाशी वारण्ट' किसी सक्षम मजिस्ट्रेट या न्यायालय द्वारा किसी पुलिस अधिकारी अथवा व्यक्ति को निर्दिष्ट **लिखित प्राधिकार (Written Authority)** होता है, जिसके आधार पर ऐसा पुलिस अधिकारी या व्यक्ति सामान्यतः किसी स्थान या विनिर्दिष्ट किसी दस्तावेज अथवा चीज की या **सदोष परिरुद्ध (Wrongfully Confined)** व्यक्ति की खोज (Search) करता है। तलाशी वारण्ट तीन परिस्थितियों में जारी किया जा सकता है–

(i) जब किसी व्यक्ति को धारा 91, के अन्तर्गत कोई समन या आदेश अथवा धारा 92(1) के अधीन कोई अपेक्षा (Requisite) सम्बोधित की गयी हो, तथा न्यायालय के पास यह 'विश्वास करने का कारण' हो कि ऐसा व्यक्ति समन अथवा अपेक्षा के यथा अपेक्षित दस्तावेज चीज प्रस्तुत नहीं करेगा (धारा 93 (1) (क)।

(ii) द.प्र.सं. के अन्तर्गत किसी अन्वेषण, जांच, विचारण अथवा किसी कार्यवाही के लिए आवश्यक या अपेक्षित किसी दस्तावेज या अन्य चीज के बारे में जब न्यायालय को यह ज्ञात नहीं है कि वह किसी व्यक्ति के कब्जे में है (धारा 93 (1) (ख)।

(iii) जहां न्यायालय यह समझता है कि द.प्र.सं. के अन्तर्गत किसी चाँज, विचारण, (Trial) अथवा अन्य कार्यवाही के प्रयोजनों की पूर्ति साधारण तलाशी अथवा निरीक्षण (General Search or Inspection) से होगी धारा 93(1)(ग))।

धारा 91 की ही भाँति धारा 93(1)(क) किसी अभियुक्त व्यक्ति पर लागी नहीं होती। किसी अभियुक्त व्यक्ति के कब्जे में कोई दस्तावेज अथवा चीज होने पर उसकी तलाशी का वारण्ट नहीं जारी किया जा सकता। (गुजरात राज्य बनाम श्याम लाल, A.I.R. 1965, S.C.)।

धारा 93 (1)(ख) के अन्तर्गत किसी दस्तावेज या चीज को कोई ऐसे निश्चित एवं विनिर्दिष्ट स्थान से प्राप्त होने का अभिकथन किया जाना चाहिए, जिसके सन्दर्भ में न्यायालय को यह ज्ञात न हो कि वह दस्तावेज या चीज किस विशेष व्यक्ति के कब्जे में है। (बी.एस. कुट्टन पिल्लै बनाम रामकृष्ण, A.I.R. 1980,S.C.)।

धारा 93(1)(ग), के अन्तर्गत किसी भी लोक संस्थान की परिसर की तलाशी के लिए तलाशी वारण्ट जारी किया जा सकता है। (बी. एस. कुट्टन पिल्लै, बनाम रामकृष्ण A.I.R. 1980,S.C.)।

धारा 93(1)(ग) के अन्तर्गत साधारण तलाशी वारण्ट जारी करके अभियुक्त के कब्जे वाले परिसर की तलाशी ली जा सकती है एवं वहां पाये जाने वाले दस्तावेजों को जब्त किया जा सकता है, चाहे भले ही उन दस्तावेजों में ऐसे कथन समाहित हो, जिन्हें अभियुक्त ने अपने स्वयं के ज्ञान से दिया हो तथा जो सिद्ध हो जाने

पर उसके लिए अपराधरोपक (Incriminating) हो सकने की प्रवृत्ति से युक्त हो बशर्ते तलाशी वारण्ट के इस प्रकार निष्पादन में अभियुक्त को कुछ करने के लिए विवश नहीं किया जाना चाहिए।

तलाशी वारण्ट या आदेशिका जारी करने के पूर्व न्यायालय पुलिस को अन्वेषण के लिए निर्देश दे सकता है (मेलिकियो फर्नान्डेज बनाम मोहन, A.I.R. 1966, गोवा)।

तलाशी वारण्ट जारी करने वाला न्यायालय यदि उचित समझे तो तलाशी वारण्ट में उस विशिष्ट स्थान अथवा उसके भाग को तलाशी अथवा निरीक्षण के लिए विनिर्दिष्ट कर सकता है। ऐसी स्थिति में मात्र वारण्ट में विनिर्दिष्ट स्थान या भाग की तलाशी अथवा निरीक्षण किया जायेगा (अन्तर्गत धारा 93(2))।

कोई भी मजिस्ट्रेट या न्यायालय, धारा 93 के अन्तर्गत तलाशी वारण्ट जारी कर सकता है, किन्तु डाक या तार प्राधिकारी की अभिरक्षा में कोई दस्तावेज, पार्सल या अन्य चीज होने पर तलाशी वारण्ट मात्र जिला मजिस्ट्रेट अथवा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा जारी किया जा सकता है। (अन्तर्गत धारा 93(3))।

धारा 93 के अन्तर्गत तलाशी वारण्ट द्वितीय अनुसूची के प्रारुप (Form) संख्या-10 के अनुरुप जारी किया जा सकता है।

ऐसा स्थान जिसमें चुराई गयी सम्पत्ति, कूटरचित दस्तावेज (Forged documents) आदि रखे जाने का सन्देह हो की तलाशी हेतु वारण्ट जिला मजिस्ट्रेट, उपखण्ड मजिस्ट्रेट (Sub-divisional Magistrate) या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा जारी किया जा सकता है। ऐसे वारण्ट का निष्पादन कान्सटेबल की पंक्ति के ऊपर के पुलिस अधिकारी द्वारा किया जायेगा तथा ऐसा तलाशी वारण्ट जारी करने से पूर्व सम्बन्धित मजिस्ट्रेट के पास यह विश्वास करने का कारण होना चाहिए कि तलाशी लिये जाने वाले स्थान का प्रयोग चौर्य सम्पत्ति (Stolen Property) आदि के निक्षेप (Deposit) अथवा विक्रय के लिए या किसी आपत्तिजनक वस्तु के निक्षेप, विक्रय या उत्पादन के लिए किया जा रहा है। (धारा 94)।

धारा 94 के अधीन आपत्तिजनक वस्तुओं (Objectionable articles) का उल्लेख इसकी उपधारा (2) में किया गया है। धारा 94 के अन्तर्गत संदिग्ध निक्षेप स्थान की तलाशी के लिए वारण्ट द.प्र.सं. की द्वितीय अनुसूची के प्ररुप संख्या (Form No.-11) के अनुरुप जारी किया जा सकता है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 95 में किसी समाचार पत्र, पुस्तक अथवा दस्तावेज के प्रकाशन को **समपहृत (Forfeit)** करने की घोषणा एवं इसके लिए तलाशी वारण्ट जारी करने का प्रावधान किया गया है। इस शक्ति का प्रयोग मात्र राज्य सरकार कर सकती है और वह भी केवल तभी जब उसे यह प्रतीत होता कि किसी समाचार पत्र या पुस्तक अथवा किसी दस्तावेज में, चाहे वह कहीं भी मुद्रित हुई हो, कोई ऐसी बात अन्तर्विष्ट है जिसका प्रकाशन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 124 'क' या 153 क, या 153'ख' या 292 या 293 या 295-क, के अन्तर्गत दण्डनीय है। ऐसा प्रतीत होने पर राज्य सरकार ऐसे समाचार पत्र के अंक (Issue) या पुस्तक अथवा दस्तावेज की प्रत्येक प्रति को सरकार के पक्ष में समपहृत कर लिये जाने की घोषणा अपने राय के आधारों को बताते हुये, अधिसूचना द्वारा कर सकती है।

धारा 95 के अन्तर्गत राज्य सरकार द्वारा उन आधारों के अतिरिक्त जो भारतीय दण्ड संहिता के अधीन दण्डनीय है, से विसंगत कोई अन्य आधार वर्णित कर देने मात्र के कारण समपहरण का आदेश अविधिमान्य नहीं होगा। (पी. हेमलता बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य, (1979) आन्ध्र प्रदेश)।

धारा 95 के अन्तर्गत पारित आदेश, विधि के अनुसार ही होना चाहिए, ताकि वह इस आधार पर चुनौती से मुक्त हो कि वह संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क), (छ) के अधीन प्रत्याभूत मूल अधिकारों का अतिलंघन करता है।

धारा 95 के अधीन कार्यवाही करने के पूर्व राज्य सरकार को कार्यवाही का वह कारण लिखना आवश्यक है, जिसके आधार पर उसने कार्यवाही करने का निर्णय लिया है। इस कारण के अभाव में समपहरण की घोषणा अवैध मानी जायेगी **(हरनाम दास बनाम उत्तर प्रदेश, राज्य, A.I.R. 1961,S.C.)**।

राज्य सरकार द्वारा समपहरण के आदेश की घोषणा की अधिसूचना के पश्चात् दो प्रकार की कार्यवाहियाँ की जा सकती हैं–

(i) पुलिस अधिकारी द्वारा भारत में कहीं भी दण्डनीय सामग्री या **अधिग्रहण (Seizure)** एवं,

(ii) मजिस्ट्रेट द्वारा तलाशी वारण्ट जारी किया जाना,

धारा 95 के तहत समपहरण की घोषणा से विक्षुब्ध व्यक्ति या पक्षकार, समपहरण की घोषणा **अपास्त (Set a side)** करने के लिए सम्बन्धित राज्य की सीमाओं पर क्षेत्राधिकार रखने वाले उच्च न्यायालय में , समपहरण की घोषणा के राजपत्र में प्रकाशन की तिथि से दो मास के अन्दर, आवेदन कर सकता है (अन्तर्गत धारा 96(1)), किन्तु ऐसा आवेदन करने के लिए यह आवश्यक है कि–

(i) किसी समाचार पत्र, पुस्तक या दस्तावेज के लिए राज्य सरकार द्वारा धारा 95 के अधीन समपहरण की घोषणा की गयी हो।

(ii) समपहरण की घोषणा के विरुद्ध मात्र वही व्यक्ति आवेदन कर सकता है, जो सम्बन्धित समाचार पत्र, पुस्तक या दस्तावेज में कोई हित रखता हो।

(iii) घोषणा अपास्त कराने के लिए आवेदन इस आधार पर

किया जा सकता है कि समाचार पत्र के कथित अंक अथवा उस पुस्तक या अन्य दस्तावेज में, जिसके बारे में समपहरण की घोषणा की गयी थी, कोई ऐसी बात अन्तर्विष्ट नहीं है, जो धारा 95(1) में विनिर्दिष्ट है।

यदि किसी राज्य सरकार द्वारा समपहरण की मूल घोषणा प्रकाशित कर दी गयी है, तथा उसी घोषणा को किसी अन्य राज्य सरकार द्वारा भी बाद में प्रकाशित किया जाता है, तो ऐसे मामले में अवधि की संगणना उस तिथि से की जायेगी, जिस दिन वह पहले राज्य सरकार द्वारा प्रकाशित की गयी थी **(गुलाम सरवर फिगर का वाद, A.I.R. 1962, आन्ध्र प्रदेश)।**

समपहरण की घोषणा अपास्त करने के आवेदन की सुनवाई एवं उस पर अवधारण, जिस उच्च न्यायालय में तीन से अधिक न्यायाधीश है, वहां तीन न्यायाधीशों से बनी विशेष, न्यायपीठ द्वारा की जायेगी। जिस उच्च न्यायालय में तीन से कम न्यायाधीश हैं, वहां ऐसी विशेष न्याय पीठ में उस उच्च न्यायालय के सब न्यायाधीश सम्मिलित होंगे। (धारा 96(2)। विशेष न्यायपीठ के न्यायाधीशों में मतभेद की स्थिति में, विनिश्चय न्यायाधीशों की बहुसंख्या की राय (Opinion ofthe majority) के अनुसार होगा। (धारा 96(5)। किसी समाचार पत्र के सम्बन्ध में सुनवाई में, सम्बन्धित समाचार पत्र की कोई प्रति साक्ष्य में दी जा सकती है। (धारा 96(3))।

यदि उच्च न्यायालय का यह समाधान नहीं होता कि समाचार पत्र, पुस्तक, अथवा अन्य दस्तावेज में कोई ऐसी बात अन्तर्विष्ट है, जो धारा 95(1) में विनिर्दिष्ट है, तो वह समपहरण की घोषणा को अपास्त कर देगा। (धारा 96(4))।

सदोष परिरुद्ध व्यक्तियों की तलाशी के लिए वारण्ट

सदोष परिरुद्ध व्यक्तियों के लिए तलाशी वारण्ट किसी जिला मजिस्ट्रेट, उपखण्ड मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा जारी किया जा सकता है। ऐसा मजिस्ट्रेट तभी तलाशी वारण्ट जारी कर सकता है, जब उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि कोई व्यक्ति ऐसी परिस्थितियों में परिरुद्ध है, जिसमें उक्त परिरोध अपराध की कोटि में आता है। इस प्रकार जारी तलाशी वारण्ट के अनुसरण में परिरुद्ध व्यक्ति के मिल जाने पर उसे यथाशीघ्र मजिस्ट्रेट के समक्ष ले जाया जायेगा, एवं वह मजिस्ट्रेट उस मामले की परिस्थितियों के अनुसार उचित आदेश करेगा' (अन्तर्गत धारा 97)।

किसी स्त्री या 18 वर्ष से कम आयु की किसी बालिका के विधि विरुद्ध प्रयोजन के लिए **अपहरण (Abduction)** किये जाने अथवा विधि-विरुद्ध निरुद्ध रखे जाने का शपथ पर परिवाद किये जाने पर, जिला मजिस्ट्रेट, उपखण्ड मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट, उस स्त्री को तुरन्त स्वतन्त्र कराये जाने अथवा उस बालिका को अपने पति, माता-पिता, संरक्षक या उसके विधिपूर्ण भार साधक को यथाशीघ्र वापस करने का आदेश कर सकता है। अपने आदेश के अनुपालन के लिए मजिस्ट्रेट आवश्यक बल का प्रयोग करा सकता है। (धारा 98)।

धारा 98 में प्रयुक्त 'परिवाद' (Complaint) शब्द का प्रयोग सामान्य अर्थ में किया गया है, जिसका तात्पर्य किसी शिकायत से है इस शब्द का प्रयोग द.प्र.सं. की धारा 2(d) में अनुचिन्तित अर्थ में नहीं किया गया है। (तुलसी दास जंगल्या बनाम चेतन दास ढाया दास, A.I.R. 1933, नागपुर)।

न्यायालय द्वारा तलाशी वारण्ट जारी करने की शक्ति का प्रयोग, सम्पूर्ण सतर्कता एवं चौकसी के साथ किया जाना चाहिए। (कलिंगा ट्यूब्स लिमि. बनाम डी. सूरी, A.I.R. 1953उड़ीसा)।

धारा 93 में प्रयुक्त पदावली 'विश्वास करने का कारण' का तात्पर्य विश्वास करने का पर्याप्त कारण' से है। (मेलिकियो फर्नान्डेज बनाम मोहन, A.I.R. 1966, गोवा)।

वीरेन्द्र बन्धु बनाम राजस्थान राज्य में राजस्थान उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय धारा 96 के अन्तर्गत किये गये आवेदन का विनिश्चय करते समय, धारा 95 के अधीन राज्य सरकार द्वारा पारित समपहरण का आदेश उस स्थिति में अपास्त कर सकता है, जब उसका यह समाधान हो जाये कि वे आधार ऐसी राय को न्यायोचित नहीं ठहराते, जिन पर राज्य सरकार ने यह राय बतायी थी कि सम्बद्ध समाचार पत्र, पुस्तक अथवा दस्तावेज का प्रकाशन धारा 95(1) में निर्दिष्ट भारतीय दण्ड संहिता (I.P.C.) की धाराओं में से किसी के अधीन दण्डनीय है।

धारा 97 के अधीन जारी किया जाने वाला वारण्ट बन्दी प्रत्यक्षीकरण रिट की प्रकृति सदृश है, जिसे मजिस्ट्रेट के आदेश से निर्दिष्ट पुलिस के मध्यक्षेप द्वारा सदोष परिरुद्ध व्यक्ति के उद्धार या मोचन के लिए जारी किया जाता है।

तलाशी सम्बन्धी उपबन्ध

धारा 100 तलाशी वारण्ट का निष्पादन करने वाले व्यक्ति द्वारा किसी **बन्द स्थान (Closed Place)** की तलाशी या **निरीक्षण (Inspection)** की माँग किये जाने पर उस स्थान के निवासी अथवा उसके भार **साधक (Incharge)** पर यह दायित्व आरोपित करती है कि वह तलाशी वारण्ट के निष्पादक को, न मात्र उस बन्द स्थान में अबाध प्रवेश दे, अपितु वहां तलाशी लेने के लिए सभी उचित सुविधायें भी दे।

धारा 100, उपबन्धों के उल्लंघन में ली गयी तलाशी पर लागू होने वाली विधि धारा, 165 (पुलिस अधिकारी द्वारा तलाशी) पर भी लागू होती है (श्याम लाल शर्मा बनाम मध्य प्रदेश राज्य, A.I.R. 1972,S.C.)।

तलाशी वारण्टों के बारे में द.प्र.सं. के उपबन्ध एवं तलाशियों के बारे में धारा 100 के साधारण उपबन्ध धारा 165 के अधीन ली जाने वाली तलाशी के यथासम्भव लागू होते हैं। (धारा 165(4))।

जब तलाशी वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता से परे किसी स्थान की तलाशी में कोई वस्तु पायी जाती है, तब वे चीजें एवं उनकी सूची, तलाशी वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय के समक्ष यथाशीघ्र ले जायी जायेगी, किन्तु यदि वह स्थान तलाशी वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय की अपेक्षा उस पर अधिकारिता रखने वाले मजिस्ट्रेट के अधिक समीप है, तो सूची एवं चीजें यथाशीघ्र उस मजिस्ट्रेट के समक्ष ले जायी जायेगी एवं तत्प्रतिकूल अच्छे कारण के अभाव में, वह मजिस्ट्रेट उन्हें तलाशी वारण्ट जारी करने वाले न्यायालय के पास ले जाने के लिए प्राधिकृत करने का आदेश देगा। (अन्तर्गत धारा 101)।

धारा 102 के अधीन पुलिस अधिकारी किसी सन्देहास्पद सम्पत्ति को अभिगृहीत कर सकता है–

(i) जब उस सम्पत्ति के बारे में यह **अभिकथन (Allegation)** या **सन्देह** हो, कि वह चुराई हुई है, अथवा

(ii) वह सम्पत्ति ऐसी परिस्थितियों में पायी गयी हो कि जिनसे किसी अपराध के किये जाने का सन्देह होता हो।

धारा 103 के अधीन यदि तलाशी वारण्ट जारी करने के लिए सक्षम मजिस्ट्रेट, तलाशी के स्थान पर स्वयं उपस्थित है, तो उसे तलाशी वारण्ट जारी करने की जरुरत नहीं होती। वह स्वयं अपनी उपस्थिति में तलाशी लिये जाने का निदेश दे सकता है। **(मूलराज बनाम राज्य, A.I.R. 1955, हिमाचल प्रदेश)।**

धारा 104 के अन्तर्गत न्यायालय किसी दस्तावेज या चीज को परिबद्ध (Impound) कर सकता है, जब–

(i) कोई दस्तावेज या चीज उसके समक्ष प्रस्तुत की गयी हो एवं

(ii) न्यायालय उस दस्तावेज या चीज को परिबद्ध करना उचित समझता हो।

दस्तावेज या चीज पेश करने के लिए समन करने का अधिकार न रखने वाला न्यायालय दस्तावेज या चीज परिबद्ध किये जाने का आदेश नहीं दे सकता।

किसी दस्तावेज या चीज को न्यायालय के किसी अधिकारी के कब्जे में रखे जाने का आदेश दिया जाना उस दस्तावेज या चीज को परिबद्ध करना कहा जाता है। (पूरन चन्द्र बनाम इम्परर AIR 1942लाहौर)।

समन गिरफ्तारी वारण्ट, दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने की अपेक्षा करने वाले समन एवं तलाशी वारण्ट जैसी आदेशिकाओं के सम्बन्ध में व्यतिकारी व्यवस्था (Reciprocal arrangement) का प्राक्धान धारा 105में किया गया है।

धारा 102 की उपधारा (3) के परन्तुक के अनुसार पुलिस अधिकारी द्वारा **चौर्य सम्पत्ति (Stolen Property)** होने के सन्देह में अभिग्रहीत की गयी, शीघ्रतया तथा प्रकृत्या क्षयशील सम्पत्ति जिसका कब्जे का हकदार व्यक्ति अज्ञात है का पुलिस अधीक्षक के आदेश से तत्काल नीलाम द्वारा विक्रय किया जा सकता है यदि अभिग्रहीत सम्पत्ति का मूल्य 500/- रुपये से कम है।

धारा 102(1) पुलिस अधिकारी को वह सम्पत्ति अभिगृहीत करने की शक्ति देती है, 'जो ऐसी परिस्थितियों में पायी जाती है, जिसे किसी अपराध के किये जाने का सन्देह हो' अर्थात् पुलिस अधिकारी असंज्ञेय अपराध से सम्बन्धित सन्देहास्पद परिस्थितियों में पायी गयी सम्पत्ति अभिग्रहीत कर सकता है। (बाबू लाल अग्रवाल बनाम उड़ीसा राज्य AIR 1954 उड़ीसा)।

नेमि चन्द्र जैन बनाम सुपरिन्टेन्डेन्ट ऑफ सेन्ट्रल इक्साइज कस्टमस के वाद में यह अवधारित किया गया कि द.प्र.सं. की धारा 102 के तहत पुलिस अधिकारी को प्रदत्त की गयी सम्पत्ति अभिग्रहण करने की शक्ति का प्रयोग मात्र उसी मामले में किया जाना चाहिए जिसमें उसको उस अपराध में अन्वेषण करने की शक्ति, द.प्र.सं. द्वारा या अन्य विधियों द्वारा प्रदत्त की गयी हो।

अन्तर्राष्ट्रीय अपराध एवं अपराधियों के सम्बन्ध में कतिपय मामलों में सहायता के लिए व्यतिकारी व्यवस्था एवं सम्पत्ति की कुर्की तथा समपहरण के लिए प्रक्रिया का प्रावधान अध्याय VII-A में किया गया है। इसे दण्ड प्रक्रिया संहिता संशोधन अधिनियम 1993 द्वारा संहिता में अन्तः स्थापित किया गया है।

यह संशोधन मुख्यतः ब्रिटेन के साथ भारत के द्वारा किये गए प्रत्यर्पण संधि क प्रवर्तित कराने के लिए किया गया है। इस निमित्त इस अध्याय में धारा 105क से धारा 105 ठ तक जोड़कर उसमें विशेष प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है।

प्रश्नकोश

Q. समन की तामील किस प्रकार की जाती है?

A. पुलिस अधिकारी द्वारा, न्यायालय के किसी अधिकारी द्वारा, किसी अन्य प्राधिकृत लोक सेवक द्वारा। (धारा 62)।

Q. किस धारा के अन्तर्गत समन की तामील सम्बन्धित व्यक्ति के परिवार के उसके साथ रहने वाले किसी वयस्क पुरुष सदस्य के पास समन छोड़कर की जा सकती है?

A. धारा 64।

Q. किसी दण्डाधिकारी के द्वारा उसके क्षेत्राधिकार के बाहर आह्वान पत्र का निर्वाह उसके द्वारा कैसे किया जायेगा?

A. उक्त स्थान के दण्डाधिकारी को आह्वान-पत्र निर्वाह के लिए भेजकर (धारा 67)।

Q. एक विधिमान्य वारण्ट के आवश्यक तत्व क्या हैं?

A. वारण्ट को लिखित, न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के द्वारा हस्ताक्षरित तथा मुद्रांकित (न्यायालय की मुहर) होना चाहिए।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता का कौन सा प्रावधान बन्दी प्रत्यक्षीकरण रिट के सदृश हैं?

A. धारा 97 के प्रावधान।

Q. क्या दाण्डिक न्यायालय उसके समक्ष पेश की गयी किसी दस्तावेज को परिबद्ध कर सकता है?

A. हां। (धारा 104)।

Q. समन का प्रारुप क्या होता है?

A. इस संहिता के अधीन न्यायालय द्वारा जारी किया गया प्रत्येक समन लिखित रुप में दो प्रतियों में, न्यायालय के पीठासीन अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित होगा और उस पर न्यायालय की मुद्रा लगी होगी।

Q. संहिता के अन्तर्गत निगमित निकायों और सोसाइटियों पर समन की तामील कैसे की जाती है?

A. किसी निगम पर समन की तामील निगम के सचिव, स्थानीय प्रबन्धक या अन्य प्रधान अधिकारी पर तामील करके की जा सकती है या भारत में निगम के मुख्य अधिकारी के पते पर रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा भेजे गये पत्र द्वारा की जा सकती है। (धारा 63)।

Q. गिरफ्तारी के वारण्ट का प्रारुप क्या होता है?

A. संहिता की धारा 70 के अनुसार इस संहिता के अधीन न्यायालय द्वारा जारी किया गया गिरफ्तारी का प्रत्येक वारण्ट लिखित रुप में और ऐसे न्यायालय के पीठासीन अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित प्रावधान होगा और उस पर उस न्यायालय की मुद्रा लगी होगी।

Q. कोई जारी किया गया वारण्ट कब तक प्रवर्तन में रहता है?

A. प्रत्येक वारण्ट तब तक प्रवर्तन में रहता है जब तक वह उसे जारी करने वाले न्यायालय द्वारा रद्द नहीं कर दिया जाता है या जब तक वह निष्पादित नहीं कर दिया जाता है। (धारा 70(2)।

Q. गिरफ्तारी वारण्ट किसे जारी किया जाता है?

A. गिरफ्तारी वारण्ट पुलिस अधिकारियों को, या जारी करने वाला न्यायालय आवश्यक समझे तो किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों का निर्दिष्ट कर सकेगा।

Q. वारण्ट का निष्पादन कहां किया जा सकता है?

A. संहिता की धारा 77 के अनुसार गिरफ्तारी का वारण्ट भारत के किसी भी स्थान में निष्पादित किया जा सकता है।

Q. अधिकारिता के बाहर निष्पादन के लिए भेजे गये वारण्ट के सम्बन्ध में दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा में उपबंधित है?

A. संहिता की धारा 78 में।

Q. अभियुक्त व्यक्ति के सम्बन्ध में फरार होने की घोषणा एवं सम्पत्ति की कुर्की से सम्बन्धित उपबन्ध संहिता की किन धाराओं में है?

A. संहिता की धारा 82 से 86 तक में।

Q. संहिता की किस धारा के अंतर्गत किसी भी व्यक्ति को फरार घोषित किया जाता है?

A. धारा 82 के अंतर्गत्।

Q. संहिता की धारा 82 के अंतर्गत न्यायालय द्वारा की गयी उद्घोषणा के कितने दिनों के भीतर नियत स्थान एवं समय पर फरार व्यक्तियों को हाजिर होना होगा?

A. ऐसी लिखित उद्घोषणा के प्रकाशन की तारीख से 30 दिन के भीतर।

Q. न्यायालय कब किसी व्यक्ति के फरार होने की उद्घोषणा करता है?

A. जब कि न्यायालय को यह विश्वास करने का कारण है कि कोई व्यक्ति जिसके विरुद्ध उसने वारण्ट जारी किया है, फरार हो गया है या अपने को छिपा रहा है जिससे ऐसे वारण्ट का निष्पादन नहीं किया जा सकता, तो वह फरार होने की लिखित उद्घोषणा करता है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अंतर्गत फरार व्यक्ति के सम्पत्ति की कुर्की की जाती है?

A. धारा 83 के अन्तर्गत।

Q. फरार व्यक्ति के किन सम्पत्तियों की कुर्की और कब की जा सकेगी?

A. संहिता की धारा 83 के अनुसार उद्घोषणा जारी करने के पश्चात् किसी भी समय उद्घोषित व्यक्ति की जंगम या स्थावर अथवा दोनों प्रकार की किसी भी सम्पत्ति की कुर्की की जा सकेगी।

Q. किन परिस्थितियों में उद्घोषणा जारी करने वाला न्यायालय उद्घोषणा जारी करने के साथ ही कुर्की का आदेश दे सकता है?

A. जब उद्घोषणा जारी करते समय न्यायालय को शपथ-पत्र द्वारा या अन्यथा यह समाधान हो जाता है कि वह व्यक्ति जिसके सम्बन्ध में उद्घोषणा निकाली जानी है–

(क) अपनी समस्त सम्पत्ति या उसके किसी भाग का व्ययन करने वाला है, या

(ख) अपनी समस्त सम्पत्ति या उसके किसी भाग को उस न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता से हटाने वाला है, तो वह उद्घोषणा जारी करने के साथ ही कुर्की का आदेश दे सकता है।

Q. संहिता की धारा 83 के अंतर्गत कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति यदि ऋण या जंगम सम्पत्ति है तो कुर्की की रीति क्या होगी?

A. ऐसी सम्पत्ति की कुर्की–

(क) अभिग्रहण द्वारा की जायेगी, या

(ख) रिसीवर की नियुक्ति द्वारा की जायेगी, अथवा

(ग) उद्घोषित व्यक्ति को सम्पत्ति परिदान करने का प्रतिरोध करने वाले लिखित आदेश द्वारा की जायेगी, या

(घ) उक्त रीतियों में से सब या किन्हीं दो से की जायेगी।

Q. संहिता की धारा 83 के अंतर्गत यदि कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति स्थावर है और राज्य सरकार को राजस्व देने वाली भूमि है, तो उसकी कुर्की कैसे की जायेगी?

A. ऐसी स्थावर भूमि की दशा में उसकी कुर्की उस जिले के कलेक्टर के माध्यम से की जायेगी जिसमें वह भूमि स्थित है।

Q. स्थावर सम्पत्ति की दशा में, यहि वह राज्य सरकार को राजस्व देने वाली भूमि नहीं है, तो कुर्की कैसे की जायेगी?

A. ऐसी दशा में स्थावर सम्पत्ति की कुर्की निम्न तरीके से की जायेगी–(i) कब्जा लेकर (ii) रिसीवर की नियुक्ति द्वारा (iii) उद्घोषित व्यक्ति को सम्पत्ति का परिदान करने का प्रतिषेध करने वाले लिखित आदेश द्वारा (iv) उक्त सब रीतियों से या किन्हीं दो द्वारा।

Q. धारा 83 के अन्तर्गत नियुक्त रिसीवर की शक्तियाँ, कर्तव्य और दायित्व किस प्रकार होंगे?

A. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अधीन नियुक्त रिसीवर की तरह।

Q. संहिता की धारा 83 के अंतर्गत कुर्की के अधीन किन सम्पत्तियों का तुरन्त विक्रय किया जा सकता है?

A. इस धारा के अधीन यदि कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति जीवधन है या विनश्वर प्रकृति की है तो, न्यायालय उसके तुरन्त विक्रय का आदेश दे सकता है।

Q. धारा 84 के अंतर्गत धारा 83 के अधीन कुर्क की गयी सम्पत्ति के बारे में दावा कौन व्यक्ति और कब तक कर सकेंगे?

A. धारा 84 के अंतर्गत ऐसे व्यक्ति जो उद्घोषित व्यक्ति से भिन्न है, कुर्की की तारीख से 6 माह के भीतर दावा कर सकते हैं, कि कुर्क की गयी सम्पत्ति में उनका हित है, जो कुर्क नहीं किया जा सकता है।

Q. संहिता की धारा 84 के अंतर्गत जिन व्यक्तियों के दावे पूर्णतः या भागतः नामंजूर किये गये है, वे कितने दिनों के भीतर सिविल वाद दायर कर सकते हैं?

A. ऐसे व्यक्ति जिनके दावे को धारा 84 के अंतर्गत नामंजूर किया गया है, किसी नामंजूरी आदेश की तारीख से 1 वर्ष के भीतर अपने अधिकार को सिद्ध करने के लिए सिविल वाद दायर कर सकते हैं।

Q. संहिता की किस धारा के अंतर्गत कुर्क की गयी सम्पत्ति की निर्मुक्ति वापसी या विक्रय किया जा सकता है?

A. धारा 85 के अंतर्गत।

Q. न्यायालय सम्पत्ति को कुर्की से निर्मुक्त करने का आदेश कब दे सकता है?

A. वह ऐसा आदेश तब दे सकता है जब उद्घोषित व्यक्ति उद्घोषणा में विनिर्दिष्ट समय के भीतर हाजिर हो जाय।

Q. धारा 85 के अंतर्गत कुर्क की गयी सम्पत्ति का विक्रय राज्य सरकार कब कर सकती है?

A. जब उद्घोषित व्यक्ति उद्घोषणा में विनिर्दिष्ट समय के भीतर हाजिर नहीं होता है तो कुर्क सम्पत्ति राज्य सरकार के व्ययनाधीन हो जाती है और राज्य सरकार ऐसी सम्पत्ति का विक्रय–

(क) कुर्की की तारीख से 6 मास का अवसान हो जाने पर तथा

(ख) धारा 84 के अधीन किये गये किसी दावे के या आपत्ति का निपटारा हो जाने पर कर सकती है।

Q. कुर्क की गयी सम्पत्ति उद्घोषित व्यक्ति के लिए कितने दिन तक सुरक्षित रखी जा सकती है?

A. ऐसी सम्पत्ति ऐसे व्यक्ति के लिए कुर्की की तारीख से 2 वर्ष तक ही सुरक्षित रखी जा सकती है।

Q. संहिता के अंतर्गत समन के स्थान पर या उसके अतिरिक्त वारण्ट कब जारी किया जा सकता है?

A. धारा 87 के अनुसार निम्नलिखित परिस्थितियों में वारण्ट जारी किया जा सकता है–

(1) गिरफ्तारी का वारण्ट जारी किये जाने के पूर्व या पश्चात् परन्तु व्यक्ति का हाजिरी के लिए नियत समय के पूर्व जारी किया जा सकता है, किन्तु इस बीच न्यायालय विश्वास करे कि ऐसा व्यक्ति फरार हो गया है या समन का पालन नहीं करेगा।

(2) समन की तारीख के पश्चात् गिरफ्तारी वारण्ट तब जारी किया जा सकता है जब गिरफ्तार किया जाने वाला व्यक्ति समय पर न्यायालय में हाजिर होने में असफल रहता है और यह साबित कर दिया जाता है कि समन की तामील ऐसे समय कर दी गयी थी कि वह न्यायालय में समयानुसार हाजिर हो सके।

Q. न्यायालय कब किसी दस्तावेज अथवा चीज को अपने समक्ष पेश करने के लिए समन जारी कर सकता है?

A. संहिता की धारा 91 के अनुसार जब वह यह समझता है कि उस न्यायालय के समक्ष चल रही किसी जांच विचारण या किसी अन्य कार्यवाही के प्रयोजन के लिए ऐसे दस्तावेज या किसी चीज का पेश किया जाना आवश्यक है।

Q. किसी पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी अपने समक्ष किसी दस्तावेज या चीज पेश करने के लिए कब तक लिखित आदेश जारी कर सकता है?

A. केवल तभी जब वह यह समझता है कि उसके द्वारा किये जा रहे किसी अन्वेषण के प्रयोजन के लिए ऐसे दस्तावेज या किसी चीज का पेश किया जाना आवश्यक है। (धारा 91)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 91 के उपबंध साक्ष्य अधिनियम की किन धाराओं पर लागू नहीं होंगे?

A. धारा 91 के उपबन्ध साक्ष्य अधिनियम की धारा 123 एवं 124 पर लागू नहीं होंगे।

Q. धारा 91 के अंतर्गत कोई समन अथवा आदेश क्या किसी अभियुक्त व्यक्ति के लिए भी जारी किया जा सकता है?

A. गुजरात राज्य बनाम लाला, ए. आई. आर. 1965S.C. के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने अनु. 20(3) के प्रकाश में यह दृष्टिकोण अपनाया है कि धारा 91 के सही अर्थानयन के अंतर्गत अभियुक्त व्यक्ति को सम्मिलित नहीं किया जा सकता है।

Q. परमेश्वरी देवी बनाम स्टेट, ए. आई. आर. 1977 एस. सी. के वाद में धारा 91 के संदर्भ में क्या विचार व्यक्त किया गया?

A. किसी भी व्यक्ति को जिस पर कोई अपराध का आरोप लगाया गया है, स्वयं अपने विरुद्ध साक्ष्य देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। धारा 91 के अधीन जारी किये गये किसी समन के अनुपालन में उपस्थित व्यक्ति स्वतः साक्षी नहीं हो जाता।

Q. तलाशी वारण्ट से आप क्या समझते हैं?

A. तलाशी वारण्ट न्यायालय द्वारा जारी एक आदेशिका या लिखित प्राधिकार है, जिससे धारक को किसी व्यक्ति, वस्तु या स्थान की खोज-बीन करने हेतु सशक्त किया जाता है।

Q. तलाशी वारण्ट के सम्बन्ध में किस प्रकरण में यह कहा गया कि– जब भी किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष तलाशी वारण्ट जारी करने के सम्बन्ध में आवेदन दिया जाये, तो उसे चाहिए कि ऐसा करने के पूर्व वह अपने दिमाग का उपयोग करे न कि यंत्रवत आदेश दे दें?

A. बी. एस. कुट्टन पिल्लै बनाम रामकृष्णन् 1980 के वाद में।

Q. तलाशी वारण्ट कब जारी किया जा सकता है?

A. संहिता की धारा 93(1) के अनुसार जहां न्यायालय को यह विश्वास करने का कारण है कि वह व्यक्ति जिसको धारा 91 के अधीन समन या आदेश या धारा 92(1) के अधीन अपेक्षा किये जाने पर भी दस्तावेज या चीज पेश नहीं करेगा या सम्भव है कि पेश न करे, या जहां न्यायालय को यह ज्ञात ही नहीं कि ऐसी दस्तावेज या चीज किस व्यक्ति के कब्जे में है या जहां न्यायालय यह समझता है कि इस संहिता के अधीन किसी जांच विचारण या अन्य कार्यवाही के प्रयोजनों की पूर्ति साधारण तलाशी या निरीक्षण से होगी। उक्त परिस्थितियों में से किसी की भी विद्यमानता में न्यायालय तलाशी वारण्ट जारी कर सकता है।

Q. यदि कोई दस्तावेज, पार्सल या चीज डाक या तार प्राधिकारी की अभिरक्षा में है तो उसकी तलाशी के लिए वारण्ट कौन जारी कर सकता है?

A. संहिता की धारा 93 के खण्ड (3) के अनुसार ऐसी स्थिति में तलाशी वारण्ट जिला मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ही जारी कर सकता है, अन्य मजिस्ट्रेट नहीं।

Q. संहिता की किस धारा के अधीन ऐसे स्थान की तलाशी के लिए, जिसमें चुराई हुई सम्पत्ति, कूटरचित दस्तावेज आदि रखे जाने का संदेह हो, वारण्ट जारी किये जाने का उपबंध किया गया है?

A. धारा 94 के अधीन।

Q. संहिता की धारा 94 के अंतर्गत तलाशी का वारण्ट किसके द्वारा जारी किया जा सकता है?

A. केवल जिला मजिस्ट्रेट, उपखण्ड मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा।

Q. संहिता की धारा 94 में जो व्यक्ति तलाशी के लिए प्राधिकृत किया जाय उसकी क्या पंक्ति होनी चाहिए?

A. ऐसा व्यक्ति कांस्टेबल की पंक्ति के ऊपर का कोई पुलिस अधिकारी होना चाहिए।

Q. संहिता की धारा 95 किस विषय में उपबंध करती है?

A. यह धारा कुछ प्रकाशनों के राज्य सरकार द्वारा समपहृत होने की घोषणा करने और उनके लिए तलाशी वारण्ट जारी करने की शक्ति के विषय में उपबन्ध करती है।

Q. संहिता की धारा 95 के अंतर्गत राज्य सरकार समपहृत होने की घोषणा की शक्ति का प्रयोग कब कर सकती है?

A. राज्य सरकार इस शक्ति का प्रयोग केवल तभी कर सकती है, जब उसे यह प्रतीत हो कि किसी समाचार पत्र या पुस्तक में अथवा किसी दस्तावेज में चाहे वह कहीं भी मुद्रित हुई हो, कोई ऐसी बात अंतर्विष्ट है जिसका प्रकाशन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 124(क), या धारा 153 (क), या धारा 153 (ख), या धारा 292 या धारा 293 या 295 (क) के अधीन दण्डनीय है।

Q. संहिता की धारा 95 के अंतर्गत राज्य सरकार के समपहरण के उद्घोषणा को अपास्त करने के लिए आवेदन किसे किया जा सकता है?

A. धारा 96 के अनुसार उच्च न्यायालय को।

Q. संहिता की धारा 96 के अंतर्गत, धारा 95 के अधीन जारी समपहरण की घोषणा से व्यथित व्यक्ति, उच्च न्यायालय को आवेदन घोषणा के राजपत्र में प्रकाशन के कितने दिन के भीतर कर सकता है?

A. 2 मास के भीतर।

Q. संहिता में किसे सदोष परिरुद्ध व्यक्तियों की तलाशी के लिये वारण्ट जारी करने की शक्ति प्रदान की गयी है?

A. संहिता की धारा 97 के अनुसार सदोष परिरुद्ध व्यक्तियों के लिए तलाशी वारण्ट जारी करने की शक्ति जिला मजिस्ट्रेट, उपखण्ड मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट को दिया गया है।

Q. संहिता की धारा 98 के अंतर्गत कोई जिला मजिस्ट्रेट, उपखण्ड मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट अपनी शक्तियों का प्रयोग कब कर सकता है?

A. ऐसे मजिस्ट्रेट अपनी शक्ति का प्रयोग केवल तभी कर सकते हैं जब किसी स्त्री या 18 वर्ष से कम आयु की किसी बालिका के

(क) किसी विधि विरुद्ध प्रयोजन के लिए अपहृत किये जाने का या

(ख) विधि विरुद्ध निरुद्ध रखे जाने का परिवाद किया गया हो और

(ग) ऐसा परिवाद शपथ पर किया गया हो।

Q. संहिता की धारा 99 में क्या निर्धारित है?

A. तलाशी-वारण्टों का निदेशन आदि।

Q. संहिता की धारा 100 के अंतर्गत तलाशी लेने के समय वारण्ट का निष्पादन करने वाले व्यक्ति का क्या कर्तव्य है?

A. ऐसे समय वारण्ट का निष्पादन करने वाले अधिकारी का यह कर्तव्य है कि वह तलाशी में उपस्थित रहने और उसके साक्षी बनने के लिए उस मुहल्ले के जिसमें तलाशी लिया जाने वाला स्थान है, दो या अधिक स्वतंत्र और प्रतिष्ठित निवासियों को बुलाये।

Q. हजारा सिंह बनाम पंजाब राज्य, जर्नल 1971 S.C., के प्रकरण में क्या मत व्यक्त किया गया?

A. इसमें यह कहा गया कि धारा 100 के अंतर्गत स्वतंत्र व्यक्ति का तात्पर्य निष्पक्ष व्यक्ति से है। इसके अन्तर्गत उस व्यक्ति को स्वतंत्र नहीं माना जा सकता जो पिछले कई वर्षों से पुलिस के साथ तलाशी के कार्य में साक्षी बनता आ रहा है। इस तरह के साक्ष्य पर सतर्कता और सावधानी बरतनी चाहिए।

Q. अधिकारिता से परे तलाशी में पायी चीजों का चयन, किस धारा के अन्तर्गत आता है?

A. धारा 101 ।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अंतर्गत मजिस्ट्रेट को तलाशी लिए जाने का निदेश देने की शक्ति प्रदान की गयी है?

A. संहिता की धारा 103 के अंतर्गत मजिस्ट्रेट किसी ऐसे स्थान की, जिसकी तलाशी के लिए वह तलाशी-वारण्ट जारी करने में सक्षम है, अपनी उपस्थिति में तलाशी लिये जाने का निदेश दे सकता है।

Q. पेश की गई दस्तावेज आदि को परिबद्ध करने की शक्ति, किस धारा में निहित है?

A. धारा 104 ।

Q. किसी दस्तावेज को साधारणतया कब परिबद्ध किया जाता है?

A. जब उस पर भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 में उल्लिखित उचित मूल्य के स्टाम्प न लगाये गये हों।

Q. गिरफ्तारी के वारण्ट के निष्पादन की स्थिति में यथासम्भव कौन सी प्रक्रिया अपनाई जायेगी?

A. धारा 40 और धारा 81 द्वारा विहित प्रक्रिया।

Q. तलाशी वारण्ट के निष्पादन की स्थिति में कार्यवाही किस प्रक्रिया के अनुसार की जायेगी?

A. धारा 101 में विहित प्रक्रिया के अनुसार।

Q. कतिपय मामलों में सहायता के लिए व्यतिकारी समझौता अथवा ठहराव और सम्पत्ति की कुर्की और समपहरण की प्रक्रिया किस धारा में निहित है?

A. धारा 105 में।

परिशान्ति कायम रखने के लिए और सदाचार के लिए प्रतिभूति (Security For Keeping the peace and for good behaviour) (S.106-124)

परिशान्ति कायम रखने और सदाचार के लिए प्रतिभूति दिए जाने से सम्बन्धित प्राक्धान दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 8 धारा 106 से 124 में वर्णित है। धारा 106(1) के अन्तर्गत कोई सत्र न्यायालय का प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट का न्यायालय या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट का न्यायालय किसी व्यक्ति को धारा 106(2) में वर्णित अपराधों के लिए दोषसिद्ध ठहराता है, तो वह उसी समय दण्डादेश देते समय उस व्यक्ति को परिशांति कायम रखने के लिए, प्रतिभूओं सहित या रहित, बंधपत्र निष्पादित करने का आदेश भी दे सकता है यदि ऐसा किया जाना न्यायालय आवश्यक समझती है। इस धारा के अधीन ऐसा बंधपत्र तीन वर्ष से अनधिक समय के लिए लिया जा सकता है। इस शक्ति का उपयोग अपील न्यायालय या पुनरीक्षण न्यायालय के द्वारा भी अपनी शक्तियों का उपयोग करते समय किया जा सकता है। (धारा 106(4)।

धारा 106 के अन्तर्गत परिशांति कायम रखने के लिए बंधपत्र निष्पादन की बाध्यता दण्डादेश देते समय ही किया जा सकता है। (मधु लिमपे बनाम एस. डी. एम., मुंगेर, AIR 1971 SC. 2486)।

किसी कार्यपालक मजिस्ट्रेट को प्राप्त **सूचना (Information)** के आधार पर वह इस राय पर पहुँचता है कि सम्भाव्य है कि परिशांति भंग करेगा अथवा लोक प्रशान्ति विरुद्ध कार्य करेगा या कोई ऐसा सदोष कार्य करेगा, जिससे सम्भाव्यत: परिशांति भंग होगी अथवा लोक प्रशान्ति विक्षुब्ध होगी और उस मजिस्ट्रेट की राय में कार्यवाही करने का पर्याप्त आधार हो, एवं परिशान्ति भंग या लोक प्रशान्ति विक्षुब्ध होने की आशंका वाला स्थान उसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर हो, अथवा ऐसी अधिकारिता के अन्दर कोई ऐसा व्यक्ति है, जो ऐसी अधिकारिता के परे सम्भाव्यत: परिशान्ति भंग करेगा या लोक प्रशान्ति विक्षुब्ध करेगा अथवा परिशान्ति भंग या लोक प्रशान्ति विक्षुब्ध करने वाला कोई सदोष कार्य करेगा, तो वह ऐसे व्यक्ति से अपेक्षा कर सकता है कि वह कारण दर्शित करे कि एक वर्ष से अनधिक इतनी अवधि के लिए, जितनी मजिस्ट्रेट उचित समझे, परिशान्ति बनाये रखने के लिए उसे प्रतिभूओं सहित या रहित बन्धपत्र निष्पादित करने का आदेश क्यों न दिया जाये (धारा 107द.प्र.सं.)।

चूँकि कार्यपालक मजिस्ट्रेट अपने **खण्ड (Division)** में परिशान्ति के अनुपालन के लिए जिम्मेदार होता है। अत: वह यह निर्णीत करने के लिए कि क्या धारा 107 के अधीन कार्यवाही की जाये या नहीं, उसको आत्यंतिक एवं अविशेषित विवेक प्राप्त है। **(सुदर्शन सिंह बनाम गोविन्द 1971 Cr. L.J.)।**

राजद्रोहात्मक बातों को फैलाने वाले व्यक्तियों से प्रथम श्रेणी कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा सदाचार के लिए प्रतिभूति ली जा सकती है (अन्तर्गत धारा 108 द.प्र.सं.)।

धारा 109 द.प्र.सं. प्रथम श्रेणी कार्यपालक मजिस्ट्रेट को कार्यवाही के लिए सशक्त करती है, जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर कोई संदिग्ध व्यक्ति अपनी उपस्थिति छिपाने के लिए पूर्वाधानियाँ बरत रहा है, तथा कोई संज्ञेय अपराध करने की दृष्टि से उपस्थिति छिपा रहा है।

किसी व्यक्ति द्वारा गिरफ्तारी से बचने के लिए स्वयं को छिपाना धारा 109 के अधीन दायित्व का निर्माण नहीं करता (राज्य बनाम अमूल्य कुमार AIR 1953 इलाहाबाद)।

प्रथम श्रेणी कार्यपालक मजिस्ट्रेट (Executive Magistrate of the first class) सूचना मिलने पर अपनी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर के अभ्यासिक अपराधियों (Habitual offenders) से सदाचार के लिए तीन वर्ष के अवधि के लिए प्रतिभूओं सहित बन्धपत्र निष्पादित करने का आदेश दे सकता है। (अन्तर्गत धारा 110 द.प्र.सं.)।

द.प्र.सं. की धारा 107, 108, 109 एवं 110 में विहित अपेक्षाओं के अनुक्रम में कार्यवाही करते हुए कार्यपालक मजिस्ट्रेट धारा 111

के अन्तर्गत विहित प्रक्रिया पूर्ण करने के पश्चात् आदेश जारी करता है दोष सिद्ध ठहराये गये व्यक्ति से परिशान्ति बनाये रखने के लिए तीन वर्ष की अवधि के लिए बन्धपत्र निष्पादित करने का आदेश सेशन न्यायालय या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा (अंतर्गत धारा 106(1) एवं अपील न्यायालय एवं पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा दिया जा सकता है।

यदि किसी व्यक्ति की स्वाधीनता धारा 110 के अधीन छीनी जाती है तो उसे राज्य के व्यय पर अपनी प्रतिरक्षा की सुविधा दी जानी चाहिए। (गोपालाचारी बनाम केरल राज्य AIR 1981 SC (कल्लन गोपालन का वाद)।

परिशान्ति बनाये रखने एवं सदाचार के लिए प्रतिभूति लेने सम्बन्धी प्रक्रियात्मक विधि का उपबन्ध द.प्र.सं. की धारा 111 से 124 तक में किया गया है। परिशान्ति भंग किये जाने की सम्भावना की सूचना पर मजिस्ट्रेट सम्बन्धित व्यक्ति को न्यायालय में उपस्थित होने के लिए समन (द्वितीय अनुसूची के प्रारुप सं. 14 में) जारी कर सकता है (अन्तर्गत धारा 113)। परिशान्ति भंग किये जाने या लोक प्रशान्ति विक्षुब्ध करने की इत्तिला की सत्यता के बारे में जांच का प्रावधान धारा 116 में किया गया है। ऐसी जांच यथासाध्य समन मामलों की भांति की जायेगी।

जिस व्यक्ति से धारा 106 या 117 के अधीन प्रतिभूति की अपेक्षा की गयी है, उसके द्वारा प्रतिभूति देने में व्यतिक्रम (Default) होने पर उसे धारा 122 के अधीन कारावास में निरुद्ध किया जायेगा। इस प्रकार कारावासित व्यक्ति के सन्दर्भ में यदि जिला मजिस्ट्रेट मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय की यह राय है कि ऐसा व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति या समाज के लिए परिसंकटकारी (Hazardous) नहीं हो सकता, तो मजिस्ट्रेट या न्यायालय उसे छोड़ने का आदेश दे सकता है। (अन्तर्गत धारा 123)।

परिशान्ति भंग किये जाने की इत्तिला की जांच न्यायिक प्रकृति की होती है तथा यह समन मामलों के विचारण एवं साक्ष्य के लिए विहित रीति से की जाती है।

प्रश्नकोश

प्र.– दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 106 के अन्तर्गत परिशांति कायम करने के लिए सदाचार हेतु प्रतिभूति पर छोड़ने का अधिकार किसको है?

उ.– सत्र न्यायालय, दण्डाधिकारी प्रथम श्रेणी और अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय को।

प्र.– निम्न में किस अपराध के लिए एक दोषसिद्ध व्यक्ति को परिशांति कायम रखने के लिए बन्धपत्र निष्पादित करने को कहा जा सकता है?

उ.– विधिविरुद्ध जमाव, बलवा करना और आपराधिक अभित्रास। (धारा 106(2)।

प्र.– जहां दोषसिद्धि नहीं हुई है, शांति बनाये रखने के लिए प्रतिभूति की अपेक्षा किसके द्वारा किया जा सकता है?

उ.– कार्यकारी मजिस्ट्रेट के द्वारा। (धारा 107)।

प्र.– संदिग्ध व्यक्तियों से सदाचार की प्रतिभूति लेने की शक्ति किसे हैं?

उ.– कार्यपालक मजिस्ट्रेट को। (धारा 109)।

प्र.– यदि कोई व्यक्ति अश्लील वस्तु विक्रय के लिए रखता है तो उस व्यक्ति से सदाचार के लिए बंधपत्र निष्पादित करने की अपेक्षा कौन कर सकता है?

उ.– कार्यपालक मजिस्ट्रेट। (धारा 110(छ))।

Q. संहिता की धारा 106 एवं 107 का सम्बन्ध किन विधिक उपबन्धों से हैं?

A. परिशान्ति कायम रखने के लिए प्रतिभूति निष्पादित करने के लिए परिस्थितियों का वर्णन करती है।

Q. एक दोषसिद्ध व्यक्ति से परिशान्ति कायम रखने के लिए कौन से न्यायालय प्रतिभूति मांग कर सकते हैं?

A. संहिता की धारा 106 के अनुसार ऐसे व्यक्ति से परिशान्ति कायम रखने के लिए सेशन न्यायालय तथा प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट प्रतिभूति की मांग कर सकते हैं।

Q. संहिता की धारा 106 के अंतर्गत जिन अपराधों के लिए किसी व्यक्ति को दोषसिद्ध किया जाना चाहिए, वे कौन से हैं?

A. वे अपराध धारा 106 के खण्ड (2) के अनुसार निम्न हैं– (क) भारतीय दण्ड संहिता के अध्याय 8 के अधीन दण्डनीय कोई अपराध, (153(A), 153 (B) एवं धारा 154 को छोड़कर),
(ख) ऐसा कोई अपराध जो आपराधिक बल, हमला या रिष्टि करना है,
(ग) आपराधिक अभित्रास का कोई अपराध,
(घ) ऐसा कोई अपराध जिससे परिशान्ति भंग हुई है, या आशयित है, या होना संभाव्य है।

Q. संहिता की धारा 106 के अंतर्गत दण्डादेश देते समय सेशन न्यायालय या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट कितने वर्ष तक की अवधि के लिए प्रतिभुओं सहित या रहित, बन्धपत्र निष्पादित करने का आदेश दे सकते हैं?

A. 3 वर्ष से अनधिक अवधि तक के लिए।

Q. प्रतिभूति अदा न करने पर क्या गिरफ्तारी की जा सकती है, यदि हां तो कितनी अवधि तक?

A. हां! जब तक कारावास की अवधि खत्म न हो या जब तक वह उस अवधि के भीतर मजिस्ट्रेट को प्रतिभूति न दे दे।

Q. संहिता के अध्याय 8 में उपबंधित विधियों की क्या प्रवृत्ति है?

A. इस अध्याय में धारा 106 से लेकर 110 तक निवारण से सम्बन्धित मौलिक विधि सन्नियमित की गई है और धारा 111 से लेकर 124 तक प्रक्रियात्मक विधि।

Q. संहिता की धारा 106 के अंतर्गत निष्पादित बन्धपत्र कब शून्य हो जायेगा।

A. धारा 106 की उपधारा (3) के अनुसार यदि दोषसिद्धि अपील पर या अन्यथा अपास्त कर दी जाती है, तो बन्धपत्र जो निष्पादित किया गया था, शून्य हो जायेगा।

Q. मधुमिलये बनाम उपखण्ड मजिस्ट्रेट मुंगेर, 1971 के वाद में क्या अभिनिर्धारित किया गया?

A. धारा 106 के अंतर्गत न्यायालय जब भी दोषसिद्धि के आदेश के साथ-साथ परिशान्ति बनाये रखने के लिए प्रतिभूति सहित या रहित बन्धपत्र निष्पादन का आदेश दे तो उसे अपने निर्णय में यह भी उल्लिखित करना होगा कि बन्ध-पत्र निष्पादन का आदेश देना उचित था और उसके लिए पर्याप्त कारण थे।

Q. संहिता की धारा 107 में किस प्रकार के मजिस्ट्रेट को लोक परिशान्ति भंग होने या लोक प्रशान्ति विक्षुब्ध होने से रोकने के लिए कार्यवाही करने के लिए सशक्त किया गया है?

A. कार्यपालक मजिस्ट्रेट को।

Q. संहिता की धारा 107 के प्रारुपण का क्या उद्देश्य परिलक्षित होता है?

A. मजिस्ट्रेट ऐसे कार्यों के निवारण के लिए जिसमें परिशान्ति, या लोक प्रशान्ति व्यवधानित होती हो, तात्कालिक कार्यवाही कर सके।

Q. धारा 107 के अंतर्गत कब कोई कार्यपालक मजिस्ट्रेट कार्यवाही के लिए अग्रसर होता है?

A. जबकि उसे इत्तिला मिलती है कि कोई व्यक्ति परिशान्ति भंग करेगा या लोक प्रशान्ति विक्षुब्ध करेगा या कोई कार्य करेगा जिससे संभाव्यत: परिशान्ति भंग हो जायेगी या लोक प्रशान्ति विक्षुब्ध हो जायेगी तब यदि उसकी राय में पर्याप्त आधार है तो कार्यवाही कर सकेगा।

Q. धारा 107 के अन्तर्गत कार्यपालक मजिस्ट्रेट को कितनी अवधि तक के लिए परिशान्ति कायम रखने के लिए बन्धपत्र निष्पादित करने की आदेश देने की शक्ति प्राप्त है?

A. एक वर्ष से अनधिक अवधि तक के लिए।

Q. किस वाद में यह कहा गया कि धारा 107 के अंतर्गत कोई कार्यवाही तब तक नहीं की जायेगी जब तक कि ऐसे व्यक्तियों को न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं कर दिया जाता?

A. रघुबर दयाल बनाम डिस्ट्रिक्ट जज, 1977 (आल केसेज रिपोर्ट) के वाद में।

Q. संहिता की किस धारा के अंतर्गत राजद्रोहात्मक बातों को फैलाने वाले व्यक्तियों से सदाचार के लिए प्रतिभूति का उपबन्ध किया गया है?

A. धारा 108 के अंतर्गत।

Q. संहिता की कौन सी धारायें सदाचार के प्रतिभूति से सम्बन्धित हैं?

A. धारा 108, 109 एवं 110।

Q. संहिता की धारा 108 के अंतर्गत कौन सा मजिस्ट्रेट और कितनी अवधि तक के लिए बंधपत्र के निष्पादन का आदेश किसी व्यक्ति को दे सकता है?

A. कोई कार्यपालक मजिस्ट्रेट 1 वर्ष से अनधिक कितनी ही अवधि के लिए प्रतिभुओं सहित या रहित।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 109 किन बातों से सम्बन्धित हैं?

A. संदिग्ध व्यक्तियों से सदाचार के लिए प्रतिभूति के लिए आदेश देने से सम्बन्धित है।

Q. धारा 109 के अंतर्गत कोई कार्यपालक मजिस्ट्रेट किसी व्यक्ति को बन्ध-पत्र निष्पादित करने का आदेश कब दे सकता है?

A. जब कि उसे इत्तिला मिलती है कि कोई व्यक्ति उसकी स्थानीय अधिकारिता के अंदर अपनी उपस्थिति छिपाने के लिए पूर्वावधानियाँ बरत रहा है, और यह विश्वास करने का कारण है कि वह कोई संज्ञेय अपराध करने की दृष्टि से ऐसा कर रहा है।

Q. संहिता की धारा 109 के प्रवर्तन शर्तें क्या हैं?

A. (1) यह कि उपस्थिति छिपाने के लिए पूर्वावधानियाँ बरता जाना, और

(2) यह कि उपस्थिति को इस दृष्टिकोण से छिपाना कि कोई संज्ञेय अपराध किया गया।

Q. धारा 109 के अंतर्गत कार्यपालक मजिस्ट्रेट कितनी अवधि तक के लिए बन्धपत्र निष्पादित करने का आदेश दे सकता है?

A. एक वर्ष से अनधिक अवधि के लिए।

Q. संहिता की किस धारा के अंतर्गत आभ्यासिक अपराधियों से सदाचार हेतु प्रतिभूति ली जाती है?

A. धारा 110 के अंतर्गत।

Q. संहिता की धारा 110 के अंतर्गत बंधपत्र के निष्पादन का आदेश देने वाला मजिस्ट्रेट होता कौन सा है?

A. कार्यपालक मजिस्ट्रेट।

Q. संहिता की धारा 110 के अंतर्गत कार्यपालक मजिस्ट्रेट किसी व्यक्ति से कितनी अवधि तक के लिए बन्धपत्र के निष्पादन की अपेक्षा कर सकेगा?

A. 3 वर्ष से अनधिक इतनी अवधि तक लिए जितनी वह ठीक समझे।

Q. प्रतिभूति देने का आदेश किस धारा में निहित है?

A. धारा 117।

Q. उस व्यक्ति का उन्मोचन जिसके विरुद्ध इत्तिला दी गई है किस धारा में निहित है?

A. धारा 118।

Q. प्रतिभुओं को अस्वीकार करने की शक्ति किस धारा में निहित है?

A. धारा 121 में।

Q. संहिता की धारा 106 के अंतर्गत जिस अवधि के लिए प्रतिभूति अपेक्षित होती है उसका प्रारम्भ कब से होता है?

A. धारा 119 के अनुसार यदि व्यक्ति कारावास के लिए दण्डादिष्ट है और दण्डादेश भुगत रहा है तो वह अवधि, जिसके लिए ऐसी प्रतिभूति की अपेक्षा की गयी है ऐसे दण्डादेश के अवसान पर प्रारम्भ होगी। अन्य दशाओं में ऐसी अवधि, ऐसे आदेश की तारीख से प्रारम्भ होगी, जब तक कि मजिस्ट्रेट पर्याप्त कारण से कोई बाद की तारीख निश्चित न करे।

Q. मजिस्ट्रेट उस दशा में क्या कर सकता है, जब कि कोई व्यक्ति परिशान्ति कायम रखने के लिए प्रतिभूति देने में विफल रहता है?

A. जब कोई व्यक्ति परिशान्ति कायम रखने के लिए प्रतिभूति देने में विफल रहता है तो दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 122 (1) के अधीन मजिस्ट्रेट उसे बंधपत्र के लिए अपेक्षित समयावधि तक कारावास से दण्डित कर सकेगा जो धारा 122 (7) के तहत कारावास सादा होगा।

Q. मफ्रिस्ट्रेट उस दशा में क्या कर सकता है जब कि कोई व्यक्ति सदाचरण कायम रखने के लिए प्रतिभूति देने में विफल रहता है?

A. जब कि कोई व्यक्ति सदाचार कायम रखने हेतु प्रतिभूति देने में विफल रहता है तो ऐसी दशा में मजिस्ट्रेट की शक्ति दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 122 (1) में दी गयी है, ऐसी दशा में मजिस्ट्रेट उसे बन्धपत्र के लिए अपेक्षित समयावधि के लिए कारावासित कर सकेगा जो धारा 122 (8) के अनुसार यदि धारा 108 के अधीन है, तो सादा कारावास होगा और यदि ऐसी विफलता धारा 109 और 110 के अधीन है तो वहां साधारण या कठिन किसी प्रकार का कारावास हो सकेगा।

पत्नी, सन्तान एवं माता-पिता के भरण-पोषण के लिए आदेश (Order for maintenance of wives, children and parents)

दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय नौ (ix) का उद्देश्य अपनी आश्रित पत्नी, सन्तान (Child) एवं माता-पिता के भरण-पोषण में उपेक्षा अथवा इन्कार करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध प्रभावी, त्वरित एवं कम खर्चीला उपचार प्रदान करना है।

इस अध्याय में प्रावधानिक उपबन्धों (अन्तर्गत धारा 125 से 128) का उद्देश्य भरण-पोषण के अभाव में होने वाली उस भुखमरी, आवारागर्दी (Destitution and vagrancy) का निवारण करना है, जिससे अपराध फैलता है। (विधि आयोग की 41वीं रिपोर्ट एवं भगवान दल बनाम कमला देवी, 1975,S.C.C. का निर्णय)।

इस अध्याय के उपबन्ध सभी व्यक्तियों पर लागू होते हैं, इनका सम्बन्ध पक्षकारों की स्वीय विधियों (Personal laws) से नहीं है। (नानक चन्द्र बनाम चन्द्र किशोर अग्रवाल 1969, S.C.C.), किन्तु पक्षकारों के लिए प्रवर्तनीय वैयक्तिक विधि को भरण-पोषण के सम्बन्ध में विचार करने के दौरान पूरी तरह अपवर्जित भी नहीं किया जा सकता (कीर्तिमान डी. वादोदरिया बनाम गुजरात राज्य, 1996, S.C.C.)।

भरण-पोषण का आदेश देने के लिए प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट को सशक्त किया गया है। पर्याप्त साधनों (Sufficient means) वाला कोई व्यक्ति अपनी पत्नी, धर्मज या अधर्मज अवयस्क सन्तान (चाहे विवाहित हो या अविवाहित), विवाहित पुत्री के अतिरिक्त (Except) वयस्कता प्राप्त धर्मज या अधर्मज ऐसी सन्तान जो शारीरिक या मानसिक असामान्यता अथवा क्षति के कारण अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हो, एवं भरण-पोषण में असमर्थ माता-पिता को भरण-पोषण देने के लिए दायित्वाधीन है। (अन्तर्गत धारा 125(1))।

अवयस्क विवाहिता पुत्री के पति के पास पर्याप्त साधन न होने की स्थिति में, उसका वयस्क होने तक, भरण-पोषण भत्ता, उसके पिता से दिलवाया जा सकता है। (धारा 125(1), प्रथम परन्तुक)।

भरण-पोषण की कार्यवाही लम्बित रहने के दौरान, भरण-पोषण के लिए दावा करने वाली पत्नी, सन्तान या माता-पिता को अन्तरिम भरण-पोषण एवं कार्यवाहियों के लिए व्यय की राशि दिये जाने का आदेश भी मजिस्ट्रेट द्वारा दिया जा सकता है। (अन्तर्गत धारा 125(1) द्वितीय परन्तुक)।

अन्तरिम भरण-पोषण एवं कार्यवाहियों के लिए व्यय के आवेदन का निस्तारण, भरण-पोषण देने के लिए दायी व्यक्ति पर सूचना तामील हो जाने के, यथासम्भव 60 (साठ) दिन के अन्दर किया जायेगा (धारा 125(1), तृतीय परन्तुक)।

भरण-पोषण के दावे के सन्दर्भ में 'अवयस्क' (Minor) से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से हैं, जिसने वयस्कता (Majority) प्राप्त नहीं की है। 'पत्नी' से तात्पर्य पति द्वारा विवाह विच्छेदित (Divorced) या पति से विवाह-विच्छेद कर लेने और पुनर्विवाह (Re-Marriage) न करने वाली स्त्री से भी है। (यह किसी भी उम्र (Age) की वयस्क या अवयस्क हो सकती है। धारा 125 उस प्रत्येक महिला पर प्रभावी है, जिन्हें इस संहिता के प्रवर्तन के पूर्व अथवा पश्चात् विवाह विच्छिन्न कर दिया गया है।

तलाकशुदा (Divorced) मुस्लिम महिला धारा 125 के तहत अपने पूर्व पति के विरुद्ध तब तक भरण-पोषण का दावा कर सकती है, जब तक वह अपना पुनर्विवाह नहीं कर लेती। यद्यपि ऐसा दावा इद्दत-काल समाप्त होने के पश्चात् किया गया हो (मो. हनीफ बनाम अन्निशा खातून, 1976, Cr. L.J.)।

'मुस्लिम महिला (विवाह विच्छेद पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986' के पश्चात् भी यदि पत्नी धारा 125 के अन्तर्गत पति के विरुद्ध उपचार की अपेक्षा करती है, तथा पति को आपत्ति न हो, तो पत्नी ऐसा दावा कर सकती है। पति-पत्नी द्वारा निष्पादित विवाह-विच्छेद का विलेख पत्नी को भरण-पोषण का दावा करने से निर्योग्य नहीं बना देता है।

सिविल न्यायालय द्वारा पारित भरण-पोषण के लिए आज्ञप्ति (Decree) होने पर भी, धारा 125, के अन्तर्गत भरण-पोषण के लिए कार्यवाहियाँ आज्ञापित (Decree) की जा सकती है। धारा 125 के अन्तर्गत कोई याचिका सिविल न्यायालय की किसी आज्ञप्ति द्वारा वर्जित नहीं है।

भरण-पोषण करने के लिए, धारा 125 के अन्तर्गत दिये जाने वाले आवेदन पर परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 137 के उपबन्ध लागू नहीं होते।

यदि किसी व्यक्ति की पहली पत्नी जीवित है, एवं विवाह न तो विवाह विच्छेद की डिक्री द्वारा तथा न ही अन्यथा शून्य घोषित किया गया है, ऐसी स्थिति में दूसरी पत्नी के पक्ष में भरण-पोषण स्वीकृत करना त्रुटिपूर्ण है तथापि दूसरे विवाह से उत्पन्न सन्तान भरण-पोषण के हकदार होंगे। **(खेमचन्द्र ओम प्रकाश शर्मा बनाम गुजरात राज्य 2000, S.C.C.)।**

पत्नी अपने पति से भरण-पोषण अथवा अन्तरिम भरण-पोषण भत्ता एवं कार्यवाहियों के व्यय पाने की हकदार नहीं होगी, (अन्तर्गत धारा 125(4)) यदि वह–

(i) जारता की स्थिति में रह रही है। (अर्थात् भरण-पोषण की माँग करते समय पत्नी वस्तुतः जारता की स्थिति में रह रही हो।

यदि विवाहपूर्ण पत्नी का किसी व्यक्ति से लैंगिक सम्बन्ध था, तो वह **जारता (Adultery)** की कोटि में नहीं आता। (श्रीमती समीला देवी बनाम शंकरदास 1979 (हिमांचल प्रदेश)।

जारता की दशा में रहना एवं जारकर्म करना दो पृथक परिस्थितियाँ हैं। जारकर्म करने के कारण पत्नी भरण-पोषण भत्ता पाने का दावा करने के अधिकार से वंचित नहीं हो जाती, परन्तु यदि वह 'जारता की दशा में रह रही है' (Living in adultery) अर्थात् जारकर्म करने में अभ्यस्त है, तो वह भरण-पोषण भत्ता पाने की अधिकारिणी नहीं है। (श्रीमती उर्मिला देवी बनाम सत्र न्यायाधीश 1981, इलाहबाद)।

(ii) पर्याप्त कारण के बिना अपने पति के साथ रहने से इनकार करती हो–[यदि पति दूसरी स्त्री से विवाह कर लेता है, अथवा **रखैल (Mistress)** रखता है, तो ऐसी स्थिति में पत्नी द्वारा उसके साथ रहने से इन्कार करना न्यायासंगत (Justful) होगा। (अन्तर्गत धारा 125(3) द्वितीय परन्तुक का स्पष्टीकरण)

(iii) पति-पत्नी **पारस्परिक सहमति (Mutual Consent)** से अलग रह रहे हों।

किन्तु पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद का अनुबन्ध होने पर पत्नी तब तक भरण-पोषण का दावा करने के अधिकार से वंचित नहीं होती, जब तक वह अविवाहित रहती है एवं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ रहती है। (गुरुमीत कौर बनाम सुरजीत सिंह, 1996, S.C.C.)।

कोई पत्नी जिसके पक्ष में भरण-पोषण का आदेश दिया गया है, यह साबित होने पर कि वह जारता की स्थिति में रह रही है, या वह पर्याप्त कारण के बिना अपने पति के साथ रहने से इन्कार करती है, अथवा पति-पत्नी पारस्परिक सहमति से अलग रह रहे हैं, मजिस्ट्रेट आदेश रद्द (Cancel) कर सकता है। (धारा 125(5))।

धर्मज अथवा अधर्मज अवयस्क सन्तान (Legitimate or illegitimateminor child)

धारा 125, द.प्र.सं. के अन्तर्गत सन्तान के भरण-पोषण का अधिकार उसके धर्मजत्व (Legitimacy) पर आधारित नहीं है।

बिना उचित कारणों के अपने पति से अलग रहने वाली माँ की अभिरक्षा में रहने वाली अवयस्क सन्तान, जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, अपने पिता से स्वतंत्र रुप से तथा स्वयं अपने अधिकार के आधार पर भरण-पोषण भत्ता पाने का अधिकारी है (धारा 125(1) एवं श्रीमती केसर जहां बेगम बनाम रिजवान उल्लाह खाँ, A.I.R. 1979, के वाद में इलाहाबाद उच्च न्यायालय का विनिश्चय)।

धर्मज या अधर्मज वयस्क सन्तान (Legitimate or Illegitimate major child):- धर्मज या अधर्मज ऐसी वयस्क सन्तान जो किसी शारीरिक अथवा मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, अपने पिता से भरण-पोषण भत्ता प्राप्त कर सकती है। किन्तु वयस्क विवाहिता पुत्री इसकी अधिकारिणी नहीं है। (अन्तर्गत धारा 125(1)(c))।

पिता या माता का भरण-पोषण (Maintenance of Father or Mother)– स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ पिता या माता का भरण-पोषण करने के लिए उसकी साधन सम्पन्न सन्तान उत्तरदायी है। (अन्तर्गत धारा 125(1)(d))।

जनरल क्लाजेज अधिनियम (General Clauses Act), 1897 की धारा 3(20) में 'पिता' शब्द के अन्तर्गत 'दत्तक पिता' (Adoptive father) को भी सम्मिलित किया गया है। इसी परिभाषा के आधार पर मुम्बई उच्च न्यायालय ने बावन बनाम परबती बाई, 1978 Cr. L.J. बाम्बे, के वाद मे अभिनिर्णीत किया है कि 'माता' के अन्तर्गत 'दत्तक माता' (Adoptive mother) भी आती है। किन्तु उच्चतम न्यायालय ने कीर्तिकान्त डी. वादोदारिया बनाम गुजरात राज्य, 1996, S.C.C. के वाद में अभिधारित किया है कि धारा 125(1)(d) में प्रयुक्त 'माता' अभिव्यक्ति के अन्तर्गत 'सौतेली माता' (Step Mother) नहीं आती तथापि एक निःसंतान सौतेली माता अपने सौतेले पुत्र से भरण-पोषण का दावा कर सकती है, किन्तु यह केवल तभी किया जा सकता है, जब वह विधवा हो, अथवा उसका पति यदि जीवित हो तो उसे आश्रय एवं भरण-पोषण प्रदान करने में असमर्थ हों।

पर्याप्त साधनों वाली पुत्री चाहे विवाहिता हो अथवा अविवाहिता, स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ पिता या माता को, भरण-पोषण भत्ता देने के दायित्व के अधीन है। (विजय मनोहर अरवट बनाम काशीराव राजाराम सवाई, A.I.R. 1987, S.C.)।

मजिस्ट्रेट द्वारा भरण-पोषण का आदेश (Order for Maintenance by Magistrate) पर्याप्त साधनों वाले व्यक्ति द्वारा अपनी पत्नी, सन्तान, पिता या माता के भरण-पोषण में उपेक्षा या इन्कार के साबित हो जाने पर प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट ऐसे व्यक्ति को निदेश दे सकता है कि वह अपनी पत्नी, सन्तान, पिता या माता को भरण-पोषण के लिए केन्द्रीय अधिनियम के अनुसार मजिस्ट्रेट के विवेकानुसार निदेशित धनराशि, (उत्तर प्रदेश में 5,000 (पांच हजार) रुपये, मध्य प्रदेश में 3,000 (तीन हजार) रुपये) से अनधिक एवं राजस्थान में 2,500 (दो हजार, पांच सौ) रुपये मासिक दर पर, जिसे मजिस्ट्रेट उचित समझे, मासिक भत्ता दे तथा उस भत्ते का संदाय ऐसे व्यक्ति को करे जिसको संदाय करने का मजिस्ट्रेट समय-समय पर निदेश दे।

भरण-पोषण से सम्बन्धित मासिक भत्ते से सम्बन्धित कार्यवाही के दौरान अन्तरिम भरण-पोषण तथा ऐसी कार्यवाहियों के लिए, मजिस्ट्रेट द्वारा उचित समझी जाने वाली खर्चे की राशि देने का भी आदेश दिया जा सकता है। (अन्तर्गत धारा 125(1) द्वितीय परन्तुक)।

भरण-पोषण या अन्तरिम भरण-पोषण भत्ता और कार्यवाहियों का खर्च आदेश की तिथि से यदि ऐसा आदेश दिया जाता है तो भरण-पोषण अथवा अन्तरिम भरण-पोषण एवं कार्यवाहियों के खर्चे के लिए आवेदन की तिथि से देय होगा। (धारा 125(2))।

भरण-पोषण या अन्तरिम भरण-पोषण भत्ता और कार्यवाहियों के व्यय के संदाय का आदेश जिस व्यक्ति को दिया गया है, यदि वह पर्याप्त कारण के बिना आदेश का अनुपालन नहीं करता है, तो उस आदेश के प्रत्येक भंग के लिए कोई प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट देय रकम के लिए जुर्माना (Fine) उद्गृहीत करने के लिए उपबन्धित रीति (Manner) के अनुसार वारण्ट जारी कर सकता है और उस वारण्ट के निष्पादन के पश्चात् प्रत्येक भाग तक के न चुकाये गये पूरे भत्ते अथवा उसके किसी भाग के लिए ऐसे व्यक्ति को एक माह तक की अवधि के लिए, या यदि वह उससे पूर्व चुका दिया जाता है, तो चुका देने के समय तक के लिए कारावास दण्डादिष्ट कर सकता है। (धारा 125(3))।

रकम जिस तिथि को देय हुई है, उसके एक वर्ष की अवधि के अन्दर न्यायालय में आवेदन दिये जाने पर ही धारा 125 के अन्तर्गत देय रकम की वसूली के लिए वारण्ट जारी किया जायेगा। (धारा 125(3), प्रथम परन्तुक)।

यदि भरण-पोषण या अन्तरिम भरण-पोषण और कार्यवाही खर्च देने के लिए निदेशित व्यक्ति पत्नी से इस शर्त पर भरण-पोषण की प्रस्थापना करता है कि वह उसके साथ रहे तथा पत्नी, पति के साथ रहने से इन्कार करती है तो मजिस्ट्रेट उसके द्वारा कथित इन्कार के किन्हीं आधारों पर विचार कर सकता है, एवं ऐसी प्रस्थापना किये जाने पर भी वह (मजिस्ट्रेट) धारा 125 के अधीन आदेश दे सकता है, यदि उसका समाधान हो जाता है, कि ऐसा आदेश देने के लिए न्यायसंगत आधार है। (धारा 125(3), द्वितीय परन्तुक)।

उत्तर प्रदेश सरकार ने धारा 125,द.प्र.सं. में उपधारा (6) अंतः स्थापित करके यह प्रावधान किया है कि 'जहां धारा 125, द.प्र.सं. के अधीन किसी कार्यवाही में मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि भरण-पोषण का दावा करने वाले व्यक्ति को अपने निर्वाह करने एवं कार्यवाही के आवश्यक व्यय के लिए तत्काल ही अनुतोष की आवश्यकता है, तब मजिस्ट्रेट उसके आवेदन पर, ऐसे व्यक्ति, जिसके विरुद्ध भरण-पोषण का दावा किया गया है, को यह आदेश कर सकेगा कि वह कार्यवाही के लम्बित रहने के दौरान पाँच हजार रुपये से अनधिक मासिक भत्ता एवं कार्यवाहियों के ऐसे व्यय जैसा मजिस्ट्रेट युक्तियुक्त समझे, का भरण-पोषण का दावा करने वाले व्यक्ति को भुगतान करे तथा ऐसा आदेश भरण-पोषण के आदेश रुप में प्रवर्तनीय होगा।

दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत भरण-पोषण का वाद दाण्डिक कार्यवाही के तहत आते हैं। अतः दीवानी वादों में लागू होने वाले अभिवचनों के कठोर नियम द.प्र.सं. के अन्तर्गत भरण-पोषण के वादों में लागू नहीं होते।

धारा 125 के अधीन दिया गया अनुतोष दीवानी (Civil) प्रकृति का होने के कारण, मजिस्ट्रेट द्वारा दिया गया आदेश अन्तिम नहीं है तथा मजिस्ट्रेट के आदेश के बाद भी कोई भी पक्षकार अपने अधिकारों के लिए दीवानी न्यायालय में वाद प्रस्तुत कर सकता है। (नन्द लाल मिश्र बनाम कन्हैया लाल मिश्र, A.I.R. 1960, S.C.)।

इन्दरजीत कौर बनाम भारत संघ के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि धारा 125 भुखमरी के विरुद्ध त्वरित उपचार उपलब्ध कराती है, तथा पक्षकारों के सिविल दायित्वों का अभिनिर्धारण नहीं करती। इसके अधीन पारित आदेश अस्थायी एवं अधिकारों के सम्बन्ध में सिविल न्यायालय के अभिनिर्धारण के अधीन होता है। अतः यह किसी मूल अधिकार का अतिलंघन नहीं करती एवं सांविधानिक है।

संहिता के प्रवर्तन 01 अप्रैल 1974 के पूर्व विवाह विच्छिन्न कर दी गयी महिला भी धारा 125 (1) के अन्तर्गत भरण-पोषण का दावा कर सकती है, बशर्ते कि अन्य शर्तों को भी पूर्ण किया गया हो। (के. राजा खान बनाम मुमताज खातून 1976 Cr. L.J.)।

मात्र धर्म सम्परिवर्तन के कारण पति एवं उसकी पत्नी के मध्य वैवाहिक सम्बन्ध समाप्त नहीं हो जाते। अतः धर्म सम्परिवर्तित पति अपनी वैध रुप से विवाहित पत्नी के भरण-पोषण के लिए आबद्ध है। (एम.ए. रहमान बनाम बैंकट रमणा A.I.R. 1981 आन्ध्र प्रदेश)।

श्रीमती खातून बनाम मो. यामीन के वाद में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिधारित किया कि बाध्यता या दबाव पत्नी द्वारा पति के साथ रहने से इन्कार करने का 'पर्याप्त कारण' है। अतः ऐसी पत्नी, अपने पति से भरण-पोषण पाने की हकदार है।

उच्चतम न्यायालय ने सिराज मोहम्मद खाँ जान मोहम्मद खाँ बनाम हफीजुन्निशा यासीन खाँ A.I.R. 1982, S.C. तथा मेजर अशोक कुमार सिंह बनाम षष्टम् अपर सेशन न्यायाधीश 1996, S.C.C. के वाद में यह अभिधारित किया कि पति की नपुसंकता विधिक तथा मानसिक दोनों क्रूरताओं की कोटि में आती है, ऐसी स्थिति में पत्नी द्वारा पति के साथ रहने से इन्कार एक न्यायपूर्ण आधार है, और ऐसी पत्नी यदि अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, तो पति से भरण-पोषण पाने की हकदार है।

यदि पति स्थायी शारीरिक अक्षमता के कारण अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हो गया हो तथा पत्नी के पास पर्याप्त साधन हो तो ऐसा पति अपनी पत्नी से भरण-पोषण प्राप्त कर सकता है।

धारा 126 में धारा 125 के तहत वाद लाने की प्रक्रिया (Procedure) उपबन्धित की गयी है। जिसके अनुसार किसी व्यक्ति के विरुद्ध भरण-पोषण की कार्यवाही उस जिले में की जा सकती है

(क) जहां वह है, या

(ख) जहां वह अथवा उसकी पत्नी निवास करती है, या

(ग) जहां उसने अन्तिम बार, यथास्थिति अपनी पत्नी या अधर्मज सन्तान की माता के साथ निवास किया है। किन्तु यदि आवेदनकर्ता पिता या माता है, वहां पत्नी का निवास स्थान कार्यवाही का स्थान नहीं होगा। ऐसी कार्यवाही में सभी साक्ष्य उस व्यक्ति या उसके प्लीडर की उपस्थिति में लिये जायेंगे जिसके विरुद्ध कार्यवाही की गयी है। (धारा 126(2))।

मजिस्ट्रेट एकपक्षीय रुप से मामले को सुनने तथा अवधारित (Determine) करने के लिए अग्रसर हो सकता है, यदि उसका समाधान हो जाता है कि ऐसा व्यक्ति जिसके विरुद्ध भरण-पोषण का आदेश देने की प्रस्थापना की गयी है, तामील से जानबूझकर बच रहा है, या न्यायालय में उपस्थित होने में जानबूझकर उपेक्षा कर रहा है। किन्तु इस प्रकार पारित एक पक्षीय आदेश पारित किये जाने की तिथि से तीन माह के अन्दर अच्छे कारणों पर आधारित आवेदन दिये जाने पर **अपास्त (Set aside)** किया जा सकता है। (धारा 126(2))।

धारा 125 के अन्तर्गत आवेदनों पर कार्यवाही करने में न्यायालय न्यायसंगत खर्चों के बारे में आदेश दे सकता है। (धारा 126(3)।

धारा 127 के अन्तर्गत भत्ते में परिवर्तन किए जाने सम्बन्धी प्रावधान वर्णित है। ऐसा परिवर्तन भत्ता देने के लिए आदिष्ट व्यक्ति और भत्ता प्राप्त करने वाले व्यक्ति की स्थिति में साबित परिवर्तन के अनुरुप या तो 500/- से अनधिक (अब स्वविवेकानुसार) वृद्धि के रुप में या भत्ते के आदेश के निरस्तीकरण (पत्नी के पुनर्विवाह या रुढ़ि या किसी विधि के अधीन एकमुश्त धनराशि की प्राप्ति या पत्नी के द्वारा भरण-पोषण का अभ्यर्पण किए जाने पर) के रुप में हो सकता

है। मजिस्ट्रेट किसी सक्षम सिविल न्यायलय के आदेश के अनुरुप भी भत्ते में परिवर्तन या उसे निरस्त कर सकता है। यदि आदेश भत्ता-वसूली की आज्ञप्ति के रुप में है तो धारा 125 के अधीन भुगतान किए जा चुके धनराशि, यदि कोई हो, का समायोजन किया जा सकता है। (धारा 127(4)।

धारा 128 के अनुसार भरण-पोषण आदेश की प्रति, उस व्यक्ति या उसके संरक्षक को नि:शुल्क दिया जायेगा, जिसके पक्ष में भत्ते का आदेश दिया गया है और ऐसे आदेश का प्रवर्तन उस व्यक्ति के आवासीय स्थान, वह चाहे जहां भी हो, प्रवर्तित कराया जा सकता है, जिसके विरुद्ध वह पारित किया गया है।

प्रश्नकोश

प्र.– पत्नी, सन्तान और माता-पिता के भरण-पोषण का आदेश निम्न में कौन दे सकता है?

उ.– प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट। (धारा 125(1)।

प्र.– दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अन्तर्गत अब भरण-पोषण हेतु कितनी राशि दिलायी जा सकती है?

उ.– परिस्थितियों के अनुसार मजिस्ट्रेट जैसा उचित समझे।

प्र.– धारा 125 के अन्तर्गत उल्लिखित व्यक्ति के अलावा निम्न कौन व्यक्ति मध्य प्रदेश में भरण-पोषण का दावा कर सकता है?

उ.– पिता अथवा माता के माता-पिता।

प्र.– भरण-पोषण की बकाया रकम मिलने के लिए एक हिन्दू को कब तक दावा करना चाहिए?

उ.– बकाया देय होने के एक वर्ष के भीतर। (धारा 125(3)।

प्र.– कोई मजिस्ट्रेट भत्ते के आदेश में परिवर्तन के द्वारा क्या कर सकता है?

उ.– 500/-रु. से अनधिक की वृद्धि कर सकता है। (धारा 127(ग), (संशोधन 2001 के द्वारा अब मजिस्ट्रेट के विवेकानुसार)।

प्र.– 'एक व्यक्ति की दूसरी पत्नी, जिसके पति की प्रथम पति जीवित है, अपने पति से दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अन्तर्गत भरण-पोषण प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है।' किस वाद में निर्णित किया गया?

उ.– खेम चन्द्र ओम प्रकाश बनाम गुजरात राज्य (2000) 3SCC753)।

प्र.– भरण-पोषण के लिए आज्ञप्ति के निष्पादन में किसी व्यक्ति का वेतन किस सीमा तक कुर्क किया जा सकता है?

उ.– दो-तिहाई।

Q. भरण-पोषण क्या है?

A. जीवन निर्वाह के लिए मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ही भरण-पोषण है। यह मूलभूत आवश्यकता परिस्थितियों एवं तथ्य के अनुसार बदलता रहता है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के किस अध्याय और किन धाराओं में भरण-पोषण की व्यवस्था की गयी है?

A. संहिता के अध्याय 9 की धारा 125 से 128 तक में, भरण-पोषण के विषय में उपबंध किया गया है?

Q. संहिता के अन्तर्गत भरण-पोषण प्रदान करने के लिए कौन से लोग दायी हैं?

A. पति, पिता, पुत्र तथा पत्नी भी (यदि सक्षम और पर्याप्त संसाधनों वाली है, जबकि पति अक्षम है) भरण-पोषण प्रदान करने हेतु दायी है।

Q. संहिता के अंतर्गत भरण-पोषण के सम्बन्ध में वाद की क्या प्रकृति होती है?

A. यह दाण्डिक प्रकीर्ण वाद होता है, संहिता में दीवानी विधि में उपाचर होने के बावजूद त्वरित कार्यवाही के लिए सरल प्रक्रिया अपनायी गयी है।

Q. संहिता के अध्याय 9 का क्या उद्देश्य है?

A. इस अध्याय का उद्देश्य उन व्यक्तियों के विशुद्ध त्वरित, प्रभावी और कम खर्चीले उपचार प्रदान करना है, जो अपनी आश्रित पत्नी, सन्तानों और माता-पिता के भरण-पोषण में उपेक्षा करते हैं अथवा उनका भरण-पोषण करने से इन्कार करते हैं।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अंतर्गत भरण-पोषण से सम्बन्धित मामलों में संव्यवहार करने की शक्ति किस मजिस्ट्रेट को प्रदान की गयी है?

A. भरण-पोषण दिलाने की शक्ति का प्रयोग न्यायिक प्रकृति का होने के कारण केवल प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट को ही यह शक्ति प्रदान की गयी है।

Q. संहिता की धारा 125 के अंतर्गत पर्याप्त साधनों वाला व्यक्ति कौन है?

A. धनीराम और रामबाई, 1955 इलाहाबाद के प्रकरण में उच्च न्यायालय ने कहा कि यदि दायित्वाधीन स्वस्थ हृष्ट-पुष्ट हो, स्वस्थ शरीर का धारक है, वह पर्याप्त साधनों वाला है, भले ही वह अचल सम्पतति का मालिक न हो।

Q. धारा 125 के अंतर्गत कौन से व्यक्ति भरण-पोषण के हजग्हदार है?

A. (i) अपना भरण-पोषण करने में अक्षम पत्नी, (ii) अवयस्क अधर्मज या धर्मज सन्तान, चाहे वह विवाहित हो, या न हो, या अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, (iii) धर्मज या अधर्मज संतान जो विवाहित पुत्री नहीं है। जिसने वयस्कता प्राप्त कर ली है, किन्तु जहां ऐसी संतान किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या क्षति के कारण अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, (iv) अपना भरण-पोषण करने में अक्षम माता या पिता॥

Q. भरण-पोषण करने में अक्षम पत्नी का क्या तात्पर्य है?

A. अब्दुल सलीम बनाम नाजिमा बेगम, 1980 क्रि. लॉ. जर्नल के वाद में यह धारित किया गया कि अक्षम पत्नी का तात्पर्य यह नहीं है कि वह भीख माँगती हो या चौथड़ों में घूमती हो, दर-दर दाने के लिए भटकती हो। वह अक्षम मानी जायेगी, जबकि वह उस जीवन निर्वाह को जो कि पति के साथ रहते हुए पूरा करती थी, नहीं कर पा रही है।

Q. जब अवयस्क पुत्री की शादी हो गयी हो तो उसका भरण-पोषण कौन करेगा?

A. जब अवयस्क पुत्री की शादी हो गयी हो तो पति ही उसका भरण-पोषण करेगा किन्तु यदि पति भरण-पोषण करने में असमर्थ है तो पिता ही उसकी वयस्कता तक भरण-पोषण करेगा॥

Q. क्या माता शब्द के अंतर्गत सौतेली माता भी आती है?

A. सरजू प्रसाद बनाम श्रीमती दमयन्ती, 1984 क्रि. लॉ. ज. इलाहाबाद के वाद में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने कहा कि इसके अंतर्गत सौतेली माता नहीं आयेगी यही बात मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय भी कहता है जबकि गुजरात और उड़ीसा न्यायालय कहते हैं कि माता या पिता अंतर्गत सौतेले माता-पिता भी आते हैं।

Q. यदि हिन्दू पति इस्लाम धर्म में परिवर्तित हो जाता है तो क्या अपनी पत्नी के भरण-पोषण से मुक्त हो जायेगा?

A. एम. ए. रहमान बनाम वेंकट रमप्पा, 1981 आ. प्र. के वाद में कहा गया कि मात्र अन्य धर्म में परिवर्तन के कारण ही उसके और उसके पत्नी के बीच वैवाहिक सम्बन्ध समाप्त नहीं हो जाता है। अतः ऐसी पति अपनी वैध रुप से विवाहित पत्नी का भरण-पोषण करने के लिए आबद्ध है।

Q. संहिता की धारा 125 के अंतर्गत भरण-पोषण का आदेशित भत्ता कब से संदेय होगा?

A. धारा 125 की उपधारा (2) के अनुसार ऐसा भत्ता आदेश की तारीख से, या यदि ऐसा आदेश दिया जाता है तो भरण-पोषण के लिए आवेदन की तारीख से, संदेय होगा॥

Q. यदि कोई व्यक्ति जिसे धारा 125 के अंतर्गत भत्ता देने का निदेश दिया गया है, आदेश का पालन करने में असफल रहता है तो क्या दण्ड निर्धारित है?

A. यदि कोई व्यक्ति आदेश का पालन करने में असमर्थ रहता है तो धारा 125 की उपधारा (3) के अनुसार मजिस्ट्रेट प्रत्येक भंग के लिए 1 माह से अनधिक का दण्ड दे सकेगा लेकिन ऐसा दण्ड तभी दिया जायेगा जबकि 1 वर्ष के अन्दर लिखित सूचना द दिया गया हो कि भरण-पोषण का पैसा नहीं जमा हो रहा है।

Q. पत्नी द्वारा पति के साथ रहने से इन्कार करने का न्याय संगत आधार कौन सा माना जायेगा?

A. (1) यदि पति अन्य स्त्री से विवाह कर ले या,
(2) रखैल रखता है या,
(3) पति नपुंसक है या,
(4) पति क्रूर है तो यह पत्नी के पति से अलग रहने का पर्याप्त आधार होगा॥

Q. शहजादी बेगम बनाम अब्दुल गफ्फार, 1981 क्रि. लॉ. ज. के वाद में क्या धारित किया गया?

A. इस वाद में कहा गया कि तलाकशुदा पत्नी भी पति से भरण-पोषण ले सकती है। यद्यपि कि मुस्लिम एक से अधिक शादियाँ करता है तो पत्नी इस आधार पर अलग नहीं रह सकती है लेकिन यदि वह दूसरी पत्नी को भी उसी कमरे में रखता है। जिसमें पहले वाली पत्नी हो तो वह अलग रहकर भरण-पोषण प्राप्त कर सकती है।

Q. मोहम्मद सिराज बनाम हफीजुन्निसा, 1981 क्रि. लॉ. ज. के वाद में क्या अवधारित किया गया?

A. इस वाद में यह अवधारित किया गया कि पति की नपुंसकता, क्रूरता है और इस आधार पर पत्नी अलग रहकर भरण-पोषण प्राप्त कर सकती है।

Q. कोई पत्नी अपने पति से किन आधारों पर भरण-पोषण की हकदार न होगी?

A. संहिता की धारा 125 की उपधारा (4) के अनुसार निम्नलिखित आधारों पर पत्नी भरण-पोषण की हकदार न होगी –
(1) यदि वह जारता की दशा में रह रही है,
(2) बिना पर्याप्त कारण के अलग रह रही है,
(3) पारस्परिक सहमति से अलग रह रही है।

Q. किन अवस्थाओं के साबित हो जाने पर मजिस्ट्रेट भरण-पोषण के आदेश को रद्द कर सकता है?

A. मजिस्ट्रेट भरण-पोषण के आदेश को रद्द कर सकता है जबकि–

(1) पत्नी पर्याप्त कारण के बिना पति के साथ नहीं रह रही है,

(2) जारता की स्थिति में रहती है,

(3) पारस्परिक सहमति से अलग रह रही है (धारा 125 की उपधारा (5)।

Q. संहिता की धारा 125(1) के अंतर्गत प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा आदेशित भरण-पोषण की अधिकतम धनराशि क्या होगी?

A. वर्ष 2001 से पहले धारा 125(1) में कुल मिलाकर 500 रु. शब्दों का प्रयोग किया गया था। जो कि वर्तमान में उत्तर प्रदेश के लिए कुल मिलाकर 5000/- रु. तक मध्य प्रदेश के लिए 3000 रु. तक अधिकतम होगा, प्रत्येक व्यक्ति के लिए न कि सभी हकदार व्यक्ति को किन्तु अब यह मजिस्ट्रेट के विवेकाधिकार में है।

Q. किस प्रकरण में यह धारित किया गया कि भरण-पोषण के दायित्व से भिखारी, साधु, दीवालिया या कर्जदार होने से व्यक्ति मुक्त नहीं होगा?

A. बसन्त कुमारी बनाम शरत कुमार, 1982 क्रि. लॉ. ज. के प्रकरण में।

Q. यमुना बाई, अनन्तराव अवध बनाम अनन्तराव अक्ध, 1988 S.C. के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने क्या धारित किया?

A. इस प्रकरण में यह कहा गया कि यदि किसी हिन्दू का विवाह, हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 लागू होने के पश्चात् हुआ है और तब जब कि उस व्यक्ति की पहले की विवाहित पत्नी जीवित थी तो दूसरी पत्नी भरण-पोषण नहीं प्राप्त कर सकती। क्योंकि दूसरा विवाह प्रारंभतः शून्य होगा।

Q. क्या भरण-पोषण के लिए विवाहित पुत्री दायित्वाधीन है?

A. हां! श्रीमती विजय मनोहर अरवट बनाम काशीराम राजा राम एवं अन्य, 1987 SCC. 279 के प्रकरण में कहा गया कि माता-पिता केवल अपने पुत्र से ही नहीं बल्कि अपनी विवाहित वयस्क पुत्रियों से भी भरण-पोषण प्राप्त कर सकते हैं। यदि किसी व्यक्ति के पास एक से अधिक पुत्र या पुत्रियाँ हैं तो वह सबसे या किसी एक से भरण-पोषण प्राप्त कर सकता है।

Q. क्या पति अपनी पत्नी से भरण-पोषण पा सकता है?

A. ललित मोहन बनाम तृप्ता देवी, 1990 जम्मू एवं कश्मीर के वाद में कहा गया कि यदि पति स्थायी रुप से, शारीरिक रुप से अक्षम हो गया है एवं पत्नी भरण-पोषण करने के लिए सक्षम, साधन सम्पन्न है तो पति भरण-पोषण प्राप्त कर सकता है।

Q. श्रीमती जोहरा खातून बनाम मोहम्मद इब्राहिम, 1986 के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने क्या विचार व्यक्त किया?

A. चाहे पत्नी ने मुस्लिम विवाह तलाक अधिनियम, 1939 के अधीन तलाक ले लिया हो या पति ने उसे तलाक दे दिया हो तो भी उसे धारा 125 के अधीन भरण-पोषण पाने का अधिकार है न केवल इद्दत की अवधि तक बल्कि जब तक कि वह पुनर्विवाह नहीं कर लेती।

Q. किस वाद में उच्चतम न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि संहिता की धारा 125 धर्म निरपेक्ष है और इसके तहत् कोई भी जाति या धर्म का व्यक्ति दावा कर सकता है। लिहाजा मुस्लिम पत्नी को भी इसके तहत भरण-पोषण पाने का अधिकार है?

A. मोहम्मद अहमद खान बनाम शाह बानों बेगम, 1985 SC. के वाद में।

Q. क्या धारा 125 के अंतर्गत अंतरिम भरण-पोषण का आदेश दिया जा सकता है?

A. श्रीमती बानो बनाम अब्दुल सलाम, 1981 सु. को. के वाद में कहा गया कि धारा 125 के अंतर्गत अंतरिम भरण-पोषण जैसी कोई व्यवस्था नहीं है और यह केवल अंतिम भरण-पोषण की व्यवस्था करती है जबकि सावित्री बनाम गोविन्द सिंह, 1986 सु. को. के प्रकरण में कहा गया कि यदि पति विवाह को स्वीकार कर रहा है किन्तु भरण-पोषण से इन्कार कर रहा है तो अन्तरिम भरण-पोषण दिलाया जा सकता है।

Q. मुस्लिम महिला भरण-पोषण अधिनियम, 1986 के पारित होने के पश्चात् तलाकशुदा मुस्लिम महिला के भरण-पोषण का भार किस पर डाला गया है?

A. इस अधिनियम द्वारा तलाकशुदा मुस्लिम महिला के भरण-पोषण का दायित्व केवल इद्दत की अवधि में उसके पति पर और फिर ऐसी महिला के माता-पिता या उसके परिवार के सदस्यों और फित अंततः मुस्लिम वक्फ बोर्ड पर डाला गया है।

Q. संहिता की धारा 125 के अंतर्गत निर्धारित की गयी भरण-पोषण की राशि में कब और किस सीमा तक परिवर्तन किया जा सकता है?

A. संहिता की धारा 127 के अनुसार भरण-पोषण पाने वाले और देने वाले के परिस्थिति में यदि तब्दीली हो जाती है तो भरण-पोषण की राशि में परिवर्तन किया जा सकता है। परन्तु यदि यदि भत्ते में वृद्धि होती है तो वह कुल मिलाकर 5000/- (उ. प्र. के लिए) मासिक की दर से अधिक नहीं होगा। भरण-पोषण

के घटोत्तरी के सम्बन्ध में कोई मापदण्ड नहीं है। लेकिन यह भी न्याय, साम्या और शुद्ध अन्तःकरण पर आधारित होना चाहिए।

Q. धारा 125 दण्ड प्रक्रिया संहिता में दिये गये आदेश पर किसी सिविल न्यायालय के निर्णय का क्या प्रभाव पड़ेगा?

A. यदि सिविल न्यायालय का कोई निर्णय इस बीच आता है तो धारा 127 (2) के अंतर्गत मजिस्ट्रेट उस पर विचार करते हुए उसे लागू कर सकेगा, किन्तु दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत् आदेशित राशि दीवानी मामले में निर्णीत राशि में समायोजित हो जायेगी।

Q. किस वाद में यह अभिनिर्धारित किया गया कि धारा 125 किसी भी अर्थ में संविधान का विरोध नहीं करती है?

A. इन्दरजीत कौर बनाम भारत संघ (1990)। एस.सी.सी. 344।

Q. संहिता की धारा 127 के उपधारा (3) के अंतर्गत अपने द्वारा भरण-पोषण के सम्बन्ध में दिये गये आदेश को मजिस्ट्रेट कब रद्द कर सकेगा?

A. संहिता की धारा 127 (3) के अनुसार यदि मजिस्ट्रेट को यह समाधान हो जाता है कि–

(1) यदि तलाकित पत्नी या तलाकशुदा पत्नी ने पुनर्विवाह कर लिया है या,

(2) अपने रुढ़ि या प्रथा या स्वीय विधि के अनुसार उसने विवाह-विच्छेद के बाद मिलने वाली रकम प्राप्त कर ली है, या,

(3) स्वेच्छया उसने भरण-पोषण की राशि का अभ्यर्पण कर दिया है।

तब प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट अपने द्वारा दिये गये आदेश को रद्द कर देगा।

Q. संहिता के अंतर्गत भरण-पोषण प्राप्त करने के लिए मुकदमा कहां दायर किया जा सकेगा?

A. धारा 126 के अनुसार मुकदमा वहां दायर किया जा सकेगा–

(1) जहां वह हो जिसके विरुद्ध आदेश हो,

(2) जहां पति रहता है या उसकी पत्नी निवास करती हो या

(3) जहां उसने अंतिम बार अपनी पत्नी के साथ या अधर्मज संतान की माता के साथ निवास किया है, और मुकदमा प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट के यहां किया जायेगा।

Q. धारा 126 के अंतर्गत यदि प्रतिवादी समन से जानबूझ कर बच रहा है या हाजिर होने में जान बूझ कर उपेक्षा कर रहा है उपस्थित होने में, तो मजिस्ट्रेट क्या कर सकता है?

A. ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट मामले को एक पक्षीय रुप में सुनने और अवधारणा करने के लिए अग्रसर हो सकता है।

Q. धारा 126 के खण्ड(3) में दिया गया एक पक्षीय आदेश कब रद्द किया जा सकता है?

A. जब कि प्रतिपक्षी आदेश की तारीख से 3 मास के भीतर उपस्थित होकर उचित कारण दर्शित कर देता है तो मय खर्चे की मजिस्ट्रेट आदेश को अपास्त कर सकता है।

लोक व्यवस्था एवं प्रशान्ति बनाये रखना
(Maintenance of Public Order and Tranquillity)

कुल चार खण्डों में विभाजित दण्ड प्रक्रिया संहिता का अध्याय 10 धारा 129 से 148 लोक व्यवस्था और प्रशांति बनाये रखने से सम्बन्धित है जिसमें विधि विरुद्ध जमाव, लोक न्यूसेंस, न्यूसेंस या आशांकित खतरे के अर्जेंट मामले और स्थावर सम्पत्ति के बारे में विवादों से सम्बन्धित उपबंध किए गए हैं। इस अध्याय में वर्ष 2005 के संशोधन के द्वारा एक नयी धारा 144क को भी अन्तःस्थापित किया गया है।

भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 141 में परिभाषित **'विधि विरुद्ध जमाव' (Unlawful assembly)** को तितर-बितर (Disperse) करने की शक्ति, द.प्र.सं. की धारा 129 के अंतर्गत प्रारम्भिकतः किसी कार्यपालक मजिस्ट्रेट या पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी अथवा उसकी अनुपस्थिति में उपनिरीक्षक की पंक्ति से अनिम्न पुलिस अधिकारी में निहित की गयी है। विधि विरुद्ध जमाव के तितर-बितर करने में कार्यपालक मजिस्ट्रेट या पुलिस अधिकारी द्वारा ऐसे पुरुष से सहायता भी ली जा सकती है, जो किसी सशस्त्र बल का अधिकारी या सदस्य न हो तथा उस रुप में कार्य न कर रहा हो। जब **सिविल बल (Civil force)** (अर्थात् सशस्त्र बल के अतिरिक्त सरकारी नियंत्रणधीन अन्य बल, यथा निःशस्त्र या लाठीधारी पुलिस, होमगार्ड आदि) द्वारा 'विधि विरुद्ध जमाव' को तितर-बितर न किया जा सके त तत्समय उपस्थित **उच्चतम पंक्ति (Highest rank)** का कार्यपालक मजिस्ट्रेट उसे **सशस्त्र बल (Armed forces)** की सहायता से तितर-बितर करा सकता है। ऐसा लोक सुरक्षा के लिए आवश्यक होने पर ही किया जा सकता है। (अन्तर्गत धारा 130)।

ऐसे जमाव के कारण लोक सुरक्षा जब स्पष्टतः खतरे में पड़ जाये तथा किसी कार्यपालक मजिस्ट्रेट से सम्पर्क करना सम्भव न हो तो सशस्त्र बल का कोई भी आयुक्त (Commissioned officer) या राजपत्रित अधिकारी अपने समादेशाधीन बल की सहायता से ऐसे जमाव को तितर-बितर कर सकता है। (अन्तर्गत धारा 131)।

ऐसे जमाव को तितर-बितर करने वाले कार्यपालक मजिस्ट्रेट, पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी सशस्त्र बल के अधिकारी या सदस्य तथा अन्य व्यक्ति को धारा 132 अभियोजन से संरक्षण प्रदान करती है। ऐसे कार्य करने वाले मजिस्ट्रेट, पुलिस अधिकारी या व्यक्ति के विरुद्ध, यथास्थिति केन्द्रीय या राज्य सरकार की स्वीकृति के बिना किसी दण्ड न्यायालय में अभियोग संस्थित नहीं किया जा सकता।

लोक न्यूसेन्स (Public Nuisances) द.प्र.सं. की धारा 133 में लोक अप्रदूषण (Public Nuisance) हटाने के लिए सशर्त आदेश देने का उपबन्ध किया गया है। लोक अपदूषण से तात्पर्य, भारतीय दण्ड संहिता, की धारा 268 में स्पष्ट किया गया है। केन्द्रीय विधि आयोग के अनुसार द.प्र.सं. की धारा 133 लोक न्यूसेन्स हटाने के लिए एक संक्षिप्त तथा तत्काल सुलभ प्रक्रिया प्रस्तुत करने के उद्देश्य से तात्कालिक मामलों में उसका प्रयोग करने के आशय से हुआ है।

कोई जिला मजिस्ट्रेट (D.M.), या उपखण्ड मजिस्ट्रेट (S.D.M.) अथवा राज्य सरकार द्वारा इस निमित विशेषतया सशक्त कोई अन्य कार्यपालक मजिस्ट्रेट कोई पुलिस रिपोर्ट या अन्य कोई सूचना मिलने पर लोक अपदूषण हटाने का आदेश दे सकता है। लोक अपदूषण हटाने का आदेश किसी 'लोक स्थान' पर अपदूषण किये जाने या समाज के स्वास्थ्य अथवा शारीरिक सुख के लिए हानिकर कोई व्यापार या उपजीविका चलाये जाने के सन्दर्भ में ही किया जा सकता है।

लोक अपदूषण दूर करने का निदेश प्राप्त नगर पालिका निकाय की वित्तीय असमर्थता कर्तव्य से इन्कार करने के लिए कोई प्रतिरक्षा नहीं है। (नगर पालिका परिषद रतलाम बनाम वरदी चन्द एवं अन्य,A.I.R. 1981, S.C.)।

जिस व्यक्ति के विरुद्ध लोक 'अपदूषण हटाने का आदेश किया गया है, उस पर आदेश की तामील (Service) समन की तामील के लिए उपबन्धित रीति से की जायेगी (धारा 134(1) तथा ऐसा न होने पर आदेश की तामील, राज्य सरकार द्वारा निर्दिष्ट नियमानुसार, अधिसूचना द्वारा की जायेगी। (धारा134(2))।

जिस व्यक्ति को लोक अपदूषण हटाने का आदेश दिया जाता है, यदि वह उसका पालन नहीं करता है अथवा विरुद्ध कारण दर्शित नहीं करता है। (अन्तर्गत धारा 135) तो वह भारतीय दण्ड संहिता (I.P.C.) की धारा 188 में उपबन्धित शास्ति का दायी होगा तथा आदेश अन्तिम कर दिया जायेगा। (धारा136,द.प्र.सं.)।

न्यूसेन्स निवारण के आदेश के विरुद्ध लोक अधिकार के अस्तित्व से इन्कार किये जाने पर कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा की जाने वाली जांच की प्रक्रिया का उपबन्ध धारा 137 में किया गया है। जिस व्यक्ति के विरुद्ध लोक अपदूषण हटाने का सशर्त आदेश, धारा 133 के अधीन जारी किया जाता है, यदि वह व्यक्ति न्यायालय में उपस्थित होकर आदेश के विरुद्ध कारण दर्शित करता है, तो मजिस्ट्रेट समन मामले के अनुरुप, उसका साक्ष्य लेगा तत्पश्चात् यदि मजिस्ट्रेट का यह समाधान हो जाता है कि मूल आदेश या **परिवर्तन (Modification)** के साथ युक्तियुक्त एवं उचित है तो वह आदेश को मूलतः या ऐसे परिवर्तन सहित अन्तिम कर देगा। मजिस्ट्रेट का समाधान न हो पाने पर मामले पर आगे कोई कार्यवाही नहीं की जायेगी। (धारा138)।

धारा 137 अथवा धारा 138 के अधीन किसी जांच के प्रयोजन के लिए मजिस्ट्रेट किसी उपयुक्त व्यक्ति को **स्थानीय अन्वेषण (Local investigation)** के लिए आदेश दे सकता है, या किसी विशेषज्ञ को समन कर उसकी परीक्षा कर सकता है। (धारा139)। इस सन्दर्भ में लिखित अनुदेश आदि देने की मजिस्ट्रेट की शक्ति का उपबन्ध धारा 140 में किया गया है।

जब धारा 136 अथवा 138 के अधीन लोक अपदूषण हटाने का आदेश अन्तिम कर दिया जाता है, तब मजिस्ट्रेट द्वारा अपनायी जाने वाली प्रक्रिया एवं उक्त आदेश की अवज्ञा के परिणाम सम्बन्धी उपबन्ध धारा 141 द्वारा प्रदान की गयी है।

धारा 143 लोक न्यूसेन्स की पुनरावृत्ति अथवा उसे चालू रखने का **प्रतिषेध (Porhibit)** करने के लिए मजिस्ट्रेट को सशक्त करती है। इसके तहत जारी आदेश का उल्लंघन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 291 के तहत दण्डनीय है।

धारा 133 के अधीन कार्यवाही के पूर्व प्रारम्भिक आदेश न जारी किया जाना, इस धारा की आदेशात्मक अपेक्षा का अननुपालन होगा, जिसके फलस्वरुप धारा 133, और धारा 138, तक की सारी कार्यवाही दूषित हो जाती है। (सी.ए. अवार्वन बनाम सी.बी. श्रीनिवासन, 1996)S.C.C.)। धारा 133(1) के अधीन पारित आदेश को धारा 138 के अनुसार जांच किये बिना आत्यन्तिक नहीं बनाया जा सकता है। धारा 138 के अन्तर्गत पारित किये गये आत्यान्तिक आदेश से प्रभावित हो सकने वाले अधिकार को स्थापित करने के लिए सिविल वाद लाया जा सकता है। (चुन्नी लाल बनाम राम किशन साहू (1888) I.L.R.)। धारा 133 के अधीन विहित प्रक्रिया अपनाये बिना

तथा मामले पर विचार किये बिना, मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 142 के अन्तर्गत पारित आदेश अभिखण्डनीय होगा। (अब्दुल शाहिर चौधरी बनाम अब्दुल जलील चौधरी, 1979,गुवाहाटी)।

न्यूसेन्स अथवा आशांकित खतरे के अर्जेण्ट मामले (Urgent Cases of Nuisance or apprehended danger)

न्यूसेन्स या आशांकित खतरे के अर्जेण्ट मामले में आदेश जारी करने की शक्ति कार्यपालक मजिस्ट्रेट को दी गयी है, (अन्तर्गत धारा144 द.प्र.सं.)। इसके तहत कार्यवाही करने का आधार स्थिति की तात्कालिकता में निहित है जो अस्थायी प्रकृति की स्थिति का अनुचिन्तन करती है। इसके अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा जारी आदेश की अवधि दो माह एवं राज्य सरकार द्वारा जारी आदेश की अवधि छह माह से अधिक नहीं हो सकती (धारा144(4))।

धारा 144 कार्यपालक मजिस्ट्रेट को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध यह निदेश जारी कर सकता है कि वह व्यक्ति कोई कार्य विशेष न करे अथवा अपने कब्जे की या अपने प्रबन्धाधीन किसी विशिष्ट सम्पत्ति की कोई विशिष्ट व्यवस्था करे, ताकि विधिपूर्वक नियोजित किसी व्यक्ति को बाधा, क्षोभ अथवा क्षति का, या मानव जीवन, स्वास्थ्य अथवा क्षेम के खतरे का, अथवा लोक प्रशान्ति विक्षुब्ध होने का या बलवे अथवा दंगे का निवारण हो सके।

धारा 144 के अधीन आदेश किसी विशेष व्यक्ति को, अथवा किसी विशेष स्थान या क्षेत्र में निवास करने वाले व्यक्तियों या जन-सामान्य को जब वे किसी विशेष स्थान या क्षेत्र में जाते रहते हैं, या जायें निर्दिष्ट किया जा सकता है। (धारा144(3))।

धारा 144 के अन्तर्गत जारी किया जाने वाला आदेश मामले के तात्विक तथ्यों के कथन से युक्त तथा लिखित होना चाहिए एवं उसे धारा 134 में उपबन्धित रीति से तामील कराया जाना चाहिए। इसके तहत दिया गया आदेश प्रतिषेधात्मक या आदेशात्मक हो सकता है। (मधु लिमये बनाम सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट मुंगेर (1970)S.C.C.)।

दण्ड प्रक्रिया संशोधन अधिनियम 2005 द्वारा जोड़ी गयी नयी धारा 144A के अंतर्गत लोक शान्ति या लोक सुरक्षा अथवा लोक व्यवस्था बनाये रखने के लिए आयुध सहित जुलूस अथवा सामूहिक कवायद या सामूहिक प्रशिक्षण के प्रतिषेध की शक्ति जिला मजिस्ट्रेट को दी गयी है, जो लोक सूचना या आदेश द्वारा अपनी अधिकारिता की सीमाओं में, अधिकतम तीन मास की अवधि के लिए प्रतिषेध लगा सकता है।

राज्य सरकार इस सन्दर्भ में जिला मजिस्ट्रेट द्वारा जारी की गयी लोक सूचना या आदेश की अवधि को अधिकतम छह मास के लिए बढ़ा सकती है तथा इस सन्दर्भ में राज्य सरकार द्वारा अपनी शक्तियाँ जिला मजिस्ट्रेट को प्रत्यायोजित भी की जा सकती है। धारा 144A के सन्दर्भ में 'आयुध' (Arms) शब्द का तात्पर्य भारतीय दण्ड संहिता की धारा 153AA में वर्णित 'आयुध' से है।

स्थावर सम्पत्ति के सम्बन्ध में विवाद (Dispute as to immovable property)

अचल सम्पत्ति सम्बन्धी विवाद के कारण संभाव्य शान्ति भंग के विरुद्ध निवारक कार्यवाही करने का अधिकार धारा 145 के अन्तर्गत कार्यपालक मजिस्ट्रेट में निहित किया गया है। इस संदर्भ में पुलिस रिपोर्ट या अन्य इत्तिला पर समाधान हो जाने पर कार्यपालक मजिस्ट्रेट प्रारम्भिक आदेश जारी कर सकता है। ऐसे आदेश की तामील समन मामले की भाँति की जायेगी तथा इसकी एक प्रति विवाद की विषयवस्तु या उसके समीप किसी सहजदृश्य स्थान पर लगाकर प्रकाशित की जायेगी। (धारा145(3)। तत्पश्चात् मजिस्ट्रेट विवाद के पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत कथनों एवं साक्ष्यों के आधार पर यह विनिश्चत करेगा कि क्या पक्षकारों में से कोई प्रारम्भिक आदेश की तिथि पर, विवाद की विषयवस्तु पर काबिज था। इस प्रक्रिया के दौरान यदि मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि कोई पक्षकार, पुलिस रिपोर्ट या अन्य इत्तिला प्राप्त होने की तिथि के ठीक पूर्व दो मास के अन्दर अथवा उक्त तिथि के पश्चात् आरम्भिक आदेश जारी करने की तिथि के पूर्व बलात् तथा सदोष रुप से बेकब्जा किया गया है, तो मजिस्ट्रेट इस प्रकार बेकब्जा किये गये पक्षकार को प्रारम्भिक आदेश की तिथि पर विवाद की विषयवस्तु पर काबिज मान सकेगा।(धारा 145(4) का परन्तुक)।

मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित पक्षकार या अन्य कोई हितबद्ध व्यक्ति यह दर्शित करता है कि भूमि या जल सम्बन्धी विवाद वर्तमान नहीं है या नहीं रहा है तो मजिस्ट्रेट अपने द्वारा जारी आदेश रद्द करके उस पर समस्त अग्रिम कार्यवाहियाँ रोक देगा। ऐसे रद्दकरण के अधीन रहते हुए मजिस्ट्रेट का प्रारम्भिक आदेश अन्तिम होगा। (धारा145(5)।

यदि मजिस्ट्रेट यह विनिश्चय करता है कि किसी एक पक्षकार का विवाद की विषय वस्तु पर कब्जा था तो वह यह आदेश जारी करेगा कि वह पक्षकार उस विषय वस्तु पर तब तक कब्जा रखने का अधिकारी है, जब तक उसे विधि के सम्यक् अनुक्रम में बेदखल न कर दिया जाये तथा इस प्रकार बेदखल न किये जाने तक ऐसे कब्जे में कोई विघ्न न डाला जाये। (धारा 145(6)(a)। धारा 145 के अन्तर्गत किसी कार्यवाही को मात्र इस कारण नहीं रोका जा सकता

है कि धारा 107 के अधीन कार्यवाही रोक दी गई है। (प्रकाश चन्द्र सचदेवा बनाम राज्य (1994)S.C.C.)।

विवाद की विषयवस्तु कुर्क करने तथा प्रापक नियुक्त करने की शक्ति, मजिस्ट्रेट को धारा 146 द्वारा प्रदान की गयी है। भूमि या जल के उपयोग के अधिकार से सम्बद्ध विवाद जिनसे परिशांति भंग होना सम्भाव्य है की निवारणार्थ उपबन्ध धारा 147 में किये गये हैं। ऐसे विवादों की जांच से धारा 145 के उपबन्ध **यथोचित परिवर्तन के साथ (Mutatis Mutandis)** लागू होते हैं।

धारा 145, 146 एवं 147 के अन्तर्गत स्थानीय जांच आवश्यक होने पर जिला मजिस्ट्रेट या उपखण्ड मजिस्ट्रेट (S.D.M.) अपने अधीनस्थ किसी मजिस्ट्रेट को जांच के लिए प्रतिनियुक्त कर सकता है। ऐसी जांच की रिपोर्ट सम्बन्धित मामले में साक्ष्य के रुप में ग्राह्य है तथा जांच कार्य में किये गये खर्चों के भुगतान के सन्दर्भ में मजिस्ट्रेट को निदेश देने की शक्ति दी गयी है। (अन्तर्गत धारा 148)।

धारा 478 के अनुसार राज्य विधान मण्डल के संकल्प द्वारा अपेक्षा करने पर राज्य सरकार उच्च न्यायालय से परामर्श के पश्चात् अधिसूचना द्वारा यह निदेश दे सकती है कि धारा 145 एवं 147 के किसी कार्यपालक मजिस्ट्रेट के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जायेगा कि वह किसी प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के प्रति निर्देश है अर्थात् राज्य विधान मण्डल धारा 145 एवं 147 के अन्तर्गत कार्यपालक मजिस्ट्रेटों को दी गयी शक्ति को न्यायिक मजिस्ट्रेटों में अन्तरित कर सकता है।

धारा 145 के अधीन शपथ पत्र के माध्यम से दिया गया साक्ष्य, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, के अन्तर्गत अग्राह्य होता है। (राम प्रकाश बनाम बाबू राम 1980, इलाहाबाद)।

धारा 145 के अंतर्गत संचालित कार्यवाही आगे नहीं चलायी जा सकती है। जब उसी सम्पत्ति जो विवाद की विषय वस्तु हो, के सम्बन्ध में कोई सिविल वाद लम्बित हो (अमरेश तिवारी बनाम लालता प्रसाद दूबे (2000)S.C.C.)।

नोटः संहिता के अध्याय 11 में पुलिस के निवारक कार्यों का उल्लेख किया गया है, जिसमें पुलिस के द्वारा संज्ञेय अपराधों के किए जाने के निवारण करने के प्रयोजन से अन्तःक्षेप (धारा149), पुलिस द्वारा संज्ञेय अपराधों की सूचना अपने वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को दिए जाने (धारा 150), संज्ञेय अपराधों के किए जाने को रोकने हेतु गिरफ्तारी (धारा 151), लोक सम्पत्ति की हानि का निवारण (धारा 152) और बाँटों और मापों के निरीक्षण (धारा 153) से सम्बन्धित प्रावधान किया गया है।

प्रश्नकोश

Q. विधि-विरुद्ध जमाव को तितर-बितर करने का समादेश कौन दे सकता है?

A. कार्यपालक मजिस्ट्रेट अथवा थानेदार। (धारा 129(1)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के किस धारा के अन्तर्गत न्यूसेंस हटाने के लिए सशर्त आदेश पारित किया जा सकता है?

A. धारा 133।

Q. जिला मजिस्ट्रेट या उपखण्ड मजिस्ट्रेट संहिता के किस प्रावधान के अन्तर्गत पर्यावरण के प्रदूषण का निवारण कर सकता है?

A. धारा 133।

Q. किस वाद में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अन्तर्गत दिए गए आदेश पर मूल अधिकार के उल्लंघन होने पर याचिका दायर किया जा सकता है?

A. गुलाम अब्बास बनाम उ.प्र. राज्य, 1981 सु.को. 2198।

Q. ''धारा 145 द.प्र.सं. के अन्तर्गत कार्यवाहियों का उद्देश्य शांतिभंग के खतरे का निवारण करना है, न कि स्वत्व निर्धारण करना''। यह (निम्न में से) किस मामले में कहा गया है?

A. भारत संघ बनाम अजीबुन्निसा खातून, 2001।

Q. जमाव को तितर-बितर करने के लिए सशस्त्र बल का प्रयोग कौन और कब कर सकता है?

A. संहिता की धारा 130 के अनुसार उच्चतम पंक्ति का कार्यपालक मजिस्ट्रेट, यदि लोक सुरक्षा के लिए ऐसे जमाव का तितर-बितर करना आवश्यक हो जाये।

Q. कब कोई सशस्त्र बल का आयुक्त या राजपत्रित अधिकारी अपने समादेश के अधीन किसी जमाव को तितर-बितर करा सकता है?

A. जब ऐसा जमाव लोक सुरक्षा को स्पष्ट रुप से संकटापन्न कर दे, और किसी कार्यपालक मजिस्ट्रेट से सम्पर्क कर पाना साध्य न हो। (धारा 131)।

Q. संहिता की धारा 133 के अंतर्गत आदेश देने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट किन आधारों पर अपना समाधान करता है?

A. किसी पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट पर या अन्यथा इत्तिला प्राप्त होने पर।

Q. न्यूसेंस क्या है?

A. विधि के संदर्भ में भूमि या उससे सम्बद्ध या उससे सम्बन्धित किसी व्यक्ति के उपयोग या उपभोग के अधिकारों में हस्तक्षेप न्यूसेंस है।

Q. लोक न्यूसेंस क्या है?

A. लोक न्यूसेंस एक ऐसा कृत्य है जो व्यक्तियों के किसी ऐसे वर्ग के युक्तियुक्त सुख या सुविधा को प्रभावित करते हों जो उसके परिचालन अथवा पड़ोस के क्षेत्र में आते हों।

Q. क्या दण्ड प्रक्रिया संहिता में लोक न्यूसेंस की परिभाषा दी गयी है?

A. नहीं! लोक न्यूसेंस को सदैव उसी भाव में समझना होगा जो भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 268 में परिभाषित है।

Q. संहिता की धारा 133 के अधिनियम का उद्देश्य क्या है?

A. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 133 का अधिनियम लोक न्यूसेंस को हटाने के लिए एक संक्षिप्त और तत्काल सुलभ प्रक्रिया प्रस्तुत करने के उद्देश्य से और अर्जेन्ट मामलों में उसका प्रयोग करने के आशय से हुआ है।

Q. धारा 133 के सम्बन्ध में किस वाद में यह धारित किया गया है कि ''इस धारा का व्यवस्थापन ऐसी आपातिक बुराइयों से संव्यवहार करने के लिए किया गया है, जो विद्यमान हैं अथवा आसन्न है?

A. अशर्फी लाल बनाम राज्य, 1965 ए. आई. आर. इलाहाबाद के वाद में।

Q. संहिता की धारा 133 के अंतर्गत मजिस्ट्रेट द्वारा दिये गये आदेश की क्या प्रकृति होती है?

A. इस धारा के अंतर्गत सशर्त आदेश दिया जाता है।

Q. यदि किसी जिला मजिस्ट्रेट का यह विचार है कि किसी भयानक जीवजन्तु को नष्ट, परिरुद्ध या उसका अन्यथा व्ययन किया जाना चाहिए, तो वह मजिस्ट्रेट क्या कर सकता है?

A. तब ऐसा मजिस्ट्रेट ऐसे जीवजन्तु का स्वामित्व या कब्जा रखने वाले व्यक्ति से यह अपेक्षा करते हुए सशर्त आदेश दे सकता है कि वह उतने समय के अंदर जितना उस आदेश में नियत किया जाय, ऐसे भयानक जीवजन्तु को उसी रीति से नष्ट करे, परिरुद्ध करे या उसका व्ययन करे जो उस आदेश में उपबंधित है।

Q. क्या धारा 133 के अंतर्गत मजिस्ट्रेट द्वारा सम्यक् रुप से जारी किये गये आदेश के विरुद्ध किसी सिविल न्यायालय में चुनौती दी जा सकेगी?

A. संहिता की धारा 133 की उपधारा (2) के अनुसार इसके तहत् दिये गये आदेश को किसी सिविल न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती।

Q. किस वाद में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जहां साग सब्जियों की एक प्राइवेट गृह में नीलामी के शोरगुल से उस गृह के आस-पास रहने वाले लोगों के आराम में बाधा पहुँच रही थी, साग-सब्जियों के व्यापार का चलाया जाना समाज के स्वास्थ्य अथवा शारीरिक सुख के लिए इतना हानिकार नहीं था कि उसके कारण धारा 133 के अधीन निवारणात्मक कार्यवाही की जाय?

A. राम औतार बनाम उत्तर प्रदेश, ए. आई. आर. 1962 एस. सी. के वाद में।

Q. गोविन्द सिंह बनाम शांति स्वरुप, 1979 एस.सी.सी. के वाद में उच्चतम न्यायालय ने क्या अवधारित किया?

A. इस वाद में न्यायालय ने निर्धारित किया कि जहां बेकरी के लिए चिमनी और भट्टी का निर्माण किया जा रहा था और चिमनी लोक स्थान पर अतिक्रमण कर रही थी और जी.टी. रोड पर धुआँ उगलकर लोगों के स्वास्थ्य को प्रभावित भी कर रही है, तो यह व्यापक पैमाने पर जनता के स्वास्थ्य, उनकी सुरक्षा के लिए खतरा पैदा कर रही है। (अतः उसके निर्माण पर रोक लगा दिया गया)।

Q. नगर पालिका परिषद् रतलाम बनाम विरदी चन्द और अन्य, 1987 के वाद में उच्चतम न्यायालय ने क्या धारित किया?

A. इस वाद में न्यायालय ने कहा कि मल त्यागने एवं शौचालयों के निर्माण के संदर्भ में नगरपालिका की वित्तीय असमर्थता कर्तव्य से इन्कारी के लिए कोई प्रतिरक्षा नहीं है।

Q. संहिता की धारा 133 में मजिस्ट्रेट द्वारा दिये गये सशर्त आदेश का पालन करने में असफल रहने का क्या परिणाम होगा?

A. धारा 136 के अनुसार यदि ऐसा व्यक्ति दिये गये आदेश का पालन करने में असफल रहता है, तो वह भारतीय दण्ड संहिता की धारा 188 में उसके लिए विहित दण्ड का भागी होगा और आदेश अंतिम कर दिया जायेगा।

Q. संहिता की धारा 137 में जहां वह व्यक्ति जिसके विरुद्ध धारा 133 के अंतर्गत आदेश दिया गया है, लोक अधिकार के अस्तित्व से इन्कार करता है, तो मजिस्ट्रेट क्या करेगा?

A. ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट ऐसे इन्कारी की जांच करेगा और यदि इन्कार के समर्थन में कोई विश्वसनीय साक्ष्य है तो कार्यवाही को तब तक के लिए रोक देगा जब तक ऐसे अधिकार के अस्तित्व का मामला सक्षम न्यायालय द्वारा विनिश्चित नहीं कर दिया जाता।

Q. जिस व्यक्ति के विरुद्ध धारा 133 के अधीन आदेश दिया गया है, हाजिर होकर आदेश के विरुद्ध कारण दर्शित करता है तो मजिस्ट्रेट क्या प्रक्रिया अपनायेगा?

A. ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट उस प्रकार साक्ष्य लेगा जिस प्रकार से समन मामले में लिया जाता है।

Q. संहिता की धारा 139 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. इस धारा में स्थानीय अन्वेषण के लिए निदेश देने और विशेषज्ञ की परीक्षा करने की मजिस्ट्रेट की शक्ति दी गयी है।

Q. मजिस्ट्रेट द्वारा लोक न्यूसेंस की पुनरावृत्ति या उसे चालू रखने की प्रतिषेध करने की शक्ति किस धारा में प्रदान की गयी थी?

A. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 143 में।

Q. न्यूसेंस या आशंकित खतरे के अर्जेन्ट मामलों में आदेश जारी करने की मजिस्ट्रेट की शक्ति संहिता की किस धारा में दी गयी है?

A. धारा 144 में।

Q. संहिता की धारा 144 में कौन से मजिस्ट्रेट आदेश देने के लिए सशक्त है?

A. जिला मजिस्ट्रेट या उपखण्ड मजिस्ट्रेट अथवा राज्य सरकार द्वारा इस हेतु विशेषतया सशक्त कार्यपालक मजिस्ट्रेट।

Q. संहिता की धारा 144 में मजिस्ट्रेट किस प्रकार का आदेश दे सकते हैं?

A. लिखित आदेश।

Q. संहिता की धारा 144 में मजिस्ट्रेट किस बात का निदेश दे सकता है?

A. इस धारा में मजिस्ट्रेट किसी व्यक्ति को कार्य-विशेष न करने या अपने कब्जे की या अपने प्रबन्धाधीन किसी विशिष्ट सम्पत्ति की कोई विशिष्ट व्यवस्था करने का निदेश दे सकता है।

Q. धारा 144 के अधीन मजिस्ट्रेट लिखित आदेश क्यों जारी करता है?

A. विधिपूर्वक नियोजित किसी व्यक्ति को बाधा, क्षोभ या क्षति का या मानव-जीवन, स्वास्थ्य या क्षेम को खतरे का, या लोक-प्रशान्ति विक्षुब्ध होने का, या दंगे का निवारण हेतु।

Q. क्या मजिस्ट्रेट स्वप्रेरणा से या व्यथित व्यक्ति के आवेदन पर ऐसे आदेश को भी विखंडित या परिवर्तित कर सकता है, जिसे राज्य सरकार ने 6 माह और बढ़ा दिया है?

A. नहीं! ऐसे आदेश को राज्य सरकार ही धारा 144(6) के अनुसार स्वप्रेरणा से या किसी व्यथित व्यक्ति के आवेदन पर विखण्डित या परिवर्तित कर सकती है।

Q. धारा 144 के सम्बन्ध में आचार्य जगदीश्वरानन्द अवधूत बनाम पुलिस कमिश्नर कलकत्ता, 1983 सु. कोर्ट के वाद में क्या कहा गया?

A. धारा 144 अत्यावश्यक परिस्थितियों के लिए है और उसे सामान्यतः प्रयोग नहीं किया जा सकता है। इस धारा के आदेश की समय सीमा समाप्ति पर उसके समाप्ति हेतु पुनः आदेश का जारी किया जाना आवश्यक नहीं है।

Q. किस प्रकरण में यह धारित किया गया कि यदि धारा 144 के अंतर्गत अत्यन्त सामान्य परिस्थिति में आदेश जारी किया गया है तो कोर्ट में चुनौती दी जा सकती है अन्यथा नहीं। ऐसी चुनौती अनुच्छेद 32 के अधीन सुप्रीस कोर्ट में और अनु. 226 के अधीन उच्च न्यायालय में होगी?

A. मधुलिमये बनाम एस.डी.एम. मुंगेर, 1970 सु.को. के प्रकरण में।

Q. कर्फ्यू क्या है?

A. कर्फ्यू (अनिश्वार) सरकार द्वारा जारी किया गया एक ऐसा विनियमन है, जिसमें व्यक्तियों को कतिपय घंटों के लिए घर के भीतर रहने हेतु आबद्ध किया जाता है।

Q. कर्फ्यू के अंतर्गत क्या राज्य सरकार का अपनी कार्यपालिकीय शक्तियों के प्रयोग में यह आदेश वैध होगा कि कर्फ्यू तोड़ने वाले को देखते ही गोली से दाग दिया जाये?

A. इस संदर्भ में जयन्तीलाल बनाम एरिक रेनिसन, 1975 के प्रकरण में गुजरात उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह आदेश राज्य सरकार की कार्यपालिकीय शक्ति का और संहिता की धारा 144 भारतीय दण्ड संहिता की धारा 188 और संविधान के अनु. 20 और 21 के शक्ति-परस्तात् है। अतः वह शून्य एवं प्रभाव हीन है।

Q. यदि कोई आदेश संहिता की धारा 144 के अधीन जारी किया गया है और तथ्यों पर विचारोपरान्त यह स्पष्ट होता है, कि वस्तुतः कार्यवाही धारा 145 के अधीन की जानी चाहिए तो मजिस्ट्रेट क्या कर सकता है?

A. ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट उस कार्यवाही को धारा 145 के अधीन सम्परिवर्तित कर सकता है और वह कार्यवाही विधि विरुद्ध नहीं समझी जायेगी।

Q. किस वाद में यह अवधारित किया गया कि जहां धारा 144 के अधीन जारी किये गये आदेश के प्रसंग में सम्पत्ति के अथवा धार्मिक आचरणों और अनुष्ठानों के अधिकारों के स्पर्धी प्रश्न उठाये गये हों वहां ऐसे वाद का विनिश्चय केवल नियमित वाद फाइल करके ही किया जा सकता है, संविधान के अनु. 226 के अंतर्गत रिट याचिका पर नहीं?

A. मोहम्मद इब्राहीम बनाम सिटी मजिस्ट्रेट, वाराणसी, 1983 सु.को. के वाद में।

Q. स्थावर सम्पत्ति के बारे में विवाद से सम्बन्धित धारायें कौन सी हैं?

A. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 145, 146, 147 एवं 148 स्थावर सम्पत्ति के बारे में विवाद से सम्बन्धित है।

Q. धारा 144 में जारी किये जाने वाले आदेश की प्रकृति के बारे में मधुलिमये बनाम सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट, मुंगेर, 1970 एस. सी. के वाद में क्या अवधारित किया गया?

A. इस वाद में यह धारित किया गया कि धारा 144 एक ऐसे आदेश को जारी करने का उपबन्ध करती है जो कि या तो प्रतिषेधात्मक अथवा आदेशात्मक हो सकता है।

Q. धारा 144 के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट का आदेश किसे निर्दिष्ट किया जा सकता है?

A. धारा 144(3) के अनुसार इस धारा के अधीन आदेश किसी विशिष्ट व्यक्ति को, या किसी विशेष स्थान या क्षेत्र में निवास करने वाले व्यक्तियों को, अथवा आम जनता को, जब वे किसी विशेष स्थान या क्षेत्र में जाते रहते हैं या जाएँ, निर्दिष्ट किया जा सकता है।

Q. संहिता की धारा 144 के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट द्वारा दिये गये आदेश की समयावधि क्या होती है?

A. धारा 144(4) के अनुसार ऐसे आदेश की समयावधि आदेश दिये जाने की तारीख से 2 माह तक की होगी।

Q. धारा 144 के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा दिये गये आदेश को कौन और कितना बढ़ा सकता है?

A. इस धारा के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा दिये गये आदेश को राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा 6 माह तक की अवधि तक और बढ़ा सकती है।

Q. धारा 144 के अंतर्गत मजिस्ट्रेट के आदेश को राज्य सरकार 2 माह से आगे किन आधारों पर बढ़ा सकती है?

A. राज्य सरकार यह समयावधि दो आधारों पर बढ़ा सकती है–
(1) मानव जीवन, स्वास्थ्य या क्षेम को खतरे का निवारण करने के लिए अथवा बल
(2) वे या किसी दंगे का निवारण करने के लिए।

Q. धारा 144 के अंतर्गत जारी किया गया आदेश कुल मिलाकर कितनी अवधि तक प्रवृत्त रह सकता है?

A. धारा 144 की उपधारा (4) एवं परन्तुक के अवलोकन से स्पष्ट है कि इस धारा के अंतर्गत जारी आदेश कुल मिलाकर (2 माह+6माह) अर्थात् 8 माह तक प्रवृत्त रह सकता है।

Q. कोई मजिस्ट्रेट धारा 144 के अंतर्गत दिये गये आदेश को कैसे विखंडित या परिवर्तित कर सकता है?

A. स्वप्रेरणा से या किसी व्यथित व्यक्ति के आवेदन पर (धारा 144 (5))।

Q. जहां भूमि या जल से सम्बद्ध विवादों से परिशान्ति भंग होना संभाव्य हो, वहां कौन सा मजिस्ट्रेट कार्यवाही करता है?

A. ऐसी स्थिति में धारा 145 के अंतर्गत कार्यपालक मजिस्ट्रेट कार्यवाही करता है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 का उद्देश्य क्या है?

A. इस धारा का उद्देश्य अचल सम्पत्ति से सम्बन्धित विवादों के कारण उत्पन्न शांतिभंग के निवारणार्थ त्वरित उपचार प्रदान करना है।

Q. धारा 145 के अधीन निवारक कार्यवाही करने के पूर्व किन शर्तों की पूर्ति आवश्यक होती है?

A. (1) यह कि भूमि अथवा जल या अन्य वस्तुओं से सम्बन्धित कोई विवाद अवश्य ही विद्यमान हो, (2) इस विवाद के कारण संभाव्यतः शांतिभंग का होना कारित हो सकता है।

Q. धारा 145 के अंतर्गत विवाद से सम्बन्धित तथ्यों से मजिस्ट्रेट अपना समाधान किस माध्यम से करता है?

A. यहां पर मजिस्ट्रेट अपन समाधान या तो पुलिस रिपोर्ट पर कर सकता है या किसी अन्य इत्तिला से, जिसमें बेकब्जा किये गये पक्षकार का आवेदन भी सम्मिलित है।

Q. संहिता की धारा 145 के संदर्भ में किस वाद में यह कहा गया कि ''मजिस्ट्रेट का समाधान स्पष्ट और असंदिग्ध होना चाहिए और उसका समाधान नहीं हुआ है तो इस धारा के अधीन अधिकारिता उपलब्ध नहीं हो सकती?

A. यह लक्ष्मण बनाम बहीमखान, 1976 क्रि.लॉ.ज. के वाद में कहा गया।

Q. संहिता की धारा 145(3) में क्या उपबंध किया गया है?

A. इस धारा को उपधारा (3) में यह उपबंध किया गया है कि आदेश की कम से कम एक प्रति विवाद की विषय वस्तु या उसके निकट किसी सहजदृश्य स्थान पर ही लगाकर प्रकाशित की जायेगी।

Q. संहिता की धारा 145 के अंतर्गत कोई पक्षकार विवादित सम्पत्ति पर कब्जा रखता था, मजिस्ट्रेट इसकी उपधारणा कब कर सकेगा?

A. जब मजिस्ट्रेट को प्रतीत हो कि पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट या अन्य इत्तिला के ठीक पूर्व दो मास के अंदर या उस तारीख के पश्चात् और उपधारा (1) के अधीन मजिस्ट्रेट के आदेश की तारीख के पूर्व कोई पक्षकार बलात् और सदोष रुप से बेकब्जा किया गया है।

Q. कार्य पालक मजिस्ट्रेट कब धारा 145(1) के अन्तर्गत अपने द्वारा दिये गये आदेश को रद्द कर देगा और उस पर समस्त कार्यवाहियाँ रोक देगा?

A. जब धारा 145(1) के अधीन हाजिर होने के लिए अपेक्षित कोई पक्षकार या किसी अन्य हितबद्ध व्यक्ति द्वारा यह दर्शित कर दिया जाता है कि भूमि या जल से सम्बन्धित विवाद वर्तमान नहीं है, या नहीं रहता है (धारा 145(5))।

Q. धारा 145(1) के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा दिया गया आदेश कैसा होता है?

A. धारा 145(5) के अधीन रद्दीकरण के आदेश के अधीन रहते हुए अन्तिम होता है।

Q. जब धारा 145 के अधीन प्रारंभ की गयी कार्यवाही के पक्षकार की मृत्यु हो जाती है तो मजिस्ट्रेट क्या कर सकेगा?

A. ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट मृत पक्षकार के विधिक प्रतिनिधि को कार्यवाही का पक्षकार बनवा सकेगा और फिर जांच चालू रख सकेगा। (धारा 145(7)।

Q. धारा 145 के अन्तर्गत यदि मजिस्ट्रेट ही यह राय है कि उसके समक्ष लम्बित कार्यवाही की विषयवस्तु या कोई फसल या अन्य उपज शीघ्रतया और प्रकृत्या क्षयशील है तो वह क्या कर सकता है?

A. ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट ऐसी सम्पत्ति की उचित अभिरक्षा या विक्रय के लिए आदेश दे सकता है और जांच के समाप्त होने पर ऐसी सम्पत्ति के या उसके विक्रय के आगमों के व्ययन के लिए आदेश दे सकता है जो वह ठीक समझे।

Q. संहिता की धारा 146 के अंतर्गत यदि विवाद की विषयवस्तु के सम्बन्ध में कोई रिसीवर बाद में सिविल न्यायालय द्वारा नियुक्त कर दिया जाता है तो मजिस्ट्रेट क्या करेगा?

A. ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट अपने द्वारा नियुक्त रिसीवर को आदेश देगा कि वह विवाद की विषयवस्तु का कब्जा सिविल न्यायालय द्वारा नियुक्त रिसीवर को दे दे और तत्पश्चात् वह अपने द्वारा नियुक्त रिसीवर को उन्मोचित कर देगा।

Q. भूमि या जल के उपयोग के अधिकार से सम्बद्ध विवाद संहिता की किस धारा में उपबंधित है?

A. संहिता की धारा 147 में।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 148 के अंतर्गत किस सम्बन्ध में उपबंध किया गया है?

A. इस धारा के अनुसार जब कभी धारा 145, 146 एवं 147 के प्रयोजनो के लिए स्थानीय जांच आवश्यक हो तब कोई जिला मजिस्ट्रेट या उपखंड मजिस्ट्रेट अपने अधीनस्थ किसी मजिस्ट्रेट को जांच करने के लिए प्रतिनियुक्त कर सकता है।

Q. धारा 148 के अंतर्गत ऐसे मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिनियुक्त व्यक्ति की रिपोर्ट की क्या प्रास्थिति होगी?

A. ऐसे रिपोर्ट को मामले में साक्ष्य के रुप में पढ़ा जा सकता है।

Q. मजिस्ट्रेट किन परिस्थितियों में विवाद की विषयवस्तु को कुर्क करने एवं रिसीवर नियुक्त करने की शक्ति का प्रयोग कर सकता है?

A. धारा 146 के अनुसार–

(1) यदि धारा 145(1) के अधीन आदेश करने के पश्चात् मजिस्ट्रेट किसी समय मामले को आपातिक समझता है, (2) यदि वह विनिश्चय करता है कि धारा 145(1) के अधीन आदेश जारी करते समय पक्षकारों में से किसी का कब्जा उस पर नहीं था,

(3) यदि वह अपना समाधान नहीं कर पाता है कि उस समय उनमें से किसका ऐसा कब्जा विवाद की विषयवस्तु पर था।

Q. पुलिस का निवारक कार्य संहिता की किन धाराओं में उपबंधित है?

A. संहिता की धारा 149, 150, 151, 152 एवं 153 में पुलिस के निवारण कार्य से सम्बन्धित उपबंध समाहित है।

पुलिस को इत्तिला और उनकी अन्वेषण करने की शक्तियां (Information to the police and their powers to investigate) (धारा 154-176)

दण्ड प्रक्रिया संहिता का अध्याय 12 संज्ञेय एवं असंज्ञेय अपराधों के किए जाने पर उसकी सूचना पुलिस को दिए जाने और तत्पश्चात् पुलिस के द्वारा उनका अन्वेषण, अन्वेषण के पश्चात् अन्तिम रिपोर्ट सम्बन्धित मजिस्ट्रेट को भेजने और विशेष मामलों में मजिस्ट्रेट द्वारा जांच किए जाने से सम्बन्धित है। दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा इस अध्याय के धाराओं 157, 161, 164, 167, 172, 173 में महत्वपूर्ण संशोधन किए गए हैं।

इस अध्याय का उद्देश्य अपराध के किये जाने से सम्बन्धित घटनाओं की सूचना पुलिस को देने और उस अपराध पर पुलिस द्वारा किये जाने वाले अन्वेषण के सम्बन्ध में उपबन्ध करना है।

संज्ञेय मामलों में इत्तिला–धारा 154 (1) के अनुसार संज्ञेय अपराध के किए जाने से सम्बन्धित प्रत्येक इत्तिला, यदि पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को मौखिक की गई है तो उसके द्वारा या उसके निदेशाधीन लेखबद्ध कर ली जाएगी और इत्तिला देने वाले को पढ़कर सुनाई जाएगी और प्रत्येक ऐसी इत्तिला पर चाहे वह

लिखित रूप में दी गई हो या पूर्वोक्त रूप में लेखबद्ध की गई हो, उस व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे जो उसे दे।

दण्ड विधि (संशोधन) अधिनियम, 2013 द्वारा धारा 154(1) में परंतुक जोड़ा गया तथा 2018 में इसमें संशोधन किया गया जो इस प्रकार है- 'परंतु यदि किसी स्त्री द्वारा, जिसके विरुद्ध भा.द.सं. की धारा 326 क, धारा 326 ख, धारा 354, धारा 354 क, धारा 354 ख, धारा 354 ग, धारा 354 घ, धारा 376, धारा 376 क, धारा 376 कख, धारा 376 ख, धारा 376 ग, धारा 376 घ, धारा 376 घ क, धारा 376 घख, धारा 376 ङ या धारा 509 के अधीन किसी अपराध के किए जाने का प्रयत्न किए जाने का अभिकथन किया गया है, कोई इत्तिला दी जाती है तो ऐसी इत्तिला किसी महिला पुलिस अधिकारी या किसी महिला अधिकारी द्वारा अभिलिखित की जाएगी'।

उपधारा (1) के अधीन अभिलिखित इत्तिला की प्रतिलिपि, इत्तिला देने वाले को तत्काल निःशुल्क दी जाएगी। अभिलिखित करने से इंकार करने से व्यथित व्यक्ति, ऐसी इत्तिला का सार लिखित रूप में और डाक द्वारा सम्बद्ध पुलिस अधीक्षक को भेज सकता है जो, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि ऐसी इत्तिला से किसी संज्ञेय अपराध का किया जाना प्रकट होता है तो या तो स्वयं मामले का अन्वेषण करेगा या अपने अधीनस्थ किसी पुलिस अधिकारी द्वारा इस संहिता द्वारा उपबन्धित रीति में अन्वेषण किए जाने का निदेश देगा। (धारा 154 (3)।

असंज्ञेय मामलों के बारे में इत्तिला और अन्वेषण–जब पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को उस थाने की सीमाओं के अन्दर असंज्ञेय अपराध के लिए जाने की इत्तिला दी जाती है तब वह ऐसी इत्तिला का सार ऐसी पुस्तक में, प्रविष्ट करेगा या प्रविष्ट कराएगा और इत्तिला देने वाले को मजिस्ट्रेट के पास जाने को निर्देशित करेगा।

कोई पुलिस अधिकारी किसी असंज्ञेय मामले का अन्वेषण ऐसे मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना नहीं करेगा जिसे ऐसे मामले का विचारण करने की या मामले को विचारणार्थ सुपुर्द करने की शक्ति है।

पुलिस अधिकारी ऐसा आदेश मिलने पर (वारण्ट के बिना गिरफ्तार करने की शक्ति के सिवाय) अन्वेषण के बारे में वैसी ही शक्तियों का प्रयोग कर सकता है, जैसी पुलिस थाने का भारसाधक संज्ञेय मामले में कर सकता है। जहां मामले का सम्बन्ध ऐसे दो या अधिक अपराधों से है, कम-से-कम एक संज्ञेय है, अन्य अपराध असंज्ञेय है, वह मामला संज्ञेय मामला समझा जाएगा। (धारा 155 (1) से (4)।

दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अन्तर्गत की गई रिपोर्ट (सूचना) को सामान्यतः प्रथम सूचना रिपोर्ट कहा जाता है। इस रिपोर्ट में संज्ञेय अपराध के किए जाने का अभिकथन होता है जोकि सम्बन्धित पुलिस को थाने के भारसाधक अधिकारी को दी जाती है। सूचनाकर्त्ता द्वारा दी गई ऐसी सूचना अस्पष्ट एवं अनिश्चित नहीं होनी चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि संज्ञेय अपराध से सम्बन्धित उपरोक्त सूचना लिखित ही हो यह मौखिक भी हो सकती है। प्रथम सूचना रिपोर्ट के मौखिक होने पर यह सम्बन्धित थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा या उसके आदेशानुसार अन्य व्यक्ति द्वारा अभिलिखित की जाएगी।

प्रथम सूचना रिपोर्ट का साक्ष्यिक मूल्य–प्रथम सूचना रिपोर्ट को मुख्य साक्ष्य नहीं माना जाता किन्तु सीमित प्रयोजनों के लिए उसका प्रयोग किया जा सकता है। प्रथम सूचना रिपोर्ट का मुख्यतः उपयोग सूचना कर्त्ता के साक्ष्य की सम्पुष्टि या खण्डन करने में किया जा सकता है। सूचनाकर्त्ता की साक्षी के रूप में परीक्षा किए जाते समय प्रथम सूचना रिपोर्ट को उसकी विश्वसनीयता को खण्डित करने में प्रयोग किया जा सकता है। परन्तु यदि प्रथम सूचना रिपोर्ट स्वयं अभियुक्त द्वारा दी गई हो या ऐसी सूचना देने वाला कार्यवाही के पश्चातवर्ती प्रक्रम पर मामले में अभियुक्त बने तो प्रथम सूचना रिपोर्ट का उसके विरुद्ध साक्ष्य में प्रयोग नहीं किया जा सकता।

प्रथम सूचना रिपोर्ट में अपराध की घटना का विस्तृत वर्णन किया जाना भी आवश्यक नहीं है। यदि उपरोक्त रिपोर्ट को दर्ज कराने में कुछ लोप हो जाता है और इसके बाद भी अभियोजन द्वारा अपने तथ्यों को सफलतापूर्वक रखा जाता है तो ऐसी लोप तात्त्विक नहीं मानी जायेगी। प्रथम सूचना रिपोर्ट करने में यदि असम्यक् या अयुक्तियुक्त रूप से विलम्ब किया जाता है तो न्यायालय अभियोजन की विश्वसनीयता को कठोरता से देखने के लिए बाध्य हो जाता है किन्तु सम्यक् स्पष्टीकरण दिए जाने पर ऐसे विलम्ब का कोई महत्त्व नहीं है।

लैंगिक अपराधों से सम्बन्धित प्रथम सूचना रिपोर्ट में विलम्ब होने पर यह माना जा सकता है कि इसके पीछे पीड़ित परिवार की हिचकिचाहट या संकोच जुड़ा हुआ हो। अतः ऐसे मामलों में विलम्ब को मान्यता प्रदान की जाती है।

प्रथम सूचना रिपोर्ट में प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के नामों का उल्लेख न करने मात्र से उसके साक्ष्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

प्रथम सूचना रिपोर्ट के कर्त्ता को सुनवाई का अधिकार है यदि पुलिस रिपोर्ट को स्वीकार करते हुए मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान ग्रहण न करके कार्यवाही को बन्द कर देता है।

संज्ञेय मामलों का अन्वेषण करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति–धारा 156 के अनुसार कोई पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी ऐसे संज्ञेय मामले का अन्वेषण कर सकता है, जिसकी जांच या विचारण करने की शक्ति उस थाने की सीमाओं के अन्दर के स्थानीय क्षेत्र पर अधिकारिता रखने वाले न्यायालय को अध्याय 13 के उपबन्धों के अधीन है।

ऐसे किसी मामले में पुलिस अधिकारी की किसी कार्यवाही को किसी भी प्रक्रम में इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा कि वह मामला ऐसा था जिसमें ऐसा अधिकारी इस धारा के अधीन अन्वेषण करने के लिए सशक्त न था। धारा 190 के अधीन सशक्त किया गया कोई मजिस्ट्रेट पूर्वोक्त प्रकार के अन्वेषण का आदेश कर सकता है।

यह धारा पुलिस अधिकारी को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह किसी संज्ञेय अपराध का अन्वेषण करे भले ही इस सम्बन्ध में उसे कोई रिपोर्ट न प्राप्त हुई हो या मजिस्ट्रेट ने उसे आदेशित न किया हो। ऐसा अन्वेषण पुलिस अधिकारी द्वारा स्वप्रेरणा से या अन्य विश्वसनीय सूचना के आधार पर किया जा सकता है।

अन्वेषण के लिए प्रक्रिया–यदि पुलिस अधिकारी को सूचना प्राप्त होती है या उसे प्रतीत होता है कि वह अन्वेषण करने के लिए सशक्त है तो वह अपराध की रिपोर्ट तत्काल उस पुलिस रिपोर्ट पर संज्ञान करने में सशक्त मजिस्ट्रेट को भेजेगा। मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों का अन्वेषण करने हेतु तथा अपराधियों का पता लगाने एवं उसकी गिरफ्तारी के लिए उस स्थान पर रिपोर्ट करने वाला अधिकारी स्वयं जायेगा या अपने अधीनस्थ अधिकारियों में से किसी को भेजेगा।

परन्तु निम्नलिखित मामलों में पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी के लिए अन्वेषण हेतु स्वयं जाने या किसी अधीनस्थ भेजने या अन्वेषण करने के लिए कदम उठाना आवश्यक नहीं होगा–

(क) यदि अपराध की सूचना अपराधी व्यक्ति का नाम देते हुए दिया गया है और मामला गम्भीर प्रकृति का नहीं है;

(ख) यदि अन्वेषण के लिए पर्याप्त आधार नहीं है। (धारा 157 (1)॥ दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा धारा 157 (1) के अन्तर्गत यह परन्तुक जोड़ा गया है कि ''बलात्कार के अपराध के सम्बन्ध में पीड़िता के बयान का अभिलेखन पीड़िता के आवास पर या उसकी पसंद के स्थान और यथा साध्य महिला पुलिस अधिकारी द्वारा उसके माता-पिता या संरक्षक या निकट रिश्तेदारों या मुहल्ले के समाज सेवक की उपस्थिति में किया जायेगा''।

धारा 157 के अधीन मजिस्ट्रेट को भेजी जाने वाली प्रत्येक रिपोर्ट, यदि राज्य सरकार ऐसा निदेश देती है, तो पुलिस के ऐसे वरिष्ठ अधिकारी के माध्यम से दी जाएगी, जिसे राज्य सरकार साधारण या विशेष आदेश द्वारा इस निमित्त नियत करे। (धारा 158)॥

साक्षियों की हाजिरी की अपेक्षा करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति–धारा 160 के अन्तर्गत कोई पुलिस अधिकारी, जो इस अध्याय के अधीन अन्वेषण कर रहा है, अपने थाने की या किसी पास के थाने की सीमाओं के अन्दर विद्यमान किसी ऐसे व्यक्ति से, जिसकी दी गई इत्तिला से या अन्यथा उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से परिचित होना प्रतीत होता है, अपने समक्ष हाजिर होने की अपेक्षा लिखित आदेश द्वारा कर सकता है और वह व्यक्ति अपेक्षानुसार हाजिर होगा॥

परंतु किसी पुरुष से जो पंद्रह वर्ष से कम आयु का या पैंसठ वर्ष से अधिक आयु का है या किसी स्त्री से या किसी मानसिक या शारीरिक रूप से नि:शक्त व्यक्ति से ऐसे स्थान से जिसमें ऐसा पुरुष या स्त्री निवास करती है, भिन्न किसी स्थान पर हाजिर होने की अपेक्षा नहीं की जाएगी [दण्ड विधि (संशोधन) अधिनियम, 2013]।

अपने निवास स्थान से भिन्न किसी स्थान पर उपधारा (1) के अधीन हाजिर होने के लिए प्रत्येक व्यक्ति के उचित खर्चों का पुलिस अधिकारी द्वारा संदाय कराने के लिए राज्य सरकार इस निमित्त बनाए गए नियमों द्वारा उपबन्ध कर सकती है।

पुलिस द्वारा साक्षियों की परीक्षा–कोई पुलिस अधिकारी जो इस अध्याय के अधीन अन्वेषण कर रहा है या ऐसे अधिकारी की अपेक्षा पर कार्य करने वाला कोई पुलिस अधिकारी जो ऐसे पंक्ति से निम्नतर पंक्ति का नहीं है, जिसे राज्य सरकार साधारण या विशेष आदेश द्वारा इस निमित्त विहित करे, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से परिचित समझे जाने वाले किसी व्यक्ति की मौखिक परीक्षा कर सकता है। (धारा 161(1)।

ऐसा व्यक्ति उन प्रश्नों के सिवाय, जिनके उत्तरों की प्रवृत्ति उसे आपराधिक आरोप या शास्ति या समपहरण की आशंका में डालने की है, ऐसे मामले से सम्बन्धित उन सब प्रश्नों का सही-सही उत्तर देने के लिए आबद्ध होगा जो ऐसा अधिकारी उससे पूछता है।

पुलिस अधिकारी इस धारा के अधीन परीक्षा के दौरान उसके समक्ष किए गए किसी भी कथन को लेखबद्ध कर सकता है और यदि वह ऐसा करता है, तो वह प्रत्येक ऐसे व्यक्ति के कथन का पृथक् और सही अभिलेख बनाएगा, जिसका कथन वह अभिलिखित करता है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 12 के द्वारा मूल अधिनियम की धारा 161 के उपधारा 3 में परन्तुक

जोड़कर यह उपबंध किया गया है कि इस धारा के अन्तर्गत किए गए किसी अभिकथन का अभिलेखन आडियो-विडियों इलेक्ट्रानिक साधनों के द्वारा भी किया जा सकता है।

वास्तव में धारा 161 के अन्तर्गत अन्वेषण करने वाले पुलिस अधिकारी को यह शक्ति प्रदान की गई है कि वह मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों से सम्बन्धित साक्षियों की परीक्षा करे। जिस व्यक्ति की परीक्षा की जाती है वह उन सभी प्रश्नों का सही उत्तर देने को बाध्य है जो कि पुलिस अधिकारी द्वारा उससे पूछी जाती है। किन्तु यदि प्रश्न उस व्यक्ति को किसी आपराधिक आरोप, शास्ति या समपहरण की आशंका में डालने वाला है तो यह ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने को बाध्य नहीं है।

पुलिस से किए गए कथनों का हस्ताक्षरित न किया जाना और कथनों का साक्ष्य में उपयोग–किसी व्यक्ति द्वारा किसी पुलिस अधिकारी से इस अध्याय के अधीन अन्वेषण के दौरान किया गया कोई कथन यदि लेखबद्ध किया जाता है तो कथन करने वाले व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित नहीं किया जाएगा और न ऐसा कोई कथन या उसका कोई अभिलेख चाहे वह पुलिस डायरी में हो या न हो, और न ऐसे कथन या अभिलेख का कोई भाग ऐसे किसी अपराध की, जो ऐसा कथन किए जाने के समय अन्वेषणाधीन था, किसी जांच या विचारण में इसमें इसके पश्चात् यथा उपबन्धित के सिवाय, किसी भी प्रयोजन के लिए उपयोग में लाया जायेगा।

परन्तु जब कोई ऐसा साक्षी, जिसका कथन उपर्युक्त रूप में लेखबद्ध कर दिया गया है, ऐसी जांच या विचारण में अभियोजन की ओर से बुलाया जाता है तब यदि उसके कथन का कोई भाग सम्यक् रूप से साबित कर दिया गया है, तो अभियुक्त द्वारा और न्यायालय की अनुज्ञा से अभियोजन द्वारा उसका उपयोग ऐसे साक्षी का खण्डन करने के लिए भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 145 द्वारा उपबन्धित रीति से किया जा सकता है और जब ऐसे कथन का कोई भाग इस प्रकार उपयोग में लाया जाता है तब उसका कोई भाग ऐसे साक्षी की पुनः परीक्षा में भी किन्तु उसकी प्रतिपरीक्षा में निर्दिष्ट किसी बात का स्पष्टीकरण करने के प्रयोजन से ही उपयोग में लाया जा सकता है। (धारा 162)।

कोई पुलिस अधिकारी या प्राधिकार वाला अन्य व्यक्ति भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 24 में यथा वर्णित कोई उत्प्रेरणा, धमकी या वचन न तो देगा और न करेगा तथा न दिलवाएगा और न करवाएगा। (धारा 163)।

संस्वीकृतियों और कथनों का अभिलेखन–धारा 164 कोई महानगर मजिस्ट्रेट या न्यायिक मजिस्ट्रेट, चाहे उसे मामले में अधिकारिता हो या न हो, इस अध्याय के अधीन या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन किसी अन्वेषण के दौरान या तत्पश्चात् जांच या विचारण प्रारम्भ होने के पूर्व किसी समय अपने से की गई किसी संस्वीकृति या कथन को अभिलिखित कर सकता है।

वर्ष 2008 के संशोधन के द्वारा धारा 164 (1) के मूल परन्तुक को निरस्त कर दिया गया है और उसके स्थान पर निम्नलिखित परन्तुक अन्तःस्थापित किया गया है :

''परन्तु यह कि इस उपधारा के अधीन की गयी किसी संस्वीकृति या कथन का अभिलेखन किसी अपराध के अभियुक्त के अधिवक्ता की उपस्थिति में आडियो-विडियो इलेक्ट्रानिक साधनों के द्वारा भी किया जा सकेगा;

परन्तु यह भी कि कोई भी संस्वीकृति किसी ऐसे पुलिस अधिकारी के द्वारा अभिलिखित नहीं की जायेगी जिसे तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन मजिस्ट्रेट की शक्ति प्रदान की गयी है''।

मजिस्ट्रेट किसी संस्वीकृति को अभिलिखित करने के पूर्व उस व्यक्ति को, जो संस्वीकृति कर रहा है, यह समझाएगा कि वह ऐसी संस्वीकृति करने के लिए आबद्ध नहीं है और यदि वह उसे करेगा तो वह उसके विरुद्ध साक्ष्य में उपयोग में लाई जा सकती है; और मजिस्ट्रेट कोई ऐसी संस्वीकृति तब तक अभिलिखित न करेगा जब तक उसे करने वाले व्यक्ति से प्रश्न करने पर उसको यह विश्वास करने का कारण न हो कि वह स्वेच्छा से की जा रही है। (धारा 164 (2))।

संस्वीकृति अभिलिखित किए जाने से पूर्व यदि मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिर होने वाला व्यक्ति यह कथन करता है कि वह संस्वीकृति करने के लिए इच्छुक नहीं है तो मजिस्ट्रेट ऐसे व्यक्ति को पुलिस की अभिरक्षा में निरोध को प्राधिकृत नहीं करेगा।

संस्वीकृति से भिन्न कोई कथन साक्ष्य अभिलिखित करने के लिए इसमें इसके पश्चात् उपबन्धित ऐसी रीति से अभिलिखित किया जाएगा जो मजिस्ट्रेट की राय में, मामले की परिस्थितियों में सर्वाधिक उपयुक्त हो।

धारा 164 (5 क) क के अनुसार, भा.द.सं. की धारा 354, धारा 354 ख, धारा 354 ग, धारा 354 घ, धारा 376 की उपधारा (1) या उपधारा (2), धारा 376 क, धारा 376 कख, धारा 376 ख, धारा 376 ग, धारा 376 घ, धारा 376 घख, धारा 376 ङ या धारा 509 के अधीन दण्डनीय मामलों में न्यायिक मजिस्ट्रेट उस व्यक्ति का, जिसके विरुद्ध उपधारा (5) में विहित रीति में ऐसा अपराध किया गया है, कथन जैसे ही अपराध का किया जाना पुलिस की जानकारी में लाया जाता है, अभिलिखित करेगा [दांडिक विधि (संशोधन) अधिनियम, 2018]।

संस्वीकृति या कथन को अभिलिखित करने वाला मजिस्ट्रेट, उसे उस मजिस्ट्रेट के पास भेजेगा जिसके द्वारा मामले की जांच या विचारण किया जाना है। (धारा 164 (6))।

धारा 164 के अन्तर्गत संस्वीकृतियों एवं कथनों को अभिलिखित करने के सम्बन्ध में प्राक्धान किए गये हैं। ऐसा कार्य महानगर मजि. या न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा किया जा सकता है भले ही उसे ऐसी अधिकारिता हो या न हो। किन्तु कोई पुलिस अधिकारी संस्वीकृति को अभिलिखित नहीं कर सकता भले ही उसे मजिस्ट्रेट की कोई शक्ति किसी विधि के अधीन उस समय दी गई हो। संस्वीकृतियों एवं कथनों को अभिलिखित करने का कार्य अन्वेषण के दौरान या उसके बाद जांच या विचारण प्रारम्भ होने के पूर्व किसी भी समय किया जा सकता है। धारा 164 की संस्वीकृति के आधार पर अभियुक्त को दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता जब तक अन्य साक्ष्यों से उसकी सम्पुष्टि नहीं हो जाती है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 की धारा 17 के द्वारा संहिता में नयी धारा 164-क अन्तःस्थापित किया गया, जिसमें बलात्संग के शिकार हुए व्यक्ति की शारीरिक परीक्षा के सम्बन्ध में निम्नलिखित उपबंध किया गया है–

जहां, ऐसे प्रक्रम के दौरान जब बलात्संग या बलात्संग करने का प्रयत्न करने के अपराध का अन्वेषण किया जा रहा है उस स्त्री के शरीर की, जिसके साथ बलात्संग किया जाना या करने का प्रयत्न करना अभिकथित है, किसी चिकित्सा विशेषज्ञ से परीक्षा कराना प्रस्थापित है वहां ऐसी परीक्षा, सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा चलाए जा रहे किसी अस्पताल में नियोजित रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी द्वारा, और ऐसे व्यवसायी की अनुपस्थिति में किसी अन्य रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी द्वारा, ऐसी स्त्री की सहमति से या उसकी ओर से ऐसे सहमति देने के लिए सक्षम व्यक्ति की सहमति से की जाएगी और ऐसी स्त्री को ऐसा अपराध किए जाने से सम्बन्धित इत्तिला प्राप्त होने के समय से चौबीस घण्टे के भीतर ऐसे रजिस्ट्रीकृत व्यवसायी के पास भेजा जाएगा।

वह रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी, जिसके पास ऐसी स्त्री भेजी जाती है, बिना किसी विलम्ब के, उसके शरीर की परीक्षा करेगा और एक परीक्षा रिपोर्ट तैयार करेगा जिसमें निम्नलिखित ब्यौरे दिए जाएंगे, अर्थात्–

(i) स्त्री का, और उस व्यक्ति का जो उसे लाया है, नाम और पता,

(ii) स्त्री की आयु,

(iii) डी.एन.ए. प्रोफाइल करने के लिए स्त्री के शरीर से ली गई सामग्री का वर्णन,

(iv) स्त्री के शरीर पर क्षति के, यदि कोई है, चिन्ह,

(v) स्त्री की साधारण मानसिक दशा, और

(vi) उचित ब्यौरे सहित अन्य तात्विक विशिष्टयाँ।

रिपोर्ट में संक्षेप में वे कारण अभिलिखित किए जाएँगे जिनसे प्रत्येक निष्कर्ष निकाला गया है। रिपोर्ट में अभिलिखित किया जाएगा कि क्या ऐसी परीक्षा के लिए स्त्री की सहमति या उसकी ओर से ऐसी सहमति देने के लिए सक्षम व्यक्ति की सहमति, अभिप्राप्त कर ली गई है। परीक्षा प्रारम्भ और समाप्त करने का सही समय भी रिपोर्ट में अंकित जाएगा। रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी, बिना विलम्ब के, रिपोर्ट अन्वेषण अधिकारी को भेजेगा जो उसे मजिस्ट्रेट को, दस्तावेजों के रूप में भेजेगा।

इस धारा की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि स्त्री की सहमति के बिना या उसकी ओर से ऐसी सहमति देने के लिए सक्षम किसी व्यक्ति की सहमति के बिना किसी परीक्षा को विधिमान्य बनाती है।

धारा 165 के अन्तर्गत पुलिस अन्वेषण के दौरान तलाशी के लिए सशक्त है यदि कोई चीज तत्काल अन्यथा प्राप्त न किया जा सकता हो। ऐसी तलाशी में प्राप्त वस्तु का अभिलेख तत्काल सम्बन्धित मजिस्ट्रेट के पास भेजा जायेगा और मजिस्ट्रेट उसकी एक प्रति उस व्यक्ति को निःशुल्क देगा, जिसके स्वामित्व/अधिभोग के स्थान पर तलाशी ली गयी थी, यदि वह ऐसा आवेदन करता है।

धारा 166 के अन्तर्गत पुलिस थाने का भार साधक अधिकारी किसी अन्य अधिकारी से वारण्ट जारी करने की अपेक्षा कर सकता है, यदि तलाशी की आवश्यकता उसके स्थानीय क्षेत्राधिकार से बाहर, चाहे उसी जिले में या अन्य जिले में, अपेक्षित है।

वर्ष 2005 के संशोधन के द्वारा धारा 166-क और 166-ख अन्तःस्थापित करके भारत से बाहर अन्वेषण के लिए प्रक्रिया विहित किया गया। धारा 166-क (1) के अनुसार इस संहिता में किसी बात के होते हुए भी, यदि किसी अपराध के अन्वेषण के अनुक्रम में अन्वेषण अधिकारी या अन्वेषण अधिकारी की पंक्ति से वरिष्ठ कोई अधिकारी यह आवेदन करता है कि भारत के बाहर किसी देश या स्थान में साक्ष्य उपलब्ध हो सकता है तो कई दाण्डिक न्यायालय अनुरोध-पत्र भेजकर उस देश या स्थान के ऐसे न्यायालय या प्राधिकारी से, जो ऐसे अनुरोध-पत्र पर कार्यवाही करने के लिए सक्षम है, यह अनुरोध कर सकेगा कि वह किसी ऐसे व्यक्ति की मौखिक परीक्षा करे, जिसके बारे में यह अनुमान है कि वह मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से अवगत है, और ऐसी परीक्षा के अनुक्रम में किए गए उसके कथन को अभिलिखित करे और ऐसे व्यक्ति या किसी अन्य व्यक्ति से उस मामले से सम्बन्धित ऐसे

दस्तावेज या चीज को पेश करने की अपेक्षा करे जो उसके कब्जे में है और इस प्रकार लिए गए या संग्रहीत सभी साक्ष्य या उसकी अधिप्रमाणित प्रतिलिपि या इस प्रकार संग्रहीत चीज को ऐसा पत्र भेजने वाले न्यायालय को अग्रेषित करें। ऐसा अनुरोध पत्र ऐसी रीति में पारेषित किया जाएगा जो केन्द्रीय सरकार इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे।

भारत के बाहर के किसी देश या स्थान से भारत में अन्वेषण के लिए किसी न्यायालय या प्राधिकारी को अनुरोध पत्र धारा 166-ख के अनुसार भारत के बाहर के किसी देश या स्थान के ऐसे न्यायालय या प्राधिकारी से, जो उस देश या स्थान में अन्वेषणाधीन किसी अपराध के सम्बन्ध में किसी व्यक्ति की परीक्षा करने के लिए या किसी दस्तावेज या चीज को पेश कराने के लिए उस देश या स्थान में ऐसा पत्र भेजने के लिए सक्षम है, अनुरोध-पत्र की प्राप्ति पर केन्द्रीय सरकार यदि वह उचित समझे तो–

(i) उसे मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या ऐसे महानगर मजिस्ट्रेट या न्यायिक मजिस्ट्रेट को, जिसे वह इस निमित्त नियुक्त करे, अग्रेषित कर सकेगी जो तब उस व्यक्ति को अपने सक्षम समन करेगा तथा उसके कथन को अभिलिखित करेगा या दस्तावेज या चीज को पेश करवाएगा; या

(ii) उस पत्र को अन्वेषण के लिए किसी पुलिस अधिकारी को भेज सकेगा जो तब उसी रीति में अपराध का अन्वेषण करेगा, मानो वह अपराध भारत के भीतर किया गया हो।

चौबीस घंटे के भीतर अन्वेषण पूरा न किया जा सकने पर प्रक्रिया–किसी अपराध के लिए किसी अभियुक्त व्यक्ति की गिरफ्तारी के तत्काल बाद अन्वेषण की प्रक्रिया सम्बन्धी नियम धारा 167 में वर्णित है। इस धारा में 2008 के संशोधन के द्वारा इसके उपधारा (2) के परन्तुक (ख) और स्पष्टीकरण II को नये रुप में अन्तःस्थापित किया गया है। इस निमित्त निम्नलिखित प्रक्रिया अपनायी जाती है–

जब कभी कोई व्यक्ति गिरफ्तार किया गया है और अभिरक्षा में निरुद्ध है और यह प्रतीत हो कि अन्वेषण धारा 57 द्वारा नियत चौबीस घण्टे की अवधि के अन्दर पूरा नहीं किया जा सकता और यह विश्वास करने के लिए आधार है कि अभियोग या इत्तिला दृढ़ आधार पर है तब पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी या यदि अन्वेषण करने वाला पुलिस अधिकारी उपनिरीक्षक से निम्नतर पंक्ति का नहीं है तो वह, निकटतम न्यायिक मजिस्ट्रेट को इसमें इसके पश्चात् विहित डायरी की मामले से सम्बन्धित प्रविष्टियों की एक प्रतिलिपि भेजेगा और साथ ही अभियुक्त व्यक्ति को भी उस मजिस्ट्रेट के पास भेजेगा। (धारा 167 (1))।

(2) वह मजिस्ट्रेट अभियुक्त का ऐसी अभिरक्षा में, जैसी वह मजिस्ट्रेट ठीक समझे इतनी अवधि के लिए, जो कुल मिलाकर पन्द्रह दिन से अधिक न होगी निरुद्ध किया जाना समय-समय पर प्राधिकृत कर सकता है।

(क) परन्तु मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति का पुलिस अभिरक्षा से अन्यथा निरोध पन्द्रह दिन की अवधि से आगे के लिए उस दशा में प्राधिकृत कर सकता है, कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त आधार है, कोई भी मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति का इस पैरा के अधीन अभिरक्षा में निरोध–

(i) कुल मिलाकर **नब्बे दिन** से अधिक की अवधि के लिए प्राधिकृत नहीं करेगा जहां अन्वेषण ऐसे अपराध के सम्बन्ध में है जो मृत्यु, आजीवन कारावास या दस वर्ष से अन्यून की अवधि के लिए कारावास से दण्डनीय है।

(ii) कुल मिलाकर **साठ दिन** से अधिक की अवधि के लिए प्राधिकृत नहीं करेगा जहां अन्वेषण किसी अन्य अपराध के सम्बन्ध में है।

नब्बे दिन या साठ दिन की उक्त अवधि की समाप्ति पर यदि अभियुक्त व्यक्ति जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है तो उसे जमानत पर छोड़ दिया जाएगा।

(ख) कोई भी मजिस्ट्रेट इस धारा के अधीन पुलिस की अभिरक्षा में अभियुक्त के निरोध को प्राधिकृत नहीं करेगा जब तक कि अभियुक्त को उसके समक्ष प्रथम बार सशरीर तथा पश्चात्वर्ती प्रत्येक समय पर, जब तक अभियुक्त पुलिस की अभिरक्षा में बना रहता है, पेश नहीं किया जाता है, किन्तु मजिस्ट्रेट अभियुक्त की या तो सशरीर या इलेक्ट्रॉनिक विडियो सम्पर्क के माध्यम से पेश किए जाने पर न्यायिक अभिरक्षा में अग्रेतर निरोध को बढ़ा सकता है।

पैरा (क) में विनिर्दिष्ट अवधि समाप्त हो जाने पर भी अभियुक्त व्यक्ति तब तक अभिरक्षा में निरुद्ध रखा जायेगा जब तक कि वह जमानत नहीं दे देता है (स्पष्टीकरण I)। स्पष्टीकरण II, जिसे वर्ष 2008 के संशोधन के द्वारा अन्तःस्थापित किया गया है, के अनुसार यदि ऐसा प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था तब इसे पेशी के आदेश पर किया गया उसका हस्ताक्षर अथवा इलेक्ट्रॉनिक विडियो सम्पर्क के माध्यम से पेशी होने पर इस निमित्त मजिस्ट्रेट के द्वारा दिए गए आदेश से साबित किया जा सकेगा। पुनः परन्तुक (ख) के बाद एक नया परन्तुक जोड़ते हुए यह उपबंध किया गया है कि 18 वर्ष से कम आयु की स्त्री के मामले में निरोध को प्रति-प्रेषण गृह या मान्यता प्राप्त सामाजिक संस्था की अभिरक्षा में किए जाने के लिए प्राधिकृत किया जायेगा।

(ग) कोई द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट, जो उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त विशेषतया सशक्त नहीं किया गया है, पुलिस की अभिरक्षा में निरोध प्राधिकृत नहीं करेगा।

पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी या अन्वेषण करने वाला पुलिस अधिकारी, यदि उपनिरीक्षक से निम्नतर पंक्ति का नहीं है तो, जहां न्यायिक मजिस्ट्रेट न मिल सकता हो, वहां कार्यपालक मजिस्ट्रेट को जिसको न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट की शक्तियाँ प्रदान की गई हैं, विहित डायरी की मामले से सम्बन्धित प्रविष्टियों की एक प्रतिलिपि भेजेगा और साथ ही अभियुक्त व्यक्ति को भी उस कार्यपालक मजिस्ट्रेट के पास भेजेगा जो लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से किसी अभियुक्त व्यक्ति का ऐसी अभिरक्षा में निरोध प्राधिकृत कर सकता है जो कुल मिलाकर सात दिन से अधिक नहीं हो।

परन्तु उक्त अवधि की समाप्ति के पूर्व कार्यपालक मजिस्ट्रेट, मामले के अभिलेख, मामले से सम्बन्धित डायरी की प्रविष्टियों के सहित जो, यथास्थिति, पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी या अन्वेषण करने वाले अधिकारी द्वारा उसे भेजी गई थी, निकटतम न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेजेगा। (धारा 167 (2क))।

इस धारा के अधीन पुलिस अभिरक्षा में निरोध प्राधिकृत करने वाला मजिस्ट्रेट अपने कारणों को दर्ज करेगा। यदि ऐसा मजिस्ट्रेट मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट नहीं है तो ऐसे आदेश की एक प्रति वह मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को प्रेषित करेगा। (धारा 167 (3) एवं (4))।

समन मामले का अन्वेषण यदि 6 माह के भीतर पूरा नहीं हो पाता है तो सम्बन्धित मजिस्ट्रेट आगे अन्वेषण को रोक सकता है, जब तक कि अन्वेषणाधिकारी आगे अन्वेषण के लिए मजिस्ट्रेट का समाधान नहीं कर देता है। समाधान हो जाने पर सत्र न्यायालय भी ऐसे मामलों में आगे अन्वेषण का आदेश दे सकता है।

(धारा 167 (5) एवं (6))। अधीनस्थ पुलिस अन्वेषण अधिकारी अपनी रिपोर्ट थाने के भार साधक अधिकारी को देगा (धारा 168)।

यदि इस अध्याय के अधीन अन्वेषण पर पुलिस थाने के भार साधक अधिकारी को साक्ष्य अपर्याप्त प्रतीत होता है तो वह अभियुक्त को बंधपत्र निष्पादित करवाकर छोड़ सकता है (धारा 169), किन्तु यदि साक्ष्य पर्याप्त है तब मामलों को मजिस्ट्रेट के पास भेज दिया जायेगा। (धारा 170)।

किसी परिवादी या साक्षी से, जो किसी न्यायालय में जा रहा है, पुलिस अधिकारी के साथ जाने की अपेक्षा न की जाएगी और न तो उसे अनावश्यक रूप से अवरुद्ध किया जाएगा या असुविधा पहुँचाई जाएगी और न उससे अपनी हाजिरी के लिए उसके अपने बंधपत्र से भिन्न कोई प्रतिभूति देने की अपेक्षा की जाएगी :

परन्तु यदि कोई परिवादी या साक्षी हाजिर होने से, या धारा 170 में निर्दिष्ट प्रकार का बंधपत्र निष्पादित करने से, इंकार करता है तो पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी उसे मजिस्ट्रेट के पास अभिरक्षा में भेज सकता है जो उसे तब तक अभिरक्षा में निरुद्ध रख सकता है जब तक वह ऐसा बन्धपत्र निष्पादित नहीं कर देता है या जब तक मामले की सुनवाई समाप्त नहीं हो जाती है। (धारा 171)।

अन्वेषण डायरी–धारा 172 के अनुसार प्रत्येक पुलिस अधिकारी, जो इस अध्याय के अधीन अन्वेषण करता है, अन्वेषण में की गई अपनी कार्यवाही को दिन-प्रतिदिन एक डायरी में लिखेगा, जिसमें वह समय जब उसे इत्तिला मिली, वह समय जब उसने अन्वेषण आरम्भ किया और जब समाप्त किया, वह स्थान या वे स्थान जहां वह गया और अन्वेषण द्वारा अभिनिश्चित परिस्थितियों का विवरण होगा।

कोई दण्ड न्यायालय ऐसे न्यायालय में जांच या विचारण के अधीन मामले की पुलिस डायरियों को मँगा सकता है और ऐसी डायरियों को मामले में साक्ष्य के रूप में तो नहीं किन्तु ऐसी जांच या विचारण में अपनी सहायता के लिए उपयोग में ला सकता है। न तो अभियुक्त और न उसके अभिकर्त्ता ऐसी डायरियों को मांगने के हकदार होंगे और न वह या वे केवल इस कारण उन्हें देखने के हकदार होंगे कि वे न्यायालय द्वारा देखी गई है।

पुलिस रिपोर्ट–अन्वेषण समाप्त हो जाने के बाद धारा 173 (2) के प्रारुप में मजिस्ट्रेट को भेजी गयी रिपोर्ट पुलिस रिपोर्ट कहा जाता है। (धारा 2(द))। इस निमित्त धारा 173 (1) के अन्तर्गत सामान्य निर्देश अधिकथित है कि इस अध्याय के अधीन किया जाने वाला प्रत्येक अन्वेषण अनावश्यक विलम्ब के बिना पूरा किया जायेगा। पुनः वर्ष 2018 के संशोधन के द्वारा नयी उपधारा 1-क अन्तःस्थापित करके यह उपबंध किया गया है कि किसी शिशु के बलात्कार के सम्बन्ध में अन्वेषण उस तिथि से **दो माह** के भीतर पूरा किया जायेगा जिस तिथि पर पुलिस थाने के भार साधक अधिकारी के द्वारा सूचना अभिप्राप्त किया गया था। जैसे ही अन्वेषण पूरा हो जाय, पुलिस थाने का भार साधक अधिकारी, पुलिस रिपोर्ट पर उस अपराध का संज्ञान करने केलिए सशक्त मजिस्ट्रेट को नियत प्रारुप में एक रिपोर्ट प्रेषित करेगा और अपराध की सूचनादाता को संसूचित करेगा। (धारा 173(2)।

आत्महत्या आदि पर पुलिस का जांच करना और रिपोर्ट देना–जब पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी, या राज्य सरकार द्वारा उस निमित्त विशेषतया सशक्त किए गए किसी अन्य पुलिस अधिकारी को यह इत्तिला मिलती है कि किसी व्यक्ति ने आत्महत्या

कर ली है अथवा कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति द्वारा या जीव-जन्तु द्वारा या किसी यंत्र द्वारा या दुर्घटना द्वारा मारा गया है, अथवा कोई व्यक्ति ऐसी परिस्थितियों में मरा है जिनसे उचित रूप से यह सन्देह होता है कि किसी अन्य व्यक्ति ने कोई अपराध किया है तो वह मृत्यु समीक्षाएँ करने के लिए सशक्त निकटम कार्यपालक मजिस्ट्रेट को तुरन्त उसकी सूचना देगा और जब तक राज्य सरकार द्वारा विहित किसी नियम द्वारा या जिला या उपखण्ड मजिस्ट्रेट के किसी साधारण या विशेष आदेश द्वारा अन्यथा निदिष्ट न हो वह उस स्थान को जाएगा जहां ऐसे मृत व्यक्ति का शरीर है और वहां पड़ोस के दो या अधिक प्रतिष्ठित निवासियों की उपस्थिति में अन्वेषण करेगा और मृत्यु के दृश्यमान कारण की रिपोर्ट तैयार करेगा जिसमें ऐसे घावों, अस्थिभंगों, नीलों और क्षति के अन्य चिन्हों का जो शरीर पर पाए जाएं, वर्णन होगा और यह कथन होगा कि ऐसे चिन्ह किस प्रकार से और किस आयुध या उपकरण द्वारा (यदि कोई हो) किए गए प्रतीत होते हैं।

उस रिपोर्ट पर ऐसे पुलिस अधिकारी और अन्य व्यक्तियों द्वारा या उनमें से इतनों द्वारा जो उससे सहमत है, हस्ताक्षर किए जाएंगे और वह जिला मजिस्ट्रेट या उपखण्ड मजिस्ट्रेट को तत्काल भेज दी जाएगी। जब–

(i) मामले में किसी स्त्री द्वारा उसके विवाह की तारीख से सात वर्ष के भीतर आत्महत्या अन्तर्वलित है; या

(ii) मामला किसी स्त्री की उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर ऐसी परिस्थितियों में मृत्यु से सम्बन्धित है, जो वह युक्तियुक्त सन्देह उत्पन्न करती है कि किसी अन्य व्यक्ति ने ऐसी स्त्री के सम्बन्ध में कोई अपराध किया है; या

(iii) मामला किसी स्त्री की उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर मृत्यु से सम्बन्धित है और उस स्त्री के किसी नातेदार ने उस निमित्त निवेदन किया है; या

(iv) मृत्यु के कारण की बाबत कोई सन्देह है; या

(v) किसी अन्य कारण पुलिस अधिकारी ऐसा करना समीचीन समझता है;

तब ऐसे नियमों के अधीन रहते हुए, जो राज्य सरकार द्वारा इस निमित्ति विहित किए जाएं, वह अधिकारी यदि मौसम ऐसा है और दूरी इतनी है कि रास्ते में शरीर के ऐसे सड़ने की जोखिम के बिना, जिससे उसकी परीक्षा व्यर्थ हो जाए, उसे भिजवाया जा सकता है तो शरीर को उसकी परीक्षा की दृष्टि से, निकटतम सिविल सर्जन के पास या राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त नियुक्त अन्य अर्हितइ चिकित्सक के पास भेजेगा।

निम्नलिखित मजिस्ट्रेट मृत्यु-समीक्षा करने के लिए सशक्त है, अर्थात् कोई जिला मजिस्ट्रेट या उपखण्ड मजिस्ट्रेट और राज्य सरकार द्वारा या जिला मजिस्ट्रेट द्वारा इस निमित्त विशेषतया सशक्त किया गया कोई अन्य कार्यपालक मजिस्ट्रेट। (धारा 174)।

धारा 174 के अन्तर्गत मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की जाती है। अतः धारा 174 पंचायत नामे से सम्बन्धित है।

जब कोई व्यक्ति पुलिस की अभिरक्षा में रहते हुए मर जाता है या जब मामला धारा 174 में निर्दिष्ट प्रकृति का है तब मृत्यु के कारण की जांच, पुलिस अधिकारी द्वारा किए जाने वाले अन्वेषण के बजाय या उसके अतिरिक्त, वह निकटतम मजिस्ट्रेट करेगा जो मृत्यु-समीक्षा करने के लिए सशक्त है और धारा 174 में वर्णित किसी अन्य दशा में इस प्रकार सशक्त किया गया कोई भी मजिस्ट्रेट कर सकेगा; और यदि वह ऐसा करता है तो उसे जांच करने में वे सब शक्तियाँ होंगी जो उसे किसी अपराध की जांच करने में होती।

वर्ष 2005 से अन्तः स्थापित धारा (1–क) के अनुसार जब–

(क) कोई व्यक्ति मर जाता है या गायब हो जाता है, अथवा

(ख) किसी स्त्री के साथ बलात्संग किया गया अभिकथित है,

तो उस दशा में जब कि ऐसा व्यक्ति या स्त्री पुलिस या इस संहिता के अधीन मजिस्ट्रेट या न्यायालय द्वारा प्राधिकृत किसी अन्य अभिरक्षा में है तो पुलिस अधिकारी द्वारा की गई जांच या किए गए अन्वेषण के अतिरिक्त, यथास्थिति, ऐसे न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा, जिसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर अपराध किया गया है, जांच की जाएगी''।

ऐसी जांच या अन्वेषण करने वाला न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट या कार्यपालक मजिस्ट्रेट या पुलिस अधिकारी, किसी व्यक्ति की मृत्यु के चौबीस घण्टे के भीतर उसकी परीक्षा किए जाने की दृष्टि से शरीर को निकटतम सिविल सर्जन या अन्य अर्हित चिकित्सा व्यक्ति को, जो इस निमित्त राज्य सरकार द्वारा नियुक्त किया गया हो, भेजेगा जब तक कि लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से ऐसा करना सम्भव न हो''।

जब कभी ऐसे मजिस्ट्रेट के विचार में यह समीचीन है कि किसी व्यक्ति के, जो पहले ही गाड़ दिया गया है, मृत शरीर की इसलिए परीक्षा की जाए कि उसकी मृत्यु के कारण का पता चले तब मजिस्ट्रेट उस शरीर को निकलवा सकता है और उसकी परीक्षा करा सकता है।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन प्रथम सूचना रिपोर्ट किस सम्बन्ध में दी जा सकती है?

A. केवल संज्ञेय अपराध के सम्बन्ध में।

Q. असंज्ञेय अपराध के अन्वेषण की अनुमति किसके द्वारा दी जा सकती है?

A. उस अपराध के विचारण का क्षेत्राधिकार रखने वाले मजिस्ट्रेट के द्वारा।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अन्तर्गत किसी साक्षी को पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देने से मना करने पर किसके अधीन अपराध होगा?

A. धारा 179 भा.दं.सं.।

Q. दं.प्र.सं. की धारा 164 के अन्तर्गत कौन संस्वीकृति लेखबद्ध कर सकता है?

A. कोई भी न्यायिक मजिस्ट्रेट।

Q. यदि कोई मजिस्ट्रेट अभियुक्त की संस्वीकृति लिखने के पूर्व शपथ दिलाता है तो ऐसा संस्वीकृति युक्त कथन की प्रकृति क्या होगी?

A. अविधिक एवं साक्ष्य में अग्राह्य। (धारा 164 (5))।

Q. बलात्कार कारित होने के अपराध के अन्वेषण के दौरान अभिकथित पीड़िता का चिकित्सीय जांच किसकी सम्मति से करायी जा सकती है?

A. स्वयं पीड़िता या उसकी ओर से सक्षम व्यक्ति की सम्मति से। धारा 164-क)।

Q. दं.प्र.सं. की धारा 166-क के अन्तर्गत जब तलाशी भारत से बाहर होती है तब फौजदारी न्यायालय क्या जारी कर सकेगा?

A. प्रार्थना-पत्र (अनुरोध-पत्र)।

Q. आत्म हत्या के मामले में कौन सी धारा लागू होती है?

A. धारा 174।

Q. पुलिस अन्वेषण के लिए किसी व्यक्ति को निरुद्ध करने की मजिस्ट्रेट की शक्ति अधिकतम कितने दिनों की है?

A. 90 दिन। (धारा 167 (2) परन्तुक क)।

Q. A को बलात्कार के अपराध में गिरफ्तार कर अन्वेषण के लिए अभिरक्षा में निरुद्ध किया गया है। उसे अधिकतम कितने दिन तक अभिरक्षा में दिया जा सकता है?

A. 90 दिन

Q. धारा 154 के अन्तर्गत पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी जिस पुस्तक में इत्तिला के सार को लिखता है उसे क्या कहते हैं?

A. ऐसी पुस्तक को स्टेशन डायरी अथवा साधारण रोजनामचा कहते हैं।

Q. धारा 154 के अधीन अभिलिखित किये गये इत्तिलाकार के कथन को सामान्य व्यवहार में क्या कहा जाता है?

A. ऐसे कथन को सामान्य व्यवहार में ''प्रथम इत्तिला रिपोर्ट'' या फर्स्ट इन्फॉर्मेशन रिपोर्ट (F.I.R.) या रपट इब्तेदायी के नाम से जाना जाता है।

Q. इत्तिला देने वाले को इत्तिला की प्रतिलिपि कितना मूल्य चुका देने पर दी जाएगी?

A. इत्तिलाकार को इत्तिला की प्रतिलिपि तत्काल निःशुल्क दी जाएगी (धारा 154 (2))।

Q. कोई व्यक्ति जो किसी पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी के इत्तिला को अभिलिखित करने से इंकार करने से व्यथित है, कहां और क्या उपचार प्राप्त कर सकता है?

A. धारा 154 (3) के अनुसार–इत्तिला को अभिलिखित करने से इंकार करने पर व्यथित व्यक्ति इत्तिला का सार लिखित रूप में और डाक द्वारा सम्बद्ध पुलिस अधीक्षक को भेज सकता है।

Q. धारा 154 के अधीन कोई इत्तिला कब 'प्रथम इत्तिला रिपोर्ट' की कोटि में आती है?

A. जब ऐसी इत्तिला से किसी संज्ञेय अपराध के कारित होने से सम्बन्धित हो।

Q. किस प्रकरण में यह कहा गया कि ''प्रथम इत्तिला रिपोर्ट संदिग्ध नहीं होनी चाहिए''। वरन् उसे इतना स्पष्ट होना चाहिए कि पुलिस उसके आधार पर अन्वेषण प्रारम्भ कर सके?

A. तापीन्द्र सिंह बनाम पंजाब, राज्य, ए.आई.आर. 1970 के वाद में।

Q. असंज्ञेय मामलों के बारे में इत्तिला दिये जाने पर पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी क्या प्रक्रिया अपनायेगा?

A. असंज्ञेय मामलों के बारे में इत्तिला के सार को पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी ऐसी पुस्तक में, अभिलिखित करेगा जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाय और इत्तिलाकार को मजिस्ट्रेट के पास जाने को निर्देशित करेगा। (धारा 155)।

Q. क्या कोई पुलिस अधिकारी किसी असंज्ञेय मामले का अन्वेषण मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना कर सकेगा?

A. नहीं! धारा 155 की उपधारा (2) के अनुसार ऐसे मामले का अन्वषण ऐसे मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना नहीं करेगा जिसे

मामले का विचारण करने या विचारणार्थ सुपुर्द करने की शक्ति है।

Q. जहां किसी मामले का सम्बन्ध ऐसे दो या अधिक अपराधों से है, जिनमें कम-से-कम एक संज्ञेय है, वहां वह मामला कैसा समझा जायेगा?

A. धारा 155 (4) के अनुसार संज्ञेय मामला समझा जायेगा।

Q. मुम्बई राज्य बनाम रूसी मिस्त्री, ए.आई.आर. 1960 सु.को. के वाद में एफ.आई.आर. को किस प्रकार समझाया गया है?

A. एफ.आई.आर. का तात्पर्य इत्तिला से है जो किसी संज्ञेय अपराध किये जाने के सम्बन्ध में पुलिस अधिकारी को दी जाती है, जिसके आधार पर अन्वेषण का कार्य प्रारम्भ किया जाता है।

Q. तापीन्द्र सिंह बनाम स्टेट ऑफ पंजाब, 1970 के वाद में क्या कहा गया?

A. किसी मामले के सम्बन्ध में किसी गुमनाम, अस्पष्ट या जो तार द्वारा प्रेषित किया गया हो, उसे प्रथम सूचना रिपोर्ट नहीं कहा जा सकता है।

Q. किस प्रकरण में यह अभिमत व्यक्त किया गया कि जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट में घटनाओं का वर्णन देते समय कुछ छोटे मोटे लोप हो गये हों और उनका युक्तियुक्त स्पष्टीकरण कर दिया गया हो, वहां प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के साक्ष्यात्मक महत्त्व पर सन्देह करना ठीक नहीं है और उसके कारण अभियुक्त की दोषसिद्धि को टाला नहीं जा सकता?

A. नाथूसिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 1977 सु.को. के वाद में।

Q. क्या प्रथम सूचना रिपोर्ट सारभूत साक्ष्य है?

A. अग्नू नागेसिया बनाम स्टेट ऑफ बिहार, 1966 SC के प्रकरण के अनुसार यह सारभूत साक्ष्य नहीं है, किन्तु इसका प्रयोग अभियुक्त के मामले में निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है–(i) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 145 के अधीन उसके द्वारा पूर्ववतन कथनों के खण्डन करने के लिए।
(ii) साक्ष्य अधिनियम की धारा 155 (3) में साक्षी द्वारा दिये गये असंगत पिछले कथनों को साबित करने के लिए,
(iii) साक्ष्य अधिनियम की धारा 157 के अन्तर्गत किसी तथ्य के सम्बन्ध में किसी साक्षी द्वारा पश्चात्वर्ती अभिसाक्ष्य की सम्पुष्टि करने के लिए उसी तथ्य के बारे में पूर्वतन कथन साबित करने के लिए।

Q. गनेश भवन पटेल बनाम स्टेट ऑफ महाराष्ट्र, ए.आई.आर. 1979 सु.को. के वाद में प्रथम सूचना विवरण के बारे में क्या कहा गया?

A. प्रथम सूचना को दर्ज करने में अनावश्यक विलम्ब से अभियोजन के पक्ष का मामला सन्देहास्पद हो जाता है।

Q. किस प्रकरण में यह कहा गया कि ''यदि एफ.आई.आर. करने वाला व्यक्ति अभियुक्त के रूप में उसी मामले में आता है तो उसके विरुद्ध वह तथ्य साबित नहीं किया जा सकेगा, जो उसने एफ.आई.आर. में दी थी, क्योंकि ऐसा साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के उल्लंघन में होगा?

A. निसार अली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. 1957 सु.को. के प्रकरण में।

Q. वे कौन-सी परिस्थितियाँ हैं जिनमें पुलिस अधिकारी के लिए अन्वेषण आवश्यक नहीं है?

A. निम्नलिखित दो परिस्थितियाँ ऐसी हैं जिनमें पुलिस अधिकारी के लिए यह आवश्यक नहीं है, कि वह घटना स्थल पर जाने और मामले का अन्वेषण करे–
(i) जब मामला गम्भीर प्रकृति का नहीं है, अपराध होने की इत्तिला किसी व्यक्ति के विरुद्ध उसका नाम देकर की गयी है।
(ii) जब पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण प्रारम्भ करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है। (धारा 157 का परन्तुक)

Q. कोई अन्वेषण करने वाला पुलिस अधिकारी मामले से परिचित किसी व्यक्ति को, जो उसके या पास के थाने की सीमाओं के भीतर हो अपने समक्ष हाजिर होने की अपेक्षा किस प्रकार कर सकता है?

A. संहिता की धारा 160 (1) के अनुसार लिखित आदेश द्वारा।

Q. धारा 160 के अन्तर्गत अन्वेषण कर्त्ता पुलिस अधिकारी किन व्यक्तियों को उनके निवास स्थान से अन्यथा उपस्थित होने की अपेक्षा नहीं कर सकता?

A. धारा 160 (1) के परन्तुक के अनुसार किसी 15 वर्ष से कम आयु के पुरुष से या किसी स्त्री से।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत पुलिस द्वारा साक्षियों की परीक्षा की जाती है?

A. धारा 161 के अन्तर्गत।

Q. कोई अन्वेषण करने वाला पुलिस अधिकारी मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से परिचित समझे जाने वाले किसी व्यक्ति की कैसी परीक्षा कर सकता है?

A. मौखिक परीक्षा।

Q. धारा 161 के अन्तर्गत परीक्षाधीन व्यक्ति की प्रश्नों के सम्बन्ध में क्या बाध्यता है?

A. कोई व्यक्ति ऐसे मामले से सम्बन्धित उन सब प्रश्नों का सही-

सही उत्तर देने के लिए आबद्ध होगा जो ऐसा अधिकारी उससे पूछता है।

Q. श्रीमती नन्दिनी सत्यश्री बनाम पी.एल. दानी, 1979 सु.को. का वाद किस बिन्दु पर विधि स्पष्ट करता है।

A. यह वाद संहिता की धारा 161 (2) पर विधि स्पष्ट करता है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 क्या उपबन्ध करती है?

A. धारा 162 उपबन्धित करती है कि अन्वेषण के दौरान किसी व्यक्ति द्वारा किसी पुलिस अधिकारी से किया गया कोई कथन, यदि लेखबद्ध किया गया है, तो वह कथन करने वाले व्यक्ति द्वारा न तो हस्ताक्षरित किया जायेगा और न ही ऐसा कथन या उसका कोई अभिलेख किसी जांच या विचारण की कार्रवाई में किसी भी प्रयोजन के लिए उपयोग में लाया जायेगा।

Q. धारा 162 के अन्तर्गत लेखबद्ध किये गये किसी व्यक्ति के कथन का क्या उपयोग किया जा सकता है?

A. धारा 162 (1) के परन्तुक के अनुसार जब ऐसा व्यक्ति जिसका कथन लेखबद्ध किया गया है, ऐसी जांच या विचारण में बुलाया गया है अभियोजन की ओर से तब यदि उसके कथन का कोई भाग यदि साबित कर दिया गया है तो अभियुक्त द्वारा और न्यायालय की अनुज्ञा से अभियोजन द्वारा उसका उपयोग साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के अन्तर्गत ऐसे साक्षी का खण्डन करने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

Q. क्या इस कथन के कोई अपवाद हैं कि अन्वेषण के दौरान अभियुक्त द्वारा पुलिस से किया गया कथन साक्ष्य में पूर्णत: अमान्य है?

A. हां! धारा 162 (2) के अनुसार साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) और 27 के अन्तर्गत आने वाले कथन इस नियम के अपवाद हैं।

Q. संहिता की धारा 163 के अन्तर्गत यह अभिकथन कि कोई पुलिस अधिकारी या प्राधिकार वाला व्यक्ति कोई उत्प्रेरणा, धमकी या वचन न तो देगा न ही दिलवाएगा, साक्ष्य अधिनियम की किस धारा से सादृश्यता रखती है?

A. धारा 24 से।

Q. संस्वीकृतियों और अभिकथनों को कौन अभिलिखित कर सकता है?

A. कोई महानगर मजिस्ट्रेट या न्यायिक मजिस्ट्रेट चाहे उसे मामले में अधिकारिता हो या न हो।

Q. क्या कोई ऐसा पुलिस अधिकारी जिसे तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन मजिस्ट्रेट की शक्ति प्रदान की गयी है, संस्वीकृतियों को अभिलिखित कर सकता है?

A. संहिता की धारा 164 (1) के परन्तुक के अनुसार नहीं।

Q. धारा 164 के अन्तर्गत संस्वीकृति अभिलिखित करने की प्रमुख शर्तें क्या हैं?

A. (i) संस्वीकृति अथवा कथन किसी महानगर मजिस्ट्रेट या न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया जा सकता है।

(ii) ऐसी संस्वीकृतियाँ या कथन अन्वेषण के दौरान, या जांच या विचारण के पूर्व अभिलिखित की जा सकती है।

(iii) संस्वीकृति को संहिता की धारा 281 के अनुसार अभिलिखित किया जाये।

(iv) मजिस्ट्रेट को यह समाधान कर लेना चाहिये कि संस्वीकृति स्वेच्छा से की गई है।

Q. संस्वीकृति को अभिलिखित करने से पूर्व मजिस्ट्रेट से क्या अपेक्षा की जाती है?

A. यह कि वह संस्वीकृति करने वाले व्यक्ति को समझा देगा कि....

(i) वह संस्वीकृति करने के लिए बाध्य नहीं है,

(ii) यदि वह संस्वीकृति करता है तो वह संस्वीकृति उसके विरुद्ध साक्ष्य के रूप में प्रयुक्त किया जा सकेगा।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत पुलिस अधिकारी द्वारा तलाशी लिये जाने का उपबन्ध है?

A. धारा 165 के अन्तर्गत।

Q. कोई पुलिस अधिकारी दूसरे पुलिस थाने की स्थानीय सीमाओं के अन्दर किसी स्थान की तलाशी धारा 165 के उपबन्धों के अनुसार कब ले सकेगा?

A. जब ऐसे पुलिस अधिकारी को यह समाधान हो जाय कि दूसरे पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी से तलाशी की अपेक्षा करने का परिणाम यह होगा कि अपराध किये जाने का साक्ष्य छिपा दिया जाये या नष्ट कर दिया जाए। (धारा 166 (3)।

Q. जब चौबीस घण्टे के अन्दर अन्वेषण पूरा नहीं किया जा सकता है और कोई व्यक्ति गिरफ्तारी के पश्चात् अभिरक्षा में है, तो अन्वेषणाधिकारी क्या प्रक्रिया अपनायेगा?

A. संहिता की धारा 167 के अनुसार ऐसी स्थिति में ऐसा अन्वेषणाधिकारी उस व्यक्ति को और मामले से सम्बन्धित प्रविष्टियों (केश डायरी) की प्रतिलिपि को निकटतम न्यायिक मजिस्ट्रेट के पास भेजेगा।

Q. क्या कोई ऐसा मजिस्ट्रेट भी अभियुक्त को प्रतिप्रेषित कर सकता है, जिसे उस मामले के विचारण की अधिकारिता न हो?

A. हां! यदि उसके पास अभियुक्त भेजा जाता है तो वह उसे पुलिस अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित कर सकता है? (धारा 167 (2))।

Q. कोई मजिस्ट्रेट अभियुक्त को पुलिस की अभिरक्षा में कितनी अवधि के लिए निरोध प्राधिकृत कर सकता है?

A. धारा 167 (2) के अनुसार ऐसा मजिस्ट्रेट अभियुक्त को पुलिस की अभिरक्षा में रखने के लिए उतनी अवधि के लिए समय-समय पर प्राधिकृत कर सकता है जो कुल मिलाकर 15 दिन से अधिक नहीं होगा।

Q. धारा 167 (2) में उल्लिखित 15 दिन की अवधि की अभिरक्षा की क्या प्रकृति होती है?

A. दिल्ली प्रशासन बनाम धर्मपाल, 1982 के वाद में यह कहा गया कि 15 दिन की प्रथम अवधि के दौरान अभिरक्षा की प्रकृति को न्यायिक अभिरक्षा से पुलिस अभिरक्षा में और पुलिस अभिरक्षा से न्यायिक अभिरक्षा में बदला जा सकता है।

Q. क्या 15 दिन की अवधि के पश्चात् भी अभियुक्त को पुलिस अभिरक्षा में रखा जा सकता है?

A. नहीं! जगती सत्यनारायण बनाम आन्ध्र प्रदेश, 1986 सु.को. के प्रकरण में उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि पन्द्रह दिन के पश्चात् अभियुक्त को केवल न्यायिक अभिरक्षा में या किसी अन्य अभिरक्षा में जैसा कि मजिस्ट्रेट आदेश दे, रखा जा सकता है, किन्तु उसे पुलिस अभिरक्षा में नहीं रखा जा सकता।

Q. धारा 167 के अधीन क्या 90 दिन या 60 दिन की अवधि के पश्चात् अभियुक्त को छोड़ दिया जायेगा?

A. इन अवधियों की समाप्ति के पश्चात् यदि अभियुक्त जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है तब उसे छोड़ दिया जायेगा परन्तु यदि जमानत नहीं देता है तो अभिरक्षा में उसका निरोध बना रहेगा।

Q. यदि यह प्रश्न उठता है कि क्या कोई अभियुक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था अथवा नहीं तो इसे कैसे साबित किया जा सकेगा?

A. इसे निरोध को प्राधिकृत करने वाले आदेश पर अभियुक्त का हस्ताक्षर लेकर साबित किया जा सकेगा। (धारा 167 स्पष्टी 02)।

Q. क्या कोई द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति का पुलिस की अभिरक्षा में निरोध प्राधिकृत कर सकेगा?

A. सामान्यतया नहीं! किन्तु उच्च न्यायालय द्वारा इस हेतु विशेषतया सशक्त किये जाने पर कर सकेगा। (धारा 167 परन्तुक (ग))।

Q. कोई कार्यपालक मजिस्ट्रेट किसी अभियुक्त का पुलिस अभिरक्षा में निरोध कितनी अवधि के लिए प्राधिकृत कर सकता है?

A. 7 दिन से अनधिक अवधि के लिए।

Q. मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय कोई समन मामला यदि अभियुक्त के गिरफ्तार किये जाने की तारीख से 6 मास की अवधि के भीतर समाप्त नहीं होता, तो मजिस्ट्रेट क्या करेगा?

A. धारा 167 (5) के अनुसार–वह उस मामले में अन्वेषण रोक देने का आदेश देगा जब तक उसका यह समाधान न हो जाय कि विशेष कारणों से न्याय के हित में आगे भी अन्वेषण जारी रखना आवश्यक है।

Q. धारा 167 (5) में दिये गये मजिस्ट्रेट के आदेश को कौन रद्द कर सकता है?

A. धारा 167 (6) के अनुसार सेशन न्यायालय उसे इस हेतु आवेदन किये जाने पर या अन्यथा समाधान हो जाने पर।

Q. जब अन्वेषण के पश्चात् पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी का यह विचार है कि अभियुक्त के विरुद्ध पर्याप्त साक्ष्य नहीं है या सन्देह का उचित आधार नहीं है, तो संहिता में क्या प्रक्रिया दी गयी है?

A. धारा 169 के अनुसार ऐसी दशा में वह अभियुक्त को जो अभिरक्षा में है, उसके द्वारा प्रतिभुओं सहित या रहित, बंधपत्र निष्पादित करने पर उसे छोड़ देगा।

Q. जब साक्ष्य पर्याप्त हो तो पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी किस धारा के उपबन्धों के अनुसार, अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के पास भेजता है?

A. संहिता की धारा 170 के उपबन्धानुसार।

Q. संहिता की धारा 172 किस बारे में उपबन्ध करती है?

A. यह धारा अन्वेषण में कार्यवाहियों की डायरी के बारे में उपबन्ध करती है इसे ही पुलिस डायरी की संज्ञा दी जाती है।

Q. किसी दण्ड न्यायालय की पुलिस डायरी के सम्बन्ध में क्या शक्ति है?

A. ऐसा दण्ड न्यायालय उसके समक्ष के किसी जांच या विचारण के अधीन के मामले में पुलिस डायरी को मँगा कर साक्ष्य के रूप में तो नहीं किन्तु अपनी सहायता के लिए उपयोग में ला सकता है।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा मजिस्ट्रेट को फाइनल रिपोर्ट भेज देती है?

A. धारा 173 की उपधारा (2) के अन्तर्गत।

Q. क्या धारा 173 (2) के अन्तर्गत फाइनल रिपोर्ट भेज देने के उपरान्त अन्वेषण समाप्त हुआ माना जायेगा?

A. नहीं! धारा 173 की उपधारा (2) के अनुसार पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी उसके पश्चात् भी कोई अतिरिक्त मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य मिलने पर अतिरिक्त रिपोर्ट मजिस्ट्रेट को भेज सकता है।

जांचों और विचारणों में दण्ड न्यायालयों की अधिकारिता

(Jurisdiction of the Criminal Courts in Inquiries and Trials)

(धारा 177-189)

अध्याय 13 में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है कि किसी अपराध की जांच या विचारण के लिए कौन-सा न्यायालय सक्षम होगा। इस अध्याय के उपबन्ध दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 8, 9 और 10 के अन्तर्गत की गई कार्यवाहियों पर लागू नहीं होते हैं।

जांच और विचारण का मामूली स्थान–धारा 177 के अनुसार प्रत्येक अपराध की जांच और विचारण मामूली तौर पर ऐसे न्यायालय द्वारा किया जाएगा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर वह अपराध किया गया है। किन्तु धारा 178 के अनुसार :

(क) जहां यह अनिश्चित है कि कई स्थानीय क्षेत्रों में से किसमें अपराध किया गया है, अथवा

(ख) जहां अपराध अंशतः एक स्थानीय क्षेत्र में और अंशतः किसी दूसरे में किया गया है, अथवा

(ग) जहां अपराध चालू रहने वाला है और उसका किया जाना एक से अधिक स्थानीय क्षेत्रों में चालू रहता है, अथवा।

(घ) जहां वह विभिन्न स्थानीय क्षेत्रों में किए गए कई कार्यों से मिलकर बनता है।

वहां उसकी जांच या विचारण ऐसे स्थानीय क्षेत्रों में से किसी पर अधिकारिता रखने वाले न्यायालय द्वारा किया जा सकता है।

धारा 179 के अनुसार जब कोई कार्य किसी की गई बात के और किसी निकले हुए परिणाम के कारण अपराध है तब ऐसे अपराध की जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसी बात की गई या ऐसा परिणाम निकला।

उदाहरणार्थ–'अ' व्यक्ति को 'क' नामक न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता के भीतर घायल किया जाता है और 'ख' नामक न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता के भीतर उसकी मृत्यु हो जाती है। यहां 'अ' पर किए गये आपराधिक मानव वध के अपराध का विचारण 'क' या 'ख' किसी भी न्यायालय द्वारा किया जा सकता है।

जब कोई कार्य किसी ऐसे अन्य कार्य से सम्बन्धित होने के कारण अपराध है, जो स्वयं भी अपराध है या अपराध होता यदि कर्त्ता अपराध करने के लिए समर्थ होता, तब प्रथम वर्णित अपराध की जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर उन दोनों में से कोई भी कार्य किया गया है। (धारा 180)।

उदाहरणार्थ–चूंकि चोरी एक अपराध है। अतः किसी चोरी की गई वस्तु को प्राप्त करना या अपने पास रोके रखना अपराध है। चूँकि यह अपराध चोरी के अपराध से जुड़ा होने के कारण ही अपराध है। अतः इस प्रकार चोरी की वस्तु को प्राप्त करना या उसे अपने पास रोके रखने के आरोप की जांच या विचारण ऐसे किसी भी न्यायालाय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर माल चुराया गया था या उसे प्राप्त किया गया या उसे रोक रखा गया था।

अपराध विशेष में विचारण स्थान धारा 181

(1) ठग होने के, या ठग द्वारा हत्या, के डकैती के, हत्या सहित डकैती के, डकैती की टोली का होने के, या अभिरक्षा से निकल भागने के किसी अपराध की जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर अपराध किया गया है या अभियुक्त व्यक्ति मिला है।

(2) किसी व्यक्ति के व्यपहरण या अपहरण के किसी अपराध की जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर वह व्यक्ति व्यपहृत या अपहृत किया गया या ले जाया गया या छिपाया गया या निरुद्ध किया गया है।

(3) चोरी, उद्दापन या लूट के किसी अपराध की जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसा अपराध किया गया है या चुराई हुई सम्पत्ति को जो कि अपराध का विषय है उसे करने वाले व्यक्ति द्वारा या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा कब्जे में रखी गई है जिसने उस सम्पत्ति को चुराई हुई सम्पत्ति जानते हुए या विश्वास करने का कारण रखते हुए प्राप्त किया या रखे रखा।

(4) आपराधिक दुर्विनियोग या आपराधिक न्यासभंग के किसी अपराध की जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर अपराध किया गया है या उस सम्पत्ति का, जो अपराध का विषय है; कोई भाग अभियुक्त व्यक्ति द्वारा प्राप्त किया गया या रखा गया है अथवा उसका लौटाया जाना अपेक्षित है।

(5) किसी ऐसे अपराध की जिसमें चुराई हुई सम्पत्ति का कब्जा भी है, जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसा अपराध किया गया है या चुराई हुई सम्पत्ति किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा कब्जे में रखी गयी है जिसने उसे चुराई हुई जानते हुए या विश्वास करने का कारण हुए प्राप्त किया या रखे रखा।

पत्रों आदि द्वारा किए गए अपराध–किसी ऐसे अपराध की, जिसमें छल करना भी है, जांच या उनका विचारण, उस दशा में जिसमें ऐसी प्रवंचना पत्रों या दूरसंचार संदेशों के माध्यम से की गई है, ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसे पत्र या सन्देश भेजे गए हैं या प्राप्त किए गए हैं तथा छल करने और बेईमानी से सम्पत्ति का परिदान उत्प्रेरित करने वाले किसी अपराध की जांच या उनका विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया गया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर सम्पत्ति, प्रवंचित व्यक्ति द्वारा परिदत्त की गई है या अभियुक्त व्यक्ति द्वारा प्राप्त की गई है। (धारा 182 (1)

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 494 या धारा 495 के अधीन दण्डनीय किसी अपराध की जांच या उनका विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर अपराध किया गया है या अपराधी ने प्रथम विवाह की अपनी पत्नी या पति के साथ अन्तिम बार निवास किया है या प्रथम विवाह की पत्नी अपराध के किए जाने के पश्चात् स्थायी रूप से निवास करती है। (धारा 182 (2))।

(6) यात्रा या जल यात्रा के दौरान कारित अपराध का विचारण स्थान–धारा 183. यदि कोई अपराध उस समय किया गया है जब वह व्यक्ति, जिसके द्वारा, या वह व्यक्ति जिसके विरुद्ध या वह चीज जिसके बारे में वह अपराध किया गया, किसी यात्रा या जलयात्रा पर है, तो उसकी जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, जिसकी स्थानीय अधिकारिता में होकर या उसके अन्दर वह व्यक्ति या चीज उस यात्रा या जलयात्रा के दौरान गई है।

इस अध्याय के पूर्ववर्ती उपबन्धों में किसी बात के होते हुए भी, राज्य सरकार निदेश दे सकती है कि ऐसे किन्हीं मामलों का या किसी वर्ग के मामलों का विचारण, जो किसी जिले में विचारणार्थ सुपुर्द हो चुके हैं, किसी भी सेशन खण्ड में किया जा सकता है;

परन्तु यह तब जब कि ऐसा निदेश उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय द्वारा संविधान के अधीन या इस संहिता के या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन पहले ही जारी किए गए किसी निदेश के विरुद्ध नहीं है। (धारा 185)।

जहां दो या अधिक न्यायालय एक ही अपराध का संज्ञान कर लेते हैं और यह प्रश्न उठता है कि उनमें से किसे उस अपराध की जांच या विचारण करना चाहिए वहां वह प्रश्न–

(क) यदि वे न्यायालय एक ही उच्च न्यायालय के अधीनस्थ हैं तो उस उच्च न्यायालय द्वारा;

(ख) यदि वे न्यायालय एक ही उच्च न्यायालय के अधीनस्थ नहीं है तो उस उच्च न्यायालय द्वारा जिसकी अपीली दाण्डिक अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के अन्दर कार्यवाही पहले प्रारम्भ की गई है,

विनिश्चित किया जाएगा, और तब उस अपराध के सम्बन्ध में अन्य सब कार्यवाहियां बन्द कर दी जाएगी। (धारा 186)।

कोई सक्षम न्यायालय किसी व्यक्ति के द्वारा कारित अनेक अपराधों का विचारण एक साथ कर सकता है धारा (184)। उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालयों के द्वारा निर्मित नियमों के अधीन राज्य सरकार विभिन्न सत्र खण्डों में मामलों के विचारण का आदेश दे सकती है (धारा 185)। स्थानीय अधिकारिता से परे किए गए अपराध के लिए कोई मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग सम्बन्धित व्यक्ति के विरुद्ध समन या वारण्ट जारी कर सकता है और तत्पश्चात् उसे समुचित मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रेषित कर देगा। यदि ऐसा मजिस्ट्रेट ऐसे मामले में निश्चय नहीं कर पाता है तो उसे रिपोर्ट के साथ उच्च न्यायालय को प्रेषित कर सकता है। (धारा 187)। जब कोई अपराध भारत से बाहर

(क) भारत के किसी नागरिक द्वारा चाहे खुले समुद्र पर या अन्यत्र अथवा

(ख) किसी व्यक्ति द्वारा, जो भारत का नागरिक नहीं है, भारत में रजिस्ट्रीकृत किसी पोत या विमान पर, किया जाता है तब उस अपराध के बारे में उसके विरुद्ध ऐसी कार्यवाही की जा सकती है मानो वह अपराध भारत के अन्दर उस स्थान में किया गया है जहां वह पाया गया है। परन्तु इस अध्याय की पूर्ववर्ती धाराओं में से किसी बात के होते हुए भी, ऐसे किसी अपराध की भारत में जांच या उसका विचारण केन्द्रीय सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना नहीं किया जाएगा। केन्द्र सरकार ऐसे मामलों में साक्ष्य ग्रहण के लिए निदेश दे सकती है। (धारा 189)।

प्रश्नकोश

Q. `A' एक मानहानिकारक लेख `B' के विरुद्ध जयपुर में लिखता है। लेख दिल्ली में प्रकाशित होता है। `A'किस स्थान पर अभियोजित किया जायेगा?

A. जयपुर या दिल्ली में (धारा 179)।

Q. दिल्ली निवासी `A', `B' के विरुद्ध कोलकाता में मानहानिकारक कथन प्रकाशित करता है। B, A के विरुद्ध वाद कहां ला सकता है?

A. दिल्ली या कोलकाता में। (धारा 179)।

Q. अ को सुल्तानपुर में क्षति कारित किया गया था। वह उन क्षतियों के कारण लखनऊ, जहां उसे इलाज के लिए लाया गया था, मर जाता है। इस मामले के विचारण के लिए किस स्थान के न्यायालय को क्षेत्राधिकार प्राप्त होगा?

A. सुल्तानपुर और लखनऊ दोनों को। धारा (79)।

Q. एक अवयस्क लड़की जो अपने पिता के साथ इंदौर में रहती थी, अभियुक्त से प्रेम सम्बन्ध होने पर उसके कहने से टैक्सी से अभियुक्त के साथ भोपाल आती है। कुछ दिन बाद वह अभियुक्त के साथ मुम्बई में स्थायी तौर पर रहने लगती है। व्यपहरण के अपराध का विचारण कहां होगा?

A. इन्दौर, भोपाल, मुंबई में से किसी भी एक स्थान पर। (धारा 181 (2)।

Q. A राजकोट-जबलपुर एक्सप्रेस रेलगाड़ी में भोपाल से जबलपुर जा रहा था। इटारसी स्टेशन पर, A ने B को, जो जबलपुर का रहने वाला था, गम्भीर चोट कारित कर दी। इस अपराध का परीक्षण किस न्यायालय में होगा?

A. इटारसी। (धारा 183)।

Q. एक ब्रिटिश नागरिक ने भारत में पंजीकृत विमान पर अपराध किया है। अपराधी के विरुद्ध दण्ड प्रक्रिया संहिता के किस धारा के अन्तर्गत कार्यवाही किया जा सकता है?

A. धारा 188।

Q. `A' जो कि भारत का नागरिक है, इंग्लैंड में एक हत्या करता है। वह इन्दौर में पाये जाने पर पुलिस के द्वारा गिरफ्तार किया जाता है। `A' को हत्या के लिए कहां विचारित किया जायेगा?

A. इन्दौर में। (धारा 188)।

Q. न्यायालयों की स्थानीय अधिकारिता के सन्दर्भ में मूल सिद्धान्त अध्याय 13 की किस धारा में सन्निविष्ट किया गया है?

A. धारा 177 में।

Q. प्रत्येक अपराध की जांच और विचारण मामूली तौर पर किस न्यायालय द्वारा किया जायेगा?

A. धारा 177 के अनुसार ऐसे न्यायालय द्वारा किया जायेगा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर वह अपराध किया गया है।

Q. जहां यह अनिश्चित है कि कई स्थानीय क्षेत्रों में से किसमें अपराध किया गया है अथवा जहां अपराध एक न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता के भीतर प्रारम्भ किया जाता है और दूसरे न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता में पूरा किया जाता है, तो ऐसे अपराध का विचारण इस न्यायालय द्वारा किया जायेगा।

A. ऐसी स्थिति में ऐसे अपराध का विचारण ऐसे स्थानीय क्षेत्रों से किसी पर अधिकारिता रखने वाले न्यायालय द्वारा किया जा सकता है। (धारा 178)।

Q. जब कोई कार्य किसी की गयी बात के और किसी निकले हुए परिणाम के कारण अपराध है तब ऐसे अपराध की जांच या विचारण किस न्यायालय द्वारा की जा सकेगी?

A. ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकेगा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसी बात की गयी या ऐसा परिणाम निकला। (धारा 179)।

Q. 'श्याम' को 'क' नामक न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता के अन्दर घायल किया गया, उसकी मृत्यु 'ख' नामक स्थानीय न्यायालय की अधिकारिता के भीतर हुई। 'श्याम' के अपराधिक मानव का विचारण किस न्यायालय में होगा?

A. 'क' अथवा 'ख' में से किसी भी न्यायालय में।

Q. ठग होने या ठग द्वारा हत्या, डकैती के, हत्या सहित डकैती के, डकैतों की टोली का होने के या अभिरक्षा से निकल भागने के किसी अपराध की विचारण या जांच किस न्यायालय द्वारा किया जा सकता है?

A. ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर अपराध किया गया है या अभियुक्त व्यक्ति मिला है। (धारा 181)।

Q. किसी व्यक्ति के अपहरण या व्यपहरण के किसी अपराध का विचारण किस न्यायालय द्वारा किया जा सकता है?

A. ऐसे न्यायालय द्वारा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर वह व्यक्ति अपहृत या व्यपहृत किया गया या ले जाया गया या छिपाया गया या निरुद्ध किया गया है। (धारा 181 (2)।

Q. किसी ऐसे, अपराध की, जिसमें छल करना भी है, जांच या विचारण, उस दशा में 'जिसमें' ऐसी प्रवंचना, पत्रों या दूर संचार सन्देशों के माध्यम से की गयी है, किस न्यायालय द्वारा किया जा सकेगा?

A. उस न्यायालय द्वारा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसे पत्र या सन्देश भेजे गये हैं या प्राप्त किये गये हैं और छल की स्थिति में उसके घर जहां सम्पत्ति परिदत्त की गयी या प्राप्त की गयी है। (धारा 182)।

Q. भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 494 या धारा 495 के अधीन दण्डनीय किसी अपराध की जांच या उनका विचारण किस न्यायालय द्वारा किया जा सकेगा?

A. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 182 (2) के अनुसार–ऐसे न्यायालय द्वारा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर द्विविवाह का अपराध किया गया है, अथवा अपराधी ने प्रथम विवाह की अपनी पत्नी या पति के साथ अन्तिम बार निवास किया है, अथवा प्रथम विवाह की पत्नी ने अपराध कारित होने के पश्चात् स्थायी निवास ग्रहण कर लिया है।

Q. जब कोई अपराध, किसी व्यक्ति द्वारा या किसी व्यक्ति के विरुद्ध या चीज के बारे में उस समय किया जाता हैं जब वह यात्रा या जलयात्रा पर है तो उसकी जांच या विचारण किस न्यायालय द्वारा किया जा सकता है?

A. ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, जिसकी स्थानीय अधिकारिता में होकर या जिसके अन्दर वह व्यक्ति या चीज उस यात्रा या जलयात्रा के दौरान गयी है। (धारा 183)।

Q. संहिता की धारा 184 किन अपराधों के सम्बन्ध में जांच एवं विचारण की व्यवस्था करती है?

A. धारा 184 एक साथ विचारणीय अपराधों एवं व्यक्तियों के लिए विचारण के स्थान की व्यवस्था करती है। इसके अनुसार एक साथ विचारणीय अपराधों के लिए जांच या विचारण ऐसे न्यायालयों द्वारा किया जा सकता है जो उन अपराधों में से किसी की जांच या विचारण करने के लिए सक्षम है।

Q. जहां दो या अधिक न्यायालय एक ही अपराध का संज्ञान कर लेते हैं और प्रश्न उठता है कि दोनों में से किसे उस अपराध की जांच या विचारण करना चाहिए, तो वह प्रश्न किसके द्वारा विनिश्चित किया जायेगा?

A. ऐसी स्थिति में धारा 186 के अनुसार–

(i) यदि वे न्यायालय एक ही उच्च न्यायालय के अधीनस्थ है तो उस उच्च न्यायालय द्वारा,

(ii) यदि वे न्यायालय एक ही उच्च न्यायालय के अधीनस्थ नहीं है, तो उस उच्च न्यायालय द्वारा जिसकी अपीली दाण्डिक अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के अन्दर कार्यवाही पहले प्रारम्भ की गयी है। विनिश्चित किया जायेगा।

Q. स्थानीय अधिकारिता से परे किये गये किसी अपराध के लिए समन या वारण्ट जारी करने की शक्ति किसे हैं?

A. धारा 187 के अनुसार–प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट को।

Q. जब कोई अपराध भारत से बाहर, किसी व्यक्ति द्वारा, जो भारत का नागरिक नहीं है, भारत में रजिस्ट्रीकृत किसी पोत या विमान पर किया जाता है, तब उस अपराध के बारे में उस व्यक्ति के विरुद्ध कैसे कार्यवाही की जायेगी?

A. उस व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही ऐसे की जायेगी मानों वह अपराध भारत के अन्दर उस स्थान में किया गया है, जहां वह पाया गया है। (धारा 188)।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत भारत से बाहर किये गये अपराधों के बारे में साक्ष्य लेने की प्रक्रिया विहित है?

A. संहिता की धारा 189 में।

कार्यवाहियां शुरू करने के लिए अपेक्षित शर्तें (Conditions Requisite for Initiation of Proccedings) (धारा-190-199)

संहिता के अध्याय 14 (धारा 190-199) में उन शर्तों का उल्लेख किया गया है जो किसी अपराध के विचारण की कार्यवाही प्रारम्भ किए जाने के पूर्व अपेक्षित है। इस अध्याय का उद्देश्य उन तरीकों और परिसीमाओं का वर्णन करना है, जिनसे और जिनके अधीन रहते हुए विभिन्न दण्ड न्यायालयों को अपराधों का संज्ञान ग्रहण करने के लिए सशक्त किया गया है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा इस अध्याय में एक नयी धारा 195-क अन्तःस्थापित करके साक्षियों के लिए धमकी दिए जाने के मामलों में अपनायी जाने वाली प्रक्रिया का उपबंध भी जोड़ा गया है। इसके अलावा इसी संशोधन के द्वारा धारा 198(6) के प्रयोजन के लिए वयस्कता की आयु जो पहले 15 वर्ष थी, को बढ़ाकर 18 वर्ष कर दी गयी है।

मजिस्ट्रेटों द्वारा अपराधों का संज्ञान–(1) इस अध्याय के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट और उपधारा (2) के अधीन विशेषतया संशक्त किया गया कोई द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट किसी भी अपराध का संज्ञान निम्नलिखित दशाओं में कर सकता है–

(क) उन तथ्यों का, जिनमें ऐसा अपराध बनता है परिवाद प्राप्त होने पर,

(ख) ऐसे तथ्यों के बारे में पुलिस रिपोर्ट पर;

(ग) पुलिस अधिकारी से भिन्न किसी व्यक्ति से प्राप्त इस इत्तिला पर या स्वयं अपनी इस जानकारी पर कि ऐसा अपराध किया गया है। (धारा 190 (1))।

मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट किसी द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट को ऐसे अपराधों का, जिनकी जांच या विचारण करना उसकी क्षमता के अन्दर है, उपधारा (1) के अधीन संज्ञान करने के लिए सशक्त कर सकता है। (धारा 190 (2))।

अभियुक्त के आवेदन पर अन्तरण–अपराध का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्त को यह बताने पर कि वह मामले का विचारण अन्य मजिस्ट्रेटों से करा सकता है, यदि अभियुक्त द्वारा इस सम्बन्ध में आवेदन दिया जाता है तो ऐसे मजिस्ट्रेट द्वारा उस अन्य मजिस्ट्रेट को मामला अन्तरित कर दिया जायेगा जो कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट किया गया हो। (धारा 191)।

कोई मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, अपराध का संज्ञान करने के पश्चात् मामले को जांच या विचारण के लिए अपने अधीनस्थ किसी सक्षम मजिस्ट्रेट के हवाले कर सकता है। (192(1))।

मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा इस निमित्त सशक्त किया गया कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट, अपराध का संज्ञान करने के पश्चात्, मामले की जांच या विचारण के लिए अपने अधीनस्थ किसी ऐसे सक्षम मजिस्ट्रेट के हवाले क सकता है। (धारा 192 (2))।

अपराधों का सत्र न्यायालय द्वारा संज्ञान–कोई सेशन न्यायालय आरम्भिक अधिकारिता वाले न्यायालय के रूप में किसी अपराध का संज्ञान तब तक नहीं करेगा जब तक मामला इस संहिता के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा उसके सुपुर्द नहीं कर दिया गया है। (धारा 193)

लोक न्याय के विरुद्ध अपराधों के लिए और साक्ष्य में दिए गए दस्तावेजों से सम्बन्धित अपराधों के लिए लोक सेवकों के विधिपूर्ण प्राधिकार के अवमान के लिए अभियोजन के मामलों का संज्ञान सम्बन्धित प्राधिकृत न्यायालय या उसके द्वारा प्राधिकृत अधिकारी के लिखित परिवाद पर ही किया जायेगा अन्यथा नहीं। (धारा 195 (1)। इस धारा के प्रयोजन के लिए न्यायालय के अन्तर्गत कोई भी सिविल, राजस्व, दण्ड न्यायालय तथा न्यायाधिकरण भी आते है।

संहिता में वर्ष 2008 के संशोधन के द्वारा यह भी प्रावधान किया गया है कि ''कोई साक्षी या कोई अन्य व्यक्ति धारा 195 के अन्तर्गत किसी अपराध के सम्बन्ध परिवाद प्रस्तुत कर सकेगा। (धारा 195-क)।

राज्य के विरुद्ध अपराधों के लिए और ऐसे अपराध करने के लिए आपराधिक षड्यंत्र के लिए अभियोजन के मामलों में यथास्थिति केन्द्र सरकार/राज्य सरकार या जिला मजिस्ट्रेट की पूर्व अनुमति आवश्यक है। (धारा 196)।

न्यायाधीशों और लोक सेवकों का अभियोजन–धारा 197 के अनुसार जब किसी व्यक्ति पर, जो न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट या ऐसा लोक सेवक है या था जिसे सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी से ही उसके पद से हटाया जा सकता है अन्यथा नहीं, किसी ऐसे अपराध का अभियोग है जिसके बारे में यह अभिकथित है कि वह उसके द्वारा तब किया गया था जब वह अपने पदीय कर्त्तव्य के निर्वहन में कार्य कर रहा था जब उसका ऐसे कार्य करना तात्पर्यित था, तब कोई भी न्यायालय ऐसे अपराध का संज्ञान–

(क) ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो संघ के कार्य-कलाप के सम्बन्ध में नियोजित है या अभिकथित अपराध के लिए जाने के समय नियोजित था, केन्द्रीय सरकार की,

(ख) ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो किसी राज्य के कार्य-कलाप के सम्बन्ध यथास्थिति, नियोजित है या अभिकथित अपराध के किए जाने के समय नियोजित था, उस राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी से ही करेगा, अन्यथा नहीं।

परन्तु जहां अभिकथित अपराध खण्ड (ख) में निर्दिष्ट किसी व्यक्ति द्वारा उस अवधि के दौरान किया गया था जब राज्य में संविधान के अनुच्छेद 356 के खण्ड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा प्रवृत्त थी, वहां खण्ड (ख) इस प्रकार लागू होगा मानो उसमें आने वाले **''राज्य सरकार''** पद के स्थान पर **''केन्द्रीय सरकार''** पद रख दिया गया है।

विवाह के विरुद्ध अपराधों के लिए अभियोजन–कोई न्यायालय भारतीय दण्ड संहिता के अध्याय 20 के अधीन दण्डनीय अपराध का संज्ञान ऐसे अपराध से व्यथित किसी व्यक्ति द्वारा किए गए परिवाद पर ही करेगा, अन्यथा नहीं;

परन्तु (क) जहां ऐसा व्यक्ति अठारह वर्ष से कम आयु का है अथवा जड़ या पागल है अथवा रोग या अंग-शैथिल्य के कारण परिवाद करने के लिए असमर्थ है, या ऐसी स्त्री है जो स्थानीय रूढ़ियों और रीतियों के अनुसार लोगों के सामने आने के लिए विवश नहीं की जानी चाहिए वहां उसकी ओर से कोई अन्य व्यक्ति न्यायालय की इजाजत से परिवाद कर सकता है;

(ख) जहां ऐसा व्यक्ति पति है, और संघ के सशस्त्र बलों में से किसी में से ऐसी परिस्थितियों में सेवा कर रहा है जिनके बारे में उसके कमान ऑफिसर ने यह प्रमाणित किया है कि उनके कारण उसे परिवाद कर सकने के लिए अनुपस्थिति छुट्टी प्राप्त नहीं हो सकती, वहां पति द्वारा प्राधिकृत कोई अन्य व्यक्ति उसकी ओर से परिवाद कर सकता है;

(ग) जहां भारतीय दण्ड संहिता की धारा 494 या धारा 495 के अधीन दण्डनीय अपराध से व्यथित पत्नी है वहां उसकी ओर से उसके पिता, माता, भाई, बहिन, पुत्र या पुत्री या उसके पिता या माता के भाई या बहिन द्वारा या न्यायालय की इजाजत से, किसी ऐसे अन्य व्यक्ति द्वारा, जो उसके रक्त, विवाह या दत्तक द्वारा सम्बन्धित है, परिवाद किया जा सकता है। (धारा 198)।

कोई न्यायालय भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध का संज्ञान, जहां ऐसा अपराध किसी पुरुष द्वारा पन्द्रह वर्ष से कम आयु की अपनी ही पत्नी के साथ मैथुन है उस दशा में न करेगा जब उस अपराध के किए जाने की तारीख से एक वर्ष से अधिक समय व्यतीत हो चुका है।

मानहानि के लिए अभियोजन–कोई न्यायालय भारतीय दण्ड संहिता के अध्याय 21 के अधीन दण्डनीय अपराध का संज्ञान ऐसे अपराध के से व्यथित किसी व्यक्ति द्वारा किए गए परिवाद पर ही करेगा, अन्यथा नहीं :

परन्तु जहां ऐसा व्यक्ति अठारह वर्ष से कम आयु का है अथवा जड़ या पागल है अथवा रोग या अंग-शैथिल्य के कारण परिवाद करने के लिए असमर्थ है, या ऐसी स्त्री है, जो स्थानीय रूढ़ियों के रीतियों के अनुसार लोगों के सामने आने के लिए विवश नहीं की जानी चाहिए, वहां उसकी ओर से कोई अन्य व्यक्ति न्यायालय की इजाजत से परिवाद कर सकता है। (धारा 199 (1))

इस संहिता में किसी बात के होते हुए भी जब भारतीय दण्ड संहिता के अध्याय 21 के अधीन आने वाले किसी अपराध के बारे में यह अभिकथित है कि वह ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध, जो ऐसा अपराध किए जाने के समय भारत का राष्ट्रपति, या उपराष्ट्रपति या किसी संघ राज्य क्षेत्र का प्रशासक या संघ या किसी राज्य का या किसी संघ राज्यक्षेत्र का मंत्री अथवा संघ या किसी राज्य के कार्य-कलापों के सम्बन्ध में नियोजित अन्य लोक सेवक था, उसके लोक कृत्यों के निर्वहन में उसके आचरण के सम्बन्ध में किया गया है तब सेशन न्यायालय ऐसे अपराध का संज्ञान, उसको मामला सुपुर्द हुए बिना, लोक अभियोजक द्वारा किए गए लिखित परिवाद पर कर सकता है। (धारा 199(2))

कोई सेशन न्यायालय अध्याय 21 के अधीन आने वाले किसी अपराध का संज्ञान तभी करेगा जब परिवाद उस तारीख से छह मास के अन्दर कर दिया जाता है जिसको उस अपराध का किया जाना अभिकथित है। (धारा 199) (5)।

प्रश्नकोश

Q. किसी भी अपराध का संज्ञान लेने के लिए कौन न्यायालय सशक्त हैं?

A. प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट और मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के द्वारा सशक्त किया गया (धारा 190(2)) कोई द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट। (धारा 190(1)।

Q. जजों और लोक सेवकों को अभियोजित करने के सम्बन्ध में प्रावधान किस धारा में है?

A. धारा 197 में।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के किस धारा में विवाह के विरुद्ध अपराध के लिए अभियोजन के सम्बन्ध में प्रावधान है?

A. धारा 198।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 199(2) के अन्तर्गत संस्थित मामले में अपनायी गयी विचारण की प्रक्रिया कैसी होती है?

A. पुलिस रिपोर्ट से अन्यथा संस्थित वारण्ट मामले के विचारण जैसा। धारा 237(1)।

Q. संज्ञान से सम्बन्धित, उपबन्ध संहिता के किस अध्याय एवं किन धाराओं में व्यवस्थित है?

A. अध्याय, 14 के धारा 190, 191, 192, 193, 194, 195, 196, 197. 198, 198A एवं धारा 199 तक में व्यवस्थित है।

Q. ''संज्ञान'' शब्द का सामान्य अर्थ क्या होता है?

A. सामान्य शब्दों में किसी बात को अपनी जानकारी में कर लेना ही संज्ञान है और जब इसका प्रयोग किसी न्यायालय अथवा न्यायाधीश के सन्दर्भ में होता है तो इसका तात्पर्य न्यायिक सूचना या प्रज्ञान ग्रहण करना है।

अजीत कुमार पाटिल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, 1963 के वाद में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि संज्ञान का शाब्दिक अर्थ होता है, ध्यान देना, अर्थात् जब कोई मजिस्ट्रेट किसी तथ्य पर इसलिए ध्यान देता है कि उस पर उसके द्वारा कार्यवाही किया जा सकता है। जिस समय यह बात उसके मस्तिष्क में आ जाती है कि इस प्रकार संहिता के अधीन कार्यवाही की जा सकती है तो इसे ही संज्ञान लेना कहते हैं।

Q. संज्ञान किन दिशाओं में किया जा सकता है?

A. संहिता की धारा 190 (1) के अनुसार–(i) इन तथ्यों के बारे में, जिनसे अपराध का गठन होता है, परिवाद प्राप्त होने पर, (ii) ऐसे तथ्यों के बारे में पुलिस रिपोर्ट पर, (iii) इत्तिला प्राप्त होने पर, (iv) स्वयं की जानकारी पर कि ऐसा अपराध किया गया है।

Q. संज्ञान के सन्दर्भ में गिरिजा शंकर बनाम पतिराम, 1977 क्रि.लॉ.ज. के वाद में क्या धारित किया गया?

A. इस वाद में धारित किया गया कि ''जब कि मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट से इंकार कर देता है और किसी अन्य स्रोत से संज्ञान लेता है, तो यह अवैधानिक नहीं होगा।

Q. किस वाद में यह कहा गया कि ''पुलिस के अन्तिम रिपोर्ट को दरकिनार करके मजिस्ट्रेट अपने ज्ञान पर मामले को संज्ञान में ले सकता है, यह अवैध नहीं होगा?

A. राजू उर्फ राजेन्द्र सिंह बनाम स्टेट ऑफ राजस्थान राज्य, 1980 सी.एल.आर. के वाद में कहा गया है।

Q. जब मजिस्ट्रेट किसी अपराध का संज्ञान धारा 190 की उपधारा (1) के खण्ड (ग) के अधीन करता है, तब कोई साक्ष्य लेने के पहले अभियुक्त को क्या सूचना दी जायेगी?

A. यह कि वह मामले को किसी अन्य मजिस्ट्रेट से जांच या विचारण कराने का हकदार है। (धारा 191)।

Q. संहिता की धारा 191 के अन्तर्गत अभियुक्त के आवेदन पर मामले का अन्य मजिस्ट्रेट को अन्तरण किसके द्वारा किया जाता है?

A. मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा।

Q. धारा 191 के अन्तर्गत विहित की गयी मामले के अन्तरण की व्यवस्था किस लोकनीति पर आधारित है?

A. इस लोकनीति पर आधारित है कि ''न्याय प्रशासन को सदैव पक्षपात रहित होना चाहिए''।

Q. धारा 192 की उपधारा (1) के अन्तर्गत कौन सा मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान करने के पश्चात् उसकी जांच या विचारण के लिए अधीनस्थ सक्षम मजिस्ट्रेट के हवाले कर सकता है?

A. कोई मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट।

Q. कोई सेशन न्यायालय आरम्भिक अधिकारिता वाले न्यायालय के रूप में किसी अपराध का संज्ञान कब करेगा?

A. संहिता की धारा 193 के अनुसार जब इस संहिता के अधीन मामला मजिस्ट्रेट द्वारा उसको सुपुर्द कर दिया जाता है, जब तक कि कोई आपवादिक स्थिति न हो।

Q. क्या सेशन न्यायालय सीधे तौर पर भी अपराध का संज्ञान ले सकेगा?

A. हां! धारा 199 (2) के अन्तर्गत जब मामला अत्यधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों, जैसे राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, राज्यपाल, संघ या राज्य के मन्त्री या मन्त्रियों, से सम्बन्धित हो, तब सेशन न्यायालय ऐसे अपराध का संज्ञान उसको मामला सुपुर्द हुए बिना लोक अभियोजक द्वारा किये गये लिखित परिवाद पर कर सकता है।

Q. जहां अपराध भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 172 से 180 के अन्तर्गत दण्डनीय है, या उन अपराधों का प्रयत्न, दुष्प्रेरण या आपराधिक षड्यन्त्र के लिए है, तो न्यायालय उसका संज्ञान किसके परिवाद पर करेगा?

A. ऐसे अपराधों का संज्ञान न्यायालय सम्बन्धित लोक सेवक का उसके प्राधिकारी के लिखित परिवाद पर ही करेगा अन्यथा नहीं (धारा 195)।

Q. ऐसा अपराध जो 2 वर्ष से अधिक अवधि के कठिन कारावास से भारतीय दण्ड संहिता की धारा 120 (ब) के अन्तर्गत दण्डनीय है तो उसके आपराधिक षड्यन्त्र को छोड़कर किसी अपराध का संज्ञान न्यायालय कब करेगा?

A. ऐसे अपराध का संज्ञान न्यायालय तभी करेगा जबकि राज्य सरकार या जिला मजिस्ट्रेट ने कार्यवाही शुरु करने की लिखित सम्मति दे दी हो, किन्तु यदि आपराधिक षड्यन्त्र धारा 195 के सम्बन्ध में है तो, कोई सम्मति आवश्यक न होगी। (धारा 196)।

Q. जब किसी न्यायाधीश या लोक सेवक के ऊपर ऐसे किसी अपराध के किये जाने का अभियोग है, जिसे उसके द्वारा अपने कर्त्तव्याधीन होने पर या पदाभिधान के दौरान किया जाना अभिकथित है, तब ऐसे मामलों का संज्ञान कैसे किया जायेगा?

A. ऐसी स्थिति में ऐसे मामलों का संज्ञान यथास्थिति राज्य या केन्द्र सरकार की पूर्व मंजूरी से ही किया जायेगा अन्यथा नहीं। (धारा 197)।

Q. शम्भूनाथ मिश्रा बनाम बिहार राज्य, 1997 सु.को. के प्रकरण में क्या धारित किया गया?

A. इस प्रकरण में कहा गया कि धारा 197 का संरक्षण सिर्फ ईमानदार एवं कर्मठ लोक सेवकों को ही प्राप्त है। इसका उद्देश्य कर्त्तव्यनिष्ठ एवं मेहनती तथा ईमानदार लोक सेवकों को अनावश्यक परेशानी से सुरक्षा प्रदान करना है न कि बेईमान एवं कामचोर लोक सेवकों को।

Q. भारतीय दण्ड संहिता; 1860 के अध्याय 20 के तहत् विवाह के विरुद्ध किये गये अपराधों का संज्ञान किसके परिवाद पर किया जायेगा?

A. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 98 के अनुसार - व्यथित व्यक्ति के द्वारा किये गये परिवाद पर ही किया जायेगा अन्यथा नहीं।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 198 के अन्तर्गत कब कोई व्यथित व्यक्ति से अन्यथा न्यायालय की इजाजतइ से परिवाद कर सकेगा?

A. धारा 198 के परन्तुक (क) के अनुसार जहां ऐसा व्यथित व्यक्ति अवयस्क है, जड़ या पागल है, या अंग-शैथिल्य के कारण परिवाद करने में असमर्थ है, या कोई पर्दानशीन स्त्री है।

Q. जबकि भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 494 या 495 के तहत् दण्डनीय अपराध से व्यथित व्यक्ति पत्नी है, वहां परिवाद कौन कर सकेगा?

A. ऐसी स्थिति में उसकी ओर से उसके माता-पिता, भाई-बहन, पुत्र-पुत्री, अथवा न्यायालय की इजाजत से उससे रक्त-विवाह या दत्तक-ग्रहण से सम्बन्धित कोई व्यक्ति परिवाद कर सकता है।

Q. संहिता की धारा 198 की उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए कौन व्यक्ति भारतीय दण्ड संहिता की धारा 497 एवं 498 के अधीन दण्डनीय अपराध से व्यथित समझा जायेगा?

A. उस स्त्री का पति। (धारा 198 (2))।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता में धारा 198 (क) कब प्रतिस्थापित की गयी?

A. यह धारा आपराधिक विधि संशोधन अधिनियम 1983 द्वारा प्रतिस्थापित की गयी?

Q. संहिता की धारा 198 (क) क्या उपबन्धित करती है?

A. यह धारा उपबन्धित करती है कि जब अपराध भारतीय दण्ड संहिता की धारा 498 (क) के तहत् दण्डनीय है, तब कोई न्यायालय उस अपराध का गठन करने वाले तथ्यों के विषय में पुलिस रिपोर्ट पर या व्यथित व्यक्ति के परिवाद पर या उसके माता-पिता, भाई-बहन, पिता के भाई या बहन, अथवा न्यायालय की अनुमति से रक्त, विवाह, अथवा दत्तक ग्रहण से सम्बन्धित किसी अन्य व्यक्ति के परिवाद पर ही विचारण करेगा अन्यथा नहीं।

Q. संहिता की धारा 199 (1) में क्या उपबन्धित है?

A. भारतीय दण्ड संहिता, 1860 के अध्याय 21 के तहत् दण्डनीय अपराध का संज्ञान कोई न्यायालय व्यथित व्यक्ति के परिवाद पर ही करेगा, अन्यथा नहीं, किन्तु यदि वह अवयस्क, पागल या किसी असमर्थता का शिकार है, या पर्दानशीन स्त्री है, तो न्यायालय की अनुमति से अन्य व्यक्ति के परिवाद पर भी कर सकेगा।

Q. जहां पर भारतीय दण्ड संहिता 1860 के अध्याय 21 के तहत अपराध भारत के राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, या राज्य के राज्यपाल या उपराज्यपाल या संघ क्षेत्र के प्रशासक या केन्द्र या राज्य सरकार के मन्त्री या नियोजित लोक सेवकों के विरुद्ध किया जाना अभिकथित है जो ऐसे अपराध का संज्ञान किसके परिवाद पर किया जायेगा?

A. ऐसी स्थिति में राज्य या केन्द्र सरकार की यथास्थिति पूर्व मंजूरी से लोक अभियोजक के लिखित परिवाद पर ही किया जायेगा।

Q. कोई सेशन न्यायालय संहिता की धारा 199 (2) के तहत किसी अपराध का संज्ञान कब करेगा?

A. इस उपधारा के अधीन सेशन न्यायालय अपराध का संज्ञान तभी करेगा, जब परिवाद ऐसे अपराध के किये जाने की तारीख से 6 मास के अन्दर कर दिया जाय।

मजिस्ट्रेटों से परिवाद (Complaints to Magistrates)

(धारा 200-203)

संहिता के अध्याय 15 (धारा 200-203) के अन्तर्गत उन प्रक्रियाओं का उल्लेख किया गया है जब मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान लेने के लिए कोई परिवाद किया जाता है। इस अध्याय के अधीन मजिस्ट्रेट निम्न प्रक्रिया का अनुपालन करेगा–

परिवादी की परीक्षा–परिवाद पर किसी अपराध का संज्ञान करने वाला मजिस्ट्रेट, परिवादी की और यदि कोई साक्षी उपस्थित है तो उनकी शपथ पर परीक्षा करेगा और ऐसी परीक्षा का सारांश लेखबद्ध किया जाएगा और यरिवादी और साक्षियों द्वारा तथा मजिस्ट्रेट द्वारा भी हस्ताक्षरित किया जाएगा। लिखित परिवाद किये जाने पर मजिस्ट्रेट के लिए परिवादी या साक्षियों की परीक्षा करना आवश्यक न होगी यदि परिवाद अपने कर्त्तव्यों के निर्वहन में कार्य करने वाले अथवा कार्य करने का तात्पर्य रखने वाले लोक सेवक द्वारा या न्यायालय द्वारा किया गया है; या यदि मजिस्ट्रेट जांच अथवा विचारण के लिए मामले को धारा 192 के अन्तर्गत किसी अन्य मजिस्ट्रेट को **सुपुर्द (Makeover)** कर देता है।

यदि मजिस्ट्रेट या साक्षियों की परीक्षा करने के बाद मामले को धारा 192 के अन्तर्गत किसी अन्य मजिस्ट्रेट को सुपुर्द करता है, तो बाद वाले मजिस्ट्रेट के लिए उनकी पुनः परीक्षा करना जरूरी नहीं है। (धारा 200)।

धारा-201 के अनुसार यदि परिवाद ऐसे मजिस्ट्रेट को किया जाता है जो उस अपराध का संज्ञान करने के लिए सक्षम नहीं है तो–

(क) यदि परिवाद लिखित है तो वह उसको समुचित न्यायालय में पेश करने के लिए, उस भाव के पृष्ठांकन सहित, लौटा देगा।

(ख) यदि परिवाद लिखित नहीं है तो वह परिवादी को उचित न्यायालय में जाने का निदेश देगा,।

आदेशिका जारी किया जाना मुल्तवी होना-धारा 202, यदि कोई मजिस्ट्रेट ऐसे अपराध का परिवाद प्राप्त करने पर, जिसका संज्ञान करने के लिए वह प्राधिकृत है या जो धारा 192 के अधीन उसके हवाले किया गया है, ठीक समझता है और ऐसे मामले में जहां अभियुक्त ऐसे किसी स्थान में निवास कर रहा है जो उस क्षेत्र से परे है जिसमें वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है तो अभियुक्त के विरुद्ध आदेशिका का जारी किया जाना मुल्तवी कर सकता है और यह विनिश्चित करने के प्रयोजन से कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है अथवा नहीं, या तो स्वयं ही मामले की जांच कर सकता है या किसी पुलिस, अधिकारी द्वारा या अन्य ऐसे व्यक्ति द्वारा, जिसको वह ठीक समझे, अन्वेषण किये जाने के लिए निदेश दे सकता है:

परन्तु अन्वेषण के लिए ऐसा कोई निदेश वहां नहीं दिया जाएगा–

(क) जहां मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि वह अपराध जिसका परिवाद किया गया है अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है; अथवा

(ख) जहां परिवाद किसी न्यायालय द्वारा नहीं किया गया है जब तकिक परिवादी की या उपस्थिति साक्षियों की धारा 200 के अधीन शपथ पर परीक्षा नहीं कर ली जाती है।

यदि उपधारा (1) के अधीन अन्वेषण किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा किया जाता है जो पुलिस अधिकारी नहीं है तो उस अन्वेषण के लिए उसे बिना वारण्ट गिरफ्तार करने की शक्ति के सिवाय पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को प्रदत्त सभी शक्तियाँ होगी। [धारा 202(3)]।

परिवाद का खारिज किया जाना–यदि परिवादी के और साक्षियों के शपथ पर किए गए कथन पर और धारा 202 के अधीन जांच या अन्वेषण के परिणाम पर विचार करने के पश्चात्, मजिस्ट्रेट की यह राय है कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है तो वह कारणों को संक्षेप में अभिलिखित करते हुये परिवाद खारिज कर देगा। (धारा 203)।

प्रश्नकोश

Q. मजिस्ट्रेट किसी अपराध का परिवाद प्राप्त करने पर क्या करेगा?

A. परिवादियों से अपने सब साक्षियों को पेश करने की अपेक्षा करेगा और उनकी शपथ पर परीक्षा करेगा यदि वह अपराध जिसका परिवाद किया गया है, अनन्यतः सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय है। (धारा 202, परन्तुक)।

Q. एक अभियोग पत्र प्राप्त होने के बाद दण्डाधिकारी को ज्ञात हुआ कि प्रकरण सत्र न्यायालय के द्वारा विचारणीय है? उसके द्वारा की गयी कौन सी कार्यवाही विधि सम्मत होगी?

A. वह, जिसमें उसने अभियोगी को उसके समक्ष साक्ष्य प्रस्तुतः करने का निर्देश दिया तथा उनके शपथ पर कथन अंकित किए। (धारा 202, परन्तुक)।

Q. यदि परिवाद लिखकर किया जाता है, तो किन परिस्थितियों में परिवादी या साक्षियों की परीक्षा करना आवश्यक नहीं है?

A. निम्नलिखित स्थितियों में–

(क) यदि परिवाद अपने पदीय कर्त्तव्यों के निर्वहन में कार्य करने वाले लोक सेवक या न्यायालय द्वारा किया गया है, अथवा

(ख) यदि मजिस्ट्रेट जांच या विचारण के लिए मामले को धारा 192 के अधीन किसी अन्य मजिस्ट्रेट के हवाले कर देता है (धारा 200)।

Q. यदि परिवाद किसी ऐसे मजिस्ट्रेट को किया जाता है, जो उस अपराध का संज्ञान करने के लिए सक्षम नहीं है, तो वह क्या करेगा?

A. धारा 201 के अनुसार ऐसी स्थिति में

(1) यदि परिवाद लिखित है तो वह उसको समुचित न्यायालय में पेश करने के लिए उस भाव का पृष्ठांकन करके लौटा देगा;

(2) यदि परिवाद लिखित नहीं है तो वह परिवादी को उचित न्यायालय में जाने का निर्देश देगा।

Q. किसी परिवाद के सम्बन्ध में कार्यवाही को स्थगित करके उसकी जांच या अन्वेषण करने का निर्देश देने की मजिस्ट्रेट की शक्ति संहिता में कहां उपबन्धित है?

A. संहिता की धारा 202 में।

Q. संहिता की धारा 202 के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट किसी अन्वेषण का आदेश कब नहीं देगा?

A. जब उसे प्रतीत होता है, कि जिस अपराध का परिवाद किया गया है वह अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है अथवा जब परिवाद किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा किया गया है जो न्यायालय नहीं है और परिवादी तथा साक्षियों को, यदि कोई हो, धारा 200 के अधीन शपथ पर परीक्षित कर लिया गया है।

Q. संहिता की धारा 202 के अधीन मजिस्ट्रेट को जब प्रतीत होता है कि वह अपराध जिसका परिवाद किया गया है अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है, तो वह क्या करेगा?

A. ऐसी स्थिति में वह परिवादी से अपने सब साक्षियों को पेश करने की अपेक्षा करेगा और उनकी शपथ पर परीक्षा करेगा।

Q. किन दशाओं में परिवाद खारिज किया जा सकता है?

A. (i) जबकि अपने समक्ष के विषयों और परिवादी एवं साक्षियों की परीक्षा करने के पश्चात् मजिस्ट्रेट की यह राय है कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, (धारा 203), (ii) यदि कोई आदेशिका फीस या अन्य फीस आदेशिका जारी करने के लिए विहित है, वह उचित समय के अन्दर अदा नहीं की गयी है, तो भी मजिस्ट्रेट परिवाद को खारिज कर सकता है। (धारा 204 (4))।

Q. किस वाद में यह कहा गया कि–''जहां कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार हो, मजिस्ट्रेट संहिता की धारा 203 के अन्तर्गत परिवाद खारिज नहीं कर सकता है?

A. नान्जुन्दैय्याह बनाम रंगैयाह, 1977 के वाद में।

Q. क्या प्रथम परिवाद खारिज किये जाने के वाद उसी विषय के बारे में द्वितीय परिवाद किया जा सकता है?

A. हां! क्योंकि परिवाद का खारिज किया जाना, न तो उन्मोचन का आदेश है और न ही दोषमुक्ति का, किन्तु द्वितीय परिवाद तभी ग्रहण किया जा सकता है जबकि यह सिद्ध कर दिया जाय कि द्वितीय परिवाद के साथ पेश की गयी सामग्री पर्याप्त कारणों से प्रथम परिवाद के समय पेश नहीं की जा सकती थी और पेश की जाने वाली नयी सामग्री मामले को प्रथम दृष्टया सिद्ध करने में सहायक होगी। (सुखराज बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 1982 इलाहाबाद)।

मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही का प्रारम्भ किया जाना

(Commencement of Proceedings before Magistrates)

(धारा 204-210)

किसी मजिस्ट्रेट के द्वारा अपराध का संज्ञान लेने अथवा परिवाद की परीक्षा कर लेने के बाद उसके द्वारा अपनायी जाने प्रक्रिया (कार्यवाही) संहिता के अध्याय 16 (धारा 204 से 210) में वर्णित है। यदि मजिस्ट्रेट ने न तो अपराध का संज्ञान लिया है और न ही उसे कोई मामला सुपुर्द किया गया है, तब वह इस अध्याय के अधीन कार्यवाही (आदेशिका जारी किया जाना) नहीं कर सकता है। (नागन्ना बनाम वीरन्ना, AIR, 1976 SC (1947)।

इस अध्याय के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट को निम्न प्रक्रिया का अनुपालन करना होता है–

आदेशिका जारी किया जाना–यदि किसी अपराध का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट की राय में कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार हैं तो वह मामले तथ्यों और परिस्तितियों के अनुसार यथा आवश्यक समन अथवा वारण्ट जारी करेगा (धारा 204 (1)। इस धारा के अधीन कोई भी आदेशिका (समन या वारण्ट) तब तक जारी नहीं किया जायेगा जब तक कि अभियोजन ने सभी साक्षियों की सूची फाइल न दी हो या शुल्क यदि नियत हो, का भुगतान न कर दिया गया हो। नियत समय पर नियत शुल्क का भुगतान न किए जाने पर परिवाद निरस्त कर दिया जायेगा (धारा 204 (4))।

अभियुक्त की व्यक्तिगत हाजिरी से अभियुक्ति–धारा 205 के अनुसार जब कभी कोई मजिस्ट्रेट समन जारी करता है तब यदि उसे ऐसा करने का कारण प्रतीत होता है तो वह अभियुक्त को वैयक्तिक हाजिरी से अभिमुक्त कर सकता है और अपने प्लीडर द्वारा हाजिर होने की अनुज्ञा दे सकता है।

विशेष समन-

धारा 206 के अनुसार यदि छोटे अपराध का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट की राय में मामले को धारा 260 या 261 के अधीन संक्षेपतः निपटाया जा सकता है तो वह मजिस्ट्रेट अभियुक्त से यह अपेक्षा करते हुए उसके लिए समन जारी करेगा कि वह विनिर्दिष्ट तारीख को मजिस्ट्रेट के समक्ष या तो स्वयं या प्लीडर द्वारा हाजिर हो या वह मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिर हुए बिना आरोप का दोषी होने का अभिवचन करना चाहता है तो लिखित रूप में उस अभिवाक और समन में विनिर्दिष्ट जुर्माने की रकम डाक या सन्देश वाहक द्वारा विनिर्दिष्ट तारीख के पूर्व भेज दे परन्तु ऐसे समय में विनिर्दिष्ट जुर्माने की रकम एक हजार रुपए से अधिक न होगी।

इस धारा के प्रयोजनों के लिए **''छोटे अपराध''** से ऐसा अपराध अभिप्रेत है जो केवल एक हजार रुपये तक के जुर्माने से दण्डनीय है किन्तु इसके अन्तर्गत कोई ऐसा अपराध नहीं है जो मोटर यान अधिनियम, 1939 के अधीन या किसी अन्य ऐसी विधि के अधीन, जिसमें दोषी होने के अभिवाक् पर अभियुक्त की अनुपस्थिति में उसको दोषसिद्ध करने के लिए उपबन्ध है, इस प्रकार दण्डनीय है।

राज्य सरकार, किसी मजिस्ट्रेट को उपधारा (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग किसी ऐसे अपराध के सम्बन्ध में करने के लिए जो धारा 320 के अधीन शमनीय है, या जो कारावास से, जिसकी अवधि तीन मास से अधिक नहीं है या जुर्माने से या दोनों से दण्डनीय है अधिसूचना द्वारा विशेष रूप से वहां सशक्त कर सकती है, जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों का ध्यान रखते हुए मजिस्ट्रेट की राय है कि केवल जुर्माना अधिरोपित करने से न्याय के उद्देश्य पूरे हो जाएँगे। [धारा 206 (3)]।

पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित की गयी कार्यवाही के मामले में अभियुक्त को पुलिस रिपोर्ट अथवा अन्य दस्तावेजों की प्रतिलिपि देने का उपबन्ध धारा 207 में किया गया है। धारा 208 में सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय मामलों में अभियुक्त को कथनों तथा दस्तावेजों की प्रतिलिपियाँ देने का प्रावधान है। धारा 209 में अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय अपराध के मामले को मजिस्ट्रेट द्वारा सेशन न्यायालय को सुपुर्द किये जाने का उपबन्ध है। धारा 210 में परिवाद वाले मामले में अपनायी जाने वाली प्रक्रिया तथा उसी अपराध के बारे में पुलिस अन्वेषण के सन्दर्भ में प्रावधान है।

प्रश्नकोश

Q. क्या छोटे अपराधों के मामलों में कोई व्यक्ति न्यायालय में उपस्थित हुए बिना अर्थदण्ड डाक द्वारा अदा कर सकता है। यदि हां तो किस प्रावधान के अन्तर्गत?

A. हां। धारा 206।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 206 के अन्तर्गत छोटे अपराधों के लिए जुर्माने की अधिकतम राशि कितनी है?

A. 1000/- रु.।

Q. धारा 207 या 208 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत अभियुक्त को प्रतिलिपियां किसके द्वारा प्रदान की जाती हैं?

A. मजिस्ट्रेट के द्वारा।

Q. संहिता की धारा 204 में क्या उपबन्ध है?

A. धारा 204 के अनुसार–यदि किसी अपराध का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट की राय में कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है तो वह आदेशिका जारी करेगा और अभियुक्त को न्यायालय में हाजिर होने के लिए कार्यवाही करेगा।

Q. क्या मजिस्ट्रेट किसी वारण्ट मामले में समन जारी कर सकता है?

A. हां! धारा 204 (1) (ख) के अनुसार यदि मजिस्ट्रेट ठीक समझता है तो वारण्ट मामले में, अपने या अन्य अधिकारिता वाले मजिस्ट्रेट के समक्ष अभियुक्त के निश्चित समय पर हाजिर होने के लिए वारण्ट या समन जारी कर सकता है।

Q. वे कौन-सी शर्तें हैं जिनके पूरा होने के पहले, धारा 204 के अन्तर्गत अभियुक्त को कोई समन या वारण्ट जारी नहीं किया जायेगा?

A. (i) अभियोजन के साक्षियों की सूची फाइल पर दी गयी हो।
(ii) समन या वारण्ट के साथ परिवाद की एक प्रतिलिपि भेजी गयी हो,
(iii) आदेशिका शुल्क दे दिया गया हो।

Q. बाबूराम बनाम स्टेट ऑफ यू.पी., 1978 के प्रकरण में क्या निर्णीत किया गया है।

A. धारा 204 के अन्तर्गत परिवादी की अनुपस्थिति के कारण परिवाद खारिज नहीं किया जा सकता।

Q. मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्त को वैयक्तिक हाजिरी से अभिमुक्ति दे सकना किस धारा के अन्तर्गत निहित है?

A. धारा 205।

Q. छोटे अपराधों के बारे में विशेष समन संहिता की किस धारा के अन्तर्गत जारी किया जाता है?

A. धारा 206 के अन्तर्गत।

Q. छोटे अपराध के बारे में विशेष समन कब जारी किया जा सकता है?

A. जब ऐसे अपराध का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट की राय में मामले को धारा 260 के अधीन संक्षेपतः निपटाया जा सकता है।

Q. ''छोटे अपराध'' से कैसा अपराध अभिप्रेत है?

A. ''छोटे अपराध'' से कोई ऐसा अपराध अभिप्रेत है, जो केवल एक हजार रुपये से अनधिक जुर्माने से दण्डनीय है। (धारा 206 (2)।

Q. छोटे अपराध के अन्तर्गत कौन-से अपराध शामिल नहीं है?

A. वे जो मोटर यान अधिनियम, 1939 के अधीन या किसी अन्य ऐसी विधि के अधीन, जिसमें दोषी होने के अभिवाक् पर अभियुक्त की अनुपस्थिति में, उसको दोषसिद्ध करने के लिए उपबन्ध है, इस प्रकार दण्डनीय है।

Q. विशेष समन में अभियुक्त को उपस्थिति के सम्बन्ध में क्या विकल्प प्राप्त होता है?

A. यह कि–
(क) वह स्वयं हाजिर हो सकता है, या
(ख) प्लीडर द्वारा हाजिर हो सकता है, या
(ग) मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिर हुए बिना आरोप का दोषी होने का अभिवचन कर सकता है।

Q. संहिता की धारा 207 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. इस धारा में अभियुक्त को, पुलिस रिपोर्ट, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, धारा 161 के बयान, धारा 164 के अन्तर्गत अभिलिखित संस्वीकृतियों एवं अन्य सुसंगत उद्धरण की एक प्रतिलिपि निःशुल्क और अविलम्ब देने के बारे में उपबन्ध किया गया है।

Q. संहिता की धारा 209 किन विषयों से सम्बन्धित है?

A. यह धारा, जब अपराध अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है तब मामला उसे सुपुर्द किये जाने से सम्बन्धित है।

Q. जोगिन्दर सिंह बनाम पंजाब राज्य, 1979 सु.को. के वाद में क्या कहा गया?

A. इस वाद में कहा गया कि–धारा 209 के अधीन सेशन न्यायालय को 'मामला' सुपुर्द किया जाता है, ''अभियुक्त'' को नहीं। अतः सेशन न्यायालय को यह शक्ति प्राप्त है कि वह विचारण में किसी भी व्यक्ति को सम्मिलित कर ले चाहे भले ही ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध सुपुर्दगी का आदेश मजिस्ट्रेट द्वारा न दिया गया हो।

Q. मजिस्ट्रेट इस आशय की सूचना किसे देगा कि मामला सेशन न्यायालय की धारा 209 के अन्तर्गत सुपुर्द कर दिया गया है?

A. लोक अभियोजक को। (धारा 209 (4))।

आरोप (The Charge) (धारा 211-224)

संहिता का अध्याय 17 आरोपों के प्रारुप (खण्ड क) और आरोपों के संयोजन (खण्ड ख) से सम्बन्धित उपबंध करता है। आरोप को संहिता के अन्तर्गत परिभाषित नहीं किया गया है। संहिता के धारा 2(ख) के अन्तर्गत आरोप के सम्बन्ध में केवल इतना कहा गया है कि आरोप के अन्तर्गत, जब आरोप में एक से अधिक शीर्ष हों, आरोप का कोई भी शीर्ष है।

सामान्यतः आरोप किसी व्यक्ति के विरुद्ध किए गए विशिष्ट दोषारोपण का संक्षिप्त प्रतिपादन होता है। इसके अन्तर्गत अभियुक्त पर लगाये गए उस अपराध की सूचना होती है, जिसका अभियुक्त द्वारा किया गया आरोपित है।

आरोपों का प्रारुप–धारा 211-214 आरोप की अर्न्तवस्तुओं से सम्बन्धित है जबकि धारा 215 में यह बताया गया है कि आरोप में की गई त्रुटि के क्या प्रभाव होंगे। धारा 216 में यह उपबन्धित है कि आरोप में परिवर्तन कब एवं किसके द्वारा किया जा सकता है तथा धारा 217 में आरोप में परिवर्तन के बाद अपनायी जाने वाली प्रक्रिया का प्रावधान है।

आरोप की अन्तर्वस्तु–धारा 211 के अनुसार प्रत्येक आरोप में उस अपराध का कथन होगा जिसका अभियुक्त पर आरोप है।

उस अपराध का विधि द्वारा यदि कोई विनिर्दिष्ट नाम दिया गया है तो आरोप में उसी नाम से उस अपराध का वर्णन किया जाएगा। (धारा 211-(2))। यदि विनिर्दिष्ट नाम नहीं दिया गया है तो अपराध की इतनी परिभाषा देनी होगी जितनी से अभियुक्त को उस बात की सूचना हो जाए जिसका उस पर आरोप है।

वह विधि और विधि की वह धारा, जिसके विरुद्ध अपराध किया जाना कथित है, आरोप में उल्लिखित होगी। धारा 211-(4)। यह तथ्य कि आरोप लगा दिया गया है इस कथन के समतुल्य है कि विधि द्वारा अपेक्षित प्रत्येक शर्त जिससे आरोपित अपराध बनता है उस विशिष्ट मामले में पूरी हो गई है। आरोप न्यायालय की भाषा में लिखा जाएगा। (धारा 211 (5) व (6)।

यदि अभियुक्त किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किये जाने पर किसी पश्चावर्ती अपराध के लिए इस पूर्व दोषसिद्धि के कारण वर्धित दण्ड अथवा भिन्न दण्ड का भागी है, एवं दण्ड को प्रभावित करने के लिए उक्त पूर्व दोषसिद्धि साबित किया जाना आशयित है, तो आरोप में पूर्व दोषसिद्धि का तथ्य, तिथि एवं स्थान भी कथित होगा। (धारा 211 (7))।

दृष्टान्त–क पर ख की हत्या का आरोप है। यह बात इस कथन के समतुल्य है कि क का कार्य भारतीय दण्ड संहिता की धारा 299 और 300 में दी गई हत्या की परिभाषा के अन्तर्गत आता है और वह उसी संहिता के साधारण अपवादों में से किसी के अन्दर नहीं आता और वह धारा 300 के पाँच अपवादों में से किसी के अन्दर भी नहीं आता, या यदि वह अपवाद 1 के अन्दर आता है तो उस अपवाद के तीन परन्तुकों में से कोई-न-कोई परन्तुक उसे लागू होता है।

समय, स्थान और व्यक्ति के बारे में विशिष्टियाँ–अभिकथित अपराध के समय और स्थान के बारे में और जिस व्यक्ति के विरुद्ध अथवा जिस वस्तु के विषय में वह अपराध किया गया उस व्यक्ति या वस्तु के बारे में ऐसी विशिष्टयां, जैसी अभियुक्त को उस बात की जिसका उस पर आरोप है, सूचना देने के लिए उचित रूप में पर्याप्त है, आरोप में अन्तर्विष्ट होगी। (धारा 212 (1))।

जब अभियुक्त पर आपराधिक न्यासभंग या बेईमानी से धन या अन्य जंगम सम्पत्ति के दुर्विनियोग का आरोप है तब इतना ही पर्याप्त होगा कि विशिष्ट मदों का जिनके विषय में अपराध किया

जाना अभिकथित है, या अपराध करने की ठीक-ठीक तारीखों का विनिर्देश किए बिना, यथास्थिति, उस सकल राशि का विनिर्देश या उस जंगम सम्पत्ति का वर्णन कर दिया जाता है जिसके विषय में अपराध किया जाना अभिकथित है, और उन तारीखों का, जिनके बीच में अपराध का किया जाना अभिकथित है, विनिर्देश कर दिया जाता है और ऐसे विरचित आरोप धारा 219 के अर्थ में एक ही अपराध का आरोप समझा जाएगा। परन्तु ऐसी तारीखों में से पहली और अन्तिम के बीच का समय एक वर्ष से अधिक का न होगा। (धारा 212(2))।

कब अपराध किए जाने की रीति कथित की जानी चाहिए–धारा 213 के अनुसार जब मामला इस प्रकार का है कि धारा 211 और 212 में वर्णित विशिष्टियां अभियुक्त को उस बात की, जिसका उस पर आरोप है, पर्याप्त सूचना नहीं देती तब उस रीति की जिसमें अभिकथित अपराध किया गया, ऐसी विशिष्टियां भी, जैसी उस प्रयोजन के लिए पर्याप्त है, आरोप में अन्तर्विष्ट होंगी।

दृष्टान्त : 'क' पर वस्तु-विशेष की विशेष समय और स्थान में चोरी करने का अभियोग है। यह आवश्यक नहीं है कि आरोप में वह रीति उपवर्णित हो जिससे चोरी की गई।

'क' पर 'ख' के साथ कथित समय पर और कथित स्थान में छल करने का अभियोग है। आरोप में वह रीति, जिससे 'क' ने 'ख' के साथ छल किया, उपवर्णित करनी होगी।

क पर ख को दण्ड से बचाने के आशय से विधि के निदेश की अवज्ञा करने का अभियोग है। आरोपित अवज्ञा और अतिलंघित विधि का उपवर्णन आरोप में करना होगा।

आरोप में गलतियों का प्रभाव–धारा 215 के अनुसार अपराध के या उन विशिष्टियां के, कथन करने में किसी गलती को और उस अपराध या उन विशिष्टियों के कथन करने में किसी लोप को मामले के किसी प्रक्रम में तब ही, तात्विक माना जाएगा जब ऐसी गलती या लोप से अभियुक्त वास्तव में भुलावे में पड़ गया है और उसके कारण न्याय नहीं हो पाया है, अन्यथा नहीं।

उदाहरण–'क' पर 'ख' से छल करने का आरोप है और जिस रीति से उसने 'ख' से छल किया है वह आरोप में उपवर्णित नहीं है। 'क' और 'ख' के बीच अनेक संव्यवहार हुए हैं और क के पास यह जानने का कि आरोप का निर्देश उनमें से किसके प्रति है कोई साधन नहीं था और उसने अपनी कोई प्रतिरक्षा नहीं की। न्यायालय ऐसे तथ्यों से यह अनुमान कर सकता है कि छल करने की रीति के उपवर्णन का लोप उस मामले में तात्विक गलती थी।

'क' पर 20 जनवरी, 1882 को हैदरबख्श की हत्या और 21 जनवरी, 1882 को खुदाबख्श की (जिसने उसे हत्या के लिए गिरफ्तार करने का प्रयास किया था) हत्या करने का आरोप है। जब वह हैदरबख्श की हत्या के लिए आरोपित हुआ, तब उसका विचारण खुदाबख्श की हत्या के लिए हुआ। उसकी प्रतिरक्षा में उपस्थित साक्षी हैदरबख्श वाले मामले में साक्षी थे। न्यायालय इससे अनुमान कर सकता है कि क भुलावे में पड़ गया था और यह गलती तात्विक थी।

न्यायालय आरोप परिवर्तित कर सकता है–कोई भी न्यायालय निर्णय सुनाए जाने के पूर्व किसी समय किसी भी आरोप में परिवर्तन या परिवर्धन कर सकता है। (धारा 216 (12))। ऐसा प्रत्येक परिवर्तन या परिवर्धन अभियुक्त को पढ़कर सुनाया और समझाया जाएगा। (धारा 216 (2))।

यदि परिवर्तन या परिवर्धन ऐसा है कि विचारण को तुरन्त आगे चलाने से अभियुक्त पर अपनी प्रतिरक्षा करने में अभियोजन पर मामले के संचालन में कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की सम्भावना नहीं है, तो न्यायालय स्वविवेकानुसार विचारण को ऐसे आगे चला सकता है, मानो परिवर्तित या परिवर्धित आरोप ही मूल आरोप है। (धारा 216 (3))।

यदि परिवर्तन या परिवर्धन ऐसा है कि विचारण को तुरन्त आगे चलाने से इस बात की सम्भावना है कि अभियुक्त या अभियोजक पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा तो न्यायालय नए विचारण का निदेश दे सकता है या विचारण को इतनी अवधि के लिए, जितनी आवश्यक हो, स्थगित कर सकता है। (धारा 216 (4))। यदि अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी की आवश्यकता है, तो उस मामले में ऐसी मंजूरी अभिप्राप्त किए बिना कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी। (धारा 216(5))।

धारा 217 के अनुसार जब कभी विचारण प्रारम्भ होने के पश्चात् न्यायालय द्वारा आरोप परिवर्तित या परिवर्धित किया जाता है तब अभियोजक और अभियुक्त को–

(क) किसी ऐसे साक्षी को, जिसकी परीक्षा की जा चुकी है, पुनः बुलाने की या पुनः समन करने की और उसकी ऐसे परिवर्तन या परिवर्धन के बारे में परीक्षा करने की अनुज्ञा दी जाएगी।

(ख) किसी अन्य ऐसे साक्षी को भी, जिसे न्यायालय आवश्यक समझे, बुलाने की अनुज्ञा दी जाएगी।

आरोपों का संयोजन

धारा 218 के अन्तर्गत आरोपों के संयोजन से सम्बन्धित सामान्य सिद्धान्त उपबन्धित है जबकि इसी धारा के परन्तुक एवं उपधारा में उपरोक्त सामान्य सिद्धान्त के अपवाद दिए गये हैं। धारा 219, 220, 221 में यह उपबन्धित है कि किन अपराधों का संयुक्त रूप से विचारण हो सकता है जबकि धारा 223 यह उपबन्धित करती है कि किन व्यक्तियों पर संयुक्त रूप से आरोप लगाये जा सकते हैं और उनका विचारण एक साथ किया जा सकता है।

धारा 218 (1) के अनुसार प्रत्येक सुभिन्न अपराध के लिए जिसका किसी व्यक्ति पर अभियोग है, पृथक् आरोप होगा और ऐसे प्रत्येक आरोप का विचारण पृथकतः किया जाएगा;

परन्तु जहां अभियुक्त व्यक्ति, लिखित आवेदन द्वारा, ऐसा चाहता है और मजिस्ट्रेट की राय है कि उससे ऐसे व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा वहां मजिस्ट्रेट उस व्यक्ति के विरुद्ध विरचित सभी या किन्हीं आरोपों का विचारण एक साथ कर सकता है।

उपधारा (1) की कोई बात धारा 219, 220, 221 और 223 के उपबन्धों के प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी।

दृष्टान्त–क पर एक अवसर पर चोरी करने और दूसरे किसी अवसर पर चोर उपहति कारित करने का अभियोग है। चोरी के लिए और घोर उपहति कारित करने के लिए क पर पृथक्-पृथक् आरोप लगाने होंगे और उनका विचारण पृथकतः करना होगा।

धारा 219 के अनुसार जब किसी व्यक्ति पर एक ही किस्म के ऐसे एक से अधिक अपराधों का अभियोग है जो उन अपराधों में से पहले अपराध से लेकर अन्तिम अपराध तक बारह मास के अन्दर ही किए गए हैं, चाहें वे एक ही व्यक्ति के बारे में किए गए हों या नहीं, तब उस पर उनमें से तीन से अनधिक कितने ही अपराधों के लिए एक ही विचारण में आरोप लगाया और विचारण किया जा सकता है।

अपराध एक ही किस्म के तब होते हैं जब वे भारतीय दण्ड संहिता या किसी विशेष या स्थानीय विधि की एक ही धारा के अधीन दण्ड की समान मात्रा से दण्डनीय होते हैं : [धारा 219(2)]।

यदि परस्पर सम्बद्ध ऐसे कार्यों के जिनसे एक ही संव्यवहार बनता है, एक क्रम में एक से अधिक अपराध एक ही व्यक्ति द्वारा किए गए हैं तो ऐसे प्रत्येक अपराध के लिए एक ही विचारण में उस पर आरोप लगाया जा सकता है और उसका विचारण किया जा सकता है। (धारा 220)।

उदाहरण–'क' एक व्यक्ति 'ख' को, जो विधिपूर्ण अभिरक्षा में है, छुड़ाता है और ऐसा करने में कांस्टेबल ग को जिसकी अभिरक्षा में ख है, घोर उपहति कारित करता है। क पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 225 और 333 के अधीन अपराधों के लिए आरोप लगाया जा सकेगा और वह दोषसिद्ध किया जा सकेगा।

'क' दिन में गृहभेदन इस आशय से करता है कि जारकर्म करे और ऐसे प्रवेश किए गए गृह में ख की पत्नी से जारकर्म करता है। क पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 454 और 497 के अधीन आरोपों के लिए पृथकतः आरोप लगाया जा सकेगा और वह दोषसिद्ध किया जा सकेगा।

चुराए हुए धान के कई बोरे 'क' और 'ख' को, जो यह जानते हैं कि चुराई हुई सम्पत्ति है, इस प्रयोजन से दे दिए जाते हैं कि वे उन्हें छिपा दें। तब 'क' और 'ख' उन बोरों को अनाज की खेती के तले में छिपाने में स्वेच्छया एक दूसरे की मदद करते हैं। क और ख पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 411 और 414 के अधीन अपराधों के लिए पृथकतः आरोप लगाया जा सकेगा और वे दोषसिद्ध किए जा सकेंगे।

'ख' को 'क' लूटता है और ऐसा करने में उसे स्वेच्छया उपहित कारित करता है। क पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 323, 392 और 394 के अधीन अपराधों के लिए पृथकतः आरोप लगाया जा सकेगा और वह दोषसिद्ध किया जा सकेगा।

सन्देहास्पद अपराधों में आरोप–धारा 221 के अनुसार यदि कोई एक कार्य या कार्यों का क्रम इस प्रकार का है कि यह सन्देह है कि कई अपराधों में से कौन सा अपराध बनेगा तो अभियुक्त पर ऐसे सब अपराध या उनमें से कोई करने का आरोप लगाया जा सकेगा और ऐसे कितनों ही आरोपों का एक का एक साथ विचारण किया जा सकेगा; या उस अपराधों में से किसी एक को करने का अनुकल्पतः आरोप लगाया जा सकेगा।

यदि ऐसे मामले में, अभियुक्त पर एक अपराध का आरोप लगाया गया है और साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि उसने भिन्न अपराध किया है, वह उस अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा सकेगा जिसका उसके द्वारा किया जाना दर्शित है, यद्यपि उसके लिए उस पर आरोप नहीं लगाया था। [धारा 221 (2)]।

दृष्टान्त–'क' पर ऐसे कार्य का अभियोग है जो चोरी की, या चुराई गई सम्पत्ति प्राप्त करने की, या आपराधिक न्यायसंगत की, या छल की कोटि में आ सकता है। उस पर चोरी करने, चुराई हुई सम्पत्ति प्राप्त करने, आपराधिक न्यासभंग करने और छल करने का आरोप लगाया जा सकेगा अथवा उस पर चोरी करने का या चोरी की सम्पत्ति प्राप्त करने का या आपराधिक न्यासभंग करने का या छल करने का आरोप लगाया जा सकेगा।

क मजिस्ट्रेट के समक्ष शपथ पर कहता है कि उसने देखा कि 'ख' ने 'ग' को लाठी मारी। सेशन न्यायालय के समक्ष 'क' शपथ पर कहता है कि 'ख' ने 'ग' को कभी नहीं मारा। यद्यपि यह साबित नहीं किया जा सकता कि इन दो परस्पर विरुद्ध कथनों में से कौन-सा मिथ्या है तथापि 'क' पर साशय मिथ्या साक्ष्य देने के लिए अनुकल्पतः आरोप लगाया जा सकेगा और वह दोषसिद्ध किया जा सकेगा।

धारा 222 के अनुसार अभियुक्त पर लगाये गए अनेक विशिष्टियों वाले आरोपों से यदि कोई छोटा अपराध साबित हो जाता है, तो उसके लिए आरोपित व्यक्ति को दोषसिद्ध किया जा सकता है, भले ही उसके लिए उस पर पृथक आरोप नहीं लगाया गया था, किन्तु ऐसे छोटे अपराधों के लिए अपेक्षित शर्तों को पूरा किया जाना आवश्यक होगा।

धारा 223 के अनुसार निम्नलिखित व्यक्तियों पर एक साथ आरोप लगाया जा सकेगा और उनका एक साथ विचारण किया जा सकेगा, अर्थात्–

(क) वे व्यक्ति जिन पर एक ही संव्यवहार के अनुक्रम में किए गए एक ही अपराध का अभियोग है,

(ख) वे व्यक्ति जिन पर किसी अपराध का अभियोग है और वे व्यक्ति जिन पर ऐसे अपराध का दुष्प्रेरण या प्रयत्न करने का अभियोग है।

(ग) वे व्यक्ति जिन पर बारह मास की अवधि के अन्दर संयुक्त रूप में उनके द्वारा किए गए धारा 219 के अर्थ में एक ही किस्म के एक से अधिक अपराधों का अभियोग है,

(घ) वे व्यक्ति जिन पर एक ही संव्यवहार के अनुक्रम में किए गए भिन्न अपराधों का अभियोग है;

(ङ) वे व्यक्ति जिन पर ऐसे अपराध का, जिसके अन्तर्गत चोरी, उद्दापन, छल या आपराधिक दुर्विनियोग भी है, अभियोग है और वे व्यक्ति, जिन पर ऐसी सम्पत्ति को, जिसका कब्जा प्रथम नामित व्यक्तियों द्वारा किए गए किसी ऐसे अपराध द्वारा अन्तरित किया जाना अभिकथित है, प्राप्त करने या रखे रखने या उसके व्ययन या छिपाने में सहायता करने का या किसी ऐसे अन्तिम नामित अपराध का दुष्प्रेरण या प्रयत्न करने का अभियोग है;

(च) वे व्यक्ति जिन पर ऐसी चुराई हुई सम्पत्ति के बारे में, जिसका कब्जा एक ही अपराध द्वारा अन्तरित किया गया है, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 411 और धारा 414 के, या उन धाराओं में से किसी के अधीन अपराधों का अभियोग है;

(छ) वे व्यक्ति जिन पर भारतीय दण्ड संहिता के अध्याय 12 के अधीन कूटकृत सिक्के के सम्बन्ध में किसी अपराध का अभियोग है और वे व्यक्ति जिन पर उसी सिक्के के सम्बन्ध में उक्त अध्याय के अधीन किसी भी अन्य अपराध का या किसी ऐसे अपराध का दुष्प्रेरण या प्रयत्न करने का अभियोग है;

परन्तु जहां अनेक व्यक्तियों पर पृथक अपराधों का आरोप लगाया जाता है और वे व्यक्ति इस धारा के अन्तर्गत किसी कोटि में नहीं आते वहां मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायालय ऐसे सब व्यक्तियों का विचारण एक साथ कर सकता है यदि ऐसे व्यक्ति लिखित आवेदन द्वारा ऐसा चाहते हैं और मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि इससे ऐसे व्यक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा और ऐसा करना समीचीन है।

संहिता में वर्ष 2005 में किये गये संशोधन से 'अनेक व्यक्तियों पर लगाये गये पृथक अपराधों के आरोप के सन्दर्भ में उन व्यक्तियों द्वारा एक साथ विचारण का लिखित आवेदन किये जाने पर न्यायालय का यह समाधान हो जाने पर कि उससे ऐसे व्यक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा तथा ऐसा करना समीचीन है, आरोपों का संयुक्त विचारण की शक्ति मजिस्ट्रेट के साथ ही सेशन न्यायालय को भी प्रदान की गयी है। संशोधन के पूर्व मात्र मजिस्ट्रेट को ही उक्त शक्ति प्राप्त थी।

जहां अभियुक्त को अन्य आरोपों के विचारण के पहले ही विभिन्न आरोपों में से किसी एक के लिए दोषसिद्ध किया जाता है, वहां परिवादी अथवा अभियोजन के संचालक अधिकारी द्वारा न्यायालय की सम्पत्ति से शेष आरोप या आरोपों को वापस लिया जा सकता है, या न्यायालय ऐसे आरोप अथवा आरोपों की जांच या विचारण स्वप्रेरणा से रोक सकता है; और इस प्रकार वापस लेने का प्रभाव ऐसे आरोप या आरोपों से दोषमुक्ति होगी किन्तु धारा 220 (3), 220 (4), या 221 के अधीन विरचित आरोप के सन्दर्भ में धारा 224 लागू नहीं होगी।

प्रश्नकोश

Q. किस वाद में यह निर्धारित कियागया है कि अभियुक्त के विरुद्ध आरोप विरचित करने या संज्ञान लेने के समय अभियुक्त को कोई दस्तावेज पेश करने का अधिकार नहीं है?

A. उड़ीसा राज्य बनाम देवेन्द्र नाथ।

Q. प्रत्येक सुभिन्न अपराध के लिए, जिसका किसी व्यक्ति पर आरोप है, पृथक आरोप होगा। इस नियम का अपवाद दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा/धाराओं में वर्णित है?

A. धारा 219, 220, 221, एवं 2223।

Q. न्यायालय आरोप में परिवर्तन कब कर सकता है?

A. निर्णय सुनाये जाने से पहले कभी भी। (धारा 216 (1)।

Q. 'अ' एक अवसर पर चोरी का तथा दूसरे अवसर पर घोर उपहति का अभियुक्त है। 'अ' पर लगाये जाने वाले आरोप की प्रकृति क्या होगी?

A. दोनों आरोपों के ले पृथक आरोप लगाये जाने चाहिए तथा अलग विचारण होना चाहिए। (धारा 218)।

Q. A के विरुद्ध केवल चोरी का आरोप है और ऐसा प्रतीत होता है कि उसने आपराधिक न्यासभंग का अपराध किया था। क्या उसे आपराधिक न्यास भंग के लिए दोषसिद्ध किया जा सकता है?

A. हां। (धारा 221(2))।

Q. आरोप की अन्तर्वस्तु से सम्बन्धित धारा कौन-सी है?

A. धारा 211 में उन विस्तारणों का उल्लेख किया गया है, जिन्हें आरोप में उल्लिखित किया जाना आवश्यक है। अर्थात् आरोप की अन्तर्वस्तु से सम्बन्धित धारा 211 है।

Q. आरोप की अन्तर्वस्तु क्या होगी?

A. धारा 211 के अनुसार–

(i) प्रत्येक आरोप में उस अपराध का कथन होगा जिसका अभियुक्तइ पर आरोप है,

(ii) यदि अपराध का सृजन करने वाली विधि उस अपराध को कोई विनिर्दिष्ट नाम देती है तो आरोप में वही नाम उल्लिखित होगा,

(iii) यदि कोई विनिर्दिष्ट नाम नहीं देती, तो उस अपराध की इतनी परिभाषा देनी होगी। जितनी से अभियुक्त को उस बात की सूचना हो जाय जिसका उस पर आरोप है,

(iv) आरोप में विधि की वह धारा उल्लिखित होनी चाहिए, जिसके विरुद्ध अपराध किया जाना कथित है,

(v) यदि पहले किये गये अपराध के कारण अभियुक्त वर्धित दण्ड का भागी हो गया है, तो पूर्व दोषसिद्धि का उल्लेख होगा।

Q. संहिता की किस धारा के अनुसार-आरोप में उस व्यक्ति या वस्तु या समय और स्थान का नाम, जब या जहां जिसके विरुद्ध अपराध का किया जाना अभिकथित है, उल्लिखित होगा?

A. धारा 212 के अनुसार।

Q. यदि अभियुक्त पर आपराधिक न्यास-भंग या बेईमानी से धन या अन्य जंगम सम्पत्ति के दुर्विनियोग का आरोप है, तो क्या उल्लिखित किया जाना पर्याप्त होगा?

A. ऐसी स्थिति में इतना ही पर्याप्त होगा कि विशिष्ट मदों का, जिनके विषय में अपराध किया गया है, या उस सम्पूर्ण राशि का विनिर्देश या उस जंगम सम्पत्ति का वर्णन कर दिया जाय जिसके विषय में अपराध किया जाना अभिकथित है, और उन तारीखों का जिनके बीच में अपराध का किया जाना अभिकथित है, विनिर्देश कर दिया गया।

Q. धारा 212 (2) के अन्तर्गत किये गये अपराधों के सम्बन्ध में आरोप के उल्लेख के सम्बन्ध में ऐसी तारीखों में से पहली और अन्तिम के बीच का समय कितना होना चाहिए?

A. एक वर्ष तक की अवधि होनी चाहिए।

Q. अभियुक्त को अपराध किये जाने की रीति कब बतानी चाहिए?

A. जब मामला ऐसा हो कि धारा 211 और 212 में वर्णित विशिष्टियाँ अभियुक्त को, उस बात की, जिसका उस पर आरोप है, पर्याप्त सूचना नहीं देती।

Q. 'क' पर 'ख' के साथ कथित समय पर और कथित स्थान में छल करने का आरोप है, उस आरोप में कौन-सी विशिष्टियाँ होंगी?

A. इस स्थान पर आरोप में वह रीति, जिससे 'क' ने 'ख' के साथ छल किया, उपवर्णित करनी होगी।

Q. संहिता की धारा 215 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. धारा 215 में आरोप में किसी गलती या कथन करने के किसी लोप के प्रभाव के बारे में उपबन्ध किया गया है।

Q. आरोप में, अपराध की उन विशिष्टियों के, कथन करने में किसी गलती को, जिनका उनमें होना अपेक्षित है, और अपराध में किसी विशिष्टियों के या कथन करने के किसी लोप को मामले के किसी प्रक्रम में कब तात्त्विक माना जायेगा?

A. जब ऐसी गलती या लोप से अभियुक्त वास्तव में भुलावे में पड़ गया है, और उसके कारण न्याय नहीं हो पाया है। (धारा 215)।

Q. 'क' पर 'ख' से छल करने का आरोप है और जिस रीति से उसने 'ख' से छल किया है वह आरोप में उपवर्णित नहीं है। 'क' और 'ख' के बीच अनेक संव्यवहार हुए हैं और 'क' के पास यह जानने का कि आरोप का निर्देश उनमें से किसके प्रति है, कोई साधन नहीं था, और उसने अपनी कोई प्रतिरक्षा नहीं की। न्यायालय ऐसे तथ्यों से क्या अनुमान लगा सकता है?

A. इस समस्या में न्यायालय ऐसे तथ्यों से यह अनुमान लगा सकता है कि छल करने की रीति के उपवर्णन करने का लोप उस मामले में तात्त्विक गलती थी।

Q. 'क' पर 20 जनवरी, 1882 को हैदरबख्श की हत्या और 21 जनवरी, 1882 को खुदाबख्श की हत्या करने का आरोप है। जब वह हैदरबख्श की हत्या के लिए आरोपित हुआ तब उसका विचारण खुदाबख्श की हत्या के लिए हुआ। उसकी प्रतिरक्षा में उपस्थित साक्षी हैदरबख्श वाले मामले में साक्षी थे। इन तथ्यों से न्यायालय को क्या अनुमान करना चाहिए?

A. न्यायालय को इन तथ्यों से यह अनुमान करना चाहिए कि 'क' भुलावे में पड़ गया था और यह कि वह गलती तात्त्विक थी।

Q. धारा 215 के विनियमन का क्या उद्देश्य है?

A. इस धारा का उद्देश्य वहां न्याय को विफल होने से निवारित करना है, जहां आरोप के व्यवस्थापन में नियमों का उल्लंघन हुआ है।

Q. संहिता की कौन-सी धारा न्यायालय के आरोप में परिवर्तन कर सकने की शक्ति प्रदान करती है?

A. धारा 216 में यह शक्ति प्रदान की गयी है।

Q. कोई भी न्यायालय आरोप में परिवर्तन या परिवर्धन कब तक कर सकता है?

A. निर्णय सुनाये जाने के पूर्व किसी भी समय तक। (धारा 216(1))

Q. आरोप में परिवर्तन या परिवर्धन के बाद किस प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना आवश्यक है?

A. निम्न प्रक्रिया का–(i) यह कि ऐसा प्रत्येक परिवर्तन या परिवर्धन अभियुक्त को पढ़कर सुनाया और समझाया जायेगा;

(ii) यदि आरोप में किये गये परिवर्तन या परिवर्धन से

न्यायालय की राय में अभियुक्त पर अपनी प्रतिरक्षा करने में या अभियोजन पर मामले के संचालन में कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की सम्भावना नहीं है, तो न्यायालय ऐसे परिवर्तन या परिवर्धन के पश्चात् विचारण को ऐसे आगे चला सकता है, मानो परिवर्तित या परिवर्धित आरोप ही मूल आरोप है।

(iii) यह कि यदि परिवर्तन या परिवर्धन ऐसा है कि न्यायालय की राय में उसके कारण अभियुक्त या अभियोजन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, तो न्यायालय या तो नये विचारण का निर्देश दे सकता है या उसे आवश्यकतानुसार आगे की किसी अवधि के लिए स्थगित कर सकता है।

Q. संहिता की धारा 216 के अन्तर्गत यदि परिवर्धित या परिवर्तित आरोप ऐसा है कि अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी की आवश्यकता है, तो क्या प्रक्रिया अपनाई जायेगी?

A. ऐसी स्थिति में ऐसी मंजूरी अभिप्राप्त किये बिना कोई कार्यवाही नहीं की जायेगी।

Q. जब कभी आरोप में परिवर्तन या परिवर्धन किया जाता है तब न्यायालय अभियोजन और अभियुक्त को क्या अनुज्ञा देगा?

A. यह अनुज्ञा देगा कि, वे किसी ऐसे साक्षी को, जिसकी परीक्षा की जा चुकी है, पुनः बुलाने की या पुनः समन करने की और उसकी ऐसे परिवर्तन या परिवर्धन के बारे में परीक्षा कर सकते हैं? साथ ही न्यायालय अन्य आवश्यक साक्षी को बुलाने की अनुज्ञा दे सकता है। (धारा 217)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की कौन-सी धारा यह उद्घोष करती है कि ''प्रत्येक सुभिन्न अपराध के लिए'', जिसका किसी व्यक्ति पर अभियोग है, पृथक् आरोप होगा, और ऐसे प्रत्येक आरोप का विचारण पृथकतः किया जायेगा।

A. धारा 218।

Q. संहिता की धारा 218 के इस सामान्य नियम का, कि प्रत्येक अपराध के लिए पृथक् आरोप होगा और उनका पृथकतः विचारण होगा, के अपवाद क्या हैं?

A. (i) जहां अभियुक्त व्यक्ति लिखित आवेदन करे और मजिस्ट्रेट की राय में उससे प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा वहां मजिस्ट्रेट उस व्यक्ति के विरुद्ध विरचित सभी या किन्हीं आरोपों का विचारण एक साथ कर सकता है।

(ii) धारा 219, 220, 221 और 223 के उपबन्ध, धारा 218 के सामान्य नियम के अपवाद प्रस्तुत करती है।

Q. जब किसी व्यक्ति पर 12 माह के अन्दर एक से अधिक अपराधों का अभियोग है, और वे एक ही किस्म के हैं, तो कितने अपराधों का एक साथ आरोपण और विचारण किया जा सकेगा?

A. धारा 219 के अनुसार-तीन से अधिक अपराधों का।

Q. ''एक ही किस्म के अपराध'' से आप क्या समझते हैं''?

A. अपराध एक ही किस्म के तब होते हैं जब वे भारतीय दण्ड संहिता या किसी विशेष या स्थानीय विधि की एक ही धारा के अधीन दण्ड की समान मात्रा से दण्डनीय होते हैं। परन्तु इसके प्रयोजन के लिए भारतीय दण्ड संहिता की धारा 379 और 380 के अधीन दण्ड तथा उसके प्रयत्न तथा दुष्प्रेरण हालांकि एक ही दण्ड से दण्डनीय नहीं है तो भी वे एक ही किस्म के अपराध समझे जायेंगे। (धारा 219 (2))।

Q. संहिता की धारा 220 क्या उपबन्ध करती है?

A. यह धारा एक से अधिक अपराधों के लिए एक साथ आरोपण और विचारण का उपबन्ध करती है।

Q. संहिता की धारा 220 की उपधारा (4) क्या उपबन्ध करती है?

A. इसके अनुसार जब कई कार्य जिनमें से एक या एक से अधिक से स्वयं अपराध बनते हैं, मिलाकर भिन्न अपराध बनते हैं तब ऐसे कार्यों से मिलकर बने अपराध के लिए और कार्यों में से एक या अधिक द्वारा बने किसी अपराध के लिए एक ही विचारण में आरोप लगाया जा सकेगा।

Q. 'क' छः अन्य व्यक्तियों के सहित बल्वा करने, घोर उपहति करने और ऐसे लोक सेवक पर, जो बल्वे को दबाने का प्रयास ऐसे लोक सेवक के नाते अपने कर्त्तव्य का निर्वहन करने में कर रहा है, हमला करने का अपराध करता है। क्या 'क' पर दण्ड संहिता की धारा 147, 325 और 152 के अधीन पृथक आरोप लगाया और दोषसिद्ध किया जा सकेगा?

A. हां! संहिता की धारा 220 (1) के आलोक में एक ही व्यक्ति द्वारा एक ही संव्यवहार के एक ही अनुक्रम में, किये जाने के कारण 'क' पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 147, 325 और 152 के अधीन आपराधों के लिए पृथकतः आरोप लगाया जा सकेगा और वह दोष सिद्ध किया जा सकेगा।

Q. 'क' दिन में गृहभेदन इस आशय से करता है कि जारकर्म करे और ऐसे प्रवेश किये गये गृह में 'ख' की पत्नी के साथ जारकर्म करता है। 'क' पर किस तरह आरोप लगाया जा सकेगा?

A. 'क' पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 454 और 497 के अधीन अपराधों के लिए पृथकतः आरोप लगाया जा सकेगा और वह दोषसिद्ध किया जा सकेगा। (धारा 220 का दृष्टान्त ख)।

Q. 'ख' को 'क' लूटता है, और ऐसा करने में उसे स्वेच्छया उपहति कारित करता है। 'क' पर किन अपराधों का और किस प्रकार आरोपण और विचारण हो सकेगा?

A. संहिता की धारा 220 (4) के आलोक में 'क' पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 325, 392, और 394 के अधीन अपराधों के लिए पृथकत: आरोप लगाया जा सकेगा दोषसिद्ध किया जा सकेगा।

Q. जहां इस बारे में सन्देह है कि कई अपराधों में से कौन-सा अपराध किया गया है, वहां पर अभियुक्त पर किन अपराधों का आरोप लगाया जाकर विचारण हो सकेगा?

A. ऐसी स्थिति में अभियुक्त पर ऐसे सब अपराध या उनमें से कोई करने का आरोप लगाया जा सकेगा और ऐसे आरोपों में से कितनों ही का एक साथ विचारण किया जा सकेगा या उस पर उक्त अपराधों में से किसी एक को करने का अनुकल्पत: आरोप लगाया जा सकेगा। (धारा 221 (1))।

Q. यदि किसी अभियुक्त पर एक अपराध का आरोप लगाया गया है और साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि उसने भिन्न अपराध किया है, जिसके लिए उस पर धारा 221 (1) के उपबन्धों के अधीन आरोप लगाया जा सकता था, तो वह किस अपराध के लिए दोषसिद्धि किया जा सकता है?

A. संहिता की धारा 221 की उपधारा (2) के अनुसार ऐसी स्थिति में अभियुक्त उस अपराध के लिए दोषसिद्धि किया जा सकेगा जिसका उसके द्वारा किया जाना दर्शित है, भले ही उसके लिए उस पर आरोप नहीं लगाया गया था।

Q. 'क' पर केवल चोरी का आरोप है। यह प्रतीत होता है कि उसने आपराधिक न्यासभंग का या चुराई हुई सम्पत्ति प्राप्त करने का अपराध किया है। तो क्या वह केवल चोरी के अपराध के लिए ही दोषसिद्ध किया जा सकेगा, जिसका उस पर आरोप है?

A. नहीं! वह यथास्थिति आपराधिक न्यास-भंग या चुराई हुई सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए दोषसिद्ध किया जा सकेगा, यद्यपि उस पर उस अपराध का आरोप नहीं लगाया गया था।

Q. जब किसी व्यक्ति पर ऐसे अपराध का आरोप है जिसमें कई विशिष्टियाँ हैं, जिनमें से केवल कुछ के संयोग से एक पूरा छोटा अपराध बनता है, और ऐसा संयोग साबित हो जाता है, किन्तु शेष विशिष्टियाँ साबित नहीं होती हैं, तो वह किस अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा सकेगा?

A. ऐसी स्थिति में वह व्यक्ति उस छोटे अपराध के लिए दोषसिद्धि किया जा सकेगा, भले ही उस पर उसका आरोप नहीं था। (धारा 222 (1))।

Q. जब किसी व्यक्ति पर किसी अपराध का आरोप है, तब क्या वह उस अपराध को करने के प्रयत्न के लिए दोषसिद्धि किया जा सकता है?

A. हां! वह उस अपराध को करने के प्रयत्न के लिए दोषसिद्ध किया जा सकता है, यद्यपि प्रयत्न के लिए पृथक् आरोप नहीं लगाया गया हो। (धारा 222 (3))।

Q. 'क' पर घोर उपहति कारित करने के लिए भारतीय दण्ड संहिता की धारा 325 के अधीन आरोप है। 'क' यह साबित कर देता है कि उसने घोर और आकस्मिक प्रकोपन पर कार्य किया था। तो इसका क्या प्रभाव होगा?

A. 'क' भारतीय दण्ड संहिता की धारा 335 के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकेगा। यद्यपि कि इसका उस पर आरोप नहीं था। (धारा 222 दृष्टांत एवं)

Q. वे कौन-से व्यक्ति हैं जिन पर संयुक्त रूप से आरोप लगाया जाकर उनका एक साथ विचारण किया जा सकेगा?

A. धारा 223 के अनुसार–(i) वे व्यक्ति जिन पर एक ही संव्यवहार अनुक्रम में एक ही अपराध का अभियोग है;

(ii) वे व्यक्ति जिन पर किसी अपराध का अभियोग है, और वे भी दिन पर दुष्प्रेरण या प्रयत्न करने क अभियोग है;

(iii) वे व्यक्ति जिन पर 1 वर्ष के अन्तर्गत संयुक्त रूप से उनके द्वारा किये गये एक ही किस्म के एकाधिक अपराधों का अभियोग है;

(iv) वे व्यक्ति जिन पर एक ही संव्यवहार के अनुक्रम में किये गये भिन्न अपराधों का अभियोग है;

(v) वे व्यक्ति जिन पर चोरी, उद्दापन, छल, आपराधिक दुर्विनियोग, और इनके प्रयत्न का दुष्प्रेरण का अभियोग है;

(vi) वे व्यक्ति जिन पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 411 एवं 414 के अधीन अपराध का अभियोग है।

(vii) वे जिन पर भारतीय दण्ड संहिता के अध्याय 12 के अन्तर्गत सिक्के के कूटकरण प्रयत्न एवं दुष्प्रेरण का अभियोग है;

Q. जहां अनेक व्यक्तियों पर पृथक आरोप लगाया जाता है, और वे व्यक्ति धारा 223 में विनिर्दिष्ट कोटियों में से नहीं आते हैं, वहां क्या मजिस्ट्रेट ऐसे सब व्यक्तियों का विचारण एक साथ कर सकता है?

A. हां! यदि ऐसे व्यक्ति लिखित आवेदन द्वारा ऐसा चाहते हैं और मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि उससे ऐसे व्यक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा और ऐसा करना उत्तम है।

Q. यदि किसी व्यक्ति के विरुद्ध कई आरोप लगाये गये हैं और वह उनमें से एक या अधिक के लिए दोषसिद्ध कर दिया जाता है, तब परिवादी या अभियोजन क्या शेष आरोपों को वापस ले सकता है?

A. हां! न्यायालय की सम्पत्ति से। (धारा 224)।

Q. जब किसी व्यक्ति के विरुद्ध लगाये गये आरोपों में से एक या अधिक को न्यायालय की सम्मति से वापस ले लिया जाता है तो उसका प्रभाव क्या होगा?

A. आरोप या आरोपों को वापस लेने का प्रभाव ऐसे आरोपों से दोषमुक्ति होगा। (धारा 224)।

सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण (Trial before a Courts of Session) (धारा 225-237)

सेशन न्यायालय के समक्ष प्रत्येक विचारण में, अभियोजन का संचालन लोक अभियोजक द्वारा किया जाता है (धारा 225) और जब अभियुक्त धारा 209 के अधीन मामले के सुपुर्दगी के अनुसरण में न्यायालय के समक्ष हाजिर होता है या लाया जाता है तब लोक अभियोजक अपने मामले का कथन, अभियुक्त के विरुद्ध लगाये गए आरोपों का वर्णन करते हुए और यह बताते हुए आरम्भ करेगा कि वह अभियुक्त के दोष को किस साक्ष्य से साबित करने की प्रस्थापना करता है। (धारा 226)। इस प्रस्थापना के साथ ही सत्र न्यायालय की विचारण प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है, जिसकी परिणति अभियुक्ति का उन्मोचन (धारा 227) या अभिवाक पर दोषसिद्धि अथवा दोषमुक्ति (धारा 232) अथवा दोषसिद्धि (235) के रुप में हो सकती है।

उन्मोचन–धारा 227 के अनुसार यदि मामले के अभिलेख और उसके साथ दी गई दस्तावेजों पर विचार कर लेने पर, और अभियुक्त और अभियोजन की सुनवाई कर लेने के पश्चात् न्यायाधीश यह समझता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है तो वह अभियुक्त को उन्मोचित कर देगा और ऐसा करने के अपने कारणों को लेखबद्ध करेगा।

आरोप विरचन–यदि विचार और सुनवाई के पश्चात् न्यायाधीश की यह राय है कि ऐसी उपधारणा करने का आधार है कि अभियुक्त ने ऐसा अपराध किया है जो;

(क) अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय नहीं है कि तो यह, अभियुक्त के विरुद्ध आरोप विरचित कर सकता है और आदेश द्वारा, मामले को विचारण के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या कोई अन्य प्रथम श्रेणी न्यायिक मजिस्ट्रेट को अन्तरित कर सकता है, और ऐसी तारीख को जो वह ठीक समझे, अभियुक्त को यथास्थिति मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिर होने का निर्देश दे सकेगा और तब ऐसा मजिस्ट्रेट उस मामले का विचारण पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित वारण्ट मामलों के विचारण के लिए प्रक्रिया के अनुसार करेगा;

(ख) अनन्यतः उस न्यायालय द्वारा विचारणीय है तो वह अभियुक्त के विरुद्ध आरोप लिखित रूप में विरचित करेगा। (धारा 228(1))।

ऐसा आरोप अभियुक्त को पढ़कर सुनाया और समझाया जाएगा और अभियुक्त से यह पूछा जाएगा कि क्या वह दोषी होने का अभिवचन करता है या विचारण किए जाने का दावा करता है। [धारा 228(2)]।

धारा 228 के अन्तर्गत मामला अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय न होने की स्थिति में सेशन न्यायालय द्वारा मामले की विचारण के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के अतिरिक्त प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट को अन्तरित करने को उपबन्ध दण्ड प्रक्रिया संहिता संशोधन अधिनियम, 2005 द्वारा किया गया है।

अभिवाक् पर दोषसिद्धि–यदि अभियुक्त दोषी होने का अभिवचन करता है तो न्यायाधीश उस अभिवाक को लेखबद्ध करेगा और उसके आधार पर उसे, स्वविवेकानुसार, दोषसिद्ध कर सकता है। (धारा 229)।

यदि अभियुक्त अभिवचन करने से इंकार करता है या अभिवचन नहीं करता है या विचारण किए जाने का दावा करता है या सिद्धदोष नहीं किया जाता है तो न्यायाधीश साक्षियों की परीक्षा करने के लिए तारीख नियत करेगा और अभियोजन के आवेदन पर किसी साक्षी को हाजिर होने या कोई दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने को विश करने के लिए कोई आदेशिका जारी कर सकता है। (धारा 230)।

न्यायाधीश, स्वविवेकानुसार, किसी साक्षी की प्रतिपरीक्षा तब तक के लिए, जब तक किसी अन्य साक्षी या साक्षियों की परीक्षा न कर ली जाए, आस्थगित करने की अनुज्ञा दे सकता है या किसी साक्षी को अतिरिक्त प्रतिपरीक्षा के लिए पुनः बुला सकता है। [धारा 231 (2)]

दोषमुक्ति–अभियोजन का साक्ष्य लेने, अभियुक्त की परीक्षा करने और अभियोजन और प्रतिरक्षा को सुनने के पश्चात् यदि न्यायाधीश का यह विचार है कि इस बात का साक्ष्य नहीं है कि अभियुक्त ने अपराध किया है तो न्यायाधीश दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करेगा। (धारा 232) 1)

प्रतिरक्षा–धारा-233-(1) जहां अभियुक्त दोषमुक्त नहीं किया जाता है वहां उससे अपेक्षा की जाएगी कि अपनी प्रतिरक्षा आरम्भ करे और कोई भी साक्ष्य जो उसके समर्थन में उसके पास हो पेश करे।

(2) यदि अभियुक्त कोई लिखित कथन देता है, तो न्यायाधीश उसे अभिलेख में फाइल करेगा।

(3) अभियुक्त किसी साक्षी को हाजिर होने या कोई दस्तावेज या चीज पेश करने को विवश करने के लिए कोई आदेशिका जारी करने के लिए आवेदन करता है तो न्यायाधीश ऐसी आदेशिका जारी करेगा। किन्तु यदि आवेदन तंग करने या विलम्ब करने या न्याय के उद्देश्यों को विफल करने के प्रयोजन से किया गया है तो न्यायाधीश कारणों को लेखबद्ध करके आदेशिका जारी करने से मना कर देगा।

जब प्रतिरक्षा के साक्षियों की परीक्षा समाप्त हो जाती है तो अभियोजक अपने मामले का उपसंहार करेगा और अभियुक्त या उसका प्लीडर उत्तर देने का हकदार होगा। परन्तु जहां अभियुक्त या उसका प्लीडर कोई विधि-प्रश्न उठाता है वहां अभियोजन न्यायाधीश की अनुज्ञा से ऐसे विधि-प्रश्नों पर अपना निवेदन कर सकता है। (धारा 234)।

दोषमुक्ति या दोषसिद्धि का निर्णय–धारा 235 के अनुसार बहस और विधि के प्रश्न, यदि कोई हो, को सुनने के पश्चात् मामले में यथास्थिति दोषमुक्ति अथवा दोषसिद्धि का निर्णय देगा, किन्तु दोषसिद्धि के प्रश्न पर अभियुक्त को सुना जायेगा, किन्तु यदि धारा 360 के अधीन कार्यवाही किया जाता है तो अभियुक्त को सुना जाना आवश्यक नहीं होगा। धारा 236 के अन्तर्गत पूर्व दोषसिद्धि को ध्यान में लिए जाने सम्बन्धी उपबंध वर्णित है।

धारा 199 (2) के अधीन संस्थित मामलों में क्रिया-धारा 199 की उपधारा (2) के अधीन अपराध का संज्ञान करने वाला सेशन न्यायालय मामले का विचारण, मजिस्ट्रेट के न्यायालय के समक्ष पुलिस रिपोर्ट से भिन्न आधार पर संस्थित किए गए वारण्ट मामलों के विचारण की प्रक्रिया के अनुसार करेगा। (धारा 237 (1))।

इस धारा के अधीन विचारण पक्षकारों की वांछा पर बंद कमरे में किया जा सकता है। (धारा 237(2)। यदि न्यायालय अभियुक्त को उन्मोचित या दोषमुक्त किए जाने का आदेश देता है तो वह उसे प्रतिकर (एक हजार रुपये से अनधिक) दिए जाने का भी आदेश दे सकता है (किन्तु ऐसा आदेश राष्ट्रपति/उपराष्ट्रपति/राज्यपाल के विरुद्ध नहीं किया जा सकता है), जिसे जुर्माने की भाँति वसूल किया जा सकता है, किन्तु यदि अपील लम्बित है तो प्रतिकर उस पर अपील निर्णीत हो जाने के बाद ही देय होगा। (धारा 237 (2) से (8)।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के किन धाराओं में सत्र न्यायालय के समक्ष विचारण की प्रक्रिया का प्रावधान किया गया है?

A. धारा 225 से 237।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत हत्या के मामले में कौन सा न्यायालय विचारण कर सकता है?

A. सत्र न्यायालय।

Q. विचारण से आप क्या समझते हैं?

A. विचारण न्यायालय के समक्ष किसी तथ्य के सत्यता या असत्यता जानने की वह विधिक कार्यवाही है, जिसका अन्त दोषमुक्ति या दोषसिद्धि के रूप में होती है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता में कितने प्रकार के विचारणों की व्यवस्था की गयी है?

A. निम्नलिखित 4 प्रकार–
(i) सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण,
(ii) वारण्ट मामलों का विचारण,
(iii) समन मामलों का विचारण,
(iv) संक्षिप्त विचारण।

Q. सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण की प्रक्रिया संहिता की किन-किन धाराओं में उपबन्धित है?

A. धारा 225 से लेकर 236 तक में। (अध्याय 18 में)।

Q. सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण में अभियोजन का संचालन कौन करता है?

A. लोक अभियोजक (धारा 225)।

Q. सेशन विचारण में न्यायाधीश अभियुक्त को कब उन्मोचित करेगा?

A. जब मामले के अभिलेख, अभियोजन और अभियुक्त की सुनवाई कर लेने के पश्चात् न्यायाधीश यह समझता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने का पर्याप्त आधार नहीं है। (धारा 227)।

Q. सेशन न्यायालय संहिता की किस धारा के अन्तर्गत अभियुक्त के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए सशक्त है?

A. धारा 228 के अन्तर्गत।

Q. किस वाद में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह निर्धारित किया गया है कि धारा 227 धारा 228 के अन्तर्गत न्यायालय अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्ट्या यह देखता है कि मामला बन रहा है या नहीं?

A. महाराष्ट्र राज्य बनाम प्रिया शरन महाराजा (1997)4 S.S.C. 393

Q. यदि सेशन न्यायालय की यह राय है कि मामला अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय नहीं है, तो वह क्या करेगा?

A. तो वह अभियुक्त के विरुद्ध आरोप विरचित करके मामले को विचारण के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेज देगा। (धारा 228 (1) (क))।

Q. जब मामला सत्र न्यायालय द्वारा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को विचारण के लिए अन्तरित किया जाता है तो वह कौन-सी प्रक्रिया के अनुसार उसका विचारण करेगा?

A. पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित वारण्ट मामलों के विचारण के लिए प्रक्रिया के अनुसार। (अर्थात् धारा 228 से लेकर 243 एवं 248 तक में)।

Q. संहिता की धारा 228 के अन्तर्गत यदि मामला अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा ही विचारणीय है तो मजिस्ट्रेट क्या करेगा?

A. तो वह अभियुक्त के विरुद्ध आरोप लिखित रूप में विरचित करेगा, उसे पढ़कर अभियुक्त को सुनायेगा, समझायेगा, और उससे यह पूछेगा कि क्या वह दोषी होने का अभिवचन करता है या विचारण किये जाने का दावा करता है।

Q. संहिता की धारा 229 क्या उपबन्ध करती है?

A. यह धारा उपबन्ध करती है कि यदि अभियुक्त दोषी होने का अभिवचन करता है तो न्यायाधीश उसके अभिवाक् को लेखबद्ध करते हुए उसे स्वविवेकानुसार दोषसिद्धि कर सकेगा।

Q. सत्र विचारण में अभियोजन साक्ष्य के लिए तारीख कब नियत की जाती है?

A. जब–(i) अभियुक्त अभिवचन करने से इंकार करता है या,
(ii) अभिवचन नहीं करता है,
(iii) विचारण किये जाने का दावा करता है, या
(iv) धारा 229 के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जाता है। (धारा 230)।

Q. यदि सम्बद्ध विषय के बारे में अभियोजन का साक्ष्य लेने, अभियुक्त की परीक्षा करने और दोनों पक्ष को सुनने के पश्चात् न्यायाधीश का विचार है कि अभियुक्त द्वारा अपराध किये जाने का कोई साक्ष्य नहीं है, तो वह क्या करेगा?

A. ऐसी स्थिति में वह दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करेगा। (धारा 232)।

Q. सत्र विचारण में संहिता की किस धारा के अन्तर्गत अभियुक्त अपनी प्रतिरक्षा आरम्भ करता है?

A. धारा 233 के अन्तर्गत।

Q. अभियुक्त द्वारा किसी साक्षी को हाजिर होने, या किसी चीज या दस्तावेज पेश करने के लिए आदेशिका जारी करने के लिए आवेदन को न्यायाधीश कब नामंजूर कर सकता है?

A. जब उसका विचार है कि आवेदन–
(i) तंग करने या,
(ii) विलम्ब करने या,
(iii) न्याय के उद्देश्यों को विफल करने के प्रयोजन से किया गया है।

Q. न्यायाधीश सत्र मामले में निर्णय कब देगा?

A. बहस और विधि प्रश्न (यदि कोई हो) सुनने के पश्चात्। (धारा 235)।

Q. सत्र न्यायाधीश यदि अभियुक्त को धारा 235 के अधीन दोषसिद्ध करता है और धारा 360 के अधीन अभियुक्त को न्यायालय सदाचरण की परिवीक्षा पर भर्त्सना के पश्चात् छोड़ देने का आदेश नहीं देता है, तो क्या करेगा?

A. ऐसी स्थिति में न्यायाधीश दण्ड के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनेगा और तब विधि के अनुसार उसके बारे में दण्डादेश देगा।

Q. तरलोक सिंह बनाम पंजाब राज्य, 1977 सु.को. के प्रकरण में दण्डादेश के प्रश्न पर सुनने सम्बन्धी विधि के विषय में क्या नियम प्रतिपादित किया गया?

A. (i) यह कि, दण्डादेश के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनने का अवसर देने में विफल होना किसी भी रूप में दोषसिद्धि को प्रभावित नहीं करता, क्योंकि सुनवाई का अवसर दण्डादेश के प्रश्न पर दिया जाना अपेक्षित हैं, दोषसिद्धि के प्रश्न पर नहीं;
(ii) यह कि, यदि विचारण न्यायालय अभियुक्त को दण्डादेश के प्रश्न पर सुनने का अवसर नहीं देता, तो अपील न्यायालय के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह मामले को उसके पास प्रतिप्रेषित करे। वह स्वयं वह अवसर अभियुक्त को प्रदान कर सकता है;
(iii) यह कि, यदि कानून द्वारा उपबन्धित न्यूनतम दण्ड का ही आदेश दिया गया है, तो दण्डादेश के प्रश्न पर सुनने का अवसर देने का प्रश्न नहीं उठता।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत पूर्व दोषसिद्धि के परिणामस्वरूप प्रवर्धित दण्ड के उत्तरदायित्व के निर्धारण के निमित्त एक विशेष प्रक्रिया उपबन्धित की गयी है?

A. धारा 236 के अन्तर्गत।

Q. संहिता की धारा 199 की उपधारा (2) के अधीन अपराध का संज्ञान करने वाला सेशन न्यायालय मामले का विचारण किस प्रक्रिया के अनुसार करेगा?

A. मजिस्ट्रेट के न्यायालय के समक्ष पुलिस रिपोर्ट से भिन्न आधार पर संस्थित किये गये वारण्ट मामलों की प्रक्रिया के अनुसार। (धारा 237)।

Q. यदि संहिता की धारा 199 की उपधारा (2) के अधीन अभियोग में धारा 237 के अन्तर्गत विचारण करने वाला न्यायाधीश, यह पाता है कि अभियोग लगाने का कोई उचित कारण नहीं था, तो उस व्यक्ति को, कितनी रकम का प्रतिकर अभियुक्त को दिये जाने का आदेश दे सकेगा?

A. संहिता धारा 237 की उपधारा (4) के अनुसार एक हजार रुपये से अनधिक का जितना वह युक्तियुक्त समझे।

Q. संहिता की धारा 237 की उपधारा (4) के अधीन प्रतिकर देने के लिए जिस व्यक्ति को आदेश दिया जाता है, वहां प्रतिकर के संदाय के सम्बन्ध में उस आदेश की अपील वह कहां कर सकता है?

A. उच्च न्यायालय में।

मजिस्ट्रेटों द्वारा वारण्ट-मामलों का विचारण (Trial of Warrant Cases by Magistrates) (धारा 238-250)

क-पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित मामले

संहिता के अध्याय 19 में मजिस्ट्रेटों के द्वारा विचारण सम्बन्धी प्रावधानों को तीन भागों विभाजित किया गया है, जिनमें खण्ड 'क' के अधीन पुलिस रिपोर्ट संस्थित मामलों (धारा 238 से 243 एवं खण्ड ख के अन्तर्गत पुलिस रिपोर्ट से भिन्न आधार पर संस्थित मामलों का विचारण प्रक्रिया विहित है। खण्ड ग के अन्तर्गत विचारण की समाप्ति सम्बन्धी उपबंध वर्णित है जिसमें दोषमुक्ति या दोषसिद्धि (धारा 248), परिवादी की अनुपस्थिति (धारा 249) व प्रतिकर (धारा 250) के सम्बन्ध में प्रावधान किया गया है।

इस अध्याय के अन्तर्गत दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 19 के द्वारा संहिता के धारा 242 (1) में एक परन्तुक जोड़कर यह उपबंध किया गया है कि ''मजिस्ट्रेट अन्वेषण के दौरान पुलिस के द्वारा अभिलिखित किए गए साक्षियों के अभिकथन अभियुक्त को अग्रिम रूप से प्रदान करेगा,'' उस समय जब अभियोजन का साक्ष्य लिए जाने के लिए तारीख नियत किया जा रहा हो।

धारा 238 के अनुसार जब पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित किसी वारण्ट-मामले में अभियुक्त विचारण के प्रारम्भ में मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिर होता है या लाया जाता है तब मजिस्ट्रेट अपना यह समाधान कर लेगा कि उसने धारा 207 के उपबन्धों का अनुपालन कर लिया है। अर्थात् अभियुक्त को पुलिस रिपोर्ट अथवा अन्य दस्तावेजों की प्रतिलिपियाँ दे दी गयी हैं।

उन्मोचन–यदि धारा 173 के अधीन पुलिस रिपोर्ट और उसके साथ भेजी गई दस्तावेजों पर विचार कर लेने पर और अभियुक्त की ऐसी परीक्षा, यदि कोई हो, जैसी मजिस्ट्रेट आवश्यक समझे, कर लेने पर और अभियोजन और अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् मजिस्ट्रेट अभियुक्त के विरुद्ध आरोप को निराधार समझता है तो वह उसे उन्मोचित कर देगा ऐसा करने के अपने कारण लेखबद्ध करेगा। (धारा 239)।

आरोप विरचन–धारा 240 (1) के अनुसार यदि मजिस्ट्रेट की यह राय है कि ऐसी उपधारणा करने का आधार है कि अभियुक्त ने इस अध्याय के अधीन विचारणीय ऐसा अपराध किया है जिसका विचारण करने के लिए वह मजिस्ट्रेट सक्षम है और उसके द्वारा पर्याप्त रूप से दण्डित किया जा सकता है, तो वह अभियुक्त के विरुद्ध आरोप लिखित रूप में विरचित करेगा।

आरोप अभियुक्त को पढ़कर सुनाया और समझाया जाएगा और उससे पूछा जाएगा कि क्या वह उस अपराध का, जिसका आरोप लगाया गया है, दोषी होने का अभिवाक करता है या विचारण किए जाने का दावा करता है। (धारा 240(4))।

दोषसिद्धि–यदि अभियुक्त दोषी होने का अभिवचन करता है तो मजिस्ट्रेट उस अभिवाक् को लेखबद्ध करेगा और उसे स्वविवेकानुसार, दोषसिद्ध कर सकेगा। (धारा 241)

धारा 242 (1) के अनुसार यदि अभियुक्त अभिवचन करने से इंकार करता है या अभिवचन नहीं करता है या विचारण किए जाने का दावा करता है या मजिस्ट्रेट अभियुक्त को दोषसिद्ध नहीं करता है तो वह मजिस्ट्रेट साक्षियों की परीक्षा के लिए तारीख नियत करेगा।

मजिस्ट्रेट, अभियोजन के आवेदन पर उसके साक्षियों में से किसी को हाजिर होने या कोई दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने का निदेश देने वाला समन भी जारी कर सकता है।

ऐसी नियत तारीख पर मजिस्ट्रेट ऐसा सब साक्ष्य लेने के लिए अग्रसर होगा जो अभियोजन के समर्थन में पेश किया जाता है, परन्तु मजिस्ट्रेट किसी साक्षी की प्रतिपरीक्षा तब तक के लिए, जब तक किसी अन्य साक्षी अथवा साक्षियों की परीक्षा नहीं कर ली जाती, आस्थगित करने की अनुमति दे सकता है, अथवा किसी साक्षी को अतिरिक्त प्रति-परीक्षा के लिए पुनः बुला सकता है। (धारा 242 (2) (3)।

धारा 243 (1) के अनुसार अभियुक्त से अपेक्षा की जाएगी कि वह अपनी प्रतिरक्षा आरम्भ करे और अपना साक्ष्य पेश करे; और यदि अभियुक्त कोई लिखित कथन देता है तो मजिस्ट्रेट उसे अभिलेख में फाइल करेगा।

यदि अभियुक्त अपनी प्रतिरक्षा आरम्भ करने के पश्चात् मजिस्ट्रेट से आवेदन करता है कि वह परीक्षा या प्रतिपरीक्षा के, या कोई दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने के प्रयोजन से हाजिर होने के लिए किसी साक्षी को विवश करने के लिए कोई आदेशिका जारी करे तो, मजिस्ट्रेट ऐसी आदेशिका जारी करेगा।

परन्तु जब अपनी प्रतिरक्षा आरम्भ करने के पूर्व अभियुक्त ने किसी साक्षी की प्रतिपरीक्षा कर ली है या उसे प्रतिपरीक्षा करने का अवसर मिल चुका है तब ऐसे साक्षी को हाजिर होने के लिए इस धारा के अधीन तब तक विवश नहीं किया जाएगा जब तक मजिस्ट्रेट

का यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसा करना न्याय के प्रयोजनों के लिए आवश्यक है। (धारा 243 (2))।

विचारण के लिए हाजिर होने में उस साक्षी द्वारा किए जाने वाले उचित व्यय न्यायालय में जमा कर दिए जाने की अपेक्षा मजिस्ट्रेट अभियुक्त से कर सकता है। (धारा 243 (3))।

पुलिस रिपोर्ट से भिन्न आधार पर संस्थित मामले

धारा 244, (1) के अनुसार जब पुलिस रिपोर्ट से भिन्न आधार पर संस्थित किसी वारण्ट-मामले में मजिस्ट्रेट के समक्ष अभियुक्त हाजिर होता है या लाया जाता है तब मजिस्ट्रेट अभियोजन को सुनने के लिए और ऐसा सब साक्ष्य लेने के लिए अग्रसर होगा जो अभियोजन के समर्थन में पेश किया जाए।

मजिस्ट्रेट, अभियोजन के आवेदन पर, उसके साक्षियों में से किसी को हाजिर होने या कोई दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने का निदेश देने वाला समन जारी कर सकता है। (धारा 244 (2))।

उन्मोचन–सब साक्ष्य लेने पर मजिस्ट्रेट का, उन कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, यह विचार है कि अभियुक्त के विरुद्ध ऐसा कोई मामला सिद्ध नहीं हुआ है जो अखण्डित रहने पर उसकी दोषसिद्धि के लिए समुचित आधार हो तो मजिस्ट्रेट उसको उन्मोचित कर देगा। (धारा 245)।

आरोप–धारा 246. (1) ऐसा साक्ष्य ले लिए जाने पर या मामले के किसी पूर्वतन प्रक्रम में मजिस्ट्रेट की यह राय है कि ऐसी उपधारणा करने का आधार है कि अभियुक्त ने ऐसा अपराध किया है जिसका विचारण करने के लिए वह मजिस्ट्रेट सक्षम है और जो उसकी राय में उसके द्वारा पर्याप्त रूप से दण्डित किया जा सकता है तो वह अभियुक्त के विरुद्ध आरोप लिखित रूप में विरचित करेगा। आरोप अभियुक्त को पढ़कर सुनाया और समझाया जाएगा और उससे पूछा जाएगा कि क्या वह अभिवाक् करता है अथवा प्रतिरक्षा करना चाहता है। यदि अभियुक्त दोषी होने का अभिवचन करता है, तो मजिस्ट्रेट उस अभिवाक् को लेखबद्ध करेगा और उसके आधार पर उसे, स्वविवेकानुसार, दोषसिद्ध कर सकेगा। (धारा 246 (3))।

यदि अभियुक्त अभिवचन करने से इंकार करता है या अभिवचन नहीं करता है या विचारण किए जाने का दावा करता है या यदि दोषसिद्ध नहीं किया जाता है तो उससे अपेक्षा की जाएगी कि वह मामले की अगली सुनवाई के प्रारम्भ में, या यदि मजिस्ट्रेट उन कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, ऐसा ठीक समझता है तो, तत्काल बताए कि क्या वह अभियोजन के उन साक्षियों में ले, जिनका साक्ष्य लिया जा चुका है, किसी की प्रतिपरीक्षा करना चाहता है और यदि करना चाहता है तो किस की। यदि वह कहता है कि वह ऐसा चाहता है तो उसके द्वारा नामित साक्षियों को पुनः बुलाया जाएगा और प्रतिपरीक्षा के और पुनः परीक्षा (यदि कोई हो) के पश्चात् वे उन्मोचित कर दिए जाएंगे। (धारा 246 (5))। फिर अभियोजन के किन्हीं शेष साक्षियों का साक्ष्य लिया जाएगा और प्रतिपरीक्षा के और पुनः परीक्षा (यदि कोई हो) के पश्चात् वे भी उन्मोचित कर दिए जाएंगे। (246 (6)। तत्पश्चात् अभियुक्त से अपेक्षा की जाएगी कि वह अपनी प्रतिरक्षा आरम्भ करने और अपना साक्ष्य पेश करे। अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत प्रतिरक्षा का साक्ष्य धारा 243 के अधीन ग्रहण किया जायेगा।

विचारण की समाप्ति (248-250)

धारा 248 के अनुसार–(1) किसी मामले में, मजिस्ट्रेट इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अभियुक्त दोषी नहीं है तो वह दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करेगा।

(2) यदि मजिस्ट्रेट इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अभियुक्त दोषी है किन्तु वह धारा 325 या धारा 360 के उपबन्धों के अनुसार कार्यवाही नहीं करता है वहां वह दण्ड के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनने के पश्चात् विधि के अनुसार उसके बारे में दण्डादेश दे सकता है।

परिवादी की अनुपस्थिति–जब कार्यवाही परिवाद पर संस्थित की जाती है और मामले की सुनवाई के लिए नियत किसी दिन परिवादी अनुपस्थित है और अपराध का विधिपूर्वक शमन किया जा सकता है या वह संज्ञेय अपराध नहीं है तब मजिस्ट्रेट, इसमें पूर्व किसी बात के होते हुए भी, आरोप के विरचित किए जाने के पूर्व किसी भी समय अभियुक्त को, स्वविवेकानुसार उन्मोचित कर सकेगा। (धारा 249)।

प्रतिकर-यदि परिवाद पर या पुलिस अधिकारी या मजिस्ट्रेट को दी गई इत्तिला पर संस्थित किसी मामले में मजिस्ट्रेट के समक्ष एक या अधिक व्यक्तियों पर मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय किसी अपराध का अभियोग है और वह मजिस्ट्रेट अभियुक्तों को या उनमें से किसी को उन्मोचित या दोषमुक्त कर देता है और उसकी यह राय है अभियोग लगाने का कोई उचित कारण नहीं था तो वह मजिस्ट्रेट उन्मोचन या दोषमुक्ति के अपने आदेश द्वारा, यदि वह व्यक्ति जिसके परिवाद या इत्तिला पर अभियोग लगाया गया था उपस्थित है तो उससे अपेक्षा कर सकेगा कि वह तत्काल कारण दर्शित करे कि वह उस अभियुक्त को, प्रतिकर क्यों न दे यदि ऐसा व्यक्ति उपस्थित नहीं है तो हाजिर होने और उपर्युक्त रूप से कारण दर्शित करने के लिए उसके नाम समन जारी किए जाने का निदेश दे सकेगा। (धारा 250 (1))।

यदि मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि अभियोग लगाने का कोई उचित कारण नहीं था तो जितनी रकम का जुर्माना करने के लिए वह सशक्त है, उससे अनधिक इतनी रकम का, जितनी वह

अवधारित करे, प्रतिकर ऐसे परिवादी या सूचना देने वाले द्वारा अभियुक्त को दिए जाने का आदेश, ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे दे सकता है। [धारा 250 (2)]।

वह व्यक्ति, जो ऐसा प्रतिकर देने के लिए आदिष्ट किया गया है, संदाय में व्यतिक्रम होने पर तीस दिन से अनधिक की अवधि के सादे कारावास से दण्डित किया जा सकता है। [धारा 250 (3)]। प्रतिकर देने के लिए जिस व्यक्ति को आदेश दिया जाता है, ऐसे आदेश के कारण उसे अपने द्वारा किए गए किसी परिवाद या दी गई किसी इत्तिला के बारे में किसी सिविल या दाण्डिक दायित्व से छूट नहीं दी जाएगी। परन्तु अभियुक्त व्यक्ति को इस धारा के अधीन दी गई कोई धनराशि उसी मामले से सम्बन्धित किसी पश्चात्वर्ती सिविल वाद में उस व्यक्ति के लिए प्रतिकर अधिनिर्णीत करते समय हिसाब में ली जाएगी [धारा 250 (5)]।

कोई परिवादी या इत्तिला देने वाला, जो द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा एक सौ रुपए से अधिक प्रतिकर देने के लिए आदिष्ट किया गया है, आदेश की अपील ऐसे कर सकेगा मानो वह परिवादी या इत्तिला देने वाला ऐसे मजिस्ट्रेट द्वारा किए गए विचारण में दोषसिद्ध किया गया है। [धारा 250 (6)]।

जब किसी अभियुक्त व्यक्ति को प्रतिकर दिए जाने का आदेश किया जाता है तब उसे ऐसा प्रतिकर, अपील पेश करने के लिए अनुज्ञात अवधि के बीत जाने के पूर्व या यदि अपील पेश कर दी गई है तो अपील के विनिश्चित कर दिए जाने के पूर्व न दिया जाएगा जहां ऐसा आदेश ऐसे मामले में हुआ है, जो ऐसे अपीलनीय नहीं है, वहां ऐसा प्रतिकर आदेश की तारीख से एक मास की समाप्ति के पूर्व नहीं दिया जाएगा। [धारा 250 (7)]। धारा 250 में वर्णित प्रतिकर सम्बन्धी उपबंध सम्मन मामलों तथा वारण्ट मामलों दोनों पर लागू होता है।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के किन धाराओं में वारण्ट मामले के विचारण की प्रक्रिया दी गयी है?

A. धारा 238 से 250।

Q. वारण्ट मामलों के विचारण की प्रक्रिया, सम्मन मामलों के विचारण की प्रक्रिया से किस प्रकार (निम्न में से) भिन्न है?

A. वारण्ट मामलों में आरोप लगाने के पूर्व अभियोजन के प्रमुख साक्षियों की गवाही लेकर की जाती है। (धारा 240)।

Q. समन के स्थान पर या समन के आलावा वारण्ट जारी करने के लिए ''लिखित में कारण'' देना आवश्यक शर्त है। यह कथन सत्य है या असत्य?

A. सत्य है। (धारा 87)।

Q. संहिता की धारा 238 का उद्देश्य क्या है?

A. सालिगराम बनाम राज्य, 1973 क्रि.लॉ.ज., हि.प्र. के वाद के निर्णयानुसार–इस धारा का उद्देश्य अभियुक्त को अपने विरुद्ध चलाये गये मामले के सभी पहलुओं से अवगत होने में समर्थ बनाना है, जिससे कि वह अपनी प्रतिरक्षा में बिना विलम्ब किये साक्षियों की प्रतिपरीक्षा कर सके।

Q. यदि धारा 173 के अधीन पुलिस रिपोर्ट और उसके साथ भेजी गयी दस्तावेजों पर विचार कर लेने एवं अभियुक्त की परीक्षा कर लेने और अभियोजन एवं अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात्, वारण्ट मामले में, मजिस्ट्रेट यदि अभियुक्त के विरुद्ध आरोप को निराधार समझता है, तो क्या करेगा?

A. संहिता की धारा 239 के अनुसार–वह अभियुक्त को सकारण उन्मोचित कर देगा।

Q. यदि वारण्ट मामलों में किसी मजिस्ट्रेट की यह राय है कि अभियुक्त ने कोई ऐसा अपराध किया है, जिसका विचारण करने के लिए वह सक्षम है और जो उसकी राय में उसके द्वारा पर्याप्त रूप से दण्डित किया जा सकता है, तो वह क्या करेगा?

A. वह मजिस्ट्रेट अभियुक्त के विरुद्ध आरोप लिखित रूप में विरचित करेगा और उसे अभियुक्तइ को पढ़कर सुनायेगा, समझायेगा और पूछेगा कि क्या वह अपराध को स्वीकार करता है या विचारण किये जाने का दावा करता है। (धारा 240)।

Q. पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित मामलों के विचारण में अभियोजन एवं प्रतिरक्षा का साक्ष्य क्रमशः किन धाराओं में प्रस्तुत किया जाता है?

A. क्रमशः धारा 242 एवं धारा 243 के अन्तर्गत।

Q. संहिता की कौन-सी धारा वारण्ट मामलों के विचारण में पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित एवं अन्यथा आधार पर संस्थित मामलों में समान रूप से लागू होती है?

A. धारा 248।

Q. किस प्रकरण में यह मत व्यक्त किया गया है कि–जब किसी व्यक्ति के विरुद्ध आरोप विरचित कर दिया जाय तो इसे विखण्डित करके फिर उसे उन्मोचित नहीं किया जा सकता है?

A. रतीलाल भानजी मिठानी बनाम स्टेट ऑफ बाम्बे, 1974 सी.आर.एल.जे. के प्रकरण में।

Q. संहिता की धारा 248 में क्या उपबन्धित किया गया है?

A. धारा 248 के अनुसार–

(i) यदि मजिस्ट्रेट का निष्कर्ष यह है कि अभियुक्त दोषी नहीं है तो वह दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करेगा,

(ii) यदि निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अभियुक्त दोषी है तो यदि धारा 325 या धारा 360 के अन्तर्गत कार्यवाही नहीं करता है तो दण्ड के प्रश्न पर सुनकर विधि अनुसार दण्ड देगा,

(iii) इसके पश्चात् ही पूर्व दोषसिद्धि के प्रश्न पर सुनेगा।

Q. परिवादी की अनुपस्थिति पर मजिस्ट्रेट अभियुक्त को मामले के किस प्रक्रम पर उन्मोचित कर सकेगा?

A. आरोप से विरचित किये जाने के पूर्व किसी भी समय, स्वविवेकानुसार।

Q. यदि परिवाद पर या पुलिस अधिकारी या मजिस्ट्रेट को दी गयी इत्तिला पर संस्थित किसी मामले में मजिस्ट्रेट अभियुक्त या अभियुक्तों को उन्मोचित या दोषमुक्त करते हुए यह विचार रखता है कि अभियोग लगाने का कोई उचित कारण नहीं था, तो वह क्या कर सकेगा?

A. संहिता की धारा 250 के अनुसार ऐसी स्थिति में वह मजिस्ट्रेट उन्मोचन या दोषमुक्ति के अपने आदेश द्वारा, परिवादकर्त्ता या इत्तिलाकर्त्ता को, अभियुक्त या अभियुक्तों को प्रतिकर क्यों न दे अथवा यदि परिवादी उपस्थिति नहीं है तो उसे समन जारी करने का निर्देश दे सकेगा, कि वह हाजिर हो।

Q. धारा 250 के अधीन प्रतिकर देने हेतु परिवादी या इत्तिला कर्त्ता को मजिस्ट्रेट कितना प्रतिकर अभियुक्त या अभियुक्तों को दिये जाने का निर्देश दे सकेगा?

A. मजिस्ट्रेट उतने से अनधिक प्रतिकर दिये जाने का निर्देश दे सकेगा जितनी रकम का जुर्माना लगाने के लिए वह सशक्त है।

Q. धारा 250 के अन्तर्गत परिवादी यदि प्रतिकर अदा करने में व्यतिक्रम करता है जो मजिस्ट्रेट कितनी अवधि के कारावास का आदेश दे सकता है?

A. 30 दिन से अनधिक अवधि के लिए सादा कारावास।

Q. यदि कोई द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट किसी परिवादी या इत्तिला कर्त्ता के ऊपर 100 रु. से अधिक प्रतिकर देने का आदेश दिया है, तो उस आदेश की अपील वह किस प्रकार कर सकेगा?

A. ऐसी स्थिति में परिवादी या इत्तिला कर्त्ता उस आदेश की अपील ऐसे कर सकेगा मानों वह परिवादी या इत्तिलाकर्त्ता ऐसे मजिस्ट्रेट द्वारा किये गये विचारण में दोषसिद्ध किया गया है। (धारा 250)।

मजिस्ट्रेट द्वारा समन-मामलों का विचारण (Trial of Summons-cases by Magistrates) (धारा 251-259)

समन मामलों का विचारण संहिता के अध्याय 20, धारा 251 से 259 के अन्तर्गत नियत प्रावधानों के अधीन मजिस्ट्रेट के द्वारा किया जाता है। वारण्ट मामले में मृत्यु, आजीवन कारावास या दो वर्ष से अधिक के कारावास से दण्डनीय किसी अपराध का विचारण किया जाता है, इससे इतर अन्य अपराधों का विचारण (संक्षिप्त विचारण के मामलों को छोड़कर) समन मामलों के विचारण के रूप में इस अध्याय के अधीन किया जाता है। इस अध्याय के अधीन की प्रक्रिया वारण्ट मामलों की विचारण प्रक्रिया से अपेक्षाकृत आसान होती है, जिसमें निम्नलिखित प्रक्रिया अपनायी जाती है–

अभियोग का सारांश बताया जाना–जब समन-मामले में अभियुक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिर होता है या लाया जाता है, तब उसे उस अपराध की विशिष्टता बताई जाएंगी जिसका उस पर अभियोग है, और उससे पूछा जाएगा कि क्या वह दोषी होने का अभिवाक करता है अथवा प्रतिरक्षा करना चाहता है; किन्तु यथा रीति आरोप विरचित करना आवश्यक न होगा। (धारा 251)।

दोषसिद्धि–यदि अभियुक्त दोषी होने का अभिवचन करता है तो मजिस्ट्रेट अभियुक्त का अभिवाक् यथासम्भव उन्हीं शब्दों में लेखबद्ध करेगा जिनका अभियुक्त ने प्रयोग किया है और उसके आधार पर उसे, स्वविवेकानुसार, दोषसिद्ध कर सकेगा। (धारा 252)।

यदि धारा 206 के अधीन समन जारी किया जाता है और अभियुक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिर हुए बिना आरोप का दोषी होने का अभिवचन करना चाहता है तो वह अपना अभिवाक् अन्तर्विष्ट करने वाला एक पत्र और समन में विनिर्दिष्ट जुर्माने की रकम डाक या सन्देशवाहक द्वारा मजिस्ट्रेट को भेजेगा (253)।

धारा 254 के अनुसार–(1) यदि मजिस्ट्रेट अभियुक्त को दोषसिद्ध नहीं करता है तो अभियोजन को भी सुनने के लिए और सब ऐसा साक्ष्य, लेने के लिए और अभियुक्त को भी सुनने के लिए और सब ऐसा साक्ष्य, जो वह अपनी प्रतिरक्षा में प्रस्तुत करे, लेने के लिए अग्रसर होगा।

(2) मजिस्ट्रेट अभियुक्त अथवा अभियोजन के आवेदन पर किसी साक्षी को हाजिर होने या कोई दस्तावेज या अन्य चीज पेश करने का निदेश देने वाला समन जारी कर सकता है।

(3) मजिस्ट्रेट किसी साक्षी को समन करने से पूर्व यह अपेक्षा कर सकता है कि विचारण के प्रयोजनों के लिए हाजिर होने में किए जाने वाले उसके उचित व्यय न्यायालय में जमा कर दिए जाएँ।

दोषमुक्ति या दोषसिद्धि–यदि मजिस्ट्रेट इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अभियुक्त दोषी नहीं है तो वह दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित करेगा। (धारा 255 (1))।

यदि वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अभियुक्त दोषी है तो वह विधि के अनुसार उसके बारे में दण्डादेश दे सकेगा, कोई मजिस्ट्रेट, किसी अभियुक्त को चाहे परिवाद या समन किसी भी प्रकार का रहा हो, इस अध्याय के अधीन विचारणीय किसी भी ऐसे अपराध के लिए जो स्वीकृत या साबित तथ्यों से उसके द्वारा किया गया प्रतीत होता है, दोषसिद्ध कर सकता है यदि मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि उससे अभियुक्त पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा। (धारा 255 (2) एवं (3))।

धारा 256 (1) के अनुसार यदि परिवाद पर समन जारी कर दिया गया हो और अभियुक्त की हाजिरी के लिए नियत दिन, या उसके पश्चात्वर्ती किसी दिन, जिसके लिए सुनवाई स्थगित की जाती है, परिवादी हाजिर नहीं होता है तो मजिस्ट्रेट अभियुक्त को दोषमुक्त कर देगा जब तक कि वह किन्हीं कारणों से किसी अन्य दिन के लिए मामले की सुनवाई स्थगित करना ठीक न समझे। परन्तु जहां परिवादी का प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा या अभियोजन का संचालन करने वाले अधिकारी द्वारा किया जाता है या जहां मजिस्ट्रेट की यह राय है कि परिवादी की वैयक्तिक हाजिरी आवश्यक नहीं है वहां मजिस्ट्रेट उसकी हाजिरी से उसे अभिमुक्ति दे सकता है और मामले में कार्यवाही कर सकता है।

परिवाद वापस लिया जाना-यदि परिवादी किसी मामले में अन्तिम आदेश पारित किए जाने के पूर्व किसी समय मजिस्ट्रेट का समाधान कर देता है कि अभियुक्त के विरुद्ध, परिवाद वापस लेने की उसे अनुज्ञा देने के लिए पर्याप्त आधार है तो मजिस्ट्रेट उसे परिवाद वापस लेने की अनुज्ञा दे सकेगा और तब उस अभियुक्त को दोषमुक्त कर देगा। (धारा 257)।

परिवाद से भिन्न आधार पर संस्थित किसी समन–मामले में कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट, अथवा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट की पूर्व मंजूरी से कोई अन्य न्यायिक मजिस्ट्रेट कार्यवाही को किसी भी प्रक्रम में कोई निर्णय सुनाए बिना रोक सकता है और जहां मुख्य साक्षियों के साक्ष्य को अभिलिखित किए जाने के पश्चात् इस प्रकार कार्यवाहियाँ रोकी जाती है वहां दोषमुक्ति का निर्णय सुना सकता है और, किसी अन्य दशा में अभियुक्त को छोड़ सकता है और ऐसे छोड़ने का प्रभाव उन्मोचन होगा। (धारा 258)।

समन मामले का वारण्ट मामले में संपरिवर्तन-धारा 259 के अनुसार जब किसी ऐसे अपराध से सम्बन्धित समन–मामले के विचारण के दौरान जो छह मास से अधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय है, मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि न्याय के हित में उस अपराध का विचारण वारण्ट मामलो के विचारण की प्रक्रिया के अनुसार किया जाना चाहिए तो ऐसा मजिस्ट्रेट वारण्ट–मामलों के विचारण के लिए इस संहिता द्वारा उपबन्धित रीति से उस मामले की पुनः सुनवाई कर सकता है और ऐसे साक्षियों को पुनः बुला सकता है जिनकी परीक्षा की जा चुकी है। समन मामले की वारण्ट मामले में सम्परिवर्तित कर दिये जाने पर मामले की सुनवाई पुनः नये सिरे से करनी होती है।

प्रश्नकोश

Q. मजिस्ट्रेट के द्वारा समन मामलों के विचारण की प्रक्रिया का प्रथम चरण क्या होता है?

A. अभियुक्त को अभियोग का सारांश बताया जाना। (दारा 251)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के किन धाराओं में समन मामलों के विचारण की प्रक्रिया विहित है?

A. धारा 251 से 259।

Q. न्यायहित में मजिस्ट्रेट के पास यह शक्ति है कि वह समन मामले का विचारण वारण्ट मामले की तरह कर सकता है, जिसमें उस मामले के अन्तर्गत जिस अपराध के लिए विचारण हो रहा है, वह किस दण्ड से दण्डनीय होना चाहिए?

A. 6 माह से अधिक के कारावास से। (धारा 259)।

Q. क्या समन मामले में यथा रीति आरोप विरचित करना आवश्यक होता है?

A. नहीं अभियुक्त पर लगाये गये अभियोग से सम्बन्धित अपराध की विशिष्टियाँ बताया जाना ही पर्याप्त है।

Q. संहिता में समन मामले के विचारण में कौन-सी धारायें दोषी होने के अभिवाक् पर दोषसिद्धि से सम्बन्धित है?

A. धारायें 252 एवं 253।

Q. समन मामलों में अभियुक्त मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिर हुए बिना आरोप के दोषी होने का अभिवचन कैसे करता है?

A. यहां अभियुक्त अपना अभिवाक् अन्तर्विष्ट करने वाला एक पत्र और समन में विनिर्दिष्ट जुर्माने की रकम डाक या संदेशवाहक द्वारा मजिस्ट्रेट को भेजता है।

Q. किन मामलों में मजिस्ट्रेट अभियुक्त को उसकी अनुपस्थिति में ही दोषी होने के अभिवचन करने पर दोषसिद्ध कर सकेगा?

A. धारा 253 के अन्तर्गत छोटे मामलों में।

Q. समन मामले में जब मजिस्ट्रेट अभियुक्त के दोषी होने के अभिवाक् पर उसे दोषसिद्ध नहीं करता है तो कौन-सी प्रक्रिया अपनाई जाती हैं?

A. इस हेतु उपबन्ध संहिता की धारा 254 में व्यवस्थित है। ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट अभियोजन को सुनने के लिए और उसके सभी साक्ष्य, जो वह अपने समर्थन में पेश करें लेने के लिए और अभियुक्त को सुनने के लिए और ऐसा सब साक्ष्य, जो वह अपने बचाव में पेश करे, लेने के लिए अग्रसर होगा।

Q. समन मामले के विचारण में दोषमुक्ति या दोषसिद्धि से सम्बन्धित धारा कौन-सी है?

A. धारा 255।

Q. समन मामले में यदि मजिस्ट्रेट इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अभियुक्त दोषी है, तो क्या वह विधि के अनुसार उसे दण्डादेश दे सकने के पूर्व, दण्ड के प्रश्न पर सुनने के लिए बाध्य है?

A. नहीं! समन मामले में वारण्ट मामले की तरह अभियुक्त को विधि के अनुसार दण्डादेश देने के पूर्व, दण्ड के प्रश्न पर सुनना आवश्यक नहीं है। (धारा 255 (2))।

Q. अभियुक्त की सुनवाई या हाजिरी के लिए नियत दिन यदि परिवादी हाजिर नहीं होता है तो मजिस्ट्रेट क्या करेगा?

A. ऐसी परिस्थितियों में मजिस्ट्रेट अभियुक्त को दोषमुक्त कर देगा, जब तक कि वह अन्य किसी दिन के लिए मामले की सुनवाई स्थगित करना ठीक नहीं समझे। (धारा 256)।

Q. किसी मामले में परिवादी द्वारा परिवाद वापस लिये जाने की अनुज्ञा मजिस्ट्रेट कब दे सकेगा?

A. जब परिवादी किसी ऐसे मामले में अन्तिम आदेश पारित किये जाने के पूर्व किसी समय मजिस्ट्रेट का समाधान कर देता है कि अभियुक्त या यथास्थिति अभियुक्तों के विरुद्ध उसका परिवाद वापस लेने की अनुज्ञा उसे देने के लिए पर्याप्त आधार है। (धारा 257)।

Q. किसी अभियुक्त के विरुद्ध परिवाद वापस लिये जाने का प्रभाव क्या होता है?

A. ऐसे अभियुक्त की दोषमुक्ति (धारा 257)।

Q. कोई न्यायिक मजिस्ट्रेट परिवाद से भिन्न आधार पर संस्थित किसी समन मामले में कार्यवाही ही किसी भी प्रक्रम में कोई निर्णय सुनाये बिना किसकी मंजूरी से रोक सकता है?

A. किसी प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट अथवा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट है।

संक्षिप्त विचारण (Summary Trials) (धारा 260-265)

संहिता के अध्याय 21, धारा 260(1) के अन्तर्गत उल्लिखित अपराधों के विचारण के लिए संक्षिप्त प्रक्रिया (धारा 260 से 265) को अपनाया जाता है, जिसे संक्षिप्त विचारण के नाम से अभिहित किया जाता है। संक्षिप्त विचारण की प्रक्रिया भी वही होती है जो समन मामलों में होती है, अन्तर केवल उस सीमा तक होता है, जिन्हें इस अध्याय के अन्तर्गत विनिर्दिष्ट कर दिया गया है।

धारा 260 (1) के अनुसार–(क) कोई मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट,

(ख) कोई महानगर मजिस्ट्रेट,

(ग) कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट जो उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त विशेषतया सशक्त किया गया है,

ठीक समझता है तो वह निम्नलिखित सब अपराधों का या उनमें से किसी का संक्षेपत विचारण कर सकता है–

(i) वे अपराध जो मृत्यु, आजीवन कारावास या दो वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास से दण्डनीय नहीं है;

(ii) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 379, धारा 380 या धारा 381 के अधीन चोरी, जहां चुराई हुई सम्पत्ति का मूल्य दो हजार रुपए से अधिक नहीं है;

(iii) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 411 के अधीन चोरी की सम्पत्ति को प्राप्त करना या रखे रखना, जहां ऐसी सम्पत्ति का मूल्य दो हजार रुपए से अधिक नहीं है;

(iv) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 414 के अधीन चुराई हुई सम्पत्ति को छिपाने या उसका व्ययन करने में सहायता करना, जहां ऐसी सम्पत्ति का मूल्य दो हजार रुपए से अधिक नहीं है;

(v) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 454 और 456 के अधीन अपराध;

(vi) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 504 के अधीन लोकशान्ति भंग कराने को प्रकोपित करने के आशय से अपमान और धारा 506 के अधीन आपराधिक अभित्रास; जो दो वर्ष के कारावास से या जुर्माने से या दोनों से दण्डनीय है;

(vii) ऐसे अपराधों में से किसी का दुष्प्रेरण;

(viii) पूर्ववर्ती अपराधों को करने का प्रयत्न, जब ऐसा प्रयत्न, अपराध है;

(ix) ऐसे कार्य से होने वाला कोई अपराध, जिसकी बाबत पशु अतिचार अधिनियम, 1871 की धारा 20 के अधीन परिवाद किया जा सकता है।

दण्ड प्रक्रिया संशोधन अधिनियम, 2005 द्वारा धारा 260 (1) (ii), (iii), (iv) पूर्व में उपबन्धित सम्पत्ति का मूल्य दो सौ रुपए के स्थान पर दो हजार रुपए कर दिया गया है। इसी अधिनियम द्वारा धारा 260 (i) (vi) में जो दो वर्ष के कारावास से जुर्माने से अथवा दोनों से दण्डनीय है वाक्यांश जोड़ा गया है।

उच्च न्यायालय किसी ऐसे मजिस्ट्रेट को, जिसमें द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट की शक्तियाँ निहित हैं, किसी ऐसे अपराध का, जो केवल जुर्माने से या जुर्माने सहित या रहित छह माह से अनधिक के कारावास से दण्डनीय है और ऐसे किसी अपराध के दुष्प्रेरण या ऐसे अपराध करने के प्रयत्न का संक्षेपतः विचारण करने का शक्ति प्रदान कर सकता है। (धारा 261)

संक्षिप्त विचारण की प्रक्रिया–में समन–मामलों के विचारण के लिए विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा। तीन मास से अधिक की अवधि के लिए कारावास का कोई दण्डादेश इस अध्याय के अधीन किसी दोषसिद्धि के मामले में न दिया जाएगा। (धारा 262) धारा 263 में संक्षिप्त विचारणों में अभिलेख सम्बन्धी उपबन्ध है।

धारा 264 के अनुसार संक्षेपतः विचारित प्रत्येक ऐसे मामले में, जिसमें अभियुक्त दोषी होने का अभिवचन नहीं करता है, मजिस्ट्रेट साक्ष्य का सारांश और निष्कर्ष के कारणों का संक्षिप्त कथन देते हुए निर्णय अभिलिखित करेगा। ऐसा प्रत्येक अभिलेख और निर्णय न्यायालय की भाषा में लिखा जाएगा।

उच्च न्यायालय संक्षेपतः विचारण करने के लिए सशक्त किए गए किसी मजिस्ट्रेट को प्राधिकृत कर सकता कि पूर्वोक्त अभिलेख या निर्णय या दोनों उस अधिकारी से तैयार कराए जो मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा इस निमित्त नियुक्त किया गया है और इस प्रकार तैयार किया गया अभिलेख या निर्णय ऐसे मजिस्ट्रेट द्वारा हस्ताक्षरित किया जाएगा। (धारा 265)।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत संक्षिप्त विचारण की प्रक्रिया किन धाराओं में दी गयी है?

A. धारा 260 से 265।

Q. (निम्न में से) किस अपराध का संक्षिप्त विचारण नहीं किया जा सकता है?

A. गम्भीर उपहति।

Q. संक्षिप्त विचारण में अधिनिर्णीत कारावास की अधिकतम अवधि कितनी है?

A. तीन मास। (धारा 262)।

Q. एक मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी ने संक्षिप्त विचारण किया तथा अभियुक्त को 6 माह के साधारण कारावास से दण्डित प्रक्रिया। दण्डाधिकारी के द्वारा प्रदत्त दण्डाज्ञा की प्रकृति कैसी होगी?

A. विधि के प्रावधान के विपरीत।

Q. संक्षिप्त विचारण क्या है?

A. प्रक्रिया के दृष्टिकोण से संक्षिप्त विचारण नियमित विचारण का ही एक संक्षिप्त अथवा न्यून रूप है और छोटे मामलों के विचारण में समय की बचत के लिए इस प्रक्रिया की शरण ली जाती है।

Q. संक्षिप्त विचारण में किन मामलों का विचारण किया जाता है?

A. इस विचारण में कुछ छोटे मामलों का, जिनमें अधिकतर समन के मामले और कुछ थोड़े से विनिर्दिष्ट वारण्ट मामले आते हैं, विचारण किया जाता है।

Q. कौन-से मजिस्ट्रेट संक्षिप्त विचारण करने के लिए सक्षम हैं?

A. संहिता की धारा 260 (1) के अनुसार–(i) कोई मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, (ii) कोई महानगर मजिस्ट्रेट, (iii) कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट जो उच्च न्यायालय द्वारा विशिष्टतया इस निमित्त सशक्त किया गया हो, इसी धारा में दिये गये अपराधों का संक्षिप्त विचारण करने के लिए सक्षम हैं।

Q. क्या द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट भी संक्षिप्त विचारण कर सकता है?

A. इस सन्दर्भ में संहिता की धारा 261 कहती है कि उच्च न्यायालय द्वारा, किसी ऐसे मजिस्ट्रेट को, जिसमें द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट की शक्तियाँ निहित हैं, संक्षेपतः विचारण करने की शक्ति प्रदान किया जा सकता है।

Q. उच्च न्यायालय द्वारा सशक्त द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट किन अपराधों का संक्षिप्त विचारण कर सकता है?

A. किसी ऐसे अपराध का जो केवल जुर्माने से या जुर्माने सहित या रहित छह मास से अनधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय है, और ऐसे किसी अपराध के दुष्प्रेरण या प्रयत्न का भी संक्षिप्त विचारण कर सकता है। (धारा 261)।

Q. किन अपराधों का संक्षेपतः विचारण किया जा सकता है?

A. निम्नलिखित अपराधों का–

(i) वे अपराध जो दो वर्ष से अनधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय है,

(ii) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 379, 380, 381 के अधीन चोरी, जहां सम्पत्ति का मूल्य 2000 रुपये से अधिक न हो;

(iii) दण्ड संहिता की धारा 411 के अधीन चोरी की सम्पत्ति प्राप्त करना एवं रखे रखना, जहां सम्पत्ति का मूल्य 2000 रुपये से अनधिक हो;

(iv) दण्ड संहिता की धारा 414 के अधीन 2000 रुपये मूल्य तक चोरी की सम्पत्ति को छिपाने या व्ययन में सहायता करना;

(v) दण्ड संहिता की धारा 454 एवं 456 के अधीन अपराध;

(vi) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 504 एवं 506 के अधीन अपराध;

(vii) उक्त अपराधों का दुष्प्रेरण;

(viii) उक्त अपराधों का प्रयत्न;

(ix) ऐसे अपराध जिसके लिए पशु अतिचार अधिनियम 1871 की धारा 20 के अधीन परिवाद किया जा सकता है;

(x) एवं दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 261 के अधीन उल्लिखित अपराध। (धारा 260 (1) एवं 261)।

Q. जब मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि किसी मामले का संक्षेपतः विचारण करना वांछनीय नहीं है, तो वह क्या करेगा?

A. ऐसी दशा में वह किन्हीं साक्षियों को, जिनकी परीक्षा की जा चुकी है, पुनः बुलायेगा और मामले को इस संहिता द्वारा उपबन्धित रीति से पुनः सुनने के लिए अग्रसर होगा।

Q. किस प्रकरण में यह अभिव्यक्त किया गया कि–''जिस मामले में सरकारी कर्मचारी अभियुक्त हो उसका संक्षिप्त विचारण नहीं किया जाना चाहिए''?

A. राम लोचन बनाम स्टेट ऑफ यू.पी., 1977 सी.आर. एल.जे. के प्रकरण में।

Q. यदि कोई ऐसा मजिस्ट्रेट जिसे विधि द्वारा संक्षिप्त विचारण करने के लिए सशक्त नहीं किया गया है, किसी अपराध का संक्षिप्त विचारण करता है, तो उसका क्या प्रभाव होगा?

A. ऐसी दशा में कार्यवाही संहिता की धारा 461 के खण्ड (ङ) के अनुसार शून्य होगी।

Q. संक्षिप्त विचारण की प्रक्रिया में किसका अनुसरण किया जाता है?

A. संहिता की धारा 262 की उपधारा (1) के अनुसार संक्षिप्त विचारणों में समन मामलों के विचारण के लिए विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का अनुसरण किया जाता है।

Q. संक्षिप्तः विचारित मामले में मजिस्ट्रेट निर्णय कैसे देता है?

A. इस तरह के मामले में मजिस्ट्रेट साक्ष्य का सारांश और निष्कर्ष के कारणों का संक्षिप्त कथन देते हुए अभिलिखित करता है। (धारा 264)।

Q. संक्षेपतः विचारित मामले में अभिलेख और निर्णय किस भाषा में लिखा जायेगा?

A. न्यायालय की भाषा में।

अभिवचन का संपणन (सौदेबाजी) (Plea Bargaining)

(धारा 265-क 265-ठ)

सौदा अभिवाक् (Plea Bargaining) से सम्बन्धित अध्याय 21-क दण्ड विधि (संशोधन) अधिनियम 2006 द्वारा जोड़ा गया जो तिथि 16-4-2006 से प्रभावी हुआ। इस धारा में निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं–

धारा 265-क-यह अध्याय ऐसे अभियुक्त के सम्बन्ध में लागू होगा जिसके विरुद्ध (क) धारा 173 के अधीन थाने के भार साधक अधिकारी द्वारा यह अभिकथित किया जाता है कि उसके द्वारा मृत्यु या आजीवन कारावास के दण्ड या सात वर्ष से अधिक अवधि के कारावास के दण्ड से भिन्न कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है; या

(ख) मजिस्ट्रेट ने परिवाद पर उस अपराध से भिन्न अपराध का संज्ञान लिया है जिसके लिए मृत्यु दण्ड या आजीवन कारावास के दण्ड या सात वर्ष से अधिक अवधि के कारावास का दण्ड उपबन्धित किया गया है और धारा 200 के अधीन परिवादी तथा साक्षियों की परीक्षा के बाद धारा 204 के अधीन आदेशिका जारी की गई है।

किन्तु यदि अपराध देश की सामाजिक आर्थिक दशा को प्रभावित करते हैं या जहां ऐसा अपराध किसी स्त्री के विरुद्ध या चौदह वर्ष से कम आयु के बच्चे के विरुद्ध कारित किया गया है वहां इस अध्याय के उपबन्ध लागू नहीं होगे।

धारा 265-ख अभिवचन के संपणन (सौदेबाजी) के लिए आवेदन–उस न्यायालय में दाखिल किया जायेगा जिसमें ऐसा अपराध विचारण के लिए लम्बित है। आवेदन में उस मामले का संक्षिप्त विवरण अन्तर्विष्ट होगा जिसके सम्बन्ध में आवेदन पत्र दाखिल किया गया है। ऐसे आवेदन के साथ अभियुक्त, का यह शपथपत्र संलग्न होगा कि उसने अपराध के लिए विधि के अधीन उपबन्धित दण्ड की प्रकृति और विस्तार को समझने के बाद अपने

मामले में स्वेच्छा पूर्वक अभिवाक् संपणन (सौदेबाजी) को अधिमान्य किया है तथा यह कि उसे किसी न्यायालय द्वारा किसी ऐसे मामले में पहले दोषसिद्ध नहीं किया गया है जिस अपराध के लिए उसे आरोपित किया गया है।

उपरोक्त आवेदन पत्र प्राप्त करने के बाद न्यायालय मामले के लोक अभियोजक या परिवादी को और अभियुक्त को मामले के लिए नियत तिथि पर उपस्थित होने के लिए नोटिस जारी करेगा।

यदि उपरोक्त सभी व्यक्ति नियत तिथि पर उपस्थित होते हैं तो न्यायालय अभियुक्त की **बन्द कमरे (incamera)** में इस निमित्त स्वयं को सन्तुष्ट करने हेतु परीक्षा करेगा कि अभियुक्त ने स्वेच्छया आवेदन पत्र दाखिल किया है।

यदि न्यायालय को यह समाधान हो जाता है कि आवेदन स्वेच्छा से दाखिल किया गया है तो वह अभियोजक या परिवादी तथा अभियुक्त को समाधानप्रद निस्तारण के लिए समय प्रदान करेगा जिसमें अभियुक्त द्वारा पीड़ित पक्ष को प्रतिकर और मामले के अन्य खर्चे देना सम्मिलित होगा तथा मामले की पुनः सुनवाई के लिए तिथि नियत करेगा।

यदि न्यायालय को प्रतीत होता है कि आवेदन स्वेच्छा से दाखिल नहीं किया गया है या उसे किसी न्यायालय द्वारा ऐसे मामले में पहले भी दोषसिद्ध किया जा चुका है जिसमें उसे उसी अपराध के लिए आरोपित किया गया था तब वह संहिता के उपबन्धों के अनुसार उस प्रक्रम से आगे की कार्यवाही को अग्रसर होगा जिस पर ऐसा आवेदन पूर्वक्त रूप में दाखिल किया गया है।

धारा 265-ग–पारस्परिक रूप से सन्तोषजनक निस्तारण के लिए दिशा निर्देश–

इसके लिए न्यायालय निम्न प्रक्रिया का अनुसरण करेगा–

(क) यदि मामला पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित है तो न्यायालय मामले के सन्तोषजनक निस्तारण हेतु बैठक में भाग लेने के लिए लोक अभियोजक मामले के विवेचक पुलिस अधिकारी, अभियुक्त और मामले के पीड़ित व्यक्ति को नोटिस जारी करेगा परन्तु इसके लिए न्यायालय को यह सुनिश्चित करना होगा कि बैठक में भाग लेने वाले पक्षकारों द्वारा स्वेच्छयापूर्वक समस्त प्रक्रिया पूर्ण की गयी है। परन्तु अभियुक्त चाहे तो मामले के लिए नियुक्त अपने अधिवक्ता के साथ बैठक में भाग ले सकता है।

(ख) यदि मामला पुलिस रिपोर्ट से अन्यथा संस्थित किया गया है तो न्यायालय बैठक में भाग लेने हेतु अभियुक्त तथा मामले के पीड़ित को नोटिस जारी करेगा।

परन्तु न्यायालय का यह कर्त्तव्य होगा कि वह मामले के सन्तोषप्रद समाधान करने की सम्पूर्ण प्रक्रिया के दौरान यह सुनिश्चित करे कि बैठक में भाग लेने वाले पक्षकारों द्वारा वह स्वेच्छापूर्वक किया गया है परन्तु यह और कि मामले के परिवादी एवं अभियुक्त अपनी वांच्छानुसार, मामले में लगाये गये अपने अधिवक्ता (Pleader) के साथ बैठक में भाग ले सकते हैं।

धारा 265-घ पारस्परिक सन्तोषप्रद निस्तारण की आख्या का न्यायालय के समक्ष पेश किया जाना–जब बैठक में मामले का सन्तोषप्रद निस्तारण कर लिया जाता है तो न्यायालय इसकी आख्या (रिपोर्ट) तैयार करेगा जिस पर न्यायालय के पीठासीन अधिकारी तथा बैठक में भाग लेने वाले व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर किए जायेंगे। सन्तोषप्रद निस्तारण नहीं निकल पाने पर न्यायालय ऐसा सम्प्रेक्षण लेखबद्ध करेगा और संहिता के उपबन्धों के अनुसार उस अवस्था से आगे की कार्यवाही के लिए अग्रसर होगा जिससे धारा 265-ख के अन्तर्गत आवेदन ऐसे मामले में दाखिल किया गया है।

धारा 265-ङ-मामले का निस्तारण–जहां मामले का पारस्परिक रूप से सन्तोषजनक निस्तारण धारा 265-घ के अधीन किया गया है वहां न्यायालय पीड़ित व्यक्ति को प्रतिकर देगा और सदाचरण की परिवीक्षा पर या भर्त्सना के पश्चात् दण्ड की मात्रा, निर्मुक्ति या अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1958 या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के उपबन्धों के अधीन अभियुक्त के साथ संव्यवहार के लिए पक्षकारों को सुनेगा और दण्ड अधिरोपित करने के लिए विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का अनुसरण करेगा।

पूर्वोक्त रूप से सुनने के बाद न्यायालय का यदि ऐसा विचार है कि धारा 360 या अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 या तत्समय प्रवृत्त अन्य विधि के उपबन्ध अभियुक्त के मामले में आकृष्ट होते हैं तब वह अभियुक्त को परिवीक्षा पर छोड़ देगा या यथास्थिति किसी अन्य विधि का लाभ प्रदान कर सकेगा।

यदि न्यायालय यह पाता है कि अभियुक्त द्वारा कारित अपराध के लिए विधि के अधीन न्यूनतम दण्ड का प्रावधान है तब वह अभियुक्त को ऐसे न्यूनतम दण्ड का आधा दण्डादेश दे सकेगा।

यदि न्यायालय यह पाता है कि अभियुक्त द्वारा कारित अपराध पूर्वोक्त रूप से आच्छादित नहीं है तब वह अभियुक्त को ऐसे अपराध के लिए उपबन्धित या विस्तारित किये जा सकने योग्य दण्ड का एक चौथाई दण्डादेश दे सकेगा।

धारा 265-च–न्यायालय का निर्णय–खुले न्यायालय में सुनाया जायेगा–जो धारा 265-ङ के निबन्धनों के अधीन होगा और उस पर न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के द्वारा हस्ताक्षर किया जायेगा।

धारा 265-छ–निर्णय की अन्तिमता–धारा 265-च के अधीन दिया गया निर्णय अन्तिम होगा और संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष अनुमति याचिका तथा अनुच्छेद 226 एवं 227 के अधीन रिट याचिका के सिवाय ऐसे निर्णय के विरुद्ध कोई अपील किसी न्यायालय में दाखिल नहीं होगी।

धारा 265-ज-अभिवचन के संपणन (सौदेबाजी) में न्यायालय की शक्ति- न्यायालय को इस अध्याय के अधीन अपने कर्त्तव्य के प्रयोजनार्थ वे सभी शक्तियाँ होगी जो संहिता के अन्तर्गत न्यायालय में जमानत, अपराध के विचारण एवं मामले के निस्तारण से सम्बन्धित अन्य मामलों में निहित होती है।

धारा 265-झ अभियुक्त द्वारा भुगती गई निरोध की अवधि कारावास के दण्डादेश के विरुद्ध मुजरा की जायेगी- इसके लिए धारा 428 के उपबन्धा उसी रीति में लागू होंगे जैसे वे संहिता के अन्य उपबन्धों के अधीन कारावास के सम्बन्ध में लागू होते हैं।

धारा 265-ञ, व्यावृत्तियाँ–इस अध्याय के उपबन्ध इस संहिता के किसी अन्य उपबन्धों में अन्तर्विष्ट उससे असंगत किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे और अन्य प्रावधानों में किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जायेगा कि वह इस अध्याय के किसी उपबन्ध के अर्थ को सीमित करती है।

धारा 265-ट-अभियुक्त के कथनों का प्रयोग न किया जाना–तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में किसी बात के होते हुए भी अभिवाक् के संपणन (सौदेबाजी) के आवेदन पत्र में अभियुक्त द्वारा अधिकथित कथन या तथ्य का उपयोग इस अध्याय के प्रयोजन के सिवाय किसी अन्य प्रयोजन के लिए नहीं किया जायेगा।

धारा 265-ठ के अनुसार अध्याय का लागू न होना–इस अध्याय में कोई चीज किशोर न्याय (बालकों के देख-रेख एवं संरक्षण) अधिनियम 2000 की धारा 2 (ट) में यथा परिभाषित किसी किशोर या बालक पर लागू नहीं होगा।

प्रश्नकोश

Q. कोई अभियुक्त अनुनय समझौते (प्लीबारगेनिंग) का आवेदन पत्र कहां दाखिल कर सकता है?

A. उस न्यायालय में जहां ऐसा अपराध विचाराधीन है। (धारा 265-ख (1))।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 265-क कितने दण्ड की अवधि पर लागू होती है?

A. सात वर्ष।

Q. अभिवचन का संपणन किन अपराधों पर लागू नहीं होगा?

A. (i) आर्थिक अपराध, (ii) किसी स्त्री के विरुद्ध अपराध, (iii) 14 वर्ष से कम आयु के बच्चे के विरुद्ध अपराध। (धारा 256-क। परन्तुक)।

Q. सौदा अभिवाक् के लिए आवेदन पत्र अस्वीकार हो जाने पर मजिस्ट्रेट क्या प्रक्रिया अपनायेगा?

A. सम्बन्धित मजिस्ट्रेट आगे कार्यवाही करेगा। (धारा 265-ख)।

Q. यदि मामला पुलिस रिपोर्ट से अन्यथा संस्थित है और उसमें सौदा अभिवाक् के लिए आवेदन प्रस्तुत किया गया है, तो मामले का सन्तोषप्रद निपटान के लिए आहूत बैठक में कौन-कौन भाग ले सकता है?

A. अभियुक्त, परिवादी और इन दोनों के अधिवक्ता। (धारा 265-ग)।

Q. सौदा अभिवाक् के मामले का निस्तारण करते हुए न्यायालय न्यूनतम नियत दण्ड का कितना दण्ड दे सकता है?

A. उक्त अपराध के लिए नियत दण्ड का आधा। अन्य मामलों में उपबंधित दण्ड का एक चौथाई। (धारा 265-ङ)।

Q. क्या अध्याय 21-क के अधीन पारित किसी दण्डादेश के विरुद्ध अपील किया जा सकता है?

A. नहीं! किन्तु संविधान के अनुच्छेद 136/226/227 के अन्तर्गत याचिका प्रस्तुत किया जा सकता है। (धारा 265-छ)।

कारागारों में परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्तियों की हाजिरी (Attendance of Persons Confined or Detained in Prisons) (धारा 266-271)

संहिता के अध्याय 22, धारा 266 से 271 में किसी कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्ति की किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में हाजिरी सुनिश्चित कराये जाने हेतु प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है। धारा 226 एक परिभाषा खण्ड है, जिसमें निम्नलिखित को परिभाषित किया गया है–

(क) ''**निरुद्ध**'' के अन्तर्गत निवारक निरोध के लिए उपबन्ध करने वाली किसी विधि के अधीन निरुद्ध भी है :

(ख) ''**कारागार**'' के अन्तर्गत निम्नलिखित भी है–

(i) कोई ऐसा स्थान जिसे राज्य सरकार ने, साधारण या विशेष आदेश द्वारा, अतिरिक्त जेल घोषित किया है;

(ii) कोई सुधारालय, बोर्स्टल–संस्था या इसी प्रकार की अन्य संस्था

धारा 267 (1) के अनुसार जब किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के दौरान किसी दण्ड न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि–

(क) कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्ति को किसी अपराध के आरोप का उत्तर देने के लिए या उसके विरुद्ध किन्हीं कार्यवाहियों के प्रयोजन के लिए न्यायालयों के समक्ष लाया जाना चाहिए, अथवा।

(ख) न्याय के उद्देश्यों के लिए ऐसे व्यक्ति की साक्षी के रूप में परीक्षा की जाए;

तब वह न्यायालय, कारागार के भारसाधक अधिकारी को यह अपेक्षा करने वाला आदेश दे सकता है कि वह ऐसे व्यक्ति को, न्यायालय के समक्ष पेश करे।

यदि कोई आदेश द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा दिया जाता है, वहां वह कारागार के भारसाधक अधिकारी को तब तक भेजा नहीं जाएगा या उसके द्वारा उस पर तब तक कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी जबतक वह ऐसे मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिहस्ताक्षरित न हो, जिसके अधीनस्थ वह मजिस्ट्रेट है। (धारा 267 (2))।

राज्य सरकार, साधारण या विशेष आदेश द्वारा यह निदेश दे सकती है कि किसी व्यक्ति को या किसी वर्ग के व्यक्तियों को उस कारागार से नहीं हटाया जाएगा जिसमें उसे या उन्हें परिरुद्ध या निरुद्ध किया गया है, ऐसा आदेश देने के पूर्व, राज्य सरकार निम्नलिखित बातों का ध्यान रखेगी–

(क) उस अपराध का स्वरूप, वे आधार, जिन पर, उस व्यक्ति को या उस वर्ग के व्यक्तियों को कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध करने का आदेश दिया गया है;

(ख) यदि उस व्यक्ति को या उस वर्ग के व्यक्तियों को कारागार से हटाने की अनुज्ञा दी जाए तो लोक-व्यवस्था में विघ्न की सम्भाव्यता;

(ग) लोक हित, साधारणतः। (धारा 268)।

जहां व्यक्ति, बीमारी या अंगशैथिल्य के कारण कारागार से हटाए जाने के योग्य नहीं है; अथवा विचारण के लिए सुपुर्दगी के अधीन है या विचारण के लम्बित रहने तक के लिए या प्रारम्भिक अन्वेषण तक के लिए प्रतिप्रेषणाधीन है; अथवा इतनी अवधि के लिए अभिरक्षा में हैं जितनी आदेश का अनुपालन करने के लिए और उस कारागार में जिसमें वह परिरुद्ध या निरुद्ध है, उसे वापस ले आने के लिए अपेक्षित समय के समाप्त होने के पूर्व समाप्त होती है; अथवा ऐसा व्यक्ति है जिसे धारा 268 के अधीन राज्य सरकार द्वारा दिया गया कोई आदेश लागू होता है;

वहां कारागार का भारसाधक अधिकारी न्यायालय के आदेश को कार्यान्वित नहीं करेगा और ऐसा न करने के कारणों का विवरण न्यायालय को भेजेगा :

परन्तु जहां ऐसे व्यक्ति से किसी ऐसे स्थान पर, जो कारागार से पच्चीस किलोमीटर से अधिक दूर नहीं है, साक्ष्य देने के लिए हाजिर होने की अपेक्षा की जाती है, वहां कारागार के भारसाधक अधिकारी के ऐसा न करने का यह कारण नहीं होगा कि निरुद्ध व्यक्ति विचारण के लिए सुपुर्दगी के या विचारण के लम्बित रहने तक के लिए अथवा आरम्भिक अन्वेषण के लिए प्रतिप्रेषणाधीन है। (धारा 269)।

धारा 270 के अन्तर्गत ऐसे बंदी को अभिरक्षा में न्यायालय में पेश किया जायेगा और तब तक अभिरक्षा में रखा जायेगा जब तक न्यायालय उसे वापस ले जाने को प्राधिकृत न कर दे। न्यायालय कारागार में साक्षी की परीक्षा के लिए कमीशन भी जारी कर सकता है।

प्रश्नकोश

Q. जब कोई व्यक्ति किसी मजिस्ट्रेट के आदेशों के अन्तर्गत बंदीगृह में निरुद्ध है और उसे कोई दूसरा मजिस्ट्रेट अपने समक्ष आरोप का उत्तर देने के लिए बंदीगृह के भार साधक अधिकारी को उसे प्रस्तुत करने का आदेश देता है, तब (क्या होगा)–

A. यदि वह सुपुर्दगी विचारण अथवा प्रथमिक अन्वेषण के दौरान बंदी है तब बन्दीगृह का वह भार साधक अधिकारी उस दूसरे मजिस्ट्रेट के आदेश का पालन करने से प्रविरत रहेगा। (धारा 269 (b))।

Q. जब न्यायालय को किसी जांच विचारण या अन्य कार्यवाही के दौरान कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्ति की उपस्थिति आवश्यक होती है, तब वह ऐसे व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष पेश करने की अपेक्षा किससे कर सकेगा?

A. कारागार के भारसाधक अधिकारी से। (धारा 267)।

Q. यदि किसी परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष पेश करने का आदेश द्वितीय वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट देता है, तो उसके लिए क्या शर्तें होगी?

A. उसके लिए शर्तें यह है कि ऐसे आदेश का ऐसे मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिहस्ताक्षरित होना आवश्यक है, जिसके अधीनस्थ वह मजिस्ट्रेट है। अन्यथा वह आदेश कारागार के भारसाधक अधिकारी को नहीं भेजा जायेगा। (धारा 267 (2))।

Q. द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 267 (2) के अधीन जारी आदेश पर क्या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रतिहस्ताक्षर करने के लिए बाध्य होगा?

A. नहीं! ऐसे आदेश के विवरण पर विचार करने के पश्चात् वह आदेश पर प्रतिहस्ताक्षर करने से इंकार कर सकता है।

Q. वे कौन-सी परिस्थितियाँ हैं, जिनमें कारागार का भारसाधक अधिकारी न्यायालय द्वारा जारी किये गये धारा 267 के आदेश को कार्यान्वित नहीं करेगा?

A. जहां ऐसा परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्ति–

(i) बीमारी या अंग शैथिल्य के कारण कारागार से हटाये जाने योग्य नहीं है, अथवा

(ii) विचारण के लिए सुपुर्दगी के अधीन है या विचारण की लम्बितावस्था में या प्रारंभिक अन्वेषण तक के लिए प्रतिप्रेषणाधीन है अथवा

(iii) इतनी सम्य के लिए अभिरक्षा में है, कि आदेश के पालन के पूर्व ही उसकी परिरुद्धि का समय समाप्त हो जाता है, या

(iv) ऐसा व्यक्ति है जिसे राज्य सरकार का निदेश धारा 268 के अन्तर्गत लागू होता है। (धारा 269)।

Q. किसी बन्दी व्यक्ति का जेल के भारसाधक अधिकारी द्वारा न्यायालय में अभिरक्षा में लाये जाने की प्रक्रिया संहिता की किस धारा में उपबन्धित है?

A. धारा 270 में।

Q. कारागार में निरुद्ध या परिरुद्ध किसी व्यक्ति की साक्षी के रूप में परीक्षा के लिए न्यायालय की कमीशन जारी करने की शक्ति संहिता की किस धारा में उपबन्धित है?

A. धारा 271 में।

जांचों और विचारणों में साक्ष्य (Evidence In Inquiries And Trials) (धारा 272-299)

न्यायालयों की सम्पूर्ण जांच, विचारण और कार्यवाहियां साक्ष्यों पर ही निर्भर होती हैं। अतः साक्ष्यों की ग्राह्यता और अभिलेखन और उनकी समीक्षा दाण्डिक विचारण का अभिन्न अंग होता है। संहिता के अध्याय 23 धारा 272 से 299 के अन्तर्गत जांचों और विचारणों में साक्ष्यों से सम्बन्धित विभिन्न प्रक्रियाओं का उल्लेख किया गया है, जिसके भाग क (धारा 272 से 283) के अन्तर्गत साक्ष्य लेने और अभिलिखित करने का ढंग तथा भाग ख (धारा 284 से 299) के अन्तर्गत साक्षियों की परीक्षा के लिए कमीशन जारी किए जाने की शर्तों एवं प्रक्रियाओं का उल्लेख है।

इस अध्याय के धारा 275 के उपधारा (1) में दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के धारा 20 के द्वारा परन्तुक जोड़कर प्रावधानित किया गया है कि ''किसी साक्षी का साक्ष्य अपराध के अभियुक्त व्यक्ति के अधिवक्ता की उपस्थिति में आडियो-विडियो इलेक्ट्रॉनिक साधनों के द्वारा भी अभिलिखित किया जा सकता है''।

क-साक्ष्य लेने और अभिलिखित करने का ढंग

राज्य सरकार या अवधारित कर सकती है कि राज्य के अन्दर उच्च न्यायालय से भिन्न प्रत्येक न्यायालय की कौन सी भाषा होगी। (धारा 272)। इस खण्ड के अधीन निम्न प्रक्रिया अपनाया जाता है–

(i) विचारण या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में लिया गया सब साक्ष्य अभियुक्त की उपस्थिति में या उसके प्लीडर की उपस्थिति में लिया जाएगा। (धारा 273)।

दण्ड विधि (संशोधन) अधिनियम, 2013 द्वारा धारा 273 में एक परंतुक जोड़ा गया जो इस प्रकार है- जहां 18 वर्ष से कम आयु की स्त्री का, जिससे बलात्संग या किसी अन्य लैंगिक अपराध के किए जाने का अभिकथन किया गया है, साक्ष्य अभिलिखित किया जाना है, वहां न्यायालय यह सुनिश्चित करने के लिए कि ऐसी स्त्री का अभियुक्त से सामना न हो और साथ ही अभियुक्त की प्रतिपरीक्षा के अधिकार को सुनिश्चित करते हुए, समुचित उपाय कर सकेगा।

समन मामलों में मजिस्ट्रेट जैसे-जैसे साक्षी की परीक्षा होती जाती है, वैसे-वैसे उसके साक्ष्य के सारांश का ज्ञापन न्यायालय की भाषा में तैयार करेगा या यदि वह असमर्थ है, खुले न्यायालय में बोलकर तैयार करवायेगा और उस पर अपना हस्ताक्षर करेगा, जो अभिलेख का भाग होगा। (धारा 274)।

(iii) मजिस्ट्रेट के समक्ष विचारित सब वारण्ट–मामलों में प्रत्येक साक्षी का साक्ष्य या तो स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा लिखा जाएगा या खुले न्यायालय में उसके द्वारा बोलकर लिखवाया जाएगा या जहां वह किसी शारीरिक या अन्य असमर्थता के कारण ऐसा करने में असमर्थ है, वहां इस निमित्त नियुक्त न्यायालय के किसी अधिकारी द्वारा उसके निदेशन और अधीक्षण में लिखा जाएगा। (धारा 275)। न्यायालय अभियुक्त व्यक्ति के अधिवक्ता की उपस्थिति में इलेक्ट्रॉनिक आडियो विडियो माध्यम से भी साक्षी के साक्ष्य को अभिलिखित कर सकता है।

(iv) सेशन न्यायालय के समक्ष सब विचारणों में प्रत्येक साक्षी का साक्ष्य, स्वयं पीठासीन न्यायाधीश द्वारा लिखा जाएगा या खुले

न्यायालय में उसके द्वारा बोलकर लिखवाया जाएगा उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्ति न्यायालय के किसी अधिकारी द्वारा उसके निदेशन और अधीक्षण में लिखा जाएगा। (धारा 276)।

(v) प्रत्येक मामले में जहां साक्ष्य लिखा जाता है वहां यदि साक्षी न्यायालय की भाषा में साक्ष्य देता है तो उसे उसी भाषा में लिखा जाएगा;

यदि अन्य भाषा में साक्ष्य देता है तो यदि साध्य हो तो, उसी भाषा में लिखा जा सकेगा और यदि ऐसा करना साध्य न हो साक्ष्य का न्यायालय की भाषा में सही अनुवाद तैयार किया जाएगा, उस पर मजिस्ट्रेट या पीठासीन न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षर किए जाएँगे और वह अभिलेख का भाग होगा;

परन्तु जब साक्ष्य अंग्रेजी में लिखा जाता है और न्यायालय की भाषा में उसके अनुवाद की किसी पक्षकार द्वारा अपेक्षा नहीं की जाती है तो न्यायालय ऐसे अनुवाद तो अभिमुक्ति दे सकता है। (धारा 277)।

(vi) जब कभी कोई साक्ष्य ऐसी भाषा में दिया जाए जिसे अभियुक्त नहीं समझता है और वह न्यायालय में स्वयं उपस्थित है तब खुले न्यायालय में उसे उस भाषा में उसका भाषान्तर सुनाया जाएगा जिसे वह समझता है। (धारा 279)।

(vii) जब पीठासीन न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट साक्षी का साक्ष्य अभिलिखित कर लेता है तब वह उस साक्षी की परीक्षा किए जाते समय उसकी भावभंगिमा के बारे में ऐसी टिप्पणियाँ भी अभिलिखित करेगा, जो वह तात्त्विक समझता है। (धारा 280)।

(viii) जब किसी साक्ष्य या कथन के भाषान्तर के लिए दुभाषिए की सेवा की किसी दण्ड न्यायालय द्वारा अपेक्षा की जाती है तब वह दुभाषिया ऐसे साक्ष्य या कथन का ठीक भाषान्तर करने के लिए आबद्ध होगा। (धारा 282)।

(ix) प्रत्येक उच्च न्यायालय, साधारण नियम द्वारा ऐसी रीति विहित कर सकता है जिससे उन मामलों में साक्षियों के साक्ष्य को और अभियुक्त की परीक्षा को लिखा जाएगा। (धारा 283)।

ख-साक्षियों की परीक्षा के लिए कमीशन

किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में, न्यायालय का मजिस्ट्रेट को प्रतीत होने पर कि न्याय के उद्देश्यों के लिए यह आवश्यक है कि किसी साक्षी की परीक्षा की जाए और ऐसे साक्षी की हाजिरी इतने विलम्ब, व्यय या असुविधा के बिना, जितनी मामले की परिस्थितियों में अनुचित होगी, नहीं कराई जा सकती है तब न्यायालय या मजिस्ट्रेट ऐसी हाजिरी से अभिमुक्ति दे सकता है और साक्षी की परीक्षा किये जाने के लिए कमीशन जारी कर सकता है, परन्तु जहां भारत के राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल या किसी संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक की साक्षी के रूप में परीक्षा करना आवश्यक है वहां ऐसे साक्षी की परीक्षा करने के लिए कमीशन जारी किया जाएगा। (धारा 284)।

साक्षियों की परीक्षा के लिए कमीशन जारी करने एवं उसके निष्पादन की प्रक्रिया के उपबन्धों के अन्तर्गत धारा 284 से 290 का विस्तार उन साक्षियों तक है, जो भारत–क्षेत्र में है, परन्तु उन क्षेत्रों से बाहर है, जिन पर दण्ड प्रक्रिया संहिता का विस्तार है। इसके उपयोग यदा-कदा ही किया जाना चाहिए क्योंकि कमीशन पर साक्षियों का परीक्षण नियम नहीं अपवाद है। (गुलाबराय बनाम एस.डी. राजे, 1973 Cr.L.J)। इस खण्ड के अन्तर्गत कमीशन जारी किए जाने के लिए निम्न प्रक्रिया का अनुपालन किया जाता है–

(i) यदि साक्षी उन राज्यक्षेत्रों के अन्दर है, जिन पर इस संहिता का विस्तार है, तो कमीशन, यथास्थिति, उस महानगर मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को निर्दिष्ट होगा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसा साक्षी मिल सकता है। (धारा 285(1))।

(ii) साक्षी भारत में है किन्तु ऐसे राज्य या ऐसे किसी क्षेत्र में है जिस पर इस संहिता का विस्तार नहीं है तो कमीशन ऐसे न्यायालय या अधिकारी को निर्दिष्ट होगा, जिसे केन्द्रीय सरकार अधिसूचना द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट करें। (धारा 285 (2))।

(iii) प्रत्येक मामले में, जिसमें कमीशन जारी किया गया है, जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही ऐसे विनिर्दिष्ट समय तक के लिए, जो कमीशन के निष्पादन और लौटाए जाने के लिए उचित रूप से पर्याप्त है, स्थगित की जा सकती है। (धारा 289)।

(iv) अभियुक्त की उपस्थिति में मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया और अनुप्रमाणित किया गया या कमीशन पर लिया गया, सिविल सर्जन या अन्य चिकित्सीय साक्षी का अभिसाक्ष्य इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य में दिया जा सकेगा, यद्यपि अभिसार को साक्षी के तौर पर नहीं बुलाया गया है। (धारा 291)।

(v) कोई दस्तावेज, जो किसी व्यक्ति या सम्पत्ति की बाबत किसी कार्यपालक मजिस्ट्रेट की स्वहस्ताक्षरित शिनाख्त रिपोर्ट होनी तात्पर्यित है, इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के तौर पर उपयोग में लाई जा सकेगी, यद्यपि ऐसे मजिस्ट्रेट को साक्षी के तौर पर नहीं बुलाया गया है।

परन्तु जहां ऐसी रिपोर्ट में ऐसे किसी संदिग्ध व्यक्ति या साक्षी का विवरण है, जिसे भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 21, धारा 32, धारा 33, धारा 155 या धारा 157 के उपबन्ध लागू

होते हैं, वहां, ऐसा विवरण इस उपधारा के अधीन, उन धाराओं के उपबन्धों के अनुसार के सिवाय, प्रयोग में नहीं लाया जाएगा। (धारा 291 क (1))।

न्यायालय यदि ठीक समझता है तो अभियोजन या अभियुक्त के आवेदन पर ऐसे मजिस्ट्रेट को समन या उक्त रिपोर्ट की विषय-वस्तु के बारे में उसकी परीक्षा कर सकेगा और करेगा''। (धारा 291-क (2))।

(vi) 'टकसाल के अधिकारियों का साक्ष्य' तथा सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञों की रिपोर्ट' के सम्बन्ध में उपबन्ध क्रमशः धारा 292 एवं 293 में किये गये हैं।

(vii) जहां अभियोजन या अभियुक्त द्वारा किसी न्यायालय के समक्ष कोई दस्तावेज फाइल की गई है वहां यथास्थिति, अभियोजन या अभियुक्त अथवा अभियोजन या अभियुक्त के प्लीडर से, यदि कोई हो ऐसी प्रत्येक दस्तावेज का असली होना स्वीकार या इंकार करने की अपेक्षा की जाएगी। दस्तावेजों की सूची ऐसे प्रारूप में होगी जो राज्य सरकार द्वारा विहित किया जाए। जहां किसी दस्तावेज का असली होना विवादग्रस्त नहीं है वहां ऐसी दस्तावेज उस व्यक्ति के जिसके द्वारा हस्ताक्षरित होना तात्पर्यित है, हस्ताक्षर के सबूत के बिना इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य में पढ़ी जा सकेगी। (धारा 294)।

(viii) किसी भी व्यक्ति का ऐसा साक्ष्य जो औपचारिक है शपथ-पत्र द्वारा दिया जा सकता है और सब न्यायसंगत अपवादों के अधीन रहते हुए इस संहिता के अधीन किसी जांच विचारण या अन्य कार्यग्रही में साक्ष्य में पढ़ा जा सकता है, किन्तु न्यायालय स्वविवेकानुसार ऐसे हस्ताक्षर साबित करने की अपेक्षा कर सकता है। (धारा 296)।

(ix) न्यायालय के समक्ष उपयोग में लाए जाने वाले शपथपत्रों पर शपथ ग्रहण या प्रतिज्ञान निम्नलिखित के समक्ष किया जा सकता है–

(i) कोई न्यायाधीश या कोई न्यायिक या कार्यपालक मजिस्ट्रेट, अथवा

(ii) उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय द्वारा नियुक्त कोई शपथ कमिश्नर, अथवा नोटरी अधिनियम, 1952 के अधीन नियुक्त कोई नोटरी।

शपथपत्र ऐसे तथ्यों तक जिन्हें अभिसाक्षी स्वयं अपनी जानकारी से साबित करने के लिए समर्थ है और ऐसे तथ्यों तक जिनके सत्य होने का विश्वास करने के लिए उसके पास उचित आधार है, सीमित होंगे। न्यायालय शपथपत्र में किसी कलंकात्मक और विसंगत बात के काटे जाने या संशोधित किए जाने का आदेश दे सकेगा। (धारा 297)।

(x) पूर्व दोषसिद्धि या दोषमुक्ति साबित करने सम्बन्धी उपबन्ध धारा 298 में किये गये हैं।

(xi) यदि यह साबित कर दिया जाता है कि अभियुक्त व्यक्ति फरार हो गया है, उसके तुरन्त गिरफ्तार किए जाने की कोई सम्भावना नहीं है तो अपराध के लिए उस व्यक्ति का विचारण करने के लिए या विचारण के लिए सुपुर्द करने के लिए सक्षम न्यायालय अभियोजन की ओर से पेश किए गए साक्षियों की उसकी अनुपस्थिति में परीक्षा कर सकता है और उनका अभिसाक्ष्य अभिलिखित कर सकता है। (धारा 259 (1))।

(xii) यदि यह प्रतीत होता है कि मृत्यु या आजीवन कारावास से दण्डनीय कोई अपराध किसी अज्ञात व्यक्ति या किन्हीं अज्ञात व्यक्तियों द्वारा किया गया है तो उच्च न्यायालय या सेशन न्यायाधीश निदेश दे सकता है कि कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट जांच करे और किन्हीं साक्षियों की जो अपराध के बारे में साक्ष्य दे सकता हो, परीक्षा करे। इस प्रकार लिया गया अभिसाक्ष्य यदि अभिसाक्षी (Deponent) पर जाता है, अथवा साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो जाता है; या भारत की सीमाओं से बाहर है, तो ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध जिस पर तत्पश्चात् अभियोग लगाया जाता है, साक्ष्य में दिया जा सकता है।

प्रश्नकोश

Q. साक्ष्य अभियुक्त या उसके अधिवक्ता के उपस्थिति में ही लिया जाना चाहिए? आप इस पर क्या कहेंगे?

A. अभियुक्त रूप से उपबंधित कुछ अपवादों को छोड़कर यह सामान्य नियम है। (धारा 273)(महाराष्ट्र राज्य बनाम प्रफुल्ल डी. देसाई, (2003) 4 SCC 681 का विनिश्चय)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अन्तर्गत साक्षी की भाव भंगिमा को अभिलिखित करने का उपबंध है?

A. धारा 280।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के किस धारा के अन्तर्गत पूर्व दोषसिद्धि को साबित किए जाने का प्रावधान है?

A. धारा 296।

Q. सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण में साक्षियों का साक्ष्य कैसे लिखा जायेगा?

A. ऐसा साक्ष्य मामूली तौर पर वृत्तान्त के रूप में लिखा जायेगा किन्तु पीठासीन न्यायाधीश अपने विवेक से ऐसे साक्ष्य या उसके किसी भाषा को प्रश्नोत्तर के रूप में लिख या लिखवा सकता है। (धारा 276)।

Q. संहिता की धारा 275 या 276 के अधीन साक्षियों के साक्ष्य की भाषा को कैसे लिखा जायेगा?

A. यदि साक्षी न्यायालय की भाषा में साक्ष्य देता है, जो उसे उसी भाषा में लिखा जायेगा, और यदि वह किसी अन्य भाषा में साक्ष्य देता है तो उसे यथासाध्य उसी की भाषा में लिखा जायेगा और यदि साध्य न हो तो जैसे-जैसे साक्षी की परीक्षा होती जाती है वैसे-वैसे साक्ष्य का न्यायालय की भाषा में सही अनुवाद तैयार किया जायेगा और उस पर पीठासीन अधिकारी का हस्ताक्षर होगा। (धारा 277)।

Q. यदि किसी साक्ष्य का अभिलेख उस भाषा से भिन्न भाषा में है जिसमें यह दिया गया है और साक्षी उस भाषा को नहीं समझता है तो क्या प्रक्रिया अपनाई जायेगी?

A. ऐसी स्थिति में साक्षी को ऐसे अभिलेख का भाषान्तर उस भाषा में जिसमें वह दिया गया था, अथवा उस भाषा में जिसे वह समझता हो, सुनाया जायेगा। (धारा 278)।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत दण्ड न्यायालय द्वारा साक्ष्य या कथन के भाषान्तर के लिए दुभाषिये की अपेक्षा की जाती है, जिसमें वह ठीक-ठीक भाषान्तर करने के लिए आबद्ध होगा।

A. धारा 282 के अन्तर्गत।

Q. संहिता की किन धाराओं तक में साक्षियों की परीक्षा के लिए कमीशन जारी करने और उसके निष्पादन की प्रक्रिया का उपबन्ध किया गया है?

A. धारा 284 से लेकर 290 तक में।

Q. किसी साक्षी को हाजिर होने से अभियुक्ति प्रदान करते हुए मजिस्ट्रेट या न्यायालय द्वारा कब कमीशन जारी किया जा सकता है?

A. जब कभी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में न्यायालय या मजिस्ट्रेट को प्रतीत होता है कि न्याय के उद्देश्यों के लिए यह आवश्यक है कि किसी साक्षी की परीक्षा की जाये और ऐसे साक्षी की हाजिरी इतने विलम्ब, व्यय या असुविधा के बिना, जितनी मामले की परिस्थितियों को अनुचित होगी नहीं कराई जा सकती है।

Q. किन व्यक्तियों की साक्षी के रूप में परीक्षा करने के लिए न्याय के उद्देश्यों के लिए कमीशन ही जारी किया जायेगा?

A. भारत के राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति किसी राज्य के राज्यपाल या संघ राज्य के प्रशासक (धारा 284)।

Q. यदि साक्षी उन राज्य क्षेत्रों के अन्दर है, जिन पर इस संहिता का विस्तार है तो कमीशन किसको जारी किया जायेगा?

A. ऐसी स्थिति में कमीशन यथास्थिति उस महानगर मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को जारी किया जायेगा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसा साक्षी मिल सकता है। (धारा 285)।

Q. कमीशनों का निष्पादन कौन और किस प्रकार करेगा।

A. कमीशन प्राप्त होने पर मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट अथवा ऐसा महानगर मजिस्ट्रेट या न्यायिक मजिस्ट्रेट जिसे वह इस निमित्त नियुक्त करे, साक्षी को अपने समक्ष आने के लिए समन करेगा अथवा उस स्थान को जायेगा जहां साक्षी है और उसका साक्ष्य उसी रीति से लिखेगा और उन्हीं शक्तियों का प्रयोग कर सकेगा जो इस संहिता के अधीन वारण्ट मामलों के विचारण के लिए है। (धारा 286)।

Q. संहिता की किस धारा में उपबन्धित है कि जिसमें कमीशन जारी किया गया है ऐसी कार्यवाही के पक्षकार साक्षियों की परीक्षा परिप्रश्नों के माध्यम से कर सकेंगे?

A. धारा 287 में।

Q. संहिता की धारा 288 किस बात का उपबन्ध करती है?

A. यह धारा, धारा 284 के अधीन जारी किये गये कमीशन के सम्यक् रूप से निष्पादन के पश्चात् उसके उस न्यायालय या मजिस्ट्रेट को लौटाये जाने से सम्बन्धित है, जिसने कमीशन जारी किया था।

Q. विदेशी कमीशनों के निष्पादन की प्रक्रिया संहिता की किस धारा में व्यवस्थित है?

A. धारा 290 में।

Q. संहिता की धारा 291 का क्या उद्देश्य है?

A. इस धारा का उद्देश्य अभियुक्त की उपस्थिति में मजिस्ट्रेट द्वारा किये गये और अनुप्रमाणित किये गये या कमीशन पर लिये गये सिविल सर्जन या अन्य चिकित्सीय साक्षी के अभिसाक्ष्य को किसी जांच या विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य में दिये जा सकने की व्यवस्था करना है, चाहे भले ही अभिसाक्षी को साक्षी के रूप में न बुलाया गया हो।

Q. संहिता धारा 293 के अन्तर्गत कौन-से लोग सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञ होंगे?

A. (a) सरकार का कोई रासायनिक या सहायक रासायनिक परीक्षक,

(b) मुख्य विस्फोटक निरीक्षक,

(c) अंगुलि-छाप कार्यालय निदेशक,

(d) निदेशक, हाफकीन संस्थान, मुम्बई

(d) किसी केन्द्रीय या राज्य न्याय सम्बन्धी विज्ञान प्रयोगशाला का निदेशक उप-निदेशक अथवा सहायक निदेशक;

(f) सरकारी सीरम विज्ञानी है,

(g) केन्द्रीय सरकार की अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट कोई अन्य सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञ।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 द्वारा सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञों के वर्ग में किन व्यक्तियों को जोड़ा गया है, तथा किस को अन्तःस्थापित किया गया है?

A. अन्तर्गत धारा 293 (4) में उपखण्ड 'छ' (g) जोड़कर केन्द्र सरकार की अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट अन्य सरकारी वैज्ञानिक विशेषज्ञ को सम्मिलित किया गया है, तथा उक्त धारा के उपखण्ड (खण्ड x b) में 'मुख्य विस्फोटक निरीक्षक' के स्थान पर 'मुख्य विस्फोटक नियन्त्रक' को अन्तःस्थापित किया गया है।

Q. संहिता की धारा 294 के सम्बन्ध में सिद्दीक बनाम राज्य, 1982 इलाहाबाद के प्रकरण में उच्च न्यायालय ने क्या अभिमत व्यक्त किया है?

A. यह कि धारा 294 के अधीन न्यायालय के समक्ष फाइल किये गये प्रत्येक दस्तावेज का असली होना स्वीकार या अस्वीकार किया जाना चाहिए, जैसा कि धारा 294 (1) की अपेक्षा है। जिन दस्तावेजों का असली होना विरोधी पक्षकार द्वारा विवादग्रस्त नहीं है उनको सारभूत साक्ष्य के रूप में पढ़ा जा सकता है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अन्तर्गत आवेदक द्वारा न्यायालय के समक्ष किये गये आवेदन में लोक सेवकों के आचरण के सबूत के बारे में शपथ-पत्र फाइल करने का उपबन्ध किया गया है?

A. धारा 295 के अन्तर्गत।

Q. संहिता की धारा 296 में क्या व्यवस्था की गयी है?

A. इस धारा के अनुसार किसी भी व्यक्ति का औपचारिक साक्ष्य शपथ-पत्र द्वारा लिया जा सकता है और उसे किसी जांच या विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य में पढ़ा जा सकता है।

Q. कब न्यायालय किसी व्यक्ति को समन करके उसके शपथ-पत्र में अन्तर्विष्ट तथ्यों के बारे में उसकी परीक्षा कर सकता है?

A. जब वह अभियुक्त या अभियोजन के आवेदन पर ऐसा करना ठीक समझे।

Q. वे कौन से प्राधिकारी हैं, जिनके समक्ष इस संहिता के अधीन शपथपत्रों पर शपथ ग्रहण या प्रतिज्ञान किया जा सकता है?

A. वे प्राधिकारी हैं–

(a) कोई न्यायाधीश, या कोई न्यायिक या कार्यपालक मजिस्ट्रेट, अथवा

(b) उच्च न्यायालय का सेशन न्यायालय या सेशन न्यायालय द्वारा नियुक्त कोई शपथ कमिश्नर, अथवा

(c) नोटरी अधिनियम, 1952 के अधीन नियुक्त कोई नोटरी (धारा 297)।

Q. शपथपत्र किन तथ्यों तक सीमित होंगे?

A. शपथपत्र ऐसे तथ्यों तक, सीमित होंगे, जिन्हें अभिसाक्षी स्वयं अपनी जानकारी से साबित करने के लिए समर्थ है, और ऐसे तथ्यों तक जिनके सत्य होने का विश्वास करने के लिए, उसके पास उचित आधार है। (धारा 297 (2))।

Q. किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में पूर्व दोषसिद्धि या दोषमुक्ति को किस प्रकार साबित किया जायेगा?

A. इस सम्बन्ध में उपबन्ध संहिता की धारा 298 में किया गया है–

(a) ऐसे उद्धरण द्वारा, जिसका उस न्यायालय के जिसमें ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति हुई, अभिलेखों को अभिरक्षा में रखने वाले अधिकारी के हस्ताक्षर द्वारा प्रमाणित उस दण्डादेश या आदेश की प्रतिलिपि होना है, अथवा

(b) दोषसिद्धि की दशा में, या तो ऐसे प्रमाण-पत्र द्वारा, जो उस जेल से भारसाधक अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित है, जिसमें दण्ड या उसका कोई भाग भोगा गया है या सुपुर्दगी के उस वारण्ट को पेश करके जिसके अधीन दण्ड भोगा गया था, अथवा

(c) किसी अन्य ऐसे ढंग से जो तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा उपबन्धित है।

Q. वे कौन सी परिस्थितियाँ हैं जिनके साबित कर दिये जाने पर सक्षम न्यायालय अभियुक्त की अनुपस्थिति में भी अभियोजन की ओर से पेश किये गये साक्षियों की परीक्षा कर सकता है और उनका अभिसाक्ष्य अभिलिखित कर सकता है?

A. संहिता की धारा 299 के अनुसार–वे परिस्थितियाँ हैं–

(i) अभियुक्त व्यक्ति यदि फरार हो गया है,

(ii) उसके तुरन्त गिरफ्तार किये जाने की कोई सम्भावना नहीं है।

Q. फरार अभियुक्त की अनुपस्थिति में लिये गये साक्ष्य का क्या उपयोग किया जा सकता है?

A. ऐसा अभिसाक्ष्य–(i) यदि अभिसाक्षी मर गया है या (ii) साक्ष्य देने में असमर्थ हो गया है, या (iii) मिल नहीं सकता है या, (iv) उसकी हाजिरी विलम्ब, व्यय, या असुविधा के बिना नहीं कराई जा सकती है, तो अभियुक्त व्यक्ति के गिरफ्तार होने पर उसके विरुद्ध साक्ष्य में दिया जा सकता है।

Q. यदि किसी अज्ञात व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा मृत्यु या आजीवन कारावास से दण्डनीय अपराध किया जाना प्रतीत होने पर उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय किस मजिस्ट्रेट को उस पर जांच करने और किन्हीं साक्षियों की परीक्षा का निर्देश दे सकता है?

A. किसी प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट को (धारा 299(2))।

जांचों तथा विचारणों के बारे में साधारण उपबन्ध (General Provisions as to Inquiries and Trials) (धारा 300-327)

जांचों तथा विचारणों के सम्बन्ध में कुछ सामान्य उपबंध संहिता के अध्याय 24 के धारा 300 से 328में किए गए हैं। दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा इस अध्याय में व्यापक परिवर्तन किया गया है जिसके द्वारा धारा 309, 313, 320, 327 और 328 में मूल प्रावधानों को या तो पूरी तरह से परिवर्तित कर दिया गया है अथवा उनमें यथोचित अन्त:स्थापन किया गया है। इस अध्याय के अन्तर्गत वर्णित प्रत्येक धारा का अपना अलग तथा स्वतंत्र प्रभाव है, जिनका पृथक शीर्षकों के अन्तर्गत ही अध्ययन किया जा सकता है।

एक बार दोष सिद्ध या दोषमुक्त किए गए व्यक्ति का उसी अपराध के लिए दोबारा निवारण न किया जाना–धारा 300 (1) के अन्तर्गत यह सामान्य नियम प्रतिपादित किया गया है कि जिस व्यक्ति का किसी अपराध के लिए सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा एक बार विचारण किया जा चुका है और जो ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध या दोषमुक्त किया जा चुका है, वह जब तक ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति प्रवृत्त रहती है तब तक न तो उसी अपराध के लिए विचारण का भागी होगा और न ही उन्हीं तथ्यों पर किसी ऐसे अन्य अपराध के लिए विचारण का भागी होगा जिसके लिए उसके विरुद्ध लगाए गए आरोप से भिन्न आरोप लगाया जा सकता था या जिसके लिए वह दोषसिद्ध किया जा सकता था।

दोषमुक्त या दोषसिद्ध किए गए किसी व्यक्ति का विचारण, तत्पश्चात् राज्य सरकार की सम्मति से किसी ऐसे भिन्न अपराध के लिए किया जा सकता है जिसके लिए पूर्वगामी विचारणो में उसके विरुद्ध पृथक आरोप लगाया जा सकता था। (धारा 302)।

परिवाद का खारिज किया जाना या अभियुक्त का उन्मोचन इस धारा के प्रयोजन के लिए दोषमुक्ति नहीं हैं।

दृष्टान्त–क का विचारण सेवक की हैसियत में चोरी करने के आरोप पर किया जाता है और वह दोषमुक्त कर दिया जाता है। जब तक दोषमुक्ति प्रवृत्त रहे, उस पर सेवक के रूप में चोरी के लिए या उन्हीं तथ्यों पर केवल चोरी के लिए या आपराधिक न्यासभंग के लिए बाद में आरोप नहीं लगाया जा सकता है।

ख के आपराधिक मानवधं के लिए क पर सेशन न्यायालय के समक्ष आरोप लगाया जाता है और वह दोषसिद्ध किया जाता है। ख की हत्या के लिए क का उन्हीं तथ्यों पर तत्पश्चात् विचारण नहीं किया जा सकेगा।

धारा 300 यह सिद्धान्त प्रतिपादित करती है कि यदि किसी व्यक्ति को किसी अपराध के लिए सक्षम न्यायालय द्वारा विचारित किया जा चुका है और उसके पश्चात् उसे दोषसिद्ध या दोषमुक्त कर दिया जाता है तो पुनः उस व्यक्ति को उसी अपराध के लिए विचारित नहीं किया जायेगा। जब तक कि ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति प्रवृत्त रहे। धारा 300 के प्रावधान भारतीय संविधान के अनु. 20 (2) के समान है जिसमें प्रावधान है कि किसी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए एक बार से अधिक अभियोजित और दण्डित नहीं किया जायेगा।

धारा 300 एक ही अपराध के लिए विचारण को बाधित करती है, किन्तु विभिन्न अपराधों के विचारणों को नहीं जो कि एक ही कार्यों के संयोजन में कार्य या लोप से उत्पन्न हुये हैं। (धारा 300 (3) (4)।

लोक अभियोजक की हाजिरी एवं अभियोजन का संचालन–किसी मामले का भारसाधक लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक किसी न्यायालय में किसी लिखित प्राधिकार के बिना हाजिर हो सकता है और अभिवचन कर सकता है। (धारा 301)।

किसी मामले की जांच या विचारण करने वाले कोई मजिस्ट्रेट निरीक्षक की पंक्ति से नीचे के पुलिस अधिकारी से भिन्न किसी भी व्यक्ति द्वारा अभियोजन के संचालित किए जाने की अनुज्ञा दे सकता है, किन्तु महाधिवक्ता या सरकारी अधिवक्ता या लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक से भिन्न कोई व्यक्ति ऐसी अनुज्ञा के बिना ऐसा करने का हकदार न होगा :

परन्तु यदि पुलिस अधिकारी ने उस अपराध के अन्वेषण में, जिसके बारे में अभियुक्त का अभियोजन किया जा रहा है, भाग लिया है तो अभियोजन का संचालन करने की उसे अनुज्ञा नहीं दी जायेगी। (धारा 302)।

प्रतिरक्षा एवं विधिक सहायता–जो व्यक्ति दण्ड न्यायालय के समक्ष अपराध के लिए अभियुक्त है या जिसके विरुद्ध कार्यवाही संस्थित की गई है उसे यह अधिकार है कि वह अपनी पसन्द के प्लीडर द्वारा अपनी प्रतिरक्षा करे। (धारा 302)।

जहां सेशन न्यायालय के समक्ष किसी विचारण में, अभियुक्त का प्रतिनिधित्व किसी प्लीडर द्वारा नहीं किया जाता है और जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त के पास किसी प्लीडर को नियुक्त करने के लिए पर्याप्त साधन नहीं हैं, वहां न्यायालय उसकी प्रतिरक्षा के लिए राज्य के व्यय पर प्लीडर उपलब्ध करेगा। (धारा 304 (1))।

राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से उच्च न्यायालय।

(क) प्रतिरक्षा के लिए प्लीडरों के चयन के ढंग का,

(ख) ऐसे प्लीडरों को न्यायालयों द्वारा दी जाने वाली सुविधाओं का;

(ग) ऐसे प्लीडरों को सरकार द्वारा फीसों का और इस धारा के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए;

उपबन्ध करने वाले नियम बना सकता है। (धारा 304 (2))।

सह अपराधी को क्षमादान–किसी ऐसे अपराध से, जिसे यह धारा लागू होती है, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सम्बद्ध या संसर्गित समझे जाने वाले किसी व्यक्ति का साक्ष्य अभिप्राप्त करने की दृष्टि से मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट अपराध के अन्वेषण या जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में, और अपराध की जांच या विचारण करने वाला प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में उस व्यक्ति को इस शर्त पर क्षमा-दान कर सकता है कि वह अपराध के सम्बन्ध में और उसके लिए जाने से सम्बद्ध प्रत्येक अन्य व्यक्ति के सम्बन्ध में सब परिस्थितियों का जिनकी उसे जानकारी हो, पूर्ण और सत्य प्रकटन कर दे। (धारा 306 (1))।

यह धारा निम्नलिखित को लागू होती है–

(क) अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा या विशेष न्यायाधीश के न्यायालय द्वारा विचारणीय कोई अपराध;

(ख) ऐसे कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो या अधिक कठोर दण्ड से दण्डनीय कोई अपराध। (धारा 306 (2)।

प्रत्येक मजिस्ट्रेट, जो क्षमा-दान करता है,

(क) ऐसा करने के अपने कारणों को अभिलिखित करेगा;

(ख) यह अभिलिखित करेगा कि क्षमा-दान उस व्यक्ति द्वारा जिसको कि वह किया गया था स्वीकार कर लिया गया था यह नहीं।

क्षमा-दान स्वीकार करने वाले–

(क) प्रत्येक व्यक्ति की अपराध का संज्ञान कने वाले मजिस्ट्रेट के न्यायालय में और पश्चातवर्ती विचारण में साक्षी के रूप में परीक्षा की जाएगी;

(ख) प्रत्येक व्यक्ति को, जब तक कि वह पहले से ही जमानत पर न हो, विचारण खत्म होने तक अभिरक्षा में निरुद्ध रखा जाएगा। (धारा 306 (4))।

जहां किसी व्यक्ति ने क्षमा-दान स्वीकार कर लिया है और उसकी परीक्षा की जा चुकी है, वहां अपराध का संज्ञान करने वाला मजिस्ट्रेट, मामले में कोई अतिरिक्त जांच किए बिना;

(क) मामले को–

(i) यदि अपराध अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है या यदि संज्ञान करने वाला मजिस्ट्रेट मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट है तो, उस न्यायालय को सुपुर्द कर देगा;

(ii) अपराध विशेष न्यायाधीश के न्यायालय द्वारा विचारणीय होने पर उस न्यायालय को सुपुर्द कर देगा।

(ख) अन्य दशा में, मामला मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के हवाले करेगा जो उसका विचारण स्वयं करेगा।

धारा 306 (1) के अन्तर्गत क्षमादान प्राप्त सह-अपराधी व्यक्ति को इकबाली साक्षी (पक्षाद्रोही साक्षी) कहा जाता है। अतः उसके साक्ष्यों की सम्पुष्टि आवश्यक आवश्यक होता है।

धारा 307 के अनुसार सुपुर्दगी के पश्चात् किसी समय किन्तु निर्णय दिए जाने के पूर्व वह न्यायालय किसी ऐसे अपराध से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सम्बद्ध या संसर्गित समझे जाने वाले किसी व्यक्ति का साक्ष्य विचारण में अभिप्राप्त करने की दृष्टि से उस व्यक्ति को उसी शर्त पर क्षमा-दान कर सकता है।

धारा 308. (1) के अनुसार जहां ऐसे व्यक्ति के बारे में जिसने क्षमा-दान स्वीकार कर लिया है, लोक अभियोजक प्रमाणित करता है कि ऐसे व्यक्ति ने या तो किसी अत्यावश्यक बात को जानबूझकर छिपा कर या मिथ्या साक्ष्य देकर उस शर्त का पालन नहीं किया है वहां ऐसे व्यक्ति का विचारण उस अपराध के लिए, जिसके बारे में ऐसे व्यक्ति का विचारण उस अपराध के लिए, जिसके बारे में ऐसे क्षमा-दान किया गया था या किसी अन्य अपराध के लिए, जिसका वह उस विषय के सम्बन्ध में दोषी प्रतीत होता है, और मिथ्या साक्ष्य देने के अपराध के लिए भी विचारण किया जा सकता है।

परन्तु ऐसे व्यक्ति का विचारण अन्य अभियुक्तों में से किसी के साथ संयुक्ततः नहीं किया जाएगा और मिथ्या साक्ष्य देने के अपराध के लिए ऐसे व्यक्ति का विचारण उच्च न्यायालय की मंजूरी के बिना नहीं किया जाएगा।

कार्यवाही स्थगित किया जाना–धारा 309 (1) के अन्तर्गत यह उपबंध किया गया है कि प्रत्येक जांच या विचारण में कार्यवाही यथासम्भव शीघ्रता से की जायेगी और साक्षियों की परीक्षा एक बार प्रारम्भ हो जाती है तो सभी साक्षियों की परीक्षा होने तक उसे दिन-प्रतिदिन जारी रखा जायेगा, जब तक विशेष कारणों से, जिसे लेखबद्ध किया जायेगा, न्यायालय उसे स्थागित करना आवश्यक न समझे।

परंतु जब जांच या विचारण भा.द.सं. की धारा 376, धारा 376क, धारा 376 क ख, धारा 376 ख, धारा 376 ग, धारा 376 घ, धारा 376 घक, धारा 376 घख के अधीन किसी अपराध से संबंधित है, तब जांच या विचारण, आरोप पत्र फाइल किए जाने की तारीख से **दो मास** की अवधि के भीतर पूरा किया जाएगा (परंतुक वर्ष 2013 के संशोधन द्वारा प्रतिस्थापित तथा वर्ष 2018 द्वारा संशोधित है)।

उपधारा (2) के अनुसार विशिष्ट कारणों, से, जिसे लेखबद्ध किया जायेगा, मजिस्ट्रेट आवश्यक और उचित समझता है, 15 दिन की अवधि के लिए जांच या विचारण को स्थगित कर सकता है और अभियुक्त को प्रतिप्रेषित कर सकता है।

तीसरे परन्तुक के अनुसार स्थगन केवल इस प्रयोजन के लिए मंजूर नहीं किया जायेगा कि वह अभियुक्त व्यक्ति को उस पर अधिरोपित किए जाने के लिए प्रस्थापित दण्डादेश के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने हेतु समर्थ बनाये।

पुनः दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 20 (ख) के द्वारा इस उपधारा में चौथा परन्तुक निम्नवत् जोड़ा गया है :

''परन्तु यह भी कि–

(क) कोई स्थगन किसी पक्षकार की प्रार्थना पर उन परिस्थितियों के सिवाय नहीं की जायेगी, जो उस पक्षकार के नियंत्रण से परे है;

(ख) यह तथ्य की किसी पक्षकार का प्लीडर किसी अन्य न्यायालय में व्यस्त है, स्थगन का आधार नहीं होगा;

(ग) जहां कोई साक्षी न्यायालय में हाजिर है किन्तु पक्षकार या उसका प्लीडर उपस्थित नहीं है या पक्षकार अथवा उसका प्लीडर न्यायालय में उपस्थित है, किन्तु साक्षी की परीक्षा या प्रतिपरीक्षा करने के लिए तैयार नहीं है, तब न्यायालय यदि उचित समझता है, साक्षी का कथन लेखबद्ध कर सकेगा और, यथास्थिति, साक्षी की मुख्य परीक्षा या प्रति-परीक्षा से अभिमुक्त करते हुए ऐसा आदेश पारित कर सकेगा, जैसा कि वह उचित समझे''।

स्थानीय निरीक्षण और साक्षी को समन–धारा 310 के अनुसार कोई न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में, किसी भी प्रक्रम पर अपराध स्थल का निरीक्षण का आदेश कर सकता है।

इसी प्रकार कोई न्यायालय जांच विचारण या अन्य कार्यवाही के किसी प्रक्रम में किसी व्यक्ति को साक्षी के तौर पर समन कर सकता है या किसी ऐसे व्यक्ति की, जो हाजिर हो, परीक्षा कर सकता है किसी व्यक्ति को पुनः बुला सकता है और उसकी पुनः परीक्षा कर सकता है। (धारा 311)।

नमूना हस्ताक्षर या हस्तलेख देने के लिए किसी व्यक्ति को आदेश देने की मजिस्ट्रेट की शक्ति–यदि प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि इस संहिता के अधीन किसी अन्वेषण या कार्यवाही के प्रयोजन के लिए, नमूना हस्ताक्षर या हस्तलेख देने के लिए किसी व्यक्ति को, जिसके अन्तर्गत अभियुक्त व्यक्ति भी है, निर्देश देना समीचीन है, तो वह उस आशय का आदेश कर सकेगा और उस दशा में, वह व्यक्ति जिससे आदेश सम्बन्धित है, ऐसे आदेश में विनिर्दिष्ट समय और स्थान पर पेश किया जाएगा या वहां उपस्थित होगा और अपने नमूना हस्ताक्षर या हस्तलेख देगा :

परन्तु इस धारा के अधीन कोई आदेश तब तक नहीं किया जाएगा जब तक कि उस व्यक्ति को ऐसे अन्वेषण या कार्यवाही के सम्बन्ध में किसी समय गिरफ्तार न किया गया हो। (धारा 311 क)।

संहिता में यह नवीन उपबन्ध दण्ड प्रक्रिया संहिता संशोधन अधिनियम, 2005 द्वारा किया गया है।

धारा 312 के अन्तर्गत परिवादियों एवं साक्षियों के व्यय राज्य सरकार के द्वारा दिए जाने के लिए न्यायालय आदेश दे सकता है।

अभियुक्त की परीक्षा–अभियुक्त की परीक्षा से सम्बन्धित साधारण उपबंध संहिता की मूल धारा 313के उपधारा (1) से (4) में वर्णित है किन्तु इस धारा में वर्ष 2008 के संशोधन के द्वारा एक नयी उपधारा (5) अन्तः स्थापित है।

उपधारा (1) के अनुसार प्रत्येक जांच या विचारण में, इस प्रयोजन से कि अभियुक्त अपने विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट होने वाली किन्हीं परिस्थितियों का स्वयं स्पष्टीकरण कर सके, न्यायालय अभियुक्त से उसे चेतावनी दिए बिना आवश्यक प्रश्न और प्रतिरक्षा प्रारम्भ होने के पूर्व साधारण प्रश्न कर सकता है। इस प्रश्न के दौरान उसे शपथ नहीं दिलाया जायेगा (धारा 313(2))। अभियुक्त ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने से इंकार करने पर या मिथ्या उत्तर देने पर दण्डनीय नहीं होगा। (धारा 313(3)। ऐसे उत्तर का उपयोग किसी अन्य अपराध में साक्ष्य रूप में किया जा सकता है (धारा 313 (4)। न्यायालय ऐसे सुसंगत प्रश्नों को तैयार करने में अभियोजक तथा प्रतिरक्षा अधिवक्ता की सहायता ले सकेगा, जो अभियुक्त के समक्ष किए जाने हैं और न्यायालय अभियुक्त द्वारा लिखित कथन पेश किए जाने की अनुज्ञा भी दे सकता है।

धारा 314 के अन्तर्गत मौखिक बहस और बहस के ज्ञापन के सम्बन्ध में उपबंध किया गया है।

धारा 315 (1) के अनुसार कोई व्यक्ति, जो किसी अपराध के लिए किसी दण्ड न्यायालय के समक्ष अभियुक्त है, प्रतिरक्षा के लिए सक्षम साक्षी होगा और अपने विरुद्ध या उसी विचारण में उसके साथ आरोपित किसी व्यक्ति के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को नासाबित करने के लिए शपथ पर साक्ष्य दे सकता है। परन्तु वह स्वयं अपनी लिखित प्रार्थना के बिना साक्षी के रूप में नहीं बुलाया जाएगा।

अभियुक्त अपने विरद्ध या सह-अभियुक्त के विरुद्ध लगाये गये आरोपों को नासाबित करने के प्रयोजनार्थ शपथ पर लाक्ष्य दे सकता है।

किसी वचन या धमकी द्वारा या अन्यथा कोई असर अभियुक्त

व्यक्ति पर इस उद्देश्य से नहीं डाला जाएगा कि उसे अपनी जानकारी की किसी बात को प्रकट करने या न करने के लिए उत्प्रेरित किया जाए। (धारा 316)।

कुछ मामलों में अभियुक्त की अनुपस्थिति में भी जांच और विचारण जारी रखा जा सकता है यदि न्याय हित में ऐसा आवश्यक हो या अभियुक्त कार्यवाही में बार-बार बाधा डालता है (धारा 317)अभियुक्त को कार्यवाही समझाया नहीं जा सकता है (धारा 318)। अपराध के दोषी प्रतीत होने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध भी न्यायालय कार्यवाही कर सकता है और यथास्थिति समन या वारण्ट जारी कर सकता है। (धारा 319)।

अपराधों का शमन–संहिता के धारा 320 के अन्तर्गत अपराधों के शमन के सम्बन्ध में प्रावधान किया गया है। इस उद्देश्य से अपराधों को दो वर्गों में विभाजित किया गया है। वर्ग-1 के अन्तर्गत व्यथित पक्षकार स्वयं न्यायालय की अनुमति के बिना भी अभियुक्त से समझौता कर सकता है जबकि वर्ग-2 के अन्तर्गत अभियुक्त से समझौता न्यायालय की पूर्वानुमति से ही व्यथित पक्षकार द्वारा किया जा सकता है।

दण्ड प्रक्रिया-संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा अब दोनों वर्गों के अन्तर्गत आने वाले अपराधों की सूची को व्यापक बना दिया गया है और उन्हें नये सिरे से अन्तःस्थापित किया गया है।

मूल संहिता में वर्ग I में जहां पहले भारतीय दण्ड संहिता 1860 की केवल 21 धाराओं में वर्णित अपराधों को शमनीय बनाया गया था, उसे वर्ष 2008 के संशोधन के द्वारा कुल 43 धाराओं में वर्णित अपराधों तक विस्तारित कर दिया गया है। इसी प्रकार वर्ग II के अन्तर्गत जहां पहले 36 धाराओं में न्यायालय की अनुमति से शमनीय था, इसके अधिकांश धाराओं को वर्ग I में शामिल कर लेने अर्थात् स्वयं पीड़ित के पक्ष के इच्छा मात्र पर शमनीय बना दिए जाने के कारण इसकी संख्या मात्र 13 ही रह गया है।

वर्ग I के अन्तर्गत शमनीय अपराध की धाराएं निम्नलिखित हैं–298, 323, 334, 335, 341, 342, 343, 344, 346, 352, 355, 358, 379, 403, 407, 411, 414, 417, 419, 421, 422, 423, 424, 426, 427, 428, 429, 430, 447, 448, 451, 482, 483, 486, 491, 498, 500, 501, 502, 504, 506, 508 इसी प्रकार नव स्थापित धारा 320(2)अर्थात् वर्ग II के अन्तर्गत अब केवल निम्नलिखित धाराओं में उल्लिखित अपराध शेष रह गए हैं–धारा 312, 325, 337, 338, 357, 381, 406, 408, 418, 420, 494, 500 और 509।

पुनः धारा 320 की उपधारा (3) को भी नये उपबंध के साथ निम्नवत् अन्तःस्थापित किया गया है–

''जब कोई अपराध इस धारा के अन्तर्गत शमनीय है तब ऐसे अपराध का दुष्प्रेरण का अथवा ऐसे अपराध को करने की प्रयत्न का (जब ऐसा प्रयत्न स्वयं अपराध हो) अथवा जहां अभियुक्त भा. दं. सं. की धारा 34 या 149 के अन्तर्गत दायी है, शमन उसी प्रकार किया जा सकता है''।

जब वह व्यक्ति, जो इस धारा के अधीन अपराध का शमन करने के लिए अन्यथा सक्षम होता, अठारह वर्ष से कम आयु का है या जड़ या पागल है तब कोई व्यक्ति जो उसकी ओर से संविदा करने के लिए सक्षम हो, न्यायालय की अनुज्ञा से, ऐसे अपराध का शमन कर सकता है। (धारा 320 (4) क)।

जब वह व्यक्ति, जो अपराध का शमन करने के लिए अन्यथा सक्षम होता, मर जाता है तब ऐसे व्यक्ति का विधिक प्रतिनिधित न्यायालय की सम्मति से, ऐसे अपराध का शमन कर सकता है।

जब अभियुक्त विचारणार्थ सुपुर्द कर दिया जाता है या जब वह दोषसिद्ध कर दिया जाता है और अपील लम्बित है तब अपराध का शमन, यथास्थिति, उस न्यायालय की इजाजत के बिना अनुज्ञात न किया जाएगा जिसे वह सुपुर्द किया गया है, या जिसके समक्ष अपील सुनी जानी है। (धारा 320 (5))।

धारा 401 के अधीन पुनरीक्षण की अपनी शक्तियों के प्रयोग में कार्य करते हुए उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय किसी व्यक्ति को किसी ऐसे अपराध का शमन करने की अनुज्ञा दे सकता है जिसका शमन करने के लिए वह व्यक्ति इस धारा के अधीन सक्षम है।

अपराध के इस धारा के अधीन शमन का प्रभाव उस अभियुक्त की दोषमुक्ति होगा जिससे अपराध का शमन किया गया है। (धारा 320(8))।

अभियोजन वापस लेना–किसी मामले का भारसाधक लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक निर्णय सुनाए जाने के पूर्व किसी समय किसी व्यक्ति के अभियोजन को या तो साधारणतः या उन अपराधों में से किसी एक या अधिक के बारे में, जिनके लिए उस व्यक्ति का विचारण किया जा रहा है, न्यायालय की सम्मति से वापस ले सकता है-

(क) यदि ऐसा आरोप विरचित किए जाने के पहले किया जाता है तो अभियुक्त ऐसे अपराध या अपराधों के बारे में उन्मोचित कर दिया जाएगा;

(ख) यदि ऐसा आरोप विरचित किए जाने के पश्चात् या जब आरोप अपेक्षित नहीं है, तब किया जाता है तो वह ऐसे अपराध या अपराधों के बारे में दोषमुक्त कर दिया जाएगा। (धारा 320)।

यदि किसी जिले में किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष अपराध की किसी जांच या विचारण के दौरान उसे साक्ष्य से ऐसा प्रतीत होता है कि उसके आधार पर यह उपधारणा की जा सकती है कि–

(क) उसे मामले का विचारण करने या विचारणार्थ सुपुर्द करने की अधिकारिता नहीं, अथवा

(ख) मामला ऐसा है जो जिले के किसी अन्य मजिस्ट्रेट द्वारा विचारित या विचारणार्थ सुपुर्द किया जाना चाहिए; अथवा

(ग) मामले का विचारण मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाना चाहिए,

तो वह कार्यवाही को रोक देगा और मामले की संक्षिप्त रिपोर्ट सहित, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को या अधिकारिता वाले अन्य ऐसे मजिस्ट्रेट को, जिसे मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट निर्दिष्ट करे, भेज देगा। (धारा 322)।

जब कभी मजिस्ट्रेट की यह राय है कि अभियुक्त दोषी है और उसे उस प्रकार के दण्ड से भिन्न प्रकार का दण्ड या उस दण्ड से अधिक कठोर दण्ड, जो वह मजिस्ट्रेट देने के लिए सशक्त है, दिया जाना चाहिए अथवा द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट होते हुए उसकी राय है कि अभियुक्त के बन्धपत्र निष्पादित करने की अपेक्षा की जानी चाहिए तब वह अपनी राय अभिलिखित कर सकता है और कार्यवाही तथा अभियुक्त को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को जिसके वह अधीनस्थ हो, भेज सकता है। (धारा 325 (1))।

जब एक से अधिक अभियुक्तों का विचारण एक साथ किया जा रहा है और मजिस्ट्रेट ऐसे अभियुक्तों में से किसी के बारे में कार्यवाही करना आवश्यक समझता है तब वह उन सभी अभियुक्तों को, जो उसकी राय में दोषी है, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेज देगा। [धारा 325 (2)]।

धारा 326 में भागतः एक न्यायाधीश अथवा मजिस्ट्रेट द्वारा एवं भागतः दूसरे न्यायधीश अथवा मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किये गये साक्ष्य पर दोषसिद्ध या सुपुर्दगी सम्बन्धी उपबन्ध किये गये है।

धारा 327. (1) के अनुसार वह स्थान, जिसमें कोई दण्ड न्यायालय किसी अपराध की जांच या विचारण के प्रयोजन से बैठता है, खुला न्यायालय समझा जाएगा, जिसमें जनता साधारणतः प्रवेश कर सकेगी जहां तक कि सुविधापूर्णक वे उसमें समा सके।

यदि पीठासीन न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट ठीक समझता है तो वह किसी विशिष्ट मामले की जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में आदेश दे सकता है कि जनसाधारण या कोई विशेष व्यक्ति उस कमरे में या भवन में, जो न्यायालय द्वारा उपयोग में लाया जा रहा है, न तो प्रवेश करेगा, न होगा और न रहेगा।

उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, बलात्संग या भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376, धारा 376क, धारा 376 कख, धारा 376ख, धारा 376ग, धारा 376घ, धारा 376 घक, धारा 376 घख या धारा 376 ङ के अधीन अपराध की जांच या विचारण बन्द कमरे में किया जाएगा; परन्तु पीठासीन न्यायाधीश यदि उचित समझता है तो, अथवा दोनों में से किसी पक्षकार द्वारा आवेदन किये जाने पर न्यायालय द्वारा उपयोग में लाये जा रहे कक्ष या भवन में, किसी विशिष्ट व्यक्ति को प्रवेश करने, होने या रहने की अनुमति दे सकता है। (उपधारा 2)। इसी उपधारा के आगे वर्ष 2008 के संशोधन के द्वारा यह परन्तुक अन्तःस्थापित किया गया है कि ''बंद कमरे में विचारण यथासाध्य महिला न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट के द्वारा संचालित किया जायेगा''।

उपधारा 3 के अनुसार उपधारा (2) के अधीन के सभी कार्यवाहियों से सम्बन्धित किसी विषय को न्यायालय की पूर्व अनुमति के बिना छापना या प्रकाशित करना वैध नहीं होगा। पुनः इस उपधारा में दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 24 के द्वारा निम्न परन्तुक अन्तःस्थापित किया गया है–

''बलात्कार के अपराध के सम्बन्ध में विचारण कार्यवाहियों के मुद्रण या प्रकाशन पर प्रतिबंध पक्षकारों के नाम तथा पता की गोपनीयता बनाये रखने के अध्यधीन रहते हुए समाप्त किया जा सकेगा''।

इस धारा के अधीन किए गए सभी संशोधन पंजाब राज्य बनाम गुरमीत कौर (1996) के निर्णय में उच्चतम न्यायालय के द्वारा दिए गए महत्वपूर्ण दिशा निर्देशों को ध्यान में रखते हुए किए गए हैं।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की कौन सी धारा यह उपबंध करती है कि किसी व्यक्ति की जिसकी एक बार दोषसिद्धि अथवा दोषमुक्ति हो चुकी है उसी अपराध के लिए दोबारा विचारण नहीं किया जा सकता है?

A. धारा 300।

Q. दंड प्रक्रिया संहिता की किस धारा में निःशुल्क विधिक सहायता का प्रावधान है?

A. धारा 304।

Q. सह-अपराधी को दण्ड प्रक्रिया-संहिता की धारा 306 के अन्तर्गत कब क्षमादान दिया जा सकता है?

A. जांच या विचारण के किसी भी प्रक्रम पर।

Q. अभियुक्त व्यक्ति सक्षम साक्षी होगा किस धारा में वर्णित है?

A. धारा 315।

Q. अपराधों का शमन किस धारा में परिभाषित है?

A. धारा 320।

Q. शमनीय तथा अशमनीय अपराधों का वर्गीकरण दण्ड प्रक्रिया संहिता में कहां वर्णित है?

A. धारा 320 में।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 में वर्णित अपराधों के सिवाय भा. दं. सं. में वर्णित अन्य सभी अपराध किस श्रेणी में आते हैं?

A. अशमनीय।

Q. भारतीय संविधान के अनु. 20 (2) के अन्तर्गत उपबन्धित 'दोहरे जोखिम का सिद्धान्त' दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा में अपना स्थान पाती है?

A. धारा 300 के अन्तर्गत।

Q. पूर्व दोष सिद्धि अथवा प्राग-दोषमुक्ति का सिद्धान्त, अंग्रेजी में किस रूप में महत्त्व पाता है?

A. यह अंग्रेजी में ``Autre Fors Convict और Autre Fois acquit के रूप में ज्ञात है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 में निहित मूल सिद्धान्त क्या हैं?

A. इस धारा में निहित मूल सिद्धान्त यह है कि यदि किसी व्यक्ति को किसी अपराध के लिए सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा एक बार विचारित किया जा चुका है और उसे ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध या दोषमुक्त किया जा चुका है, तो जब तक ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति प्रवृत्त रहती है, उस व्यक्ति को उसी अपराध के या उन्हीं तथ्यों पर बने किसी अन्य अपराध के लिए पुनः विचारित नहीं किया जायेगा।

Q. क्या सीमा शुल्क कलेक्टर द्वारा किया गया अभिनिर्णयन अभियोजन है?

A. मकबूल हुसैन बनाम बम्बई राज्य, ए.आई.आर. 1953 एस.सी. के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि सीमा शुल्क कलेक्टर द्वारा किया गया अभिनिर्णयन अभियोजन नहीं है, और सीमा शुल्क कलेक्टर धारा 300 के अर्थों में सक्षम न्यायालय भी नहीं है।

Q. संहिता की धारा 300 (1) में जो पूर्व दोषसिद्धि या पूर्व दोषमुक्ति का सिद्धान्त समाविष्ट किया गया है, क्या उसके अपवाद भी हैं?

A. हां। धारा 300 की उपधारा (2) से (6) तक इसी सामान्य सिद्धान्त के अपवाद प्रस्तुत किये गये हैं।

Q. 'क' का विचारण सेवक की हैसियत में चोरी करने के आरोप पर किया जाता है और वह दोषमुक्त कर दिया जाता है। बाद में उन्हीं तथ्यों पर 'क' पर आपराधिक न्यासभंग का आरोप क्या लगाया जा सकता है?

A. नहीं! धारा 300 (1) में उपबन्धित सामान्य सिद्धान्त के अनुसार जब तक दोषमुक्ति प्रवृत्त रहे 'क' पर सेवक के रूप में आपराधिक न्यासभंग के लिए आरोप नहीं लगाया जा सकता।

Q. घोर उपहति कारित करने के लिए 'क' का विचारण किया जाता है और वह दोषमुक्ति किया जाता है। क्षत व्यक्ति मर जाता है। क्या आपराधिक मानव वध के लिए 'क' का पुनः विचारण किया जायेगा?

A. हां! क्योंकि धारा 300 की उपधारा (3) के अनुसार जब 'क' दोषसिद्ध किया गया था, तब क्षत व्यक्ति मरा नहीं था, जो एक भिन्न अपराध है, और न ही न्यायालय को ज्ञात था।

Q. संहिता की धारा 300 की उपधारा (4) क्या अपवाद प्रस्तुत करती है?

A. धारा 300 (4) के अनुसार जो व्यक्ति किन्हीं कार्यों से बनने वाले किसी अपराध के लिए दोषमुक्त या दोषसिद्ध किया गया है, उस पर ऐसी दोषमुक्ति या दोषसिद्धि के होने पर भी, उन्हीं कार्यों से बनने वाले और उसके द्वारा किये गये किसी अन्य अपराध के लिए बाद में आरोप लगाया जा सकेगा और उसका विचारण किया जा सकेगा, यदि वह न्यायालय जिसके द्वारा पहले उसका विचारण किया गया था, उस अपराध के विचारण के लिए सक्षम नहीं था, जिसके लिए बाद में उस पर आरोप लगाया जाता है।

Q. 'घ' को लूटने के लिए 'क', 'ख' और 'ग' पर प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा आरोप लगाया जाता है और वे दोषसिद्ध किये जाते हैं। बाद में उन्हीं तथ्यों पर 'क' 'ख' और 'ग' पर डकैती के लिए आरोप लगाया जा कर उनका विचारण किया जाता है, क्या यह उचित है?

A. हां! धारा 300 की उपधारा (4) के अनुसार 'क', 'ख' और 'ग' पर डकैती का आरोप लगाकर उनका विचारण किया जा जा सकेगा।

Q. संहिता की धारा 258 के अधीन उन्मोचित किये गये किसी व्यक्ति का उसी अपराध के लिए पुनः विचारण किस न्यायालय की सम्पत्ति से किया जायेगा?

A. उस न्यायालय की सम्मति से किया जायेगा, जिसके द्वारा वह उन्मोचित किया गया था, या अन्य किसी ऐसे न्यायालय की सम्मति से जिसके वह अधीनस्थ है। (धारा 300 (5))।

Q. क्या परिवाद का खारिज किया जाना या अभियुक्त का उन्मोचन धारा 300 के प्रयोजन के लिए दोषमुक्ति है?

A. नहीं! धारा 300 के स्पष्टीकरण अनुसार ऐसा नहीं है।

Q. 'ख' के शरीर से सम्पत्ति की चोरी करने के लिए 'क' पर द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा आरोप लगाया जाता है और वह दोषसिद्ध किया जाता है, क्या उन्हीं तथ्यों पर बाद में लूट का आरोप लगाया जा सकेगा?

A. हां! संहिता की धारा 300 की उपधारा 4 के अन्तर्गत आरोप लगाया जा सकेगा।

Q. किसी मामले की जांच या विचारण करने वाले कोई मजिस्ट्रेट किस पंक्ति से नीचे के पुलिस से भिन्न किसी भी व्यक्ति द्वारा अभियोजन के संचालित किये जाने की अनुज्ञा दे सकेगा?

A. निरीक्षक की पंक्ति से नीचे के। (धारा 302)।

Q. वे कौन से लोग हैं जिन्हें अभियोजन के संचालन के लिए मजिस्ट्रेट की अनुज्ञा आवश्यक नहीं है।

A. वे लोग हैं, महाधिवक्ता, या सरकारी अधिवक्ता या लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक (धारा 302)।

Q. साधारणतः किस पुलिस अधिकारी को मजिस्ट्रेट द्वारा अभियोजन के संचालन की अनुज्ञा नहीं दी जायेगी?

A. जो उस अपराध के अन्वेषण में, जिसके बारे में अभियुक्त का अभियोजन किया जा रहा है, भाग लिया है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अन्तर्गत अभियुक्त अपनी पसन्द के प्लीडर से अपनी प्रतिरक्षा कराने का अधिकार रखता है?

A. धारा 303 के अन्तर्गत।

Q. न्यायालय किन दशाओं में अभियुक्त को उसकी प्रतिरक्षा के लिए राज्य के व्यय पर प्लीडर उपलब्ध करेगा?

A. जब सेशन न्यायालय के समक्ष किसी विचारण में, अभियुक्त का प्रतिनिधित्व किसी प्लीडर द्वारा नहीं किया जाता है और जहां न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त के पास किसी प्लीडर को नियुक्त करने के लिए पर्याप्त साधन नहीं है। (धारा 304)।

Q. संहिता की धारा 304 के अधीन अभियुक्त की प्रतिरक्षा करने के लिए नियुक्त प्लीडरों के चयन के ढंग का नियम कौन बना सकता है?

A. राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से उच्च न्यायालय। (धारा 304(2))।

Q. सह-अपराधी कौन व्यक्ति होता है?

A. वह व्यक्ति, जो किसी अपराध से मुख्यकर्त्ता, सहयोग, दुष्प्रेरक या षड्यन्त्र के माध्यम से जुड़ा होता है।

Q. संहिता की धारा 306 के अन्तर्गत किस दृष्टि से क्षमादान किया जाता है?

A. किसी ऐसे अपराध से, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सम्बद्ध या संसर्गित किसी व्यक्ति का साक्ष्य अभिप्राप्त करने की दृष्टि से।

Q. धारा 306 में निहित अपराध की जांच या विचारण करने वाला वह कौन-सा मजिस्ट्रेट है जो अपराध के जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में सह-अपराधी को क्षमादान कर सकता है?

A. प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट एवं मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट।

Q. संहिता की धारा 306 के अन्तर्गत क्षमादान की क्या शर्तें होती हैं?

A. इस धारा के अन्तर्गत सशक्त मजिस्ट्रेट सह-अपराधी को इस शर्त पर क्षमादान कर सकते हैं कि वह अपराध के सम्बन्ध में और उसके किये जाने से चाहे कर्त्ता या दुष्प्रेरक के रूप में सम्बद्ध प्रत्येक अन्य व्यक्ति के सम्बन्ध में सब परिस्थितियों का, जिनकी उसे जानकारी हो, पूर्ण और सत्य प्रकटन कर दे।

Q. वे कौन-से अपराध हैं जिनके सम्बन्ध में क्षमादान किया जा सकता है?

A. जिन अपराधों के लिए सह-अपराधी को क्षमादान किया जा सकता है, वे निम्न हैं–

(a) ऐसे अपराध जो अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है,

(b) ऐसे अपराध जो दण्ड विधि, संशोधन, अधिनियम, 1952 के अधीन नियुक्त विशेष न्यायाधीश के न्यायालय द्वारा विचारणीय हैं;

(c) ऐसे अपराध जो सात वर्ष के या अधिक की अवधि के कठोर कारावास के दण्ड से दण्डनीय हैं।

Q. धारा 306 के अन्तर्गत क्षमादान स्वीकार कर लेने वाले व्यक्ति के साथ कैसा व्यवहार किया जायेगा?

A. क्षमादान स्वीकार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति की अपराध का संज्ञान करने वाले मजिस्ट्रेट के न्यायालय में और पश्चात्वर्ती विचारण में, साक्षी के रूप में परीक्षा की जायेगी, एवं जब तक वह पहले से ही जमानत पर न हो विचारण खत्म होने तक अभिरक्षा में निरुद्ध रखा जायेगा। (धारा 306 (4))।

Q. जहां किसी व्यक्ति ने क्षमादान स्वीकार कर लिया है और उसकी साक्षी के रूप में परीक्षा की जा चुकी है, वहां अपराध का संज्ञान करने वाला मजिस्ट्रेट क्या प्रक्रिया अपनायेगा?

A. वहां ऐसा मजिस्ट्रेट मामले में कोई अतिरिक्त जांच किये बिना, मामले को–

(a) सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर देगा, यदि अपराध अनन्ततः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है।

(b) यदि संज्ञान करने वाला मजिस्ट्रेट मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट है तो, उस न्यायालय को सुपुर्द कर देगा;

(c) यदि अपराध अनन्यतः दण्ड विधि संशोधन, अधिनियम, 1952 के अधीन नियुक्त विशेष न्यायाधीश के न्यायालय, द्वारा विचारणीय है तो उस न्यायालय को सुपुर्द कर देगा;

(d) किसी अन्य दशा में, मामला मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के हवाले करेगा, जो उसका विचारण स्वयं करेगा (धारा 306 (5)।

Q. क्षमादान की शर्तों का पालन न करने वाले व्यक्ति का विचारण किसके प्रमाणित करने पर किया जाता है?

A. ओक अभियोजक के।

Q. जिस व्यक्ति ने धारा 306 एवं 307 के अधीन क्षमादान स्वीकार कर लिया है, उसके विचारण के लिए लोक अभियोजक को क्या प्रमाणित करना होता है?

A. ऐसे में लोक अभियोजक प्रमाणित करता है कि उसकी राय में ऐसे व्यक्ति ने या तो किसी अत्यावश्यक बात को जानबूझ कर छिपाकर या मिथ्या साक्ष्य देकर उस शर्त का पालन नहीं किया है जिस पर क्षमादान किया गया था। (धारा 308)।

Q. संहिता की धारा 308 के अधीन उस व्यक्ति का किस अपराध के लिए विचारण किया जा सकेगा, जिसने क्षमादान की शर्तों का पालन नहीं किया है?

A. ऐसे व्यक्ति का विचारण (a) उस अपराध के लिए, किया जा सकता है, जिसके बारे में ऐसे क्षमादान किया गया था या (b) किसी अन्य अपराध के लिए जिसका वह उस विषय के सम्बन्ध में दोषी प्रतीत होता है, और (c) मिथ्या साक्ष्य देने के अपराध के लिए भी विचारण किया जा सकेगा॥

Q. जिस व्यक्ति ने क्षमादान की शर्तों का पालन नहीं किया है, उसका विचारण क्या अन्य अभियुक्तों में से किसी के साथ किया जायेगा?

A. नहीं! धारा 308 (1) के प्रथम परन्तुक के अनुसार ऐसे व्यक्ति का विचारण अन्य अभियुक्तों में से किसी के साथ संयुक्ततः नहीं किया जायेगा॥

Q. क्षमादान की शर्तों का पालन न करने वाले व्यक्ति का मिथ्या साक्ष्य देने के लिए विचारण किसकी मंजूरी से किया जायेगा?

A. उच्च न्यायालय की मंजूरी से। (धारा 308 (1) का दूसरा परन्तुक)।

Q. संहिता की धारा 308 के अन्तर्गत यदि न्यायालय यह निष्कर्ष निकालता है कि अभियुक्त ने क्षमादान की शर्तों का पालन कर दिया है, तो क्या करेगा?

A. यहां न्यायालय सहअपराधी की दोषमुक्ति का निर्णय देगा। (धारा 308 (5))॥

Q. संहिता की धारा 309 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. यह धारा अभियुक्त व्यक्तियों के शीघ्र विचारण की व्यवस्था करते हुए आपवादिक मामलों में जांच या विचारण को मुल्तवी या स्थगित करने का निर्देश देती है।

Q. जांच या विचारण स्थगित करने के समय यदि अभियुक्त अभिरक्षा में है तो मजिस्ट्रेट क्या कर सकता है?

A. अभियुक्त को वारण्ट द्वारा प्रतिप्रेषित कर सकता है जो एक बार में 15 दिन से अधिक नहीं होगी॥

Q. किसी न्यायालय को आवश्यक साक्षी को समन करने, या उपस्थित व्यक्ति की परीक्षा करने की शक्ति संहिता की किस धारा में उपबन्धित है?

A. संहिता की धारा 311 में।

Q. न्यायालय द्वारा अभियुक्त की परीक्षा करने की शक्ति संहिता की किस धारा में उपबन्धित है?

A. धारा 313 में।

Q. संहिता की धारा 313 में अभियुक्त व्यक्ति की न्यायालय द्वारा परीक्षा का क्या प्रयोजन है?

A. यह कि अभियुक्त अपने विरुद्ध साक्ष्य में प्रकट होने वाली किन्हीं परिस्थितियों का स्वयं स्पष्टीकरण कर सके।

Q. यदि अभियुक्त जिसकी परीक्षा संहिता की धारा 313 के अधीन की जा रही है, न्यायाधीश के प्रश्नों का उत्तर देने से इंकार कर दे तो क्या प्रभाव होगा?

A. संहिता की धारा 313 (3) के अनुसार अभियुक्त ऐसे प्रश्नों के उत्तर देने से इंकार करने से या उसका मिथ्या उत्तर देने से दण्डनीय नहीं होगा॥

Q. संहिता की कौन-सी धारा का उद्देश्य साक्ष्य की समाप्ति पर बहस करना एवं पक्षकारों को लिखित ज्ञापन फाइल करने के लिए समर्थ बनाता है?

A. धारा 314।

Q. संहिता की किस धारा के अनुसार अभियुक्त व्यक्ति सक्षम साक्षी होगा?

A. धारा 315 के अनुसार।

Q. अभियुक्त व्यक्ति किसके विरुद्ध लगाये गये आरोपों को नासाबित करने के लिए शपथ पर साक्ष्य दे सकता है?

A. अपने विरुद्ध या उसी विचारण में उसके साथ आरोपित किसी व्यक्ति के विरुद्ध लगाये गये आरोपों को नासाबित करने के लिए। (धारा 315 (1))।

Q. कोई अभियुक्त साक्षी के रूप में कब बुलाया जायेगा?

A. जब वह स्वयं की लिखित प्रार्थना पर साक्ष्य देना चाहता है। (धारा 315 (1) के परन्तुक)।

Q. जहां अभियुक्त कार्यवाही नहीं समझता है, वहां क्या प्रक्रिया अपनायी जाती है?

A. ऐसी स्थिति में न्यायालय जांच या विचारण में अग्रसर हो सकता है, और यदि ऐसे कार्यवाही का परिणाम दोषसिद्धि है तो कार्यवाही को मामले की परिस्थितियों की रिपोर्ट के साथ उच्च न्यायालय को भेज देगा और उच्च न्यायालय उस पर, जैसा उचित समझे, आदेश देगा। (धारा 318)।

Q. संहिता की धारा 319 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. यह धारा ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए न्यायालय को सशक्त करती है, जो अभियुक्त नहीं है, किन्तु विचारण के दौरान साक्ष्य लेने पर यह प्रतीत होता है कि वह किसी अपराध का दोषी है।

Q. यदि विचारण के दौरान साक्ष्य लेने से अभियुक्त व्यक्तियों से भिन्न किसी व्यक्ति द्वारा अपराध किया जाना प्रतीत होता है, तो मजिस्ट्रेट क्या कर सकता है?

A. ऐसी दशा में मजिस्ट्रेट, यदि वह अन्य व्यक्ति उसके सक्षम हाजिर नहीं है तो उसे गिरफ्तार या समन कर सकता है, और यदि ऐसा व्यक्ति गिरफ्तार या समन न किये जाने पर भी वहां उपस्थित हैं तो जांच या विचारण के प्रयोजन के लिये उसे निरुद्ध कर सकता है। (धारा 319)।

Q. संहिता की धारा 319 (1) के अन्तर्गत कार्यवाही का क्या प्रभाव होगा?

A. जहां न्यायालय किसी व्यक्ति के विरुद्ध उपधारा (1) के अन्तर्गत कार्यवाही करता है वहां–(a) उस व्यक्ति के बारे में कार्यवाही फिर से प्रारम्भ की जायेगी और साक्षियों को फिर से सुना जायेगा, (b) मामले की कार्यवाही इस प्रकार की जा सकती है मानों वह व्यक्ति उस समय अभियुक्त व्यक्ति था, जब न्यायालय ने उस अपराध का संज्ञान किया था जिस पर जांच या विचारण प्रारम्भ किया गया था।

Q. संहिता की कौन-सी धारा अपराध के शमन से सम्बन्धित है?

A. धारा 320।

Q. जब किसी अपराध का शमन कर सकने वाला व्यक्ति मर जाय, तब अपराध का शमन कौन कर सकता है?

A. ऐसे व्यक्ति का, विधिक प्रतिनिधि न्यायालय की सम्मति से ऐसे अपराध का शमन कर सकता है। (धारा 320 (4) (ख)।

Q. जब अभियुक्त विचारणार्थ सुपुर्द कर दिया जाता है या जब वह दोषसिद्ध कर दिया जाता है और अपील लम्बित है, तब अपराध का शमन कैसे किया जायेगा?

A. ऐसी स्थिति में अपराध का शमन, यथास्थिति उस न्यायालय की इजाजत से ही किया जायेगा, जिसे वह सुपुर्द किया गया है या जिसके समक्ष अपील सुनी जानी है। (धारा 320 (5))।

Q. यदि अभियुक्त पूर्व दोषसिद्धि के कारण किसी अपराध के लिए या तो वर्धित दण्ड से या भिन्न किस्म के दण्ड से दण्डनीय है, तो ऐसे अपराध के शमन पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा?

A. ऐसे अपराध का शमन नहीं किया जायेगा। (अन्तर्गत धारा 320(8))।

Q. संहिता की धारा 320 के अधीन अपराध के शमन का क्या प्रभाव होगा?

A. उस अभियुक्त की दोषमुक्ति होगा, जिससे अपराध का शमन किया गया है।

Q. संहिता की कौन-सी धारा किसी व्यक्ति के अभियोजन को वापस लेने की व्यवस्था करती है?

A. धारा 321।

Q. किसी व्यक्ति के अभियोजन को कौन और कब वापस ले सकता है?

A. उस मामले का भारसाधक लोक अभियोजक, या सहायक लोक अभियोजक, न्यायालय की सम्मति से, निर्णय सुनाये जाने के पूर्व किसी भी समय अभियोजन वापस ले सकता है।

Q. अभियोजन वापस लिये जाने का क्या प्रभाव होता है?

A. (a) यदि अभियोजन आरोप विरचित किये जाने के पहले वापस लिया जाता है तो अभियुक्त ऐसे अपराध या अपराधों के बारे में उन्मोचित कर दिया जायेगा।

(b) जब आरोप विरचित किये जाने के पश्चात् या जहां संहिता द्वारा आरोप अपेक्षित नहीं है, वहां वापस किया जाता है, तो वह ऐसे अपराध या अपराधों के बारे में दोषमुक्त कर दिया जायेगा।

Q. जब कोई मजिस्ट्रेट किसी मामले के विचारण में साक्ष्य लेने के उपरान्त यह पाता है कि वह ऐसे मामले का न तो विचारण के लिए और न विचारणार्थ सुपुर्द करने हेतु समर्थ है, तब वह क्या प्रक्रिया अपना सकता है?

A. ऐसी दशा में वह मजिस्ट्रेट कार्यवाही को रोक देगा, मामले के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए उसकी संक्षिप्त रिपोर्ट मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को या अधिकारित वाले अन्य मजिस्ट्रेट को, जिसे मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट निर्दिष्ट करे, भेज देगा। (धारा 322)।

Q. सिक्के, स्टॉम्प विधि या सम्पत्ति के विरुद्ध अपराधों के लिए तत्पूर्व दोषसिद्ध व्यक्तियों के विचारण की प्रक्रिया संहिता की किस धारा में व्यवस्थित है?

A. धारा 324 में।

Q. जब कि दोषसिद्धि के पश्चात् द्वितीय वर्ग के दण्डाधिकारी की यह राय है कि सम्बन्धित व्यक्ति से परिशान्ति कायम रखने हेतु प्रतिभूति ली जानी चाहिए, तो वह क्या कर सकेगा?

A. ऐसी दशा में वह मजिस्ट्रेट अपनी राय अभिलिखित करते हुए कार्यवाही तथा अभियुक्त को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को, जिसके अधीन वह हो, भेज सकता है। (धार 325)।

Q. जब एक से अधिक अभियुक्तों का विचारण एक साथ किया जा रहा है और मजिस्ट्रेट ऐसे अभियुक्तों में से किसी के बारे में यह राय रखता है कि उसके और कठोर दण्ड से या भिन्न दण्ड से दण्डित करना चाहिए तो वह क्या करेगा?

A. ऐसी स्थिति में वह उन सभी अभियुक्तों को जो उनकी राय में दोषी है; मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेज देगा। (धारा 325(2)।

Q. जब किसी जांच या विचारण में साक्ष्य को पूर्णतः या भागतः सुनने और अभिलिखित करने के पश्चात् कोई न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट, उसमें अधिकारिता का प्रयोग नहीं कर सकता है और कोई अन्य न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट, जिसे ऐसी अधिकारिता है और जो उसका प्रयोग करता है, उसका उत्तरवर्ती हो जाता है, क्या कर सकेगा?

A. ऐसा उत्तरवर्ती न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट अपने पूर्ववर्ती द्वारा ऐसे अभिलिखित या भागतः अपने पूर्ववर्ती द्वारा अभिलिखित और भागतः अपने द्वारा अभिलिखित साक्ष्य पर कार्य कर सकेगा या यदि न्याय के हित में आवश्यक समझे तो अतिरिक्त परीक्षा करने हेतु किसी साक्षी को पुनः समनित कर सकता है। (धार 326)।

Q. ''खुला न्यायालय'' से क्या तात्पर्य है?

A. वह स्थान जिसमें, कोई दण्ड न्यायालय किसी अपराध जांच या विचारण के प्रयोजन से बैठता है, खुला न्यायालय समझा जायेगा, जिसमें जनता साधारणतः प्रवेश कर सकेगी, जहां तक कि सुविधापूर्वक वे उसमें समा सकें। (धारा 327)।

Q. किन अपराधों की जांच और विचारण बन्द कमरे में होगा?

A. भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376, धारा 376 'क', 376 'ख', 376 'ग', एवं धारा 376 (घ) के अन्तर्गत किसी अपराध का या बलात्संग की जांच और विचारण बन्द कमरे में होगा।

विकृतचित अभियुक्त व्यक्तियों के बारे में उपबन्ध (Provisions as to Accused Persons of Unsound Mind) (धारा 328-339)

विकृतचित्त अभियुक्त व्यक्तियों के बारे में अपनायी जाने वाली जांच एवं विचारण प्रक्रिया का उल्लेख संहिता के अध्याय 25 धारा 328 से 339 में वर्णित है। दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा इस अध्याय के मूल धारा 328, 329 और 330 के प्रावधानों को या तो व्यापक रूप से परिवर्तित किया गया है या उनमें नयी धारा अन्तःस्थापित किया गया है। इस संशोधन का प्रयोजन विकृतचित्र व्यक्ति को जांच एवं विचारण के दौरन विशेष चिकित्सा सुविधा तथा वाद/अपील लम्बित रहने के दौरान उन्हें विशेष सुविधा प्रदान करना है।

धारा 328 में अभियुक्त के पागल होने की दशा में प्रक्रिया सम्बन्धी प्रावधान किए गए हैं। इसके उपधारा (1) के अनुसार जब जांच करने वाले मजिस्ट्रेट को यह विश्वास करने का कारण है कि वह व्यक्ति जिसके विरुद्ध जांच की जा रही है विकृतचित्त है तथा प्रतिरक्षा करने में असमर्थ है तब मजिस्ट्रेट ऐसी चित्तविकृति के तथ्य की जांच करेगा और ऐसे व्यक्ति की परीक्षा उस जिले के सिविल सर्जन या अन्य ऐसे चिकित्सा अधिकारी द्वारा कराएगा, जिसे राज्य सरकार निर्दिष्ट करे, और फिर ऐसे सिविल सर्जन या अन्य अधिकारी की साक्षी के रूप में परीक्षा करेगा और उस परीक्षा को लेखबद्ध करेगा।

वर्ष 2008 के संशोधन के द्वारा धारा 328, 1क. अन्तःस्थापित करके यह उपबंध किया गया है कि यदि सिविल सर्जन अभियुक्त को विकृत चित्त का होना पाता है तो वह ऐसे व्यक्ति को मनोचिकित्सक या चिकित्सीय मनोवैज्ञानिक के पास देख-रेख और उपचार तथा स्थिति का अनुमान करने के लिए निर्दिष्ट कर सकता है और 'यथास्थिति' ऐसा मनोचिकित्सक अथवा चिकित्सीय मनोवैज्ञानिक मजिस्ट्रेट को सूचना देगा कि क्या अभियुक्त व्यक्ति चित्तविकृतता अथवा मानसिक दुर्बलता से पीड़ित है;

परन्तु यह कि मजिस्ट्रेट को इस प्रकार भेजी गयी सूचना से व्यथित व्यक्ति ऐसे चिकित्सीय परिषद के समक्ष अपील कर सकेगा, जो निकटतम शासकीय अस्पताल के मनोचिकित्सा ईकाई के प्रधान और निकटतम मेडिकल कालेज के मनोचिकित्सा के किसी सदस्य से गठित होगा''।

जिस व्यक्ति के विरुद्ध ऐसी परीक्षा या जांच लम्बित है, उसके विरुद्ध मजिस्ट्रेट धारा 330 के अनुसार कार्यवाही करेगा। (धारा 328 (2)। वर्ष 2008 में अन्तःस्थापित नयी उपधारा (3) के अनुसार यदि ऐसा व्यक्ति उपधारा (1) के अर्थों में विकृतचित्त है, तब मजिस्ट्रेट सर्वप्रथम यह अवधारित करेगा कि क्या अभियुक्त प्रतिरक्षा करने में असमर्थ है, यदि वह असमर्थ है तो मजिस्ट्रेट ऐसा भाव अभिलिखित करेगा तथा अभियोजन साक्ष्य के अवलोकन और अभियुक्त के अधिवक्ता को सुनने के पश्चात् यदि अभियुक्त के विरुद्ध कोई मामला नहीं बनता है तो वह जांच स्थगित करने के बजाय अभियुक्त को उन्मोचित कर देगा और उस धारा 330 के अनुसार कार्यवाही करेगा;

परन्तु यदि मजिस्ट्रेट की राय है कि अभियुक्त के विरुद्ध मामला बनता है तब वह उसके उपचार के लिए प्राप्त सूचना की अवधि तक के लिए कार्यवाही स्थगित कर देगा और उसके विचारण का आदेश धारा 330 के शर्तों के अधीन देगा।

उपधारा (4) जिसे नया जोड़ा गया है, के अनुसार यदि मजिस्ट्रेट को यह सूचना दी जाती है कि उपधारा 1-क में निर्दिष्ट व्यक्ति मानसिक रूप से दुर्बल व्यक्ति है तब मजिस्ट्रेट सर्वप्रथम यह अवधारित करेगा कि क्या मानसिक दुर्बलता से अभियुक्त अपनी प्रतिरक्षा करने में असमर्थ है और यदि अभियुक्त इतना असमर्थ पाया जाता है, तब मजिस्ट्रेट जांच समाप्त किए जाने का आदेश देगा तथा अभियुक्त पर ऐसी रीति से विचार करेगा जैसा कि धारा 330 के अधीन उपबंधित है।

न्यायालय के समक्ष विचारित व्यक्ति के विकृतचित होने की दशा में प्रक्रिया धारा 329 (1) के अनुसार यदि किसी मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायालय के समक्ष किसी व्यक्ति के विचारण के समय उस मजिस्ट्रेट या न्यायालय को वह व्यक्ति विकृतचित और परिणामस्वरूप अपनी प्रतिरक्षा करने में असमर्थ प्रतीत होता है तो वह मजिस्ट्रेट या न्यायालय, प्रथमत: ऐसी चित-विकृति और असमर्थता के तथ्य का विचारण करेगा और यदि उस मजिस्ट्रेट या न्यायालय का ऐसे चिकित्सीय या अन्य साक्ष्य पर जो उसके समक्ष पेश किया जाता है, विचार करने के पश्चात् उस तथ्य के बारे में समाधान हो जाता है तो वह उस भाव का निष्कर्ष अभिलिखित करेगा और मामले में आगे की कार्यवाही मुल्तवी कर देगा।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा धारा 329 (1) के पश्चात् नयी उपधारा 1-क जोड़कर निम्न उपबंध किया गया है–

''यदि विचारण के दौरान, मजिस्ट्रेट या सत्र न्यायालय अभियुक्त को चित्त विकृत पाया है तब वह या यह ऐसे व्यक्ति को मनोचिकित्सक या चिकित्सीय मनोवैज्ञानिक के पास देख-रेख तथा इलाज के लिए निर्दिष्ट करेगा और मनोवैज्ञानिक चिकित्सीय मनोवैज्ञानिक, यथास्थिति, मजिस्ट्रेट या न्यायालय को यह रिपोर्ट देगा कि क्या अभियुक्त चित्त विकृतता से पीड़ित है;

परन्तु यह कि यदि अभियुक्त मनोचिकित्सक चिकित्सीय मनोवैज्ञानिक द्वारा यथास्थिति, मजिस्ट्रेट को दी गयी सूचना से व्यथित है, तब वह उस चिकित्सीय परिषद के समक्ष अपील प्रस्तुत कर सकेगा, जिसमें निम्नलिखित होंगे–

(क) निकटतम शासकीय अस्पताल में मनोचिकित्सा ईकाई का प्रधान; और

(ख) निकटतम मेडिकल कालेज में मनोचिकित्सा संकाय का सदस्य।

इसी प्रकार उपधारा (2) के स्थान पर नयी निम्न उपधारा को प्रतिस्थापित कर दिया गया है–

(2) यदि मजिस्ट्रेट या न्यायालय को यह सूचना दी जाती है कि उपधारा (1क) में निर्दिष्ट व्यक्ति विकृत चित्त व्यक्ति है तब मजिस्ट्रेट या न्यायालय अग्रेतर यह अवधारणा करेगा कि क्या चित्र विकृतता से अभियुक्त प्रतिरक्षा करने में असमर्थ हो गया है और यदि अभियुक्त को इतना असमर्थ पाया जाता है तब मजिस्ट्रेट या न्यायालय उस भाव के निष्कर्ष को अभिलिखित करेगा तथा अभियोजन द्वारा पेश किए गए साक्ष्य के अभिलेख का परीक्षण करेगा तथा अभियुक्त के अधिवक्ता को सुनने के बाद किन्तु अभियुक्त से प्रश्न किए बिना यदि मजिस्ट्रेट या न्यायालय यह पाता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कोई प्रथम-दृष्ट्या मामला नहीं प्रकट होता है तब वह या यह विचारण स्थगित करने के बजाय अभियुक्त को उन्मोचित कर देगा तथा उस पर ऐसी रीति से विचार करेगा जैसा धारा 330 के अधीन उपबंध किया गया है;

परन्तु यह कि मजिस्ट्रेट या न्यायालय यह पाता है कि प्रथम-दृष्ट्या मामला उस अभियुक्त के विरुद्ध प्रकट होता है जिसके सम्बन्ध में चित्त विकृतता के निष्कर्ष पर पहुँच गया है, तब वह ऐसी अवधि तक विचारण को स्थगित कर देगा जैसा मनोचिकित्सक चिकित्सीय मनोवैज्ञानिक राय में अभियुक्त के इलाज के लिए अपेक्षित है''।

इस उपधारा (2) के बाद नयी उपधारा (3) निम्न रुप में अन्त:स्थापित किया गया है–

''यदि मजिस्ट्रेट या न्यायालय यह पाता है कि अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्ट्या मामला बनता है और वह मानसिक दुर्बलता के कारण प्रतिरक्षा करने में असमर्थ है, तब वह या यह विचारण नहीं करेगा और अभियुक्त की धारा 330 के अनुसार विचारण किए जाने का आदेश करेगा''।

वर्ष 2008 के संशोधन के द्वारा इस अध्याय के धारा 330 को भी नये प्रावधानों के साथ अन्त:स्थापित किया गया है, जिसमें निम्न उपबंध किए गए हैं–

''अन्वेषण या विचारण के लम्बित रहने के दौरान चित्तविकृत व्यक्ति की निर्मुक्ति–

(1) जब कभी व्यक्ति को चित्रविकृतता या मानसिक दुर्बलता के कारण धारा 328 या धारा 329 के अधीन प्रतिरक्षा करने के लिए असमर्थ पाया जाता है, तब मजिस्ट्रेट या न्यायालय, यथा स्थिति, भले ही मामला ऐसा है, जिसमें जमानत ली जा सकेगी या नहीं, ऐसे व्यक्ति की जमानत पर निर्मुक्ति का आदेश करेगा;

परन्तु यह कि अभियुक्त ऐसी चित्त विकृतता या मानसिक

दुर्बलता से पीड़ित है, जो अन्तः रोगी के इलाज की आज्ञा नहीं देता है तो कोई मित्र या नातेदार निकटतम चिकित्सीय सुविधा से नियमित बाह्य रोगी मनोचिकित्सा उपचार लेने में तथा स्वयं को अथवा किसी अन्य व्यक्ति को क्षति कारित करने से निवारण करने का बचन देगा।

(2) यदि मामला ऐसा है कि मजिस्ट्रेट या न्यायालय की राय में, जमानत स्वीकृत नहीं किया जा सकता है या समुचित बंधपत्र नहीं दिया जाता है, तब वह या यह अभियुक्त को ऐसे स्थान में रखे जाने का आदेश करेगा जहां नियमित मनोचिकित्सा उपचार प्रदान की जा सकती है और राज्य सरकार को ऐसे कृत कार्यवाही की सूचना देगा;

किन्तु किसी पागल खाने में अभियुक्त के विरुद्ध किए जाने हेतु कोई आदेश ऐसे नियमावली के अनुसार के सिवाय नहीं किया जायेगा जैसा कि राज्य सरकार ने स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 के अधीन निर्मित किया हो।

(3) जब कभी किसी व्यक्ति को चित्त विकृतता या मानसिक दुर्बलता के कारण प्रतिरक्षा करने के लिए धारा 328 या 329 के अधीन असमर्थ पाया जाता है, तब यथास्थिति, मजिस्ट्रेट या न्यायालय, कारित कृत्य की प्रकृति तथा मानसिक दुर्बलता या चित्त विकृतता की सीमा को ध्यान में रखते हुए अग्रेतर अवधारणा करेगा कि क्या अभियुक्त को मुक्त किए जाने का आदेश दिया जा सकता है; परन्तु यदि

(क) चिकित्सीय/विशेषज्ञ की राय के आधार पर मजिस्ट्रेट या न्यायालय अभियुक्त के उन्मोचन का आदेश करता है, जैसा कि धारा 328 या 329 उपबंधित है, तब इस प्रकार छोड़े जाने का आदेश किया जा सकता है, यदि पर्याप्त प्रतिभूति दी जाती है कि अभियुक्त को स्वयं की या किसी अन्य व्यक्ति को क्षति कारित करने से निवारित किया जायेगा;

(ख) यदि, यथास्थिति, मजिस्ट्रेट या न्यायालय की यह राय है कि अभियुक्त के उन्मोचन का आदेश नहीं किया जा सकता है, तब अभियुक्त को चित्तविकृत या मानसिक दुर्बलता वाले व्यक्तियों के ऐसे आवासीय सुविधा में स्थानान्तरण का आदेश किया जा सकेगा, जहां अभियुक्त की देख-रेख की जा सके तथा उसे समुचित शिक्षा और प्रशिक्षण प्रदान किया जा सके''।

जांच या विचारण को पुनः चालू करना–जब कभी जांच या विचारण को धारा 328 या धारा 329 के अधीन मुल्तवी किया गया है, तब यथास्थिति मजिस्ट्रेट या न्यायालय जांच या विचारण को सम्बद्ध व्यक्ति के विकृतचित्त न रहने पर किसी भी समय पुनः चालू कर सकत है। (धारा 331)।

चितविकृति के आधार पर दोषमुक्ति का निर्णय–जब कभी व्यक्ति इस आधार पर दोषमुक्त किया जाता है कि उस समय जब यह अभिकथित है कि उसने अपराध किया वह चित-विकृति के कारण उस कार्य का स्वरूप, जिसका अपराध होना अभिकथित है, या यह कि वह दोषपूर्ण या विधि के प्रतिकूल है जानने में असमर्थ था, तब निष्कर्ष में यह विनिर्दिष्टतः कथित होगा कि उसने वह कार्य किया या नहीं किया। (धारा 334)।

ऐसे आधार पर दोषमुक्त किए गए व्यक्ति को सुरक्षित अभिरक्षा में निरुद्ध किया जायेगा (धारा 335)। यदि कारागार का महानिरीक्षक या पागलखाने का परिदर्शक मजिस्ट्रेट को यह सूचना देता है कि पागल बंदी अब अपनी प्रतिरक्षा करने में समर्थ है तो ऐसी सूचना एक साक्ष्य माना जायेगा और मजिस्ट्रेट या न्यायालय धारा 332 के उपबंधों के अनुसार कार्यवाही करेगा। (धारा 337)। यदि पागल व्यक्ति को छोड़े जाने योग्य घोषित किया जाता है तो राज्य सरकार समुचित आदेश कर सकती है। इस निमित्त राज्य सरकार मामले की जांच के लिए आयोग को निर्दिष्ट कर सकता है। (धारा 338)। धारा 339 के अन्तर्गत पागल व्यक्ति को उसके नातेदार या मित्र को भी सौंपा जा सकता है यदि वह इस आशय का आवेदन करता है। राज्य सरकार समाधानप्रद प्रतिभूति पर ही ऐसा आदेश दे सकती है।

प्रश्नकोश

Q. किसी पागल व्यक्ति को कब निर्मुक्त किया जा सकता है?

A. जब न्यायालय या मजिस्ट्रेट यह समझे कि वह धारा 328 या 329 के अधीन अपनी प्रतिरक्षा करने में असमर्थ है। (धारा 330 (1))।

Q. किसी पागल व्यक्ति को उन्मोचित किए जाने की दशा में क्या प्रतिभूति देय होगा?

A. यह कि अभियुक्त व्यक्ति को एवं किसी अन्य व्यक्ति को क्षति कारित होने से निवारित किया जायेगा। (धारा 330 (3) क)।

Q. अध्याय 25 के अन्तर्गत अधिनियम संख्या 5 वर्ष 2009 के द्वारा किन धाराओं में संशोधन किया गया है?

A. धारा 328, 329 एवं 330 में।

Q. किसी चित्तविकृत व्यक्ति को अन्वेषण या विचारण लम्बित रहने के दौरान किस धारा के अन्तर्गत उन्मोचित किया जा सकता है?

A. धारा 330।

Q. जब किसी व्यक्ति के विषय में यह अभिकथित है कि वह चित्तविकृति के कारण उस कार्य का स्वरूप जिसका अपराध

होना कथित है या यह कि वह दोषपूर्ण या विधि के प्रतिकूल है, जानने में असमर्थ है और इस आधार पर दोषमुक्त किया जाता है, तब निष्कर्ष में क्या तथ्य उल्लिखित होंगे?

A. तब निष्कर्ष में यह विनिर्दिष्टत: अभिकथित होगा कि, ऐसे व्यक्ति ने वह कार्य किया या नहीं किया। (धारा 334)।

Q. जब कोई मजिस्ट्रेट या न्यायालय किसी व्यक्ति को विकृत-चित्तता के आधार पर दोषमुक्त करता है और उस व्यक्ति को उसके किसी नातेदार या मित्र को सौंपने का आदेश देता है, तो ऐसा आदेश किन शर्तों की पूर्ति कर दिया जायेगा?

A. ऐसा आदेश, ऐसे नातेदार या मित्र के आवेदन पर ही किया जायेगा; और नातेदार या मित्र द्वारा निम्नलिखित बातों की बाबत न्यायालय को समाधानप्रद प्रतिभूति दिये जाने पर ही किया जायेगा, अन्यथा नहीं–(i) यह कि ऐसे व्यक्ति की समुचित देखरेख की जायेगी और वह स्वयं अपने को या किसी अन्य व्यक्ति को क्षति पहुँचाने से निवारित रखा जायेगा; (ii) जब और जहां राज्य सरकार निर्दिष्ट करे ऐसा व्यक्ति निरीक्षण के लिए पेश किया जायेगा। (धारा 335 (3))।

Q. पागल व्यक्ति जिस जेल में निरुद्ध है, राज्य सरकार, उस जेल के भारसाधक अधिकारी को किसकी सब या उनमें से कोई शक्तियाँ प्रदान कर सकता है?

A. कारागारों के महानिरीक्षक की जो उसे धारा 337 या 338 में उपबन्धित है। (धारा 336)।

Q. संहिता की धारा 337 के अन्तर्गत कौन प्रमाणित करता है कि निरुद्ध किया गया पागल अपनी प्रतिरक्षा करने मे समर्थ है?

A. जेल में निरुद्ध व्यक्ति की दशा में कारागारों का महानिरीक्षक या पागलखाने में निरुद्ध व्यक्ति की दशा में उस पागल खाने के **परिदर्शक (Visitor)** या उनमें से कोई दो प्रमाणित करते हैं।

Q. महानिरीक्षक या परिदर्शकों के प्रमाण-पत्र के साथ कैसा बर्ताव किया जायेगा?

A. ऐसा प्रमाण-पत्र साक्ष्य के तौर पर ग्रहण किया जा सकेगा। (धारा 337)।

Q. यदि महानिरीक्षक या परिदर्शक प्रमाणित करते हैं कि उनके विचार में निरुद्ध व्यक्ति अपने को या किसी अन्य व्यक्ति को क्षति पहुँचाने के खतरे के बिना छोड़ा जा सकता है तो राज्य सरकार क्या प्रक्रिया अपनायेगी?

A. ऐसी दशा में राज्य सरकार उसके छोड़े जाने या अभिरक्षा में रखे जाने का या, यदि वह पहले ही लोक पागलखाने नहीं भेज दिया गया है तो ऐसे पागल खाने को अन्तरित किये जाने का आदेश दे सकती है।

Q. यदि राज्य सरकार व्यक्ति को लोक पागलखाने, को अन्तरित किये जाने का आदेश देती है तो क्या प्रक्रिया अपनायी जायेगी?

A. ऐसी स्थिति में राज्य सरकार एक न्यायिक और दो चिकित्सक अधिकारियों का एक आयोग नियुक्त कर सकती है। (धारा 338)।

Q. संहिता की धारा 339 का क्या उद्देश्य है?

A. इस धारा का उद्देश्य धारा 330 या धारा 335 के उपबन्धों के अधीन निरुद्ध किसी पागल व्यक्ति को उसके नातेदार या मित्र की देख-रेख में सौंपे जाने के लिए उपबन्ध प्रस्तुत करना है।

न्याय प्रशासन पर प्रभाव डालने वाले अपराधों के बारे में उपबन्ध (Provision as to Offences Affecting the Administration of Justice) (धारा 340-352)

संहिता के अध्याय 26 (धारा 340 से 352) में न्यायिक प्रक्रिया के दौरान कारित अपराधों के सम्बन्ध में प्रक्रिया का उल्लेख किया है। धारा 340 के अन्तर्गत उन मामलों में अपनायी जाने वाली प्रक्रिया का उल्लेख है जो दं.प्र.सं. की धारा 195 (1) (ख) में वर्णित अपराधों से सम्बन्धित है, जिसके अन्तर्गत उस न्यायालय की कार्यवाही में या उसके सम्बन्ध में अथवा उस न्यायालय की कार्यवाही में पेश की गयी या साक्ष्य में दी गयी दस्तावेज के बारे में कारित अपराध आते हैं। ऐसे मामलों में सम्बन्धित न्यायालय या उसके द्वारा नियुक्त/प्राधिकृत व्यक्ति के परिवाद पर प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट के द्वारा जांच व विचारण किया जायेगा। धारा 340 के अधीन किसी आदेश की अपील सम्बन्धित न्यायालय के वरिष्ठतर न्यायालय में की जा सकती है (धारा 341 (1), किन्तु धारा 340 व 341 के अधीन पारित कोई आदेश अन्तिम होगा और उसका पुनरीक्षण नहीं होगा। (धारा 341 (2))। धारा 340 व 341 के अधीन परिवाद पर कार्यवाही पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित मामले की तरह किया जायेगा। (धारा 343 (1))।

धारा 344 मिथ्या साक्ष्य दिए जाने पर विचारण के लिए संक्षिप्त प्रक्रिया सम्बन्धी उपबन्ध प्रस्तुत करती है। इसके अनुसार

(1) यदि किसी न्यायिक कार्यवाही को निपटाते हुए निर्णय या अन्तिम आदेश देते समय कोई सेशन न्यायालय या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट या राय व्यक्त करता है कि ऐसी कार्यवाही में उपस्थित होने वाले किसी साक्षी ने जानते हुए या जानबूझकर मिथ्या साक्ष्य दिया है या इस आशय से मिथ्या साक्ष्य गढ़ा है कि ऐसा साक्ष्य ऐसी कार्यवाही में प्रयुक्त किया जाए तो यदि उसका समाधान हो जाता है कि न्याय के हित में यह आवश्यक और समीचीन है कि साक्षी का, यथास्थिति, मिथ्या साक्ष्य देने या गढ़ने के लिए संक्षेपतः विचारण किया जाना चाहिए तो वह ऐसे अपराध का संज्ञान कर सकेगा और अपराधी को ऐसा कारण दर्शित करने का कि क्यों न उसे ऐसे अपराध के लिए दण्डित किया जाए, उचित अवसर देने के पश्चात्, ऐसे अपराधों का संक्षेपतः विचारण कर सकेगा और उसे कारावास से जिसकी अवधि तीन मास तक की हो सकेगी या जुर्माने से जो पांच सौ रुपए तक का हो सकेगा अथवा दोनों से दण्डित कर सकेगा। ऐसे प्रत्येक मामले में न्यायालय संक्षिप्त विचारणों के लिए विहित प्रक्रिया का यथासाध्य अनुसरण करेगा।

अवमान के कुछ मामलों में प्रक्रिया–(1) जब कोई ऐसा अपराध, जैसा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 175, धारा 178, धारा 179, धारा 180 या धारा 228 में वर्णित है, किसी सिविल, दण्ड या राजस्व न्यायालय की दृष्टिगोचरता या उपस्थिति में किया जाता है तब न्यायालय अभियुक्त को अभिरक्षा में निरुद्ध करा कर उसी दिन न्यायालय के उठने के पूर्व किसी समय, अपराध का संज्ञान कर सकता है और अपराधी को ऐसा कारण दर्शित करने का, कि क्यों न उसे इस धारा के अधीन दण्डित किया जाए, उचित अवसर देने के पश्चात् अपराधी को दो सौ रुपए से अनधिक जुर्माने का और जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर एक मास तक की अवधि के लिए जब तक कि ऐसा जुर्माना उससे पूर्वतर न दे दिया जाए, सादा कारावास का दण्डादेश दे सकता है।

यदि अपराध भारतीय दण्ड संहिता की धारा 228 के अधीन है तो अभिलेख में यह दर्शित होगा कि जिस न्यायालय के कार्य में विघ्न डाला गया था या जिसका अपमान किया गया था, उसकी बैठक किस प्रकार की न्यायिक कार्यवाही के सम्बन्ध में और उसके किस प्रक्रम पर हो रही थी और किस प्रकार का विघ्न डाला गया या अपमान किया गया था। (धारा 345)।

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 175 दस्तावेज पेश करने के लिए वैध रूप से आबद्ध व्यक्ति का लोक सेवक को दस्तावेज पेश करने का लोप करने, धारा 178 शपथ या प्रतिज्ञान से इंकार करने जबकि लोक सेवक द्वारा वैसा करने के लिए सम्यक् रूप से अपेक्षित किया जाये, धारा 179 प्रश्न करने के लिए प्राधिकृत लोक सेवक को उत्तर देने से इंकार करने, धारा 180 कथन पर हस्ताक्षर करने से इंकार करने, तथा धारा 228 न्यायिक कार्यवाही में बैठे हुए लोक सेवक का साशय अपमान या उसके कार्य में विघ्न करने सम्बन्धी अपराधों से सम्बन्धित है।

धारा 347 के अनुसार जब राज्य सरकार ऐसा निदेश दे तब कोई भी रजिस्ट्रार या कोई भी उप-रजिस्ट्रार, जो रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 के अधीन नियुक्त है, धारा 345 और 346 के अर्थ में सिविल न्यायालय समझा जायेगा।

यदि दण्ड न्यायालय के समक्ष कोई साक्षी या कोई व्यक्ति, जो किसी दस्तावेज या चीज को पेश करने के लिए बुलाया गया है, उन प्रश्नों का, जो उससे किए जाएं, उत्तर देने से या किसी दस्तावेज या चीज को, जिसे पेश करने की न्यायालय उससे अपेक्षा करे, पेश करने से इंकार करता है और ऐसे इंकार के लिए कोई उचित कारण पेश करने के लिए युक्तियुक्त अवसर दिए जाने पर ऐसा नहीं करता है तो ऐसा न्यायालय उन कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, उसे सात दिन से अनधिक की किसी अवधि के लिए सादा कारावास का दण्डादेश दे सकेगा। जब तक कि उस बीच ऐसा व्यक्ति अपनी परीक्षा किये जाने एवं उत्तर देने के लिए अथवा दस्तावेज या चीज प्रस्तुत करने के लिए राजी नहीं हो जाता है तथा इसके इंकार पर डटे रहने की स्थिति में उसके बारे में धारा 345 या 346 के उपबन्धों के अनुसार कार्यवाही की जा सकती है। (धारा 349)।

लघुवाद न्यायालय द्वारा की गई दोषसिद्धि की अपील उस सेशन खण्ड के सेशन न्यायालय में होगी जिस खण्ड में वह न्यायालय स्थित है। (धारा 351)।

धारा 347 के अधीन जारी किए गए निदेश के आधार पर सिविल न्यायालय समझे गए किसी रजिस्ट्रार या उप-रजिस्ट्रार द्वारा की गई ऐसी दोषसिद्धि से अपील उस सेशन खण्ड के सेशन न्यायालय में होगी जिस खण्ड में ऐसे रजिस्ट्रार या उप-रजिस्ट्रार का कार्यालय स्थित है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त इस अध्याय में माफी मांगने पर अपराधी का उन्मोचन (धारा 348), उत्तर देने या दस्तावेज पेश करने से इंकार करने वाले व्यक्ति को कारावासित करने या सुपुर्दगी करने (349), समन के पालन में साक्षी के हाजिर न होने पर संक्षिप्त प्रक्रिया के तहत उसे दण्डित करने (धारा 350) और कुछ न्यायाधीशों और मजिस्ट्रेटों के समक्ष किए गए अपराधों का उनके द्वारा विचारण न किए जाने (धारा 352) सम्बन्धी उपबंध किए गए हैं।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रियासंहिता की धारा 345 के अधीन न्यायालय को अपनी अवमानना के अपराध का संज्ञान करने तथा अभियुक्त को दण्डित करने का अधिकार प्राप्त है, किन्तु इस धारा के अधीन कार्यवाही केवल तब ही किया जा सकता है–

A. जब अवमानना का अपराध न्यायालय की दृष्टिगोचरता या उपस्थिति में किया जाता है।

Q. साक्षी द्वारा प्रश्न का उत्तर देने से इंकार करने पर अथवा मंगाये जाने पर दस्तावेज प्रस्तुत करने से इंकार करने पर, उसे कितनी अवधि के दण्ड से दण्डित किया जा सकता है?

A. 7 दिन। (धारा 349)।

Q. न्याय-प्रशासन पर प्रभाव डालने वाले अपराधों के विषय में संहिता की किन धाराओं में उपबन्ध किया गया है?

A. अध्याय 26 के धारा 340 से लेकर 352 तक में।

Q. संहिता की धारा 340 में किस बारे में प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है?

A. धारा 340 में उस प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है, जो धारा 195 में वर्णित मामले में लागू होता है। धारा 195 में लोक न्याय के विरुद्ध अपराधों के लिए और साक्ष्य में दिये गये दस्तावेजों से सम्बन्धित अपराधों के लिए लोक सेवाओं के विधिपूर्ण प्राधिकार के अवमान के लिए अभियोग की व्यवस्था की गयी है।

Q. संहिता की धारा 341 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. संहिता की धारा 340 की उपधारा (1) या (2) के अधीन जिस न्यायालय ने परिवाद करने से इंकार कर दिया है, उसके विरुद्ध ऐसे न्यायालय में अपील करने की व्यवस्था की गयी है, जिसके वह अधीनस्थ है।

Q. जिस मजिस्ट्रेट से कोई परिवाद धारा 340 या धारा 341 के अधीन किया जाता है वहां उस मामले में वह कैसे कार्यवाही करेगा?

A. ऐसी स्थिति में ऐसा मजिस्ट्रेट जहां तक हो सके, मामले में इस प्रकार कार्यवाही करने के लिए अग्रसर होगा, मानों वह पुलिस रिपोर्ट पर संस्थित है। (धारा 343)।

Q. संहिता की कौन-सी धारा मिथ्या साक्ष्य देने पर विचारण के लिए संक्षिप्त प्रक्रिया अपनाने की व्यवस्था करती है?

A. धारा 344।

Q. संहिता की धारा 344 में यह कौन निर्धारित करता है कि, उसके समक्ष न्यायिक कार्यवाही में उपस्थित किसी साक्षी ने मिथ्या साक्ष्य जानबूझकर गढ़ा है?

A. सेशन न्यायालय या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट।

Q. कोई सेशन न्यायालय या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट अपने समक्ष की किसी न्यायिक कार्यवाही को निपटाते समय निर्णय या अन्तिम आदेश देते समय कब ऐसी कार्यवाही में उपस्थित किसी साक्षी का संक्षेपतः विचारण कर सकता है?

A. जब ऐसे न्यायालय या मजिस्ट्रेट की यह राय है कि ऐसे साक्षी ने जानते हुए या जानबूझकर मिथ्या साक्ष्य दिया है या इस आशय से मिथ्या साक्ष्य गढ़ा है कि ऐसा साक्ष्य ऐसी कार्यवाही में प्रयुक्त किया जाये और यदि उसका समाधान हो जाये कि न्याय हित में साक्षी का संक्षेपतः विचारण करना आवश्यक और समीचीन है। (धारा 344) (1)।

Q. जब किसी सेशन न्यायालय या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट की राय है कि किसी साक्षी का मिथ्या साक्ष्य देने या गढ़ने के लिए संक्षेपतः विचारण किया जाना चाहिए, तो वह क्या कर सकेगा?

A. ऐसी स्थिति में वह ऐसे अपराध का संज्ञान कर सकेगा और अपराधी को ऐसा कारण दर्शित करने का कि क्यों न उसे ऐसे अपराध के लिए दण्डित किया जाये, उचित अवसर देने के पश्चात् ऐसे अपराधी का संक्षेपतः विचारण कर सकेगा।

Q. संहिता की धारा 344 के अन्तर्गत मिथ्या साक्ष्य देने या गढ़ने के लिए साक्षी का संक्षेपतः विचारण करने वाला न्यायालय या मजिस्ट्रेट अपराधी को कौन-सा दण्ड दे सकेगा?

A. वह अपराधी को 3 मास तक के कारावास या जुर्माने से, 500 रु. तक का हो सकेगा अथवा दोनों से दण्डित कर सकेगा।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 345 में किन न्यायालयों की दृष्टि-गोचरता या उपस्थिति में किये गये अवमान के मामलों में प्रक्रिया विहित की गयी है?

A. किसी सिविल, दाण्डिक या राजस्व न्यायालय की।

Q. जबकि कोई व्यक्ति किसी मजिस्ट्रेट की दृष्टि-गोचरता और उपस्थिति में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 228 का अपराध करता है, तो वह क्या कर सकता है?

A. ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट अभियुक्त को अभिरक्षा में निरुद्ध करा सकता है और उसी दिन अपराध का संज्ञान कर सकता है, और अपराधी को कारण बताओ नोटिस देने के पश्चात्, उसे दो सौ रुपये से अनधिक जुर्माने से और यदि जुर्माना नहीं दे पाता है तो 1 माह के साधारण कारावास से दण्डित कर सकता है। (धारा 345)।

Q. जब किसी न्यायालय ने किसी अपराधी को कोई बात, करने से इंकार करने, या उसे न करने या साशय अपमान करने के लिए दण्डित किये जाने के लिए न्याय निर्णीत किया है; तब यदि अपराधी ने न्यायालय के समाधान तक माफी माँग ली है, तो न्यायालय क्या कर सकता है?

A. ऐसे में न्यायालय अपराधी को स्वविवेकानुसार उन्मोचित कर सकता है या दण्ड का परिहार कर सकता है। (धारा 348)।

Q. किसी उत्तर देने या दस्तावेज पेश करने से इंकार करने वाले व्यक्ति को कारावास या उसकी सुपुर्दगी की शक्ति न्यायालय को संहिता की किस धारा में दी गयी है?

A. धारा 349 में।

Q. जबकि कोई साक्षी न्यायालय के समक्ष कोई उत्तर देने या दस्तावेज पेश करने से इंकार करता है, तब वह न्यायालय क्या कर सकता है?

A. ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट ऐसे साक्षी को कारण सहित 7 दिन से अनधिक के सादे कारावास से दण्डित कर सकेगा अथवा जब तक वह अपनी परीक्षा किये जाने या दस्तावेज पेश करने के लिए सहमत नहीं हो जाता, उसे मजिस्ट्रेट वारण्ट के साथ न्यायालय के किसी अधिकारी की अभिरक्षा के लिए सुपुर्द कर सकेगा। (धारा 349)।

Q. संहिता की धारा 350 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. इस धारा में समन के पालन में साक्षी के हाजिर न होने पर उसे दण्डित करने के लिए संक्षिप्त प्रक्रिया की व्यवस्था की गयी है।

Q. जबकि साक्षी समन के पालन में किसी निश्चित स्थान और समय पर हाजिर होने के लिए वैध रूप से आबद्ध है और न्याय-संगत कारण के बिना, उस स्थान या समय पर हाजिर होने में उपेक्षा या हाजिर होने से इंकार करता है अथवा उस स्थान से, जहां उसे हाजिर होना है, उस समय से पहले चला जाता है, जिस समय चला जाना उसके लिए विधिपूर्ण है, तो न्यायालय क्या कर सकेगा?

A. इन दशाओं में ऐसा दण्ड न्यायालय उस अपराध का संज्ञान कर सकता है और प्राकृतिक न्याय का पालन करते हुए उसे एक सौ रुये से अनधिक जुर्माने से दण्डित कर सकेगा, साथ ही इस मामले में संक्षिप्त विचारण की ही प्रक्रिया अपनायेगा। (धारा 350)।

Q. उच्च न्यायालय से भिन्न किसी न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 344, 345, 349 या धारा 350 के अधीन दण्डादेश पाया कोई व्यक्ति कहां अपील कर सकता है?

A. उस न्यायालय में जिसमें ऐसे न्यायालय द्वारा दी गयी डिक्रियों या आदेशों की अपील मामूली तौर पर होती है। (धारा 351)।

Q. संहिता की धारा 347 के अन्तर्गत जारी किये गये निर्देश के आधार पर सिविल न्यायालय समझे गये किसी रजिस्ट्रार या उप-रजिस्ट्रार द्वारा की गयी ऐसी दोषसिद्धि से अपील कहां होगी?

A. उस सेशन खण्ड के सेशन न्यायालय में होगी, जिस खण्ड में ऐसे मजिस्ट्रेट या उप रजिस्ट्रार का कार्यालय स्थित है। (धारा 351(4))।

Q. संहिता की किस धारा में यह उपबन्ध किया गया है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश से भिन्न दण्ड न्यायालय का कोई भी न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट धारा 195 में निर्दिष्ट किसी अपराध के लिए किसी व्यक्ति का विचारण उस दशा में नहीं करेगा, जब वह अपराध उसके समक्ष या उसके प्राधिकार का अवमान करके किया गया है अथवा किसी न्यायिक कार्यवाही के दौरान ऐसे न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट की हैसियत में उसके ध्यान में लाया गया है?

A. धारा 352 में।

निर्णय (The Judgement) (धारा 353-365)

किसी अपराध सम्बन्धी जांच और विचारण की समाप्ति निर्णय के रूप में होती है। दाण्डिक प्रयोजन के लिए संहिता में निर्णय को परिभाषित नहीं किया गया है। जब कोई दण्ड न्यायालय या मजिस्ट्रेट अपने समक्ष मामले में विचारण समाप्ति पर अपना निष्कर्ष अभिलिखित करता है तो उसे निर्णय माना जाता है। निर्णय सम्बन्धी उपबंध दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 27, धारा 353 से 365 तक में वर्णित है।

धारा 353 के अनुसार आरम्भिक अधिकारिता के दण्ड न्यायालय में होने वाले प्रत्येक विचारण में निर्णय पीठासीन अधिकारी द्वारा खुले न्यायालय में या तो विचारण के खत्म होने के पश्चात् तुरन्त या बाद में किसी समय, जिसकी सूचना पक्षकारों या उनके प्लीडरों को दी जाएगी–

(क) सम्पूर्ण निर्णय देकर सुनाया जाएगा, या

(ख) सम्पूर्ण निर्णय पढ़कर सुनाया जाएगा; या

(ग) अभियुक्त या उसके प्लीडर द्वारा समझी जाने वाली भाषा में निर्णय का प्रवर्तनशीलभाग पढ़कर और निर्णय कर सार समझाकर

सुनाया जाएगा और उसे हस्ताक्षरित और दिनांकित भी किया जायेगा। (धारा 353 (2), (3) एवं (4))।

यदि अभियुक्त अभिरक्षा में है तो निर्णय सुनने के लिए उसे लाया जाएगा। [धारा 353 (5)]।

किसी भी दण्ड न्यायालय द्वारा सुनाया गया कोई निर्णय केवल इस कारण विधितः अमान्य न समझा जाएगा कि उसके सुनाए जाने के लिए सूचित दिन को या स्थान में कोई पक्षकार या उसका प्लीडर अनुपस्थित था या पक्षकारों पर या उनके प्लीडरों पर या उनमें से किसी पर ऐसे दिन और स्थान की सूचना की तामील करने में कोई लोप या त्रुटि हुई थी। [धारा 353 (7)]।

निर्णय की भाषा और अन्तर्वस्तु-धारा 354 (1) के अनुसार इस संहिता द्वारा अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, धारा 354 में निर्दिष्ट प्रत्येक निर्णय–

(क) न्यायालय की भाषा में लिखा जाएगा;

(ख) अवधारणा के लिए प्रश्न उस प्रश्न या उन प्रश्नों पर विनिश्चय और विनिश्चय के कारण अन्तर्विष्ट करेगा;

(ग) वह अपराध जिसके लिए और भारतीय दण्ड संहिता या अन्य विधि की वह धारा, जिसके अधीन अभियुक्त दोषसिद्ध किया गया है, और वह दण्ड जिसके लिए वह दण्डादिष्ट है, विनिर्दिष्ट करेगा;

(घ) यदि निर्णय दोषमुक्ति का है तो, उस अपराध का कथन होगा जिससे अभियुक्त दोषमुक्त किया गया है और निर्देश देगा कि वह स्वतन्त्र कर दिया जाए।

जब दोषसिद्धि भारतीय दण्ड संहिता के अधीन है और यह सन्देह है कि अपराध उस संहिता की दो धाराओं में से किसके अधीन या एक ही धारा के दो भागों में से किसके अधीन आता है तो न्यायालय इस बात को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करेगा और अनुकल्पतः निर्णय देगा। (धारा 354 (2))।

धारा 354 का उपधारा (3) यह उपबन्ध करता है कि जब दोषसिद्धि, मृत्यु से अथवा अनुकल्पतः आजीवन कारावास से या कई वर्षों की अवधि के कारावास से दण्डनीय किसी अपराध के लिए है, तब निर्णय में, दिए गए दण्डादेश के कारणों का और मृत्यु के दण्डादेश की दशा में ऐसे दण्डादेश के लिए विशेष कारणों का, कथन होगा।

यदि दोषसिद्धि एक वर्ष या उससे अधिक की अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध के लिए है किन्तु न्यायालय तीन मास से कम अवधि के कारावास का दण्ड अधिरोपित करता है; तब वह ऐसा दण्ड देने के अपने कारणों को लेखबद्ध करेगा उस दशा के सिवाय जब वह दण्डादेश न्यायालय के उठने तक के लिए कारावास का नहीं है या वह मामला इस संहिता के उपबन्धों के अधीन संक्षेपतः विचारित नहीं किया गया है। (धारा 354 (4))।

जब किसी व्यक्ति को मृत्यु का दण्डादेश दिया जाता है तो वह दण्डादेश यह निदेश देगा कि उसे गर्दन में फांसी लगाकर तब तक लटकाया जाए जब तक उसकी मृत्य न हो जाए। (धारा 354 (5))।

संहिता के धारा 355 के अन्तर्गत महानगर मजिस्ट्रेट के निर्णय में अपेक्षित निर्णय की अन्तर्वस्तु का उल्लेख किया गया है। धारा 357 यह उपबंध करता है कि जब कोई न्यायालय निर्णय में जुर्माने का भी दण्डादेश देता है, तब न्यायालय वसूल किए गए जुर्माने से अभियोजन के व्ययों को चुकाने और पीड़ित पक्ष को प्रतिकर दिए जाने का भी आदेश दे सकता है। प्रतिकर का आदेश जुर्माना का दण्ड न दिए जाने की स्थिति में भी दिया जा सकता है (धारा 357 (3)। प्रतिकर दिए जाने का आदेश विचारण न्यायालय एवं अपील तथा पुनरीक्षण न्यायालय के द्वारा भी किया जा सकता है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 28 के द्वारा धारा 357 के बाद एक नयी धारा 357-क अन्तःस्थापित करके **'पीड़ित प्रतिकर योजना'** का प्रारम्भ किया गया है। इस निमित्त इस धारा के अन्तर्गत निम्नलिखित उपबंध किया गया है :

1. प्रत्येक राज्य सरकार केन्द्रीय सरकार के समन्वय में ऐसे पीड़ित अथवा उसके आश्रितों को, प्रतिकर के प्रयोजन से धन प्रदान करने के लिए एक योजना तैयार करेगी, जो अपराध के परिणामस्वरुप हानि अथवा क्षति से पीड़ित हुए हैं।

2. जब कभी न्यायालय के द्वारा प्रतिकर हेतु कोई संस्तुति की जाती है तब जिला विधिक सेवा प्राधिकरण या राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, यथास्थिति, योजना, जैसा कि उपधारा (1) में वर्णित है, के अधीन प्रतिकर की मात्रा अधिनिर्णीत करने के लिए विनिश्चय करेगा।

3. विचारण की समाप्ति पर, यदि विचारण न्यायालय का समाधान हो जाता है कि धारा 357 के अन्तर्गत अधिनिर्णीत प्रतिकर ऐसे पुनर्वास के लिए पर्याप्त नहीं है या जहां मामला दोषमुक्ति या उन्मोचन से समाप्त होता है और पीड़ित का पुनर्वास किया जाना है, तब वह प्रतिकर की संस्तुति कर सकेगा।

4. जहां अपराधी का पता नहीं चलता है या उसकी शिनाख्त नहीं की जा सकी है, किन्तु पीड़ित की पहचान कर ली गयी है, और जहां कोई विचारण नहीं होता है, तब पीड़ित या उसके आश्रित प्रतिकर के अधिनिर्णय के लिए राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण के समक्ष आवेदन कर सकते हैं।

5. उपधारा (4) के अधीन आवेदन प्राप्त होने पर उक्त

प्राधिकरण 2 माह के भीतर जांच पूर्ण करके पर्याप्त प्रतिकर अधिनिर्णीत करेगा।

6. राज्य अथवा जिला विधिक सेवा प्राधिकरण, यथास्थिति, पीड़ित की पीड़ा का शमन करने के लिए पुलिस अधिकारी, जो पुलिस थाने के भार साधक अधिकारी की श्रेणी से निम्न का न हो, या सम्बन्धित क्षेत्र के मजिस्ट्रेट के प्रमाणपत्र पर तुरन्त ही प्राथमिक चिकित्सा सुविधा या चिकित्सा लाभ निःशुल्क उपलब्ध कराये जाने अथवा कोई अन्य अन्तरिम आदेश, जैसा कि प्राधिकारी उचित समझे, पारित कर सकेगा''।

वर्तमान प्रतिकर योजना के तहत राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण अथवा जिला विधिक सेवा प्राधिकरण की भूमिका महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रतिकर हेतु आवेदन पत्र उसे ही प्रस्तुत किया जाना है और सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय भी उसी को करना है।

दण्ड विधि (संशोधन) अधिनियम, 2013 द्वारा धारा 357-ख और धारा 357-ग अंतःस्थापित तथा वर्ष 2018 द्वारा संशोधित है, जो इस प्रकार है-

धारा 357-ख- धारा 357 क के अधीन राज्य सरकार द्वारा संदेय प्रतिकर भा.दं.सं. की धारा 326 क, धारा 376 कख, धारा 376 घ, धारा 376 घक तथा धारा 376 घख के अधीन पीड़िता को जुर्माने का संदाय किए जाने के अतिरिक्त होगा।

धारा 357-ग पीड़ितों का उपचार- सभी लोक या प्राइवेट अस्पताल, चाहे वे केंद्रीय सरकार, राज्य सरकार, स्थानीय निकायों या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा चलाए जा रहे हों, भा.द.सं. की धारा 326 क, धारा 376, धारा 376 क, धारा 376 कख, धारा 376 ख, धारा 376 ग, धारा 376 घ, धारा 376 घक, धारा 376 घख या धारा 376 ङ के अधीन आने वाले किसी अपराध के पीड़ितो को तुरंत निःशुल्क प्राथमिक या चिकित्सीय उपचार उपलब्ध कराएंगे और ऐसी घटना की पुलिस को तुरंत सूचना देंगे।

निराधार गिरफ्तार करवाए गए व्यक्तियों को प्रतिकर–जब कभी कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को पुलिस अधिकारी से गिरफ्तार कराता है, तब यदि उस मजिस्ट्रेट को, जिसके द्वारा वह मामला सुना जाता है, यह प्रतीत होता है कि ऐसी गिरफ्तारी कराने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं था तो वह मजिस्ट्रेट अधिनिर्णय दे सकता है कि ऐसे गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को इस सम्बन्ध में उसके समय की हानि और व्यय के लिए एक हजार रुपये से अनधिक प्रतिकर जितना मजिस्ट्रेट ठीक समझे, गिरफ्तार कराने वाले व्यक्ति द्वारा दिया जाएगा। (धारा 358 (1))।

यदि एक से अधिक व्यक्ति गिरफ्तार किए जाते हैं तो मजिस्ट्रेट उनमें से प्रत्येक के लिए उसी रीति से एक हजार रुपए से अनधिक उतना प्रतिकर अधिनिर्णीत कर सकेगा, जितना ऐसा मजिस्ट्रेट ठीक समझे। (धारा 358 (2))।

समस्त प्रतिकर ऐसे वसूल किया जा सकता है मानों वह जुर्माना है और यदि वह ऐसे वसूल नहीं किया जा सकता तो उस व्यक्ति को, तीस दिन से अनधिक की इतनी अवधि के लिए, जितनी मजिस्ट्रेट निर्दिष्ट करे, सादे कारावास का दण्डादेश दिया जाएगा जब तक कि ऐसी राशि उससे पहले न दे दी जाए। (धारा 358(3))।

धारा 359 (1) के अनुसार जब किसी असंज्ञेय अपराध का कोई परिवाद न्यायालय में किया जाता है तब, यदि न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध कर देता है तो, वह अभियुक्त पर अधिरोपित शास्ति के अतिरिक्त उसे यह आदेश दे सकता है वह परिवादी को अभियोजन में उसके द्वारा किए गए खर्चे पूर्णतः या अंशतः दे और यह अतिरिक्त आदेश दे सकता है कि उसे देने में व्यतिक्रम करने पर अभियुक्त तीस दिन से अनधिक की अवधि के लिए सादा कारावास भोगेगा। ऐसा आदेश किसी अपील न्यायालय द्वारा, या उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय द्वारा अपनी पुनरीक्षण शक्तियों के प्रयोग के दौरान भी किया जा सकेगा। (धारा 359 (2))।

सदाचरण की परिवीक्षा पर या भर्त्सना के पश्चात् छोड़ देने का आदेश–जब कोई व्यक्ति जो इक्कीस वर्ष से कम आयु का नहीं है केवल जुर्माने से या सात वर्ष या उससे कम अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है अथवा जब कोई व्यक्ति जो इक्कीस वर्ष से कम आयु का है या जब कोई स्त्री ऐसे अपराध के लिए जो मृत्यु या आजीवन कारावास से दण्डनीय नहीं है; दोषसिद्ध की जाती है और अपराधी के विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं की गई है तब, यदि न्यायालय को, अपराधी की आयु, शील या पूर्ववृत्त को और उन परिस्थितियों को, ध्यान में रखते हुए यह प्रतीत होता है कि अपराधी को सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ देना समीचीन है तो न्यायालय उसे तुरन्त कोई दण्डादेश देने के बजाय निदेश दे सकता है कि उसे प्रतिभूओं सहित या रहित उसके द्वारा यह बन्धपत्र लिख देने पर छोड़ दिया जाए कि वह (तीन वर्ष से अनधिक) इतनी अवधि के दौरान, जितनी न्यायालय निर्दिष्ट करे, बुलाए जाने पर हाजिर होगा और दण्डादेश पाएगा और इस बीच परिशान्ति कायम रखेगा और सदाचारी बना रहेगा :

परन्तु जहां कोई प्रथम अपराधी किसी द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा जो उच्च न्यायालय द्वारा विशेषतया सशक्त नहीं किया गया है, दोषसिद्ध किया जाता है और मजिस्ट्रेट की यह राय है कि इस धारा द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग किया जाना चाहिए वहां वह उस भाव की अपनी राय अभिलिखित करेगा और प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट को वह कार्यवाही निवेदित करेगा और उस अभियुक्त को

उस मजिस्ट्रेट के पास भेजेगा अथवा उसकी उस मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिरी के लिए जमानत लेगा और वह मजिस्ट्रेट उस मामले का निपटारा करेगा। (धारा 360 (1))।

ऐसा मजिस्ट्रेट उस पर ऐसा दण्डादेश या आदेश दे सकता है जैसा यदि मामला मूलतः उसके द्वारा सुना गया होता तो वह दे सकता और यदि वह किसी प्रश्न पर अतिरिक्त जांच या अतिरिक्त साक्ष्य आवश्यक समझता है तो वह स्वयं ऐसी जांच कर सकता है या ऐसा साक्ष्य ले सकता है अथवा ऐसी जांच किए जाने साक्ष्य लिए जाने का निदेश दे सकता है।

किसी ऐसी दशा में जिसमें कोई व्यक्ति चोरी, किसी भवन में चोरी, बेईमानी से दुर्विनियोग, छल या भारतीय दण्ड संहिता के अधीन दो वर्ष से अनधिक के कारावास से दण्डनीय किसी अपराध के लिए या केवल जुर्माने से दण्डनीय किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है और उसके विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं की गई है, वह न्यायालय उसे कोई दण्डादेश देने के बजाय सम्यक् भर्त्सना के पश्चात् छोड़ सकता है। (धारा 360 (5))।

जब किसी अपराधी के बारे में इस धारा के अधीन आदेश दिया गया है तब उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय, पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग करते हुए ऐसे आदेश को अपास्त कर सकता है और ऐसे अपराधी को उसके बदले में विधि के अनुसार दण्डादेश दे सकता है। धारा 360 (5)।

परन्तु उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय इस उपधारा के अधीन उस दण्ड से अधिक दण्ड न देगा जो उस न्यायालय द्वारा दिया जा सकता था जिसके द्वारा अपराधी दोषसिद्ध किया गया था। धारा 360 उन राज्यों अथवा उनके किसी भाग में लागू नहीं होगी, जिसमें अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 लागू कर दिया गया है। (धारा 18, अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958)।

न्यायालय का अपने निर्णय में परिवर्तन न करना–किसी मामले को निपटाने के लिए अपने निर्णय या अन्तिम आदेश पर हस्ताक्षर कर देने वाला कोई न्यायालय लिपिकीय या गणितीय भूल को ठीक करने के सिवाय उसमें कोई परिवर्तन नहीं करेगा या उसका पुनर्विलोकन नहीं करेगा। (धारा 362)।

धारा 365. ऐसे मामलों में, जिनका विचारण सेशन न्यायालय या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा किया गया है, यथास्थिति, निष्कर्ष और दण्डादेश की एक प्रति उस जिला मजिस्ट्रेटइ को भेजेगा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के भीतर विचारण किया गया है।

प्रश्नकोश

Q. 'निर्णय' किसे कहते हैं?

A. 'निर्णय' को न्यायालय का अन्तिम विनिश्चय कहा जा सकता है जिसे खुली अदालत में औपचारिक अधिघोषणा द्वारा अथवा सुनाकर पक्षकारों को तथा संसार को सूचित किया जाता है। (सुरेन्द्र सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. 1954 सु.को.)।

Q. आरम्भिक अधिकारिता के दण्ड न्यायालय में होने वाले प्रत्येक विचारण में निर्णय किसके द्वारा किस तरीके से सुनाया जाता है?

A. ऐसे प्रत्येक विचारण में निर्णय पीठासीन अधिकारी द्वारा खुले न्यायालय में या तो विचारण के खत्म होने के पश्चात्-तुरन्त या बाद में किसी समय, जिसकी सूचना पक्षकारों को दी जायेगी– (a) सम्पूर्ण निर्णय देकर सुनाया जायेगा, या (b) सम्पूर्ण निर्णय पढ़कर सुनाया जायेगा, या (c) अभियुक्त या उसके प्लीडर द्वारा समझी जाने वाली भाषा में निर्णय के प्रवर्तनशील भाग पढ़कर और निर्णय का सार समझा कर सुनाया जायेगा। (धारा 353)।

Q. किसी मामले का विचारण समाप्त हो जाने के पश्चात् (निम्न में से) कौन सा आदेश पारित किया जा सकता है?

A. या तो दोषमुक्ति या दोषसिद्धि का।

Q. निराधार गिरफ्तार करवाये गए व्यक्ति को इस सम्बन्ध में उसके समय की हानि और व्यय के लिए कितना प्रतिकर दिलाये जाने का आदेश मजिस्ट्रेट कर सकता है?

A. 1000/- रुपये तक।

Q. एक बार निर्णय पर हस्ताक्षर कर देने के बाद न्यायालय उसमें क्या संशोधन कर सकता है?

A. लिपिकीय या गणितीय भूल। धारा 362)।

Q. निर्णय सुनाये जाते समय किस मामले में अभियुक्त की उपस्थिति अभिमुक्त किया जा सकता है?

A. जब निर्णय दोषमुक्ति का हो। (धारा 353(6)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 के अन्तर्गत परिवीक्षा पर किसे छोड़ा जा सकता है?

A. जो 21 वर्ष से कम आयु का नहीं है और कोई स्त्री।

Q. जहां निर्णय का प्रवर्तनशील भाग पढ़कर और निर्णय का सार समझा कर अभियुक्त या उसके प्लीडर को निर्णय सुनाया जाता है, वहां क्या आवश्यक होगा?

A. ऐसी स्थिति में सम्पूर्ण निर्णय या उसकी एक प्रतिलिपि पक्षकारों या उनके प्लीडरों के परिशीलन के लिए तुरन्त निःशुल्क उपलब्ध करायी जायेगी। (धारा 353 (4))।

Q. संहिता की धारा 353 में अभियुक्त की उपस्थिति से सम्बन्धित विचारण न्यायालय के क्या कर्त्तव्य हैं?

A. धारा 353 की धारा 5 एवं 6 में उपबन्धित है कि विचारण न्यायालय यह सुनिश्चित कर ले कि–(a) यदि अभियुक्त अभिरक्षा में है, तो निर्णय सुनने के लिए उसे लाया जाये, (b) यदि अभियुक्त अभिरक्षा में नहीं हैं, तो उससे न्यायालय द्वारा सुनाये जाने वाले निर्णय सुनने के लिए हाजिर होने की अपेक्षा की जायेगी।

Q. यदि अभियुक्त अभिरक्षा में नहीं है तो किस दशा में निर्णय सुनाते समय उसके हाजिर होने की अपेक्षा नहीं की जायेगी?

A. उस दशा में जिसमें विचारण के दौरान उसकी वैयक्तिक हाजिरी से उसे उन्मुक्ति दे दी गयी है और दण्डादेश केवल जुर्माने का है या उसे दोषमुक्त किया गया है। (धारा 353(6))।

Q. यदि कोई पक्षकार यह आक्षेप करता है, कि निर्णय सुनाये जाने के लिए सूचित दिन को या स्थान में, वह या उसका प्लीडर अनुपस्थित था, या यह कि पक्षकार पर ऐसे दिन या स्थान की सूचना तामील करने में कोई त्रुटि हुई थी, क्या इस कारण निर्णय अमान्य होगा?

A. नहीं! धारा 353 की उपधारा (7) के अनुसार कोई निर्णय केवल इस कारण विधितः अमान्य नहीं समझा जायेगा।

Q. संहिता की कौन-सी धारा निर्णय की भाषा और अन्तर्वस्तु के निमित्त उपबन्ध प्रस्तुत करता है?

A. धारा 354।

Q. न्यायालय की भाषा का अभिनिर्धारण किसके द्वारा किया जाता है?

A. राज्य सरकार द्वारा।

Q. प्रत्येक निर्णय में क्या अन्तर्विष्ट होता है?

A. प्रत्येक निर्णय में अवधारणा के लिए प्रश्न, उस प्रश्न या उन प्रश्नों पर विनिश्चय और विनिश्चय का कारण अन्तर्विष्ट होता है।

Q. यदि निर्णय दोषमुक्ति का है, तो न्यायालय क्या कथन करेगा?

A. ऐसे में न्यायालय उस अपराध का कथन करेगा, जिससे अभियुक्त दोषमुक्त किया गया है और निर्देश देगा कि वह स्वतन्त्र कर दिया जाए।

Q. किसी मामले में दिये गये दण्डादेश के कारणों का निर्णय में कब कथन किया जायेगा?

A. जब कोई दोषसिद्धि मृत्यु से अथवा अनुकल्पतः आजीवन कारावास से या कई वर्षों की अवधि के कारावास से दण्डनीय किसी अपराध के लिए है। (धारा 354 (3))।

Q. किस प्रकार के दण्डादेश की दशा में न्यायालय निर्णय में विशेष कारणों का कथन करेगा?

A. जब मृत्यु का दण्डादेश दिया जाता है। (धारा 354 (3))।

Q. किसी साक्षी द्वारा दिये गये साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय मजिस्ट्रेट अथवा न्यायाधीश को सामान्यतः संयत भाषा में न्यायिक नियन्त्रण की अवैयक्तिक गरिमा को प्रतिबिम्बित और उससे सम्बद्ध रहते हुए अपना अभिमत अभिव्यक्त करना चाहिये, यह किस वाद में निर्धारित किया गया?

A. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम् मोहम्मद नईम, ए.आई.आर. 1964 एस.सी. तथा एन.एस. घोष बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1973) सु.को. के।

Q. जब किसी व्यक्ति को मृत्यु का दण्डादेश दिया जाता है तो वह दण्डादेश क्या निर्देश देगा?

A. कि उसे गर्दन में फाँसी लगाकर तब तक लटकाया जाये जब तक उसकी मृत्यु न हो जाए। (धारा 354 (5))।

Q. किस वाद में धारा 354 (5) की सांविधानिकता का प्रश्न उच्चतम न्यायालय में उठाया गया?

A. दीना उर्फ दीनदयाल बनाम भारत संघ (1983) सु.को. के. के वाद में (इस वाद में उच्चतम न्यायालय ने धारा 354 (5) में विहित फाँसी लगाकर मृत्यु दण्ड के निष्पादन की पद्धति को अनुच्छेद 21 का उल्लंघन करने वाली नहीं माना, और धारा 354 (5) को सांविधानिक अभिधारित किया।

Q. संहिता की किस धारा में महानगर मजिस्ट्रेट द्वारा निर्णय अभिलिखित करने की रीति उपबन्धित की गयी है?

A. धारा 355 में।

Q. संहिता की धारा 356 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. इस धारा में पूर्वतन सिद्धदोष अपराधी को अपने पते की सूचना देने का आदेश देने की व्यवस्था की गयी है।

Q. छोड़े गये सिद्धदोषों के निवास स्थान की या निवास स्थान की तब्दीली की सूचना से सम्बन्धित धारा 356 के उपबन्धों के क्रियान्वयन के नियम कौन बना सकता है?

A. राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा नियम बना सकती है।

Q. संहिता की धारा 357 का क्या उद्देश्य है?

A. इस धारा का उद्देश्य दोषी व्यक्ति द्वारा अपराध के शिकार व्यक्ति को प्रतिकर देने तथा अभियोजन में उपगत व्ययों को चुकाने के लिए समुचित व्यवस्था करना है।

Q. किस मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्धारित किया कि धारा 357 (3) के अधीन अपराध के शिकार व्यक्ति को प्रतिकर देने का आदेश अन्य दण्डादेशों का विकल्प अथवा सहायक नहीं वरन् उसके अतिरिक्त होता है?

A. हरी सिंह बनाम सुखबीर सिंह (1988), 4 एस.सी.सी.।

Q. निराधार गिरफ्तार करवाये गये व्यक्तियों को प्रतिकर दिलवाने की व्यवस्था संहिता की किस धारा में की गयी है?

A. धारा 358 में।

Q. जबकि कोई मजिस्ट्रेट जो मामले की सुनवाई कर रहा है, पाता है कि 'अ' ने 'ब' को पुलिस अधिकारी से निराधार गिरफ्तार करवाया है, तो वह क्या कर सकता है?

A. ऐसी स्थिति में 'ब' की जो समय और धन की हानि हुई है, उसके लिए 'ब' को 'अ' से 1000 रु. से अनधिक जितना वह मजिस्ट्रेट आवश्यक समझे प्रतिकर के रूप में दिलवा सकता है, और यदि एक से अधिक व्यक्ति गिरफ्तार किये जाते हैं तो मजिस्ट्रेट उनमें से प्रत्येक के लिए उसी रीति से 1000 रु. से अनधिक जितना आवश्यक समझे प्रतिकर अधिनिर्णीत कर सकता है। (धारा 358)।

Q. यदि धारा 358 के अन्तर्गत अधिनिर्णीत प्रतिकर, जुर्माने के तौर पर वसूल नहीं किया जा सकता, तो जिसके द्वारा प्रतिकर सन्देय है, उस व्यक्ति को क्या दण्ड दिया जा सकता है?

A. ऐसी दशा में उस व्यक्ति को, जिसके द्वारा प्रतिकर सन्देय है, तीस दिन से अनधिक की इतनी अवधि के लिए जितनी मजिस्ट्रेट निर्दिष्ट करे, सादे कारावास का दण्डादेश दिया जायेगा। (धारा 358 (3))।

Q. जब कभी किसी असंज्ञेय अपराध का कोई परिवाद न्यायालय में किया जाता है, तब यदि न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध कर देता है, तो अभियुक्त अधिरोपित शास्ति के अतिरिक्त उसे कौन से आदेश दे सकता है?

A. न्यायालय अभियुक्त को आदेश दे सकता है कि वह परिवादी को अभियोजन में उसके द्वारा किये गये खर्चे पूर्णतः या अंशतः दे। (धारा 359)।

Q. असंज्ञेय मामलों में खर्चा देने के मजिस्ट्रेट के आदेश के पश्चात् यदि अभियुक्त व्यतिक्रम करता है, तो मजिस्ट्रेट उसे कौन-सा दण्ड दे सकता है?

A. उसके व्यतिक्रम करने पर आदेश दे सकता है कि अभियुक्त तीस दिन से अनधिक की अवधि के लिए सादा कारावास भोगेगा। (धारा 359 (1))।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अन्तर्गत सदाचरण की परिवीक्षा पर या भर्त्सना के पश्चात् छोड़े जाने का आदेश देने सम्बन्धी प्रावधान उपबन्धित है?

A. धारा 360 के अन्तर्गत।

Q. संहिता की धारा 360 का क्या उद्देश्य है?

A. युवा अपराधियों के साथ उदारता का बर्ताव करके उनके सुधारने का प्रयत्न किया जाना और इस निमित्त अपराधी की पारिवारिक पृष्ठभूमि और उसका इतिहास, उसके भूतकालिक सामाजिक व्यवहार तथा उनकी वर्तमान स्थिति पर ध्यान दिया जाना।

Q. सदाचरण की परिवीक्षा पर किसे छोड़ा जा सकता है?

A. जो व्यक्ति 21 वर्ष से कम आयु का नहीं है और केवल जुर्माने से या 7 वर्ष या उससे कम अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है, अथवा, जो 21 वर्ष से कम आयु का है, या कोई स्त्री है, और जो मृत्यु, आजीवन कारावास से दण्डनीय नहीं है, दोषसिद्ध की जाती है, और अपराधी के विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं की गयी है।

Q. किस वाद में उच्चतम न्यायालय ने परिवीक्षा पर रिहा कर दिया जाना वांछनीय माना है?

A. एन.एम. पार्थ सारथी बनाम् राज्य (1992), एस.सी.सी.।

Q. यदि न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि अपराधी को सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ देना चाहिए, तो वह क्या कर सकता है?

A. ऐसे में न्यायालय उसे तुरन्त कोई दण्डादेश देने के बजाय निर्देश दे सकता है कि उसे प्रतिभूओं सहित या रहित उसके द्वारा बन्ध-पत्र लिख देने पर छोड़ दिया जाए।

Q. न्यायालय सदाचरण की परिवीक्षा पर कितने वर्ष की अवधि के लिए छोड़ सकता है?

A. 3 वर्ष से अनधिक अवधि के लिए। (धारा 360 (1))।

Q. धारा 360 के अन्तर्गत अपराधी द्वारा किन शर्तों पर बन्धपत्र निष्पादित किया जाता है?

A. (i) यह कि 3 वर्ष से अनधिक इतनी अवधिक के दौरान, जितनी न्यायालय निर्देश दे, बुलाये जाने पर हाजिर होगा और दण्डादेश पायेगा, (ii) यह कि इस बीच परिशान्ति कायम रखेगा, (iii) और सदाचारी बना रहेगा।

Q. न्यायालय कब किसी अपराधी को सम्यक् भर्त्सना के पश्चात् छोड़ सकता है?

A. जब वह चोरी, किसी भवन में चोरी, बेईमानी से दुर्विनियोग, छल या भारतीय दण्ड संहिता के अधीन दो वर्ष से अनधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय किसी अपराध के लिए या केवल जुर्माने से दण्डनीय किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है, और उसके विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं की गयी है। (धारा 360 (3))।

Q. दोषसिद्ध किये गये अपराधी को सम्यक् भर्त्सना के पश्चात् छोड़ते समय न्यायालय अपराधी की किन बातों को ध्यान में रखेगा?

A. अपराधी की आयु, शील, पूर्ववृत्त या शारीरिक या मानसिक दशा को और अपराध की तुच्छ, या किन्हीं शमनकारी परिस्थितियों को जिनमें अपराध किया गया था, ध्यान में रखेगा। (धारा 360(3))।

Q. संहिता की धारा 360 के अधीन आदेश, किसी अपील न्यायालय, उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय द्वारा कब किया जा सकेगा?

A. जब वह अपनी पुनरीक्षण की शक्तियों का प्रयोग कर रहा हो। (धारा 360 (4))।

Q. संहिता की धारा 360 के अधीन दिये गये आदेश को कौन-से न्यायालय किन परिस्थितियों में अपास्त कर सकते हैं?

A. उच्चतम न्यायालय या सेशन न्यायालय, उस दशा में जब उस न्यायालय में अपील करने का अधिकार है, अपील किये जाने पर, या अपनी पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग करते हुए ऐसे आदेश को अपास्त कर सकता है और ऐसे अपराधी को उसके बदले विधि के अनुसार दण्डादेश दे सकता है।

Q. यदि अपराधी को दोषसिद्ध करने वाले न्यायालय का समाधान हो जाता है कि अपराधी अपने मुचलके की शर्तों में से किसी का पालन करने में असफल रहा है, तो वह क्या कर सकता है?

A. न्यायालय उस अपराधी को पकड़े जाने के लिए वारण्ट जारी कर सकता है। (धारा 360 (8))।

Q. कोई न्यायालय, जब उसने किसी मामले को निपटाने के लिए अपने निर्णय या अन्तिम आदेश पर हस्ताक्षर कर दिये हैं, तब उसमें कोई परिवर्तन नहीं करेगा या उसका पुनर्विलोकन नहीं करेगा किस धारा के अन्तर्गत?

A. (धारा 362)।

Q. किस प्रकार के दण्डादेश में निर्णय की एक प्रमाणित प्रति अभियुक्त को तुरन्त निःशुल्क दी जायेगी चाहे वह उसके लिए आवेदन करे या नहीं?

A. उच्च न्यायालय द्वारा पारित या पुष्ट किये गये मृत्युदण्डादेश के निर्णय की। (धारा 363 (2) का परन्तुक)।

Q. किसी निर्णय का अनुवाद कब किया जायेगा?

A. जहां मूल निर्णय ऐसी भाषा में अभिलिखित किया गया है जो न्यायालय की भाषा से भिन्न है और अभियुक्त ऐसा चाहता है, तो न्यायालय की भाषा में उसका अनुवाद अभिलेख में जोड़ दिया जायेगा। (धारा 364)।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत सेशन न्यायालय द्वारा निष्कर्ष और दण्डादेश की प्रति जिला मजिस्ट्रेट को भेजी जाती है?

A. धारा 365 के अन्तर्गत।

Q. संहिता की धारा 365 के अन्तर्गत कौन-से न्यायालय अपने द्वारा पारित निष्कर्ष या दण्डादेश की एक प्रति जिला मजिस्ट्रेट को भेजेगें?

A. सेशन न्यायालय या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट। (धारा 365)।

मृत्यु दण्डादेशों को पुष्टि के लिए प्रस्तुत किया जाना (Submission of Death Sentences for Confirmation) (धारा 366-371)

सेशन न्यायालय द्वारा मृत्यु दण्डादेश का पुष्टि के लिए प्रस्तुत किया जाना–जब सेशन न्यायालय मृत्यु दण्डादेश देता है तह कार्यवाही उच्च न्यायालय को प्रस्तुत की जाएगी और दण्डादेश तब तक निष्पादित न किया जाएगा जब तक वह उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट न कर दिया जाए। इस दौरान दोषसिद्ध जेल की अभिरक्षा में रखा जायेगा। (धारा366)।

आवश्यक जांचोपरान्त (धारा 367) उच्च न्यायालय धारा 366 के अधीन प्रस्तुत किसी मामले में–

(क) दण्डादेश की पुष्टि कर सकता है या विधि द्वारा समर्थित अन्य कोई दण्डादेश दे सकता है; अथवा

(ख) दोषसिद्धि को बातिल कर सकता है। अभियुक्त को किसी ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध कर सकता है जिसके लिए सेशन न्यायालय उसे दोषसिद्ध कर सकता था या उसी या संशोधित आरोप पर नए विचारण का आदेश दे सकता है, अथवा

(ग) अभियुक्त व्यक्ति को दोषमुक्त कर सकता है।

परन्तु पुष्टि का कोई आदेश इस धारा के अधीन तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक अपील करने के लिए अनुज्ञात अवधि समाप्त न हो गई हो या यदि ऐसी अवधि के अन्दर अपील पेश कर दी गई है तो जब तक उस अपील का निपटारा न हो गया हो। (धारा 368)।

उच्च न्यायालय द्वारा दण्डादेश का पुष्टिकरण या उसके द्वारा पारित कोई नया दण्डादेश या आदेश, यदि ऐसे न्यायालय में दो या अधिक न्यायाधीश हों तो, उनमें से कम-से-कम दो न्यायाधीशों द्वारा पारित और हस्ताक्षरित किया जाएगा। (धारा 369)।

मृत्यु दण्डादेश की पुष्टि के लिए उच्च न्यायालय को सेशन न्यायालय द्वारा प्रस्तुत मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि के आदेश या अन्य आदेश के दिए जाने के पश्चात् उच्च न्यायालय का समुचित अधिकारी विलम्ब के बिना, आदेश की प्रतिलिपि उच्च न्यायालय की **मुद्रा (Seal)** लगाकर और अपने पदीय हस्ताक्षरों से अनुप्रमाणित करके सेशन न्यायालय को भेजेगा। (धारा 371)।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की कौन सी धारा यह उपबंध करती है कि सत्र न्यायालय के द्वारा पारित मृत्यु दण्डादेश को निष्पादित करने से पूर्व उच्च न्यायालय के द्वारा पुष्टि आवश्यक है?

A. धारा 366।

Q. मृत्यु दण्डादेशों की पुष्टि के सम्बन्ध में उपबन्ध संहिता की किन धाराओं में निहित है?

A. अध्याय 28 के धारा 366 से 371 तक में।

Q. सेशन न्यायालय द्वारा विनिश्चित मृत्यु का दण्डादेश तब तक अन्तिम नहीं माना जाता जब तक वह पुष्ट नहीं कर दिया जाता, किस न्यायालय द्वारा?

A. उच्च न्यायालय द्वारा।

Q. मृत्यु दण्डादेशों को पुष्टि के लिए प्रस्तुत किये जाने वाले उपबन्ध किस प्रकृति के हैं?

A. आदेशात्मक प्रकृति के, चाहे अभियुक्त ने उसके खिलाफ अपील किया हो या नहीं।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत सेशन न्यायालय द्वारा मृत्यु दण्डादेश को उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि हेतु प्रस्तुत किया जाता है?

A. धारा 366 के अन्तर्गत।

Q. संहिता की धारा 366 क्या कथन करती है?

A. इस धारा के अनुसार जब सेशन न्यायालय मृत्यु दण्डादेश देता है, तब कार्यवाही उच्च न्यायालय को प्रस्तुत की जायेगी और दण्डादेश तब तक निष्पादित न किया जायेगा, जब तक वह उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट न कर दिया जाय।

Q. संहिता की धारा 367 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय को दण्डादेश की पुष्टि के सम्बन्ध में क्या शक्तियाँ दी गयी हैं?

A. यदि वह चाहे तो अतिरिक्त जांच या साक्ष्य कर या ले सकता है या सेशन न्यायालय को ऐसा करने का आदेश दे सकता है।

Q. उच्च न्यायालय द्वारा किस प्रश्न पर अतिरिक्त जांच की जा सकती है, या अतिरिक्त साक्ष्य लिया जा सकता है?

A. दोषसिद्ध व्यक्ति के दोषी या निर्दोष होने से सम्बन्धित किसी प्रश्न पर। (धारा 367)।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत सेशन न्यायालय द्वारा दिये गये मृत्यु दण्डादेश को पुष्ट करने या दोषसिद्धि को साबित करने की उच्च न्यायालय को शक्ति दी गयी है?

A. धारा 368 के अन्तर्गत।

Q. जब कोई मामला धारा 366 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय को प्रस्तुत किया जाता है, तो वह क्या-क्या कर सकता है?

A. ऐसे में उच्च न्यायालय–

(a) दण्डादेश को पुष्ट कर सकता है या विधि द्वारा समर्थित कोई अन्य दण्डादेश दे सकता है, अथवा

(b) दोषसिद्धि को बातिल कर सकता है, और अभियुक्त को किसी ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध कर सकता है, जिसके लिए सेशन न्यायालय उसे दोषसिद्ध कर सकता था, या उसी या संशोधित आरोप पर नये विचारण का आदेश दे सकता है, अथवा

(c) अभियुक्त व्यक्ति को दोषमुक्त कर सकता है। (धारा 368)।

Q. धारा 268 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा दण्डादेश की पुष्टि का आदेश कब तक नहीं दिया जायेगा?

A. जब तक कि अपील की अवधि समाप्त न हो गयी हो, या यदि ऐसी अवधि के अन्दर अपील पेश कर दी गयी है, जो जब तक अपील का निपटारा न हो गया हो।

Q. मृत्यु दण्डादेश की पुष्टि के सम्बन्ध में उच्च न्यायालय का क्या कर्त्तव्य है?

A. इस सम्बन्ध में उच्च न्यायालय का यह कर्त्तव्य है कि वह सम्पूर्ण साक्ष्य के हर अंश का मूल्यांकन करे और सम्पूर्ण कार्यवाही को उसके प्रत्येक पक्षों में देखते हुए उसका विचार करे और उसके बाद मामले के गुणावगुण के आधार पर अपना स्वतन्त्र निष्कर्ष धारित करे।

Q. उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत मृत्यु दण्डादेश का पुष्टिकरण या उसके द्वारा पारित किसी नये दण्डादेश या आदेश को कम-से-कम कितने न्यायाधीशों द्वारा पारित या हस्ताक्षरित किया जाना चाहिए?

A. कम-से-कम दो न्यायाधीशों द्वारा। (धारा 369)।

Q. अभियुक्त का अपने कुटुम्ब के सदस्यों के साथ वैमनस्यपूर्ण सम्बन्ध ऐसा सुसंगत तथ्य नहीं है जिस पर मृत्यु दण्डादेश की पुष्टि करते समय उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया जाना चाहिए। यह किस वाद में कहा गया था?

A. शंकर लाल ग्यारसी लाल दीक्षित बनाम् महाराष्ट्र राज्य (1981) 4 उम.नि.प. 924 (1981) 2 एस.सी.सी. 35।

Q. जहां न्यायाधीश राय के बारे में समान रूप से विभाजित है, वहां मामला कैसे विनिश्चित किया जायेगा?

A. ऐसी स्थिति में मामला संहिता की धारा 392 द्वारा उपबन्धित रीति से विनिश्चय किया जायेगा, जिनमें व्यवस्था है कि मामला उनकी रायों सहित उसी न्यायालय के किसी उच्च न्यायाधीश के समक्ष रखा जायेगा और ऐसा न्यायाधीश ऐसी सुनवाई के पश्चात् जैसे वह ठीक समझे, अपनी राय देगा, और निर्णय या आदेश ऐसी राय के अनुसार होगा।

अपीलें (Appeals) (धारा 372-394)

अपील से सम्बन्धित उपबंध दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 29, धारा 372 से 394 में वर्णित है। धारा 372 के अन्तर्गत यह सामान्य नियम अधिकथित है कि दण्ड न्यायालय के किसी निर्णय या आदेश से कोई अपील इस संहिता द्वारा या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के द्वारा जैसा उपबंधित है, के सिवाय नहीं होगी।

दण्ड प्रक्रियासंहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा इस धारा के अन्तर्गत परन्तुक जोड़कर यह उपबंधित किया गया है कि ''पीड़ित (व्यक्ति) को न्यायालय द्वारा पारित किसी आदेश, जिसके द्वारा अभियुक्त को दोषमुक्त किया गया है या न्यूनतर अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है या अपर्याप्त प्रतिकर अधिरोपित किया गया है, के विरुद्ध अपील प्रस्तुत करने का अधिकार होगा और ऐसा अपील उस न्यायालय में होगी जिसमें अपील सामान्य रुप से ऐसे न्यायालय की दोषसिद्धि के आदेश के विरुद्ध होती है''।

इस परन्तुक जोड़े जाने का प्रयोजन पीड़ित पक्ष को अपील का अधिकार ठीक उसी प्रकार प्रदान करना है जैसे दीवानी मामलों में किसी व्यथित पक्ष को प्राप्त होता है। इस अध्याय के अधीन विविध मामलों में अपील सम्बन्धित उपबंध अलग-अलग धाराओं में वर्णित है।

परिशान्ति कायम रखने या सदाचार के लिए प्रतिभू अपेक्षित करने वाले या प्रतिभूति स्वीकार करने से इंकार करने वाले या अस्वीकार करने वाले आदेश से अपील–कोई व्यक्ति

(i) जिसे परिशान्ति कायम रखने या सदाचार के लिए प्रतिभूति देने के लिए धारा 117 के अधीन आदेश दिया गया है, अथवा

(ii) जो धारा 121 के अधीन प्रतिभू स्वीकार करने से इंकार करने या उसे अस्वीकार करने वाले किसी आदेश से व्यथित है सेशन न्यायालय में ऐसे आदेश के विरुद्ध अपील कर सकता है। (धारा 373)।

दोषसिद्धि से अपील–कोई व्यक्ति जो उच्च न्यायालय द्वारा असाधारण, आरम्भिक दाण्डिक अधिकारिता के प्रयोग में किए गए विचारण में दोषसिद्ध किया गया है, उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकता है। (धारा 374 (1) और कोई व्यक्ति जो सेशन न्यायाधीश या अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा किए गए विचारण में या किसी अन्य न्यायालय द्वारा किए गए विचारण में दोषसिद्ध किया गया है, जिसमें सात वर्ष से अधिक के कारावास का दण्डादेश उसके विरुद्ध या उसी विचारण में दोषसिद्ध किए गए किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध दिया गया है, उच्च न्यायालय में अपील कर सकता है। (धारा 374 (2))।

इसके सिवाय, कोई व्यक्ति,

(क) जो महानगर मजिस्ट्रेट या सहायक सेशन न्यायालय या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट या द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा किए गए विचारण में दोषसिद्ध किया गया है, अथवा

(ख) जो धारा 325 के अधीन दण्दादिष्ट किया गया है, अथवा

(ग) जिसके बारे में किसी मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 360 के अधीन आदेश दिया गया है या दण्डादेश पारित किया गया है।

सेशन न्यायालय में अपील कर सकता है। (धारा 374 (3)।

धारा 374 उपधारा 4- जब भा.दं.सं. की धारा 376, धारा 376 क, धारा 376 कख, धारा 376 ख, धारा 376 ग, धारा 376 घ, धारा 376 घक, धारा 376 घख या धारा 376 ङ के अधीन पारित किसी दण्डादेश के विरूद्ध अपील फाइल की गई है, तो अपील का निपटारा, ऐसी अपील फाइल किए जाने की तारीख से छः मास की अवधि के भीतर किया जाएगा।

कुछ मामलों में जब अभियुक्त दोषी होने का अभिवचन करें, अपील न होना–धारा 375 में किसी बात के होते हुए भी, जहां अभियुक्त व्यक्ति ने दोषी होने का अभिवचन किया है, और ऐसे अभिवचन पर वह दोषसिद्ध किया गया है वहां,

(क) यदि दोषसिद्धि उच्च न्यायालय द्वारा की गई है, तो कोई अपील नहीं होगी, अथवा

(ख) यदि दोषसिद्धि सेशन न्यायालय, महानगर मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट या द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा की गई है तो अपील दण्ड के परिणाम या उसकी वैधता के बारे में ही हो सकेगी अन्यथा नहीं। (धारा 275)।

छोटे मामलों में अपील न होना–दोषसिद्ध व्यक्ति द्वारा कोई अपील निम्नलिखित में से किसी मामले में न होगी, अर्थात्–

(क) जहां उच्च न्यायालय केवल छह मास के अनधिक की अवधि के कारावास का या एक हजार रुपए से अनधिक जुर्माने का अथवा दोनों का, दण्डादेश पारित करता है;

(ख) जहां सेशन न्यायालय या महानगर मजिस्ट्रेट केवल तीन मास से अनधिक की अवधि के कारावास का या दो सौ रुपए से अनधिक जुर्माने का अथवा ऐसे कारावास और जुर्माने दोनों का, दण्डादेश पारित करता है;

(ग) जहां प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट केवल एक सौ रुपए से अनधिक जुर्माने का दण्डादेश पारित करता है; अथवा

(घ) जहां संक्षेपतः विचारित किसी मामले में, धारा 260 के अधीन कार्य करने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट केवल दो सौ रुपए से अनधिक जुर्माने का दण्डादेश पारित करता है;

परन्तु यदि ऐसे किसी दण्डादेश के साथ कोई अन्य दण्ड मिला दिया गया है तो ऐसे दण्डादेश के विरुद्ध अपील की जा सकती है। किन्तु यदि दण्डादेश के साथ ही दोषसिद्ध व्यक्ति से परिशान्ति बनाये रखने के लिए प्रतिभूति देने का आदेश दिये जाने पर, या जुर्माने देने में व्यतिक्रम की स्थिति में कारावास के निदेश को दण्डादेश में सम्मिलित किये जाने पर, अथवा उस मामले में जुर्माने का एक से अधिक दण्डादेश दिया गया है, यदि अधिरोपित जुर्माने की कुल धनराशि उस मामले के लिए इसमें इसके पूर्व विनिर्दिष्ट धनराशि से अधिक नहीं है, तो मात्र उपरोक्त आधारों पर ही दण्डादेश अपीलनीय नहीं होगा। (धारा 376)।

राज्य सरकार द्वारा दण्डादेश के विरुद्ध अपील–राज्य सरकार, उच्च न्यायालय से भिन्न किसी न्यायालय द्वारा किए गए विचारण में दोषसिद्धि के किसी मामले में लोक अभियोजक को दण्डादेश की अपर्याप्तता के आधार पर उसके विरुद्ध दण्डादेश मजिस्ट्रेट द्वारा पारित किये जाने की स्थिति में सेशन न्यायालय में तथा किसी अन्य न्यायालय द्वारा दण्डादेश पारित किये जाने पर उच्च न्यायालय में अपील करने का निदेश दे सकती है, दण्डादेश की अपर्याप्तता के आधार पर प्रस्तुत अपील में अभियुक्त को दण्डादेश में वृद्धि के विरुद्ध कारण दर्शित करने का युक्तियुक्त अवसर दिये बिना सेशन न्यायालय या उच्च न्यायालय दण्डादेश में वृद्धि नहीं करेगा तथा अभियुक्त दण्डादेश में वृद्धि के विरुद्ध कारण दर्शित करते समय दोषमुक्ति या दण्डादेश में कमी करने के लिए अभिवचन कर सकता है। (धारा 377)।

धारा 377 उपधारा 4- जब भा.दं.सं. की धारा 376, धारा 376 क, धारा 376 कख, धारा 376 ख, धारा 376 ग, धारा 376 घ, धारा 376 घक, धारा 376 घख या धारा 376 ङ के अधीन पारित किसी दण्डादेश के विरूद्ध अपील फाइल की गई है, तो अपील का निपटारा, ऐसी अपील फाइल किए जाने की तारीख से छः मास की अवधि के भीतर किया जाएगा।

दोषमुक्ति की दशा में अपील–वर्ष 2008 के संशोधन के बाद किसी संज्ञेय तथा अजमानतीय अपराध के लिए किसी मजिस्ट्रेट द्वारा पारित दोषमुक्ति के आदेश से सेशन न्यायालय में अपील उपस्थित करने का निदेश जिला मजिस्ट्रेट, लोक अभियोजक को दे सकेगा। [धारा 378 (1) (a)]।

दण्ड प्रक्रिया संशोधन अधिनियम, 2005 द्वारा राज्य सरकार में निहित अपील उपस्थित करने का निदेश देने की शक्ति जिला मजिस्ट्रेट को दी गयी है तथा किसी मजिस्ट्रेट द्वारा पारित दोषमुक्ति के आदेश से सेशन न्यायालय में अपील का उपबन्ध किया गया है। संशोधन से पूर्व उच्च न्यायालय से भिन्न किसी न्यायालय द्वारा दिये गये दोषमुक्ति की अपील उच्च न्यायालय में किये जाने का प्रावधान था। राज्य सरकार किसी मामले में लोक अभियोजक को उच्च न्यायालय से भिन्न किसी न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति के मूल या अपीली आदेश से जो किसी संज्ञेय एवं अजमानतीय अपराध के सन्दर्भ में किसी मजिस्ट्रेट द्वारा पारित दोषमुक्ति का आदेश नहीं है या पुनरीक्षण में सेशन न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति के आदेश से उच्च न्यायालय में अपील उपस्थित करने का निदेश दे सकती है। [धारा 378 (1) (b)]। उपधारा (2) के अनुसार ऐसा ही उपबन्ध केन्द्र सरकार भी कर सकती है।

दोषमुक्ति के विरुद्ध उच्च न्यायालय में की गयी अपील, उच्च न्यायालय की अनुमति के बिना ग्रहण नहीं की जायेगी। [धारा 378 (3)]।

यदि दोषमुक्ति का ऐसा आदेश परिवाद पर संस्थित किसी मामले में पारित किया गया है और उच्च न्यायालय, परिवादी द्वारा उससे इस निमित्त आवेदन किए जाने पर दोषमुक्ति के आदेश के अपील करने की विशेष इजाजत देता है तो परिवादी ऐसी अपील उच्च न्यायालय में उपस्थित कर सकता है। [धारा 378 (4)]।

दोषमुक्ति के आदेश से अपील करने की परिवादी को विशेष इजाजत दिए जाने के लिए कोई आवेदन उच्च न्यायालय द्वारा, उस दशा में जिससे परिवादी लोक सेवक है, उस दोषमुक्ति के आदेश की तारीख से संगणित, छह मास की समाप्ति के पश्चात् एवं प्रत्येक अन्य दशा में ऐसे संगणित साठ दिन की समाप्ति के पश्चात् ग्रहण नहीं किया जाएगा। [धारा 378 (5)]।

यदि उच्च न्यायालय में अभियुक्त व्यक्ति की दोषमुक्ति के आदेश को अपील में उलट दिया है और उसे दोषसिद्ध किया है तथा उसे मृत्यु या आजीवन कारावास या दस वर्ष अथवा अधिक की अवधि के कारावास का दण्ड दिया है तो वह उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकता है। [धारा 379]।

धारा 380 के अनुसार जब एक से अधिक व्यक्ति एक ही विचारण में दोषसिद्ध किए जाते हैं, और ऐसे व्यक्तियों में से किसी के बारे में अपीलनीय निर्णय या आदेश पारित किया गया है तब ऐसे विचारण में दोषसिद्ध किए गए सब व्यक्तियों को या उनमें से किसी को भी अपील का अधिकार होगा।

सेशन न्यायालय में या सेशन न्यायाधीश को की गई अपील सेशन न्यायालय या अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा सुनी जाएगी। परन्तु द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा किए गए विचारण में दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील सहायक सेशन न्यायाधीश या मुख्य धारा 381 (1) न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा सुनी जा सकेगी और निपटायी जा सकेगी।

अपर सेशन न्यायाधीश, सहायक सेशन न्यायाधीश या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, केवल ऐसी अपीलें सुनेगा जिन्हें खण्ड का सेशन न्यायाधीश, साधारण या विशेष आदेश द्वारा, उसके हवाले करे या जिन्हें सुनने के लिए उच्च न्यायालय, विशेष आदेश द्वारा, उसे निदेश दे। [धारा 381 (2)]।

अपील आवेदन–अपील की अर्जी लिखित रूप में स्वयं अपीलार्थी या अपने अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत कर सकता है। (धारा 382)। यदि अपीलार्थी जेल में है तो वह अपनी अपील की अर्जी और उसके साथ वाली प्रतिलिपियों को जेल के भारसाधक अधिकारी को दे सकता है, जो तब ऐसी अर्जी और प्रतिलिपियाँ समुचित अपील न्यायालय को भेजेगा। (धारा 383)।

अपील न्यायालय की शक्तियां–ऐसे अभिलेख के परिशीलन, और यदि अपीलार्थी या उसका प्लीडर हाजिर है तथा यदि लोक अभियोजक हाजिर है तो उसे और धारा 377 या धारा 378 के अधीन अपील की दशा में यदि अभियुक्त हाजिर है तो उसे सुनने के पश्चात् अपील न्यायालय उस दशा में जिसमें उसका यह विचार है कि हस्तक्षेप करने का पर्याप्त आधार नहीं है अपील को खारिज कर सकता है, अथवा–

(क) दोषमुक्ति के आदेश से अपील में ऐसे आदेश को उलट सकता है और निदेश दे सकता है कि अतिरिक्त जांच की जाए अथवा अभियुक्त, यथास्थिति, पुनः विचारित किया जाए, विचारार्थ सुपुर्द किया जाए, अथवा उसे दोषी ठहरा सकता है और उसे विधि के अनुसार दण्डादेश दे सकता है;

(ख) दोषसिद्धि से अपील में–

(i) निष्कर्ष और दण्डादेश को उलट सकता है और अभियुक्त को दोषमुक्त या उन्मोचित कर सकता है या ऐसे अपील न्यायालय के अधीनस्थ सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा उसके पुनः विचारित किए जाने का या विचारणार्थ सुपुर्द किए जाने का आदेश दे सकता है, अथवा

(ii) दण्डादेश को कायम रखते हुए निष्कर्ष परिवर्तित कर सकता है, अथवा

(iii) निष्कर्ष में परिवर्तन करके या किए बिना दण्ड के स्वरूप या परिमाण में अथवा स्वरूप और परिमाण में परिवर्तन कर सकता है किन्तु इस प्रकार नहीं कि उससे दण्ड में वृद्धि को जाए;

(ग) दण्डादेश की वृद्धि के लिए अपील में,–

(i) निष्कर्ष और दण्डादेश को उलट सकता है और अभियुक्त को दोषमुक्त या उन्मोचित कर सकता है या ऐसे अपराध का विचारण करने के लिए सक्षम न्यायालय द्वारा उसका पुनर्विचारण करने का आदेश दे सकता है, या

(ii) दण्डादेश को कायम रखते हुए निष्कर्ष में परिवर्तन कर सकता है, अथवा

(iii) निष्कर्ष में परिवर्तन करके या किए बिना, दण्ड के स्वरूप या परिमाण में अथवा स्वरूप और परिमाण में परिवर्तन कर सकता है जिससे उसमें वृद्धि या कमी हो जाए;

(घ) किसी अन्य आदेश से अपील में ऐसे आदेश को परिवर्तित कर सकता है या उलट सकता है;

(ङ) कोई संशोधन या कोई पारिणामिक या आनुषंगिक आदेश, जो न्यायसंगत या उचित हो, कर सकता है;

परन्तु दण्ड में तब तक वृद्धि नहीं की जाएगी जब तक अभियुक्त को ऐसी वृद्धि के विरुद्ध कारण दर्शित करने का अवसर न मिल चुका हो;

धारा 377 (3) भी अभियुक्त को दण्डादेश में वृद्धि के विरुद्ध कारण दर्शित करने का युक्तियुक्त अवसर दिये बिना, सेशन तथा उच्च न्यायालय द्वारा दण्ड में वृद्धि किये जाने का निषेध करती है।

परन्तु यह और कि अपील न्यायालय उस अपराध के लिए, जिसे उसकी राय में अभियुक्त ने किया है उससे अधिक दण्ड नहीं देगा, जो अपीलाधीन आदेश या दण्डादेश पारित करने वाले न्यायालय द्वारा ऐसे अपराध के लिए दिया जा सकता था। (धारा 386)।

अपील लम्बित रहने तक दण्डादेश का निलम्बन–अपीलार्थी का जमानत पर छोड़ा जाना–अपील न्यायालय आदेश दे सकता है कि उस दण्डादेश या आदेश का निष्पादन जिसके अपील की गई है, दोषसिद्ध व्यक्ति द्वारा की गई अपील के लम्बित रहने तक निलम्बित किया जाए और यदि वह व्यक्ति परिरोध में है तो यह भी आदेश दे सकता है कि उसे जमानत पर या उसके अपने बन्धपत्र पर छोड़ दिया जाए। (धारा 389 (1))।

परन्तु मृत्यु या आजीवन कारावास अथवा दस वर्ष के कारावास की अवधि से दण्डनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध व्यक्ति को जमानत या उसके अपने बन्धपत्र पर छोड़ने के पूर्व, अपील न्यायालय,

लोक अभियोजक को, ऐसे छोड़ने के विरुद्ध लिखित कारण दर्शाने का अवसर देगा।

परन्तु यह और कि दोषसिद्ध व्यक्ति को जमानत पर छोड़े जाने के मामलों में, लोक अभियोजक जमानत रद्द किये जाने के लिए आवेदन दाखिल (File) कर सकेगा। (उपरोक्त दोनों परन्तुक दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 द्वारा जोड़े गये हैं)।

उपधारा (3) के अनुसार जहां दोषसिद्ध व्यक्ति ऐसे न्यायालय का जिसके द्वारा वह दोषसिद्ध किया गया है यह समाधान कर देता है कि वह अपील प्रस्तुत करना चाहता है वहां वह न्यायालय–

(i) उस दशा में जब ऐसा व्यक्ति, जमानत पर होते हुए, तीन वर्ष से अधिक की अवधि के लिए कारावास से दण्डादिष्ट किया गया है, या

(ii) उस दशा में जब वह अपराध, जिसके लिए ऐसा व्यक्ति दोषसिद्ध किया गया है, जमानतीय है और वह जमानत पर है,

यह आदेश देगा कि दोषसिद्ध व्यक्ति को इतनी अवधि के लिए जितनी से अपील प्रस्तुत करने और अपील न्यायालय के आदेश प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय मिल जाएगा जमानत पर छोड़ दिया जाए जब तक कि जमानत से इंकार करने के विशेष कारण न हों, और जब तक वह ऐसे जमानत पर छूटा रहता है तब तक कारावास का दण्डादेश निलम्बित समझा जाएगा।

जब अन्ततोगत्वा अपीलार्थी को किसी अवधि के कारावास या आजीवन कारावास का दण्डादेश दिया जाता है, तब वह समय, जिसके दौरान वह ऐसे छूटा रहता है, उस अवधि की संगणना करने में, जिसके लिए उसे ऐसा दण्डादेश दिया गया है, हिसाब में नहीं लिया जाएगा। (धारा 389 (4))।

अपील न्यायालय अपील के लम्बित रहने के दौरान उसकी गिरफ्तारी का आदेश दे सकता है। (धारा 390)। किसी अपील पर विचार करने में अपील न्यायालय अतिरिक्त साक्ष्य आवश्यक समझने पर ऐसा साक्ष्य या तो स्वयं ले सकता है या मजिस्ट्रेट द्वारा, या जब अपील न्यायालय उच्च न्यायालय है तब सेशन न्यायालय या मजिस्ट्रेट द्वारा, लिए जाने का निदेश दे सकता है। (धारा 391 (1))।

अभियुक्त या उसके प्लीडर को उस समय उपस्थित होने का अधिकार होगा जब अतिरिक्त साक्ष्य लिया जाता है। (धारा 390(3))।

धारा 392 के अनुसार जब अपील उच्च न्यायालय द्वारा उसके न्यायाधीशों के न्यायपीठ के समक्ष सुनी जाती है और वे राय में समान रूप से विभाजित है तब अपील उनकी रायों के सहित उसी न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश के समक्ष रखी जाएगी और ऐसा न्यायाधीश, ऐसी सुनवाई के पश्चात् जैसी वह ठीक समझे, अपनी राय देगा और निर्णय या आदेश ऐसी राय के अनुसार होगा।

यदि न्यायपीठ गठित करने वाले न्यायाधीशों में से कोई एक न्यायाधीश या जहां अपील इस धारा के अधीन किसी अन्य न्यायाधीश के समक्ष रखी जाती है वहां वह न्यायाधीश अपेक्षा करे तो अपील न्यायाधीशों के वृहत्तर न्यायपीठ द्वारा पुनः सुनी जाएगी और विनिश्चित की जाएगी।

अपीलों का उपशमन–धारा 377 या धारा 378 के अधीन प्रत्येक अन्य अपील का अभियुक्त की मृत्यु पर अन्तिम रूप से उपशमन हो जाएगा। (धारा 394 (1))।

जुर्माना के दण्डादेश की अपील से सिवाय प्रत्येक अन्य अपील का अपीलार्थी की मृत्यु पर अन्तिम रूप से उपशमन हो जाएगा। (धारा 394 (2))।

परन्तु जहां अपील, दोषसिद्ध और मृत्यु के या कारावास के दण्डादेश के विरुद्ध है और अपील के लम्बित रहने के दौरान अपीलार्थी की मृत्यु हो जाती है, वहां उसका कोई भी निकट नातेदार, अपीलार्थी की मृत्यु के तीस दिन के अन्दर अपील जारी रखने की इजाजत के लिए अपील न्यायालय में आवेदन कर सकता है, और यदि इजाजत दे दी जाती है तो अपील का उपशमन न होगा। स्पष्टीकरण– के अनुसार ''निकट नातेदार'' से माता-पिता, पिता या पत्नी, पारम्परिक वंशज, भाई या बहिन अभिप्रेरत है।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अन्तर्गत सत्र न्यायाधीश अपनी अपीलीय शक्तियों का प्रयोग करता है?

A. धारा 373।

Q. सत्र न्यायालय दोषसिद्धि के विरुद्ध अपीलीय शक्ति का प्रयोग दण्ड प्रक्रिया संहिता के किस धारा के अन्तर्गत करता है?

A. धारा 374।

Q. (निम्न) किस मामले में दोषसिद्ध व्यक्ति के द्वारा कोई अपील नहीं होगी?

A. जहां उच्च न्यायालय केवल 6 मास से अनधिक की अवधि के कारावास का दण्डादेश पारित करता है। (धारा 376)।

Q. जहां प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट केवल कितने जुर्माने का दण्डादेश देता है, जिसके विरुद्ध दोषसिद्ध व्यक्ति अपील नहीं कर सकता है?

A. एक सौ रुपये। धारा 376(ग)।

Q. 'अ' एवं 'ब' का एक साथ विचारण किया जाता है जिसमें अ को जो सजा दी जाती है वह अपील योग्य नहीं है, किन्तु 'ब'

की सजा अपील योग्य है। क्या 'अ' अपनी सजा के विरुद्ध अपील कर सकता है?

A. हां। (धारा 380)।

Q. विचारण न्यायालय अभियुक्त को दण्डित करने के उपरान्त उसे दं.प्र.सं. की धारा 389 (3)के अन्तर्गत कब जमानत पर रिहा कर सकता है?

A. जब अभियुक्त जमानत है और उसे तीन वर्ष से अनधिक की सजा दी गयी है।

Q. यदि किसी दाण्डिक अपील में अपीलार्थी की मृत्यु हो जाती है एवं उसके नजदीकी रिश्तेदार अपील को जारी रखना चाहते हैं तो उन्हें कितनी अवधि के भीतर आवेदन करना चाहिए?

A. तीस दिन। (धारा 394 (2) परन्तुक)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की किन धाराओं में अपील से सम्बन्धित उपबन्ध हैं?

A. धारा 372 से 394 तक में।

Q. ''अपील'' क्या है?

A. 'अपील' एक परिवाद है, जो किसी छोटे न्यायालय द्वारा किये गये अन्याय अथवा गलती के विरुद्ध किसी बड़े न्यायालय में किया गया है और जिसके माध्यम से यह निवेदन किया गया है कि वह न्यायालय ऐसे छोटे न्यायालय के निर्णय अथवा विनिश्चय को ठीक कर दे अथवा उलट दे।

Q. संहिता की धारा 372 कौन-सा सामान्य सिद्धान्त प्रतिपादित करती है?

A. यह कि दण्ड न्यायालय के किसी निर्णय या आदेश से कोई अपील, इस संहिता द्वारा या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा जैसा उपबन्धित है उसके सिवाय न होगी।

Q. किस प्रकरण में यह कहा गया है कि–''मस्तिष्क में यह बात सदैव रख लेनी चाहिए कि अपील केवल कानून द्वारा ही सृष्ट होती है और अपील के सहज अधिकार जैसी कोई बात नहीं हैं?

A. अकालू अहीर बनाम रामदेव राम, ए.आई.आर. 1973 सु.को. के वाद में।

Q. कोई व्यक्ति जिसे परिशान्ति कायम रखने या सदाचार के लिए प्रतिभूति देने के लिए धारा 117 के अधीन आदेश दिया गया है अथवा जो धारा 121 के अधीन प्रतिभूति स्वीकार करने से इंकार करने या उसे अस्वीकार करने वाले किसी आदेश से व्यथित है, ऐसे आदेश के विरुद्ध कहां अपील कर सकता है?

A. सेशन न्यायालय में। (धारा 373)।

Q. संहिता की कौन-सी धारा दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील का उपबन्ध करती है?

A. धारा 374।

Q. कोई व्यक्ति, जो महानगर मजिस्ट्रेट या सहायक सेशन न्यायाधीश, या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट या द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा किये गये विचारण में दोषसिद्ध किया गया है, इस दोषसिद्धि के विरुद्ध कहां अपील कर सकता है?

A. सेशन न्यायालय में (धारा 374 (3))।

Q. यदि अभियुक्त के दोषी होने के अभिवचन पर उसे उच्च न्यायालय ने दोषसिद्ध किया है तो उसके विरुद्ध अपील कहां होगी?

A. ऐसे में धारा 375 (क) के अनुसार कोई अपील नहीं होगी।

Q. किस वाद में यह निर्धारित किया गया कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित दण्डादेश की अवधि का उस अवधि से कम होना जो कि अभियुक्त ने विचाराधीन कैदी के रूप में पहले ही बिता दिया है। ऐसी स्थिति में अपील में चाहे भले ही अपीलकर्त्ता कारावास नहीं भोगता है, तथापि वह अपनी दोषसिद्धि को चुनौती दे सकता है?

A. रेवतीदीन बन्धु बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य (1977) एस.सी.सी.।

Q. किसी वाद में दोषसिद्धि के विरुद्ध की गयी अपील में उच्चतम न्यायालय को प्रतिरक्षा पक्ष का संकथन वस्तुनिष्ठ साक्ष्य पर आधारित और अधिक सम्भाव लगा?

A. बूटा सिंह बनाम पंजाब राज्य (1991) 2 एस.सी.सी. 612

Q. यदि अभियुक्त ने दोषी होने का अभिवचन किया है, और उस अभिवचन पर दोषसिद्धि सेशन न्यायालय, महानगर मजिस्ट्रेट, या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट या द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा की गयी है, तो क्या अपील हो सकेगी?

A. हां! ऐसे में अपील केवल दण्ड के परिमाण या उसकी वैधता के बारे में ही हो सकेगी। (धारा 375 (ख))।

Q. संहिता की कौन-सी धारा यह उपबन्धित करती है कि छोटे मामलों में अपील नहीं होगी?

A. धारा 376।

Q. किसी छोटे मामले में उच्च न्यायालय द्वारा पारित कितने दण्डादेश के विरुद्ध कोई दोषसिद्ध व्यक्ति कोई अपील नहीं कर सकेगा?

A. जहां उच्च न्यायालय केवल 6 मास से अनधिक की अवधि के कारावास का या 1000 रु. से अनधिक जुर्माने का अथवा ऐसे कारावास और जुर्माने दोनों का दण्डादेश पारित करता है। (धारा 376 (क))।

Q. कौन-सा न्यायालय केवल 3 मास से अनधिक अवधि के कारावास या 200 रु. से अनधिक जुर्माने का अथवा ऐसे कारावास और जुर्माने दोनों का दण्डादेश पारित करे, तो कोई अपील नहीं होगी?

A. सेशन न्यायालय या महानगर मजिस्ट्रेट (धारा 376 (ख))।

Q. यदि संक्षेपतः विचारित किसी मामले में, धारा 260 के अधीन कार्य करने के लिए सशक्त मजिस्ट्रेट केवल 200 रु. से अनधिक जुर्माने का दण्डादेश पारित करता है, तो अपील कहां होगी?

A. ऐसे मामले में दोषसिद्ध व्यक्ति द्वारा कोई अपील न होगी। (धारा 376 (घ))।

Q. कब संहिता की धारा 376 में पारित दण्डादेश के विरुद्ध अपील हो सकेगी?

A. जबकि ऐसे दण्डादेश के साथ कोई अन्य दण्ड मिला दिया गया है।

Q. दण्डादेश के विरुद्ध अपर्याप्तता के आधार पर की गयी अपील में उच्च न्यायालय दण्डादेश में वृद्धि करने से पहले क्या करेगा?

A. दण्डादेश में वृद्धि करने से पहले अभियुक्त को ऐसी वृद्धि के विरुद्ध कारण दर्शित करने का युक्ति-युक्त अवसर देगा॥

Q. संहिता की धारा 378 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. इस धारा में राज्य सरकार द्वारा दोषमुक्ति की दशा में अपील की व्यवस्था की गयी है?

Q. संहिता की धारा 378 (1) एवं (2) की दशा में अपील किसकी इजाजत से ही ग्रहण की जायेगी?

A. उच्च न्यायालय की इजाजत से ही। (धारा 378 (3))।

Q. परिवादी दोषमुक्ति की दशा में अपील उच्च न्यायालय में कब उपस्थित कर सकता है?

A. जब दोषमुक्ति का ऐसा आदेश परिवाद पर संस्थित किसी मामले में पारित किया गया हो और उच्च न्यायालय परिवादी द्वारा उससे इस निमित्त आवेदन किये जाने पर, दोषमुक्ति के आदेश की अपील करने की विशेष इजाजत देता है, तो परिवादी ऐसी अपील उच्च न्यायालय में प्रस्तुत कर सकता है। (धारा 378 (4))॥

Q. दोषमुक्ति के आदेश से अपील करने की विशेष इजाजत दिये जाने के लिए कोई आवेदन, परिवादी के लोक सेवक होने की स्थिति में, दोषमुक्ति के आदेश की तारीख से कितनी अवधि के भीतर उच्च न्यायालय द्वारा ग्रहण किया जायेगा?

A. दोषमुक्ति के आदेश की तारीख से 6 मास के भीतर (धारा 378 (5))॥

Q. यदि परिवादी लोक सेवक नहीं है तो दोषमुक्ति के आदेश से अपील करने की विशेष इजाजत देने के लिए परिसीमा काल कितना है?

A. 60 दिन। (धारा 378 (5))।

Q. किस वाद में यह निर्धारित किया गया कि यदि राज्य किसी दोषमुक्ति के आदेश को राज्य द्वारा फाइल किये गये पुनर्विलोकन के आवेदन आधार पर अपास्त नहीं करना चाहिये क्योंकि इससे एक अन्य दृष्टिकोण सम्भव था?

A. मु. सुरजी बनाम हरियाणा राज्य, नि.प. 1983 पंजाब हरियाणा 20।

Q. किस मामले में उच्च न्यायालय द्वारा यह निर्धारित किया गया है कि दोषमुक्ति के विरुद्ध की गई अपील दोषसिद्धि के विरुद्ध की गई अपील दोषसिद्धि के विरुद्ध की गई अपील से भिन्न नहीं होती इस तरह के मामले में अभियुक्त की निर्दोषिता की परिकल्पना ही विद्यमान रहती है?

A. राज्य बनाम लक्ष्मण कुमार (1985) 4 एस.सी.सी. 476

Q. किस प्रकरण में यह कहा गया कि जहां पर अभिलेख पर साक्ष्य से दो युक्ति-युक्त निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं वहां पर उच्च न्यायालय को न्यायिक सतर्कता के रूप में निचले न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषमुक्ति के आदेश में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, किन्तु जहां सेशन न्यायाधीश का निर्णय पूर्णतः प्रतिकूल, विधिक रूप से त्रुटियुक्त और गलत धारणा पर आधारित हो, वहां उसके निर्णय में हस्तक्षेप किया जा सकेगा और अभियुक्त को दोषसिद्ध ठहराया जा सकेगा?

A. गणेश भक्त पटेल बनाम महाराष्ट्र राज्य, 1979 के प्रकरण में।

Q. कुछ मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किये जाने के विरुद्ध अपील उच्चतम न्यायालय में कब की जा सकेगी?

A. जब उच्च न्यायालय ने अभियुक्त व्यक्ति की दोषमुक्ति के आदेश को अपील में उलट दिया है और उसे दोषसिद्ध किया है तथा उसे मृत्यु या आजीवन कारावास या 10 वर्ष अथवा अधिक की अवधि के कारावास का दण्ड दिया है। (धारा 379)॥

Q. जब एक से अधिक व्यक्ति एक ही विचारण में दोषसिद्ध किये जाते हैं और ऐसे व्यक्तियों में से किसी के बारे में अपीलीय निर्णय या आदेश पारित किया गया है, तो अन्य व्यक्तियों के बारे में क्या विधि है?

A. ऐसी स्थिति में ऐसे विचारण में दोषसिद्ध किये गये सब व्यक्तियों को या उनमें से किसी को भी अपील का अधिकार होगा। (धारा 380)।

Q. द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा किये गये विचारण में दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील किसके द्वारा सुना और निपटाया जा सकेगा?

A. सहायक सेशन न्यायाधीश या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा। (धारा 381 (1) का परन्तुक)।

Q. अपर सेशन न्यायाधीश, सहायक सेशन न्यायाधीश, या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट कौन सी अपीलें सुनेंगे?

A. ये केवल ऐसी अपीलें सुन सकेंगे जिन्हें खण्ड का सेशन न्यायाधीश साधारण या विशेष आदेश द्वारा उसे निदेश दे या जैसा उच्च न्यायालय विशेष आदेश द्वारा उसे निदेश दे। (धारा 381(2))।

Q. अपील की अर्जी किसके द्वारा और किस रूप में प्रस्तुत की जायेगी?

A. प्रत्येक अपील अपीलार्थी या उसके प्लीडर द्वारा लिखित अर्जी के रूप में उपस्थित की जायेगी। और ऐसी प्रत्येक अर्जी के साथ उस निर्णय या आदेश की प्रतिलिपि होगी जिसके विरुद्ध अपील की जा रही है। (धारा 382)।

Q. अपीलार्थी के जेल में होने की स्थिति में अपील कैसे की जा सकेगी?

A. वह अपने अपील की अर्जी एवं समुचित प्रतिलिपियाँ जेल के भारसाधक अधिकारी को दे सकता है और तब वह ऐसी अर्जी एवं प्रतिलिपियाँ समुचित अपील न्यायालय को भेजेगा। (धारा 383)।

Q. अपील न्यायालय अपील को कब संक्षेपतः खारिज कर सकता है?

A. अपील की अर्जी एवं निर्णय की प्रतिलिपि इत्यादि पर विचारोपरान्त जब अपीलीय न्यायालय का यह विचार है कि हस्तक्षेप करने का कोई पर्याप्त आधार नहीं है। (धारा 384)।

Q. धारा 383 के अधीन कोई अपील उसके समर्थन में अपीलार्थी को सुनवाई का उचित अवसर दिये बिना कब खारिज की जा सकेगी?

A. जब अपील न्यायालय का यह विचार हो कि अपील तुच्छ है या न्यायालय के समक्ष अभियुक्त को अभिरक्षा में पेश करने से मामले की परिस्थितियों के अनुपात में कहीं अधिक असुविधा होगी। (धारा 384 (1) का परन्तुक (ख)।

Q. धारा 383 के अधीन उपस्थित की गयी कोई अपील कब तक संक्षेपतः खारिज नहीं की जायेगी?

A. जब तक ऐसी अपील करने के लिए अनुज्ञात अवधि का अवसान न हो चुका हो। (धारा 384 (1) परन्तुक (सी)।

Q. संहिता की धारा 384 के अधीन अपील को संक्षेपतः खारिज करने वाले कौन से अपील न्यायालय ऐसा करने के अपने कारणों को अभिलिखित करेंगे?

A. सेशन न्यायालय या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट। (धारा 384 (3))।

Q. जब अपील को संक्षेपतः खारिज नहीं किया गया है और उसको स्वीकार कर लिया गया है तो क्या प्रक्रिया अपनायी जायेगी?

A. इस तरह की स्थिति में अपील न्यायालय उस समय और स्थान की जब और जहां अपील सुनी जायेगी, सूचना–

(i) अपीलार्थी या उसके प्लीडर को,

(ii) ऐसे अधिकारी को जिसे राज्य सरकार इस हेतु नियुक्त करे,

(iii) यदि परिवाद पर संस्थित मामले में दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील की गयी है तो परिवादी को,

(iv) दण्ड की अपर्याप्तता या दोषमुक्ति के विरुद्ध की गयी है तो अभियुक्त को, दिलवायेगा और ऐसे अधिकारी परिवादी और अभियुक्त को अपील के आधारों की प्रतिलिपि देगा। (धारा 385)।

Q. किस मामले में अपराध एक राज्य में किया गया किन्तु मामले को एक दूसरे राज्य के न्यायालय में अन्तरित कर दिया गया था?

A. हनुमन्त दास बनाम विनय कुमार (1982) एस.सी.सी. 177

Q. कब अपील न्यायालय अभिलेख मंगाये बिना ही अपील का निपटारा कर सकता है?

A. जब अपील केवल दण्ड के परिमाण या उसकी वैधता के बारे में है।

Q. जहां दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील का आधार केवल दण्डादेश की कठोरता है, वहां अपीलार्थी के लिए क्या प्रतिबन्ध है?

A. ऐसी स्थिति में अपीलार्थी अन्य किसी आधार के समर्थन में न तो कहेगा और न ही उसे उसके समर्थन में सुना जायेगा, किन्तु वह न्यायालय की इजाजत से ऐसा कर सकता है।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत अपील न्यायालय की शक्तियों के विषय में उपबन्ध किये गये हैं?

A. धारा 386 में।

Q. दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध अपील में अपील न्यायालय की शक्तियाँ क्या हैं?

A. ऐसी अपील में न्यायालय–

(क) आदेश को उलट सकता है और निदेश दे सकता है कि अतिरिक्त जांच की जाये अथवा अभियुक्त यथास्थिति पुनः

विचारित किया जाय या विचारार्थ सुपुर्द किया जाये, अथवा (ख) उसे दोषी ठहराकर विधि अनुसार दण्डादेश दे सकता है। (धारा 386 (क))।

Q. दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील में अपील न्यायालय क्या कर सकता है?

A. इस तरह की अपील में अपील न्यायालय–

(i) निष्कर्ष और दण्डादेश को उलट सकता है और अभियुक्त को दोषमुक्त या उन्मोचित कर सकता है या अपने मातहत् के सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा उसके पुनः विचारित किये जाने या विचारणार्थ सुपुर्द किये जाने का आदेश दे सकता है, अथवा

(ii) दण्डादेश को कायम रखते हुए निष्कर्ष में परिवर्तन कर सकता है, अथवा

(iii) निष्कर्ष में परिवर्तन करके या किये बिना दण्ड के स्वरूप या परिमाण में अथवा स्वरूप और परिमाण में परिवर्तन कर सकता है। (धारा 386 (ख))।

Q. क्या अपील न्यायालय दण्डादेश के स्वरूप में या परिमाण में परिवर्तन करते समय दण्ड में वृद्धि कर सकता है?

A. नहीं (धारा 386 (ख) (iii))।

Q. किस मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिमत व्यक्त किया था कि दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील होने पर साबित तथ्यों के आधार पर अपील न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप विधिमान्य है?

A. सोने लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1979) उम.नि.प. 347।

Q. किस प्रकरण में यह कहा गया है कि 'दोषसिद्धि' के पश्चात् किसी प्रकार की निरर्हता का अधिरोपित किया जाना 'दण्डादेश' की अभिव्यक्ति के अन्तर्गत आता है, परन्तु यदि अपील न्यायालय अपनी ओर से निरर्हता को जोड़ता है तो वह दण्ड में वृद्धि माना जायेगा?

A. मुहम्मद साबिर बनाम महाराष्ट्र राज्य, 1979 के प्रकरण में।

Q. दण्डादेश की वृद्धि के लिए अपील में अपील न्यायालय क्या कर सकता है?

A. ऐसी अपील में अपील न्यायालय–

(i) निष्कर्ष और दण्डादेश को उलट सकता है और अभियुक्त को दोषमुक्त या उन्मोचित कर सकता है या ऐसे अपराध का विचारण करने के लिए सक्षम न्यायालय द्वारा उसका पुनर्विचार करने आदेश दे सकता है, या

(ii) दण्डादेश को कायम रखते हुए निष्कर्ष में परिवर्तन कर सकता है, या

(iii) निष्कर्ष में परिवर्तन करके या किये बिना दण्ड के स्वरूप या परिमाण में अथवा स्वरूप और परिमाण में परिवर्तन कर सकता है जिससे उसमें कमी या वृद्धि हो जाये।

Q. अन्तर सिंह बनाम स्टेट ऑफ मध्य प्रदेश, ए.आई.आर. 1979 सु.को. के वाद में क्या निर्णय दिया गया?

A. इस वाद में यह कहा गया कि ''जहां किसी मामले में साक्ष्य के बारे में दो युक्तियुक्त दृष्टिकोण सम्भाव्य हो, और विचारण न्यायालय ने उनमें से एक को, जो अभियुक्त के पक्ष में है, चुना हो, वहां उच्च न्यायालय को मात्र इस आधार पर हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए कि यदि वह विचारण न्यायालय होता तो उनमें से दूसरे दृष्टिकोण को चुनकर अभियुक्त को दोषसिद्ध करता''।

Q. जब कभी अपील में कोई मामला उच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाता है तब वह अपना निर्णय या आदेश प्रमाणित करके किस न्यायालय को भेजेगा?

A. उस न्यायालय को जिसके द्वारा यह निष्कर्ष दण्डादेश, या आदेश, जिसके विरुद्ध अपील की गयी थी, अभिलिखित किया गया या पारित किया गया था और यदि ऐसा न्यायालय मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट से भिन्न मजिस्ट्रेट का है तो उच्च न्यायालय का निर्णय या आदेश मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट की मार्फत भेजा जायेगा। (धारा 388 (1))।

Q. संहिता की किस धारा में यह उपबन्धित है कि अपील लम्बित रहने तक दण्डादेश निलम्बित रखा जाय और अपीलार्थी की जमानत पर छोड़ दिया जाय?

A. धारा 389 में।

Q. संहिता की धारा 389 में जब तक दोषसिद्ध व्यक्ति जमानत पर छूटा रहता है, क्या समझा जायेगा?

A. तब तक कारावास का दण्डादेश निलम्बित समझा जायेगा।

Q. संहिता की धारा 390 का क्या उद्देश्य है?

A. इस धारा का उद्देश्य दोषमुक्ति के विरुद्ध की गयी अपील में अभियुक्त की गिरफ्तारी का उपबन्ध प्रस्तुत करना है।

Q. जब संहिता की धारा 378 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष अपील उपस्थित की जाती है तब वह वारण्ट जारी करके उसमें क्या निदेश दे सकता है?

A. उसमें यह निदेश होगा कि–

(i) अभियुक्त गिरफ्तार किया जाये, और

(ii) उसके या किसी अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष लाया जाय।

Q. अपील न्यायालय की अतिरिक्त साक्ष्य ले सकने की या उसके लिए निदेश दे सकने की शक्ति संहिता की किस धारा में दी गयी है?

A. धारा 391 में।

Q. किसी अपील पर विचार करने में यदि अपील न्यायालय अतिरिक्त साक्ष्य आवश्यक समझता है, तो वह क्या करेगा?

A. ऐसे में वह–

(1) अपने कारणों को अभिलिखित करेगा, और

(2) ऐसा साक्ष्य या तो स्वयं ले सकता है, या मजिस्ट्रेट द्वारा या

(3) जब अपील न्यायालय उच्च न्यायालय है, तब सेशन न्यायालय या मजिस्ट्रेट द्वारा लिये जाने का निदेश दे सकता है। (धारा 391)।

Q. जहां अपील न्यायालय के न्यायाधीश राय के बारे में समान रूप में विभाजित हो, वहां क्या प्रक्रिया अपनायी जायेगी?

A. ऐसी स्थिति में अपील उनकी रायों के सहित उसी न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश के समक्ष रखी जायेगी और ऐसा न्यायाधीश ऐसी सुनवाई के पश्चात् जैसा वह ठीक समझे, अपनी राय देगा और निर्णय या आदेश ऐसी राय के अनुसार होगा। (धारा 392)।

Q. किसी धारा में अपील पर आदेशों और निर्णयों का अन्तिम होना उल्लिखित है?

A. धारा 393 में।

Q. किसी मामले में दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील का अन्तिम निपटारा हो जाने पर भी अपील न्यायालय किन अपीलों को सुन सकता है?

A. धारा 378 के अधीन दोषमुक्ति के विरुद्ध उसी मामले से पैदा होने वाली अपील को अथवा धारा 377 के अधीन दण्डादेश की वृद्धि के लिए उसी मामले से पैदा होने वाली अपील को सुन सकता है और गुणावगुण के आधार पर उसका निपटारा कर सकता है (धारा 383 का परन्तुक)

Q. संहिता की कौन-सी धारा अपील के उपशमन से सम्बन्धित है?

A. धारा 394।

Q. किन अपीलों का अभियुक्त की मृत्यु पर अन्तिम रूप से उपशमन हो जायेगा?

A. दण्डादेश की अपर्याप्तता के विरुद्ध या जो दोषमुक्ति के विरुद्ध की गयी है, अपील अभियुक्त की मृत्यु पर अन्तिम रूप से उपशमन हो जायेगा। (धारा 394 (1))।

Q. जहां अपील, दोषसिद्धि और मृत्यु के या कारावास के दण्डादेश के विरुद्ध है और लम्बित रहने के दौरान अपीलार्थी की मृत्यु हो जाती है, वहां अपील जारी रखने की इजाजत के लिए आवेदन कौन और कहां कर सकता है?

A. अपीलार्थी का कोई भी निकट नातेदार (माता-पिता, पति-पत्नी, पारम्परिक वंशज, भाई या बहन) अपील न्यायालय में आवेदन कर सकता है। (धारा 394 (2) का परन्तुक)।

Q. अपीलार्थी के निकट नातेदार को अपील जारी रखने की इजाजत का क्या प्रभाव होगा?

A. अपील जारी रखने की इजाजत दे दिये जाने पर अपील का उपशमन न होगा (धारा 394 (2) का परन्तुक)।

निर्देश और पुनरीक्षण (Reference and Revision) (धारा 395-405)

उच्च न्यायाल को निर्देश–यदि किसी न्यायालय का समाधान हो जाता है कि उसके समक्ष लम्बित मामले में किसी अधिनियम, अध्यादेश या विनिमय की अथवा किसी अधिनियम, अध्यादेश या विनिमय में अन्तर्विष्ट किसी उपबन्ध की विधिमान्यता का बारे में ऐसा प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है, जिसका अवधारणा उस मामले को निपटाने के लिए आवश्यक है, और उसकी यह राय है कि ऐसा अधिनियम, अध्यादेश, विनिमय या उपबन्ध अविधिमान्य या अप्रवर्तनीय है, किन्तु उस उच्च न्यायालय द्वारा, जिसके वह न्यायालय अधीनस्थ है, या उच्चतम न्यायालय द्वारा ऐसा घोषित नहीं किया गया है तो न्यायालय अपनी राय और उसके कारणों को उल्लिखित करते हुए मामले का कथन तैयार करेगा और उसे उच्च न्यायालय के विनिश्चय के लिए निर्देशित करेगा। (धारा 395 (1))।

यदि सेशन न्यायालय या महानगर मजिस्ट्रेट अपने समक्ष लम्बित किसी मामले में, ठीक समझता है तो वह, ऐसे मामले की सुनवाई में उठने वाले किसी विधि-प्रश्न को उच्च न्यायालय के विनिश्चय के लिए निर्देशित कर सकता है। (धारा 395 (2))।

जब कभी ऐसा मामला उच्च न्यायालय को निर्देश किया जाय तब निर्देश करने वाला न्यायालय अभियुक्त को या तो जेल को सुपुर्द कर देगा या अपेक्षा पर हाजिर होने के लिए जमानत पर छोड़ सकता है। (धारा 395 (3))।

जब कोई प्रश्न ऐसे निर्देशित किया जाता है तब उच्च न्यायालय उस पर ऐसा आदेश पारित करेगा जैसा वह ठीक समझे और उस आदेश की प्रतिलिपि उस न्यायालय को भिजवाएगा जिसके द्वारा वह निर्देश किया गया था और वह न्यायालय उस मामले को उक्त आदेश के अनुरूप निपटाएगा। (धारा 396)।

उच्च न्यायालय या कोई सेशन न्यायाधीश अपनी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर स्थित किसी अवर दण्ड न्यायालय के समक्ष की किसी कार्यवाही के अभिलेख को, किसी अभिलिखित या पारित

किए गए निष्कर्ष, दण्डादेश या आदेश की शुद्धता, वैधता या औचित्य के बारे में और ऐसे अवर न्यायालय की किन्हीं कार्यवाहियों की नियमितता के बारे में अपना समाधान करने के प्रयोजन से, मंगा सकता है और उसकी परीक्षा कर सकता है और ऐसा अभिलेख मंगाते समय निदेश दे सकता है कि अभिलेख की परीक्षा लम्बित रहने तक किसी दण्डादेश का निष्पादन निलम्बित किया जाए और यदि अभियुक्त परिरोध में है तो उसे जमानत पर या उसके अपने बन्धपत्र पर छोड़ दिया जाए। (धारा 397)।

सेशन न्यायाधीश की पुनरीक्षण की शक्तियाँ–ऐसी किसी कार्यवाही के मामले में जिसका अभिलेख सेशन न्यायाधीश ने स्वयं मंगवाया है, वह उन सभी या किन्हीं शक्तियों का प्रयोग कर सकता है जिनका प्रयोग धारा 401 (1) के अधीन उच्च न्यायालय कर सकता है। (धारा 399 (1))।

यदि किसी व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से पुनरीक्षण के लिए आवेदन सेशन न्यायाधीश के समक्ष किया जाता है तो ऐसे व्यक्ति के सम्बन्ध में उस बाबत सेशन न्यायाधीश का विनिश्चय अन्तिम होगा और ऐसे व्यक्ति की प्रेरणा पर पुनरीक्षण के रूप में और कार्यवाही उच्च न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय द्वारा ग्रहण नहीं की जाएगी। [धारा 399 (3)]।

उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण की शक्तियाँ–ऐसी किसी कार्यवाही के मामले में, जिसका अभिलेख उच्च न्यायालय ने स्वयं मंगवाया है या जिसकी उसे अन्यथा जानकारी हुई है, उसके सम्बन्ध में वह अपील न्यायालय या सेशन न्यायालय को प्रदत्त शक्तियों में से किसी का स्वविवेकानुसार प्रयोग कर सकता है। (धारा 401)।

उच्च न्यायालय जब पुरीक्षण शक्ति का प्रयोग कर रहा हो, यदि उसके आदेश से अभियुक्त या अन्य व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने वाला, तब अभियुक्त या उसके अधिवक्ता को सुनवायी का अवसर प्रदान करेगा (धारा 401 (2)। इस धारा के अन्तर्गत उच्च न्यायालय दोषमुक्ति के निष्कर्ष को दोषसिद्धि के रूप में अभिलिखित नहीं कर सकता है। (धारा 401 (3)। पुनरीक्षण तभी ग्राह्य होगा जब आक्षेपित आदेश से कोई अपील तो हो सकता था किन्तु अपील नहीं किया गया है। (धारा 401 (4)। यदि पुनरीक्षण इस विश्वास पर किया गया है कि उक्त आदेश से अपील नहीं हो सकता है तो न्यायालय उस आवेदन को अपील मानते हुए कार्यवाही करेगा। (धारा 401 (5)।

उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण के मामलों को वापस लेने या अनन्तिम करने की शक्ति–जब एक ही विचारण में दोषसिद्ध एक या अधिक व्यक्ति पुनरीक्षण के लिए आवेदन उच्च न्यायालय को करते हैं और उसी विचारण में दोषसिद्ध कोई अन्य व्यक्ति पुनरीक्षण के लिए आवेदन सेशन न्यायाधीश को करता है तब उच्च न्यायालय, पक्षकारों की सुविधा और अन्तर्ग्रस्त प्रश्नों के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए यह विनिश्चय करेगा कि उन दोनों में से कौन-सा न्यायालय पुनरीक्षण के लिए आवेदनों को अन्तिम रूप से निपटाएगा और जब उच्च न्यायालय यह विनिश्चय करता है कि पुनरीक्षण के लिए सभी आवेदन उसी के द्वारा निपटाए जाने चाहिए तब उच्च न्यायालय यह निदेश देगा कि सेशन न्यायाधीश के समक्ष लम्बित पुनरीक्षण के लिए आवेदन उसे अन्तरित कर दिए जाएं और जहां उच्च न्यायालय द्वारा निपटाए जाने आवश्यक नहीं है वहां वह यह निदेश देगा कि उसे किए गए पुनरीक्षण के लिए आवेदन सेशन न्यायाधीश को अन्तरित किए जाएं। (धारा 401 (1))।

जहां पुनरीक्षण के लिए आवेदन उच्च न्यायालय द्वारा सेशन न्यायाधीश को अन्तरित किया जाता है वहां उस व्यक्ति या उन व्यक्तियों की प्रेरणा पर जिनके पुनरीक्षण के लिए आवेदन सेशन न्यायाधीश द्वारा निपटाए गए हैं पुनरीक्षण के लिए कोई और आवेदन उच्च न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय में नहीं होगा। [धारा 402 (4)]।

जब उच्च न्यायालय या सेशन न्यायाधीश द्वारा कोई मामला पुनरीक्षित किया जाता है तब वह अपना विनिश्चय या आदेश प्रमाणित करके उस न्यायालय को भेजेगा, जिसके द्वारा पुनरीक्षित निष्कर्ष, दण्डादेश या आदेश अभिलिखित किया गया या पारित किया गया था, और तब वह न्यायालय, ऐसे आदेश करेगा, जो ऐसे प्रमाणित विनिश्चय के अनुरूप है और यदि आवश्यक हो तो अभिलेख में तद्नुसार संशोधन कर दिया जाएगा। (धारा 405)।

प्रश्नकोश

Q. जब सत्र न्यायाधीश अथवा उच्च न्यायालय अपनी अधिकारिता के अधीन के किसी अवर न्यायालय के समक्ष की किसी कार्यवाही के अभिलेख को परीक्षण करने हेतु मंगाता है तो उसे क्या कहते हैं?

A. पुनरीक्षण। (धारा 397)।

Q. (निम्न में) किसका प्रावधान दण्ड प्रक्रिया संहिता में नहीं है?

A. पुनर्विलोकन।

Q. निर्देश से क्या तात्पर्य है?

A. निर्देश से सामान्य तात्पर्य किसी बात का सुझाव, संकेत, परोक्ष निर्देश, या ध्यान आकृष्ट करना है, या उपचार, सहायता, सूचना या विनिश्चय। के लिए भेजना या निर्दिष्ट करना है।

Q. पुनरीक्षण क्या है?

A. पुनरीक्षण से तात्पर्य, फिर से परीक्षण का वह कार्य है, जिसके द्वारा किसी त्रुटि को खत्म किया जाता है, अथवा किसी

अधीनस्थ न्यायालय द्वारा अनियमित या अनुचित तरीके से अधिकारिता के प्रयोग या अप्रयोग के विरुद्ध अनुतोष की स्वीकृत किया जाता है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की कौन-सी धारायें निर्देश एवं पुनरीक्षण के बारे में उपबन्ध करती है?

A. अध्याय 30 की धारा 395 से लेकर 405 तक की धारायें।

Q. उच्च न्यायालय को निर्देश अधीनस्थ न्यायालय द्वारा किस धारा में उपबन्धित है?

A. धारा 395 में।

Q. किस वाद में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अभियुक्त द्वारा अपनी रक्षा में राज्य के खर्च पर विधिक व्यवसायी को संहत कराने का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन रिट पटीशन द्वारा अवर्तनीय नहीं हैं?

A. रंजन द्विवेदी बनाम् भारत संघ (1983) एस.सी.सी. 307।

Q. अधीनस्थ न्यायालय, उच्च न्यायालय को धारा 395 (1) के अन्तर्गत किन स्थितियों में निर्देश के लिए लिख सकता है?

A. निम्न स्थितियों में–

(i) न्यायालय के समक्ष मामले में अधिनियम, अध्यादेश विनिमय की विधिमान्यता का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो,

(ii) अधिनियम की विधिमान्यता इत्यादि का प्रश्न का अवधारणा मामले को निपटाने के लिए आवश्यक हो,

(iii) न्यायालय की यह राय हो कि ऐसा अधिनियम आदि या उसका उपबन्ध अविधिमान्य या अप्रवर्तनीय है, किन्तु उस उच्च न्यायालय द्वारा जिसके वह अधीनस्थ है या उच्चतम न्यायालय द्वारा ऐसा घोषित नहीं किया गया है।

Q. उच्च न्यायालय को निर्देशित करने के पूर्व अधीनस्थ न्यायालय क्या करेगा?

A. ऐसा न्यायालय ऐसे अधिनियम की अविधिमान्यता इत्यादि के बारे में अपनी राय और उसके कारणों को उल्लिखित करते हुए मामले का कथन तैयार करेगा और तब विनिश्चय के लिए निर्देश देगा।

Q. कौन से न्यायालय अपने समक्ष लम्बित किसी मामले में, जिसे धारा 395 की उपधारा (1) के उपबन्ध लागू नहीं होते हैं, ठीक समझे तो ऐसे मामले की सुनवाई में उठने वाले किसी विधि प्रश्न को उच्च न्यायालय के विनिश्चय के लिए निर्देशित कर सकते हैं?

A. सेशन न्यायालय या महानगर मजिस्ट्रेट (धारा 395 (2))।

Q. धारा 395 के अनुसार मामले को निर्देशित किये जाने पर क्या प्रक्रिया अपनाई जाती है?

A. तब उच्च न्यायालय उस पर ऐसा आदेश पारित करेगा जैसा वह ठीक समझे और उस आदेश की प्रतिलिपि उस न्यायालय को भिजवायेगा जिसके द्वारा वह निर्देश किया गया था और वह न्यायालय उस मामले को उसी आदेश के अनुसार निपटायेगा। (धारा 396)।

Q. संहिता की किन धाराओं में पुनरीक्षण से सम्बन्धित उपबन्ध किये गये हैं?

A. धारा 397 से 405 तक में।

Q. संहिता की धारा 397 के अन्तर्गत पुनरीक्षण की शक्ति का प्रयोग कौन से न्यायालय करते हैं?

A. उच्च न्यायालय या कोई सेशन न्यायाधीश।

Q. उच्च न्यायालय एवं सेशन न्यायालय पुनरीक्षण के लिए क्या करते हैं?

A. ये अपनी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर स्थित किसी मात्हत न्यायालय के समक्ष की किसी कार्यवाही के अभिलेख को अपने पास मँगाते हैं।

Q. पुनरीक्षण न्यायालय अपने मात्हत न्यायालय के कार्यवाही के अभिलेख को अपने समक्ष क्यों मँगाते हैं?

A. इसलिए कि वे किसी अभिलिखित या पारित किये गये निष्कर्ष, दण्डादेश या आदेश की शुद्धता, वैधता य औचित्य के बारे में और ऐसे अधीनस्थ न्यायालय की किन्हीं कार्यवाहियों की नियमितता के बारे में अपना समाधान कर सकें। (धारा 397)।

Q. उच्च न्यायालय एवं सेशन न्यायालय अवर न्यायालय के किसी कार्यवाही के अभिलेख को अपने समक्ष मँगाने के पश्चात् क्या कर सकते हैं?

A. ऐसे मँगाये गये अभिलेख की वह परीक्षा कर सकते हैं, और यह निर्देश दे सकते हैं कि अभिलेख की परीक्षा लम्बित रहने तक किसी दण्डादेश का निष्पादन निलम्बित रखा जाय और यदि अभियुक्त परिरोध में है, तो उसे जमानत पर या उसके बन्ध-पत्र पर छोड़ दिया जाय। (धारा 397 (1))।

Q. पुनरीक्षण की सीमा क्या है?

A. पुनरीक्षण की शक्तियों का प्रयोग निम्नलिखित सीमाओं के अधीन ही किया जा सकता है–

(a) ऐसे मामले में जहां अपील की जा सकती है, परन्तु कोई अपील नहीं की गयी है, सामान्यतः उस पक्षकार के उपक्रम पर, जो अपील कर सकता था, पुनरीक्षण की कोई भी कार्यवाही नहीं की जायेगी,

(b) किसी अपील, जांच अथवा विचारण में पारित किये गये किसी अन्तर्वर्ती आदेश (वादकालीन आदेश) के सम्बन्ध में पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग नहीं किया जायेगा,

(c) कोई भी व्यक्ति या तो उच्च न्यायालय में अथवा सेशन न्यायालय में पुनरीक्षण के लिए केवल एक ही आवेदन कर सकता है। यदि एक बार ऐसा आवेदन किसी एक न्यायालय में कर दिया जाता है तो उसी व्यक्ति द्वारा किये गये किसी दूसरे आवेदन को दूसरे न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया जायेगा,

(d) पुनरीक्षण की शक्ति का प्रयोग करने वाले न्यायालय को यह अधिकार नहीं प्राप्त है कि वह दोषमुक्ति के निष्कर्ष को दोषसिद्धि के निष्कर्ष में परिवर्तित कर दे।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत सेशन न्यायालय की पुनरीक्षण की शक्तियाँ दी गयी हैं?

A. धारा 399 के अन्तर्गत।

Q. सेशन न्यायालय पुनरीक्षण की किन शक्तियों का प्रयोग कर सकता है?

A. उन सभी या किन्हीं शक्तियों का प्रयोग कर सकता है, जिनका प्रयोग उच्च न्यायालय अपनी पुनरीक्षण की शक्तियों के रूप में कर सकता है। (धारा 399)।

Q. जहां किसी व्यक्ति द्वारा पुनरीक्षण के लिए आवेदन सेशन न्यायाधीश के समक्ष किया जाता है, वहां उस व्यक्ति के सम्बन्ध में सेशन न्यायाधीश का विनिश्चय कैसा होगा?

A. ऐसा विनिश्चय अन्तिम होगा, और ऐसे व्यक्ति की प्रेरणा पर पुनरीक्षण के रूप में और कार्यवाही उच्च न्यायालय या अन्य किसी न्यायालय द्वारा ग्रहण नहीं की जायेगी?

Q. पुनरीक्षण के सन्दर्भ में अपर सेशन न्यायाधीश को क्या शक्तियाँ हैं?

A. सेशन न्यायाधीश के किसी साधारण या विशेष आदेश के द्वारा अथवा अन्तर्गत अपर सेशन न्यायाधीश को अन्तरित किसी मामले में उसे सेशन न्यायाधीश की सभी शक्तियाँ प्राप्त होती हैं।

Q. संहिता की किस धारा के अन्तर्गत उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण की शक्तियाँ दी गयी हैं?

A. धारा 401 के अन्तर्गत।

Q. जहां किसी मामले में पुनरीक्षण का आवेदन किसी व्यक्ति द्वारा किसी उच्च न्यायालय को इस गलत विश्वास के आधार पर किया गया था कि उससे कोई अपील नहीं होती है, तो ऐसे में उच्च न्यायालय क्या कर सकता है?

A. ऐसे में उच्च न्यायालय यदि न्याय हित में आवश्यक समझता है, तो पुनरीक्षण के लिए आवेदन को अपील की अर्जी मान सकता है और उस पर तद्नुसार कार्यवाही कर सकता है। (धारा 401(5)।

Q. उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण के मामले में कब अभियुक्त या उसके प्लीडर को अपनी प्रतिरक्षा में सुने जाने का अधिकार होगा?

A. जब पुनरीक्षण के अधीन जारी आदेश से अभियुक्त या अन्य व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। (धारा 401 (2))।

Q. पुनरीक्षण के मामलों को लेने या अन्तरित करने की उच्च न्यायालय की शक्ति संहिता की किस धारा में दी गयी है?

A. धारा 402 में।

Q. संहिता की धारा 402 के अन्तर्गत जब कोई पुनरीक्षण का आवेदन सेशन न्यायाधीश को अन्तरित किया जाता है, तब वह उसे निपटाने के लिए कौन-सी प्रक्रिया अपनायेगा?

A. ऐसे में वह उसे इस प्रकार निपटायेगा मानो वह उसके समक्ष सम्यक्तः किया गया आवेदन है (धारा 402 (3))।

Q. पुनरीक्षण के लिए किसी मामले को यदि उच्च न्यायालय ने सेशन न्यायालय को निपटाने के लिए अन्तरित किया है और वह निपटाये गये हैं, तो क्या उस या उन व्यक्तियों की प्रेरणा पर पुनरीक्षण के लिए कोई और आवेदन उच्च न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय में हो सकेगा?

A. नहीं (धारा 402 (4))।

Q. संहिता की धारा 404 में क्या उपबन्ध किये गये हैं?

A. इस धारा में महानगर मजिस्ट्रेट के विनिश्चय के आधारों के कथन पर उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालाय द्वारा विचार किया जाता है।

Q. जब उच्च न्यायालय या सेशन न्यायाधीश द्वारा कोई मामला पुनरीक्षित किया जाता है, तब वह उसके पश्चात् क्या प्रक्रिया अपनायेगा?

A. ऐसी स्थिति में वह धारा 388 में उपबन्धित रीति से अपना निर्णय या आदेश प्रमाणित करके उस न्यायालय को भेजेगा, जिसके द्वारा पुनरीक्षइत निष्कर्ष दण्डादेश या आदेश अभिलिखित किया गया या पारित किया गया था और तब वह न्यायालय ऐसे प्रमाणित विनिश्चय के अनुरूप आदेश करेगा (धारा 405)।

आपराधिक मामलों का अन्तरण (Transfer of Criminal Cases)

(धारा 406-412)

मामलों और अपीलों को अन्तरित करने की उच्चतम न्यायालय की शक्ति–जब उच्चतम न्यायालय को यह प्रतीत कराया जाता है कि न्याय के उद्देश्यों के लिए यह समीचीन है कि इस धारा के अधीन आदेश किया जाए, तब वह निदेश दे सकता है कि कोई विशिष्ट मामला या अपील एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय को या एक उच्च न्यायालय के अधीनस्थ दण्ड न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय के अधीनस्थ समान या वरिष्ठ अधिकारिता वाले दूसरे दण्ड न्यायालय को अन्तरित कर दी जाए। (धारा 406(1))

उच्चतम न्यायालय भारत के महान्यायवादी या हितबद्ध पक्षकार के आवेदन पर ही इस धारा के अधीन कार्य कर सकता है ऐसा प्रत्येक आवेदन समावेदन द्वारा किया जाएगा जो उस दशा में सिवाय, जब कि आवेदक भारत का महान्यायवादी या राज्य का महाधिवक्ता है, शपथपत्र या प्रतिज्ञान द्वारा समर्थित होगा। (धारा 466(2)

जहां आवेदन खारिज कर दिया जाता है वहां, यदि उच्चतम न्यायालय की यह राय है कि आवेदन तुच्छ या तंग करने वाला था तो वह आवेदक को आदेश दे सकता है कि वह एक हजार रूपए से अनधिक इतनी राशि, जितनी वह न्यायालय उस मामले की परिस्थितियों में समुचित समझे, प्रतिकर के तौर पर उस व्यक्ति को दे जिसने आवेदन का विरोध किया था। (धारा 406(3)

मामलों और अपीलों को अन्तरित करने की उच्च न्यायालय की शक्ति–जब कभी उच्च न्यायालय को यह प्रतीत कराया जाता है कि

(क) उसके अधीनस्थ किसी दण्ड न्यायालय में ऋजु और पक्षपात रहित जांच या विचारण न हो सकेगा; अथवा

(ख) किसी असाधारणतः कठिन विधि प्रश्न के उठने की संभाव्यता है; अथवा

(ग) इस धारा के अधीन आदेश इस संहिता के किसी उपबन्ध द्वारा अपेक्षित है, या पक्षकारों या साक्षियों के लिए साधारण सुविधाप्रद होगा, या न्याय के उद्देश्यों के लिए समीचीन है,

तब वह आदेश दे सकेगा कि–

(i) किसी अपराध की जांच या विचारण ऐसे किसी न्यायालय द्वारा किया जाए जो ऐसे अपराध की जांच या विचारण करने के लिए अन्यथा सक्षम है;

(ii) कोई विशिष्ट मामला या अपील या मामलों या अपीलों का वर्ग उसके प्राधिकार के अधीनस्थ किसी दण्ड न्यायालय ऐसे समान या वरिष्ठ अधिकारिता वाले किसी अन्य दण्ड न्यायालय को अंतरित कर दिया जाए;

(iii) कोई विशिष्ट मामला सेशन न्यायालय को विचारणार्थ सुपुर्द कर दिया जाए; अथवा

(iv) कोई विशिष्ट मामला या अपील स्वयं उसको अन्तरित कर दी जाए और उसका विचारण उसके समक्ष किया जाए। (धारा 407(1)

उच्च न्यायालय निचले न्यायालय की रिपोर्ट पर, या हितबद्ध पक्षकार के आवेदन पर या स्वप्रेरणा पर कार्यवाही कर सकता है :

परन्तु किसी मामले को एक ही सेशन खण्ड के एक दण्ड न्यायालय से दूसरे दण्ड न्यायालय को अन्तरित करने के लिए आवेदन उच्च न्यायालय से तभी किया जाएगा जब ऐसा अन्तरण करने के लिए आवेदन सेशन न्यायाधीश को कर दिया गया है और उसके द्वारा नामंजूर कर दिया गया है। [धारा 407(2) का परन्तुक]

ऐसा आवेदन करने वाला प्रत्येक अभियुक्त व्यक्ति लोक अभियोजक को आवेदन की लिखित सूचना उन आधारों की प्रतिलिपि के सहित देगा जिन पर वह किया गया है और आवेदन के गुणागुण पर तब तक कोई आदेश न किया जाएगा जब तक किसी सूचना के दिए जाने और आवेदन की सुनवाई के बीच कम से कम चौबीस घण्टे न बीत गए हों। (धारा 407(5)।

मामलों और अपीलों को अन्तरित करने की सेशन न्यायाधीश की शक्ति–जब कभी सेशन न्यायाधीश को यह प्रतीत कराया जाता है कि न्याय के उद्देश्यों के लिए यह समीचीन है कि इस उपधारा के अधीन आदेश दिया जाए। तब वह आदेश दे सकता है कि कोई विशिष्ट मामला उसके सेशन खण्ड में एक दण्ड न्यायालय से दूसरे दण्ड न्यायालय को अन्तरित कर दिया जाए। सेशन न्यायाधीश निचले न्यायालय की रिपोर्ट पर या किसी हितबद्ध पक्षकार के आवेदन पर या स्वप्रेरणा पर कार्यवाही कर सकता है। (धारा 408(1) एवं (2)।

सेशन न्यायाधीश अपने अधीनस्थ किसी सहायक सेशन न्यायाधीश या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट से कोई मामला या अपील वापस ले सकता है या कोई मामला या अपील, जिसे उसने उसके हवाले किया हो, वापस मंगा सकता है।

अपर सेशन न्यायाधीश के समक्ष मामले का विचारण या अपील की सुनवाई प्रारम्भ होने से पूर्व किसी समय सेशन न्यायाधीश किसी मामले या अपील को, जिसे उसने अपर सेशन न्यायाधीश के हवाले किया है, वापस मंगा सकता है। (धारा 409(2)।

इसी प्रकार कोई मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट अपने अधीनस्थ किसी मजिस्ट्रेट से किसी मामले को वापस ले सकता है या किसी मामले को, जिसे उसने ऐसे मजिस्ट्रेट के हवाले किया है, वापस मँगा सकता है कि मामले की जांच या विचारण स्वयं कर सकता है या अन्य ऐसे मजिस्ट्रेट को निर्देशित कर सकता है जो उसकी जांच या विचारण करने के लिए सक्षम है। (धारा 410)।

इसी प्रकार कोई जिला मजिस्ट्रेट या उपखण्ड मजिस्ट्रेट–

(क) किसी ऐसी कार्यवाही को, जो उसके समक्ष आरम्भ हो चुकी है, निपटाने केलिए अपने अधीनस्थ किसी मजिस्ट्रेट के हवाले कर सकता है;

(ख) अपने अधीनस्थ किसी मजिस्ट्रेट से किसी मामले को वापस ले सकता है या किसी मामले को, जिसे उसने ऐसे मजिस्ट्रेट के हवाले किया हो, वापस मंगा सकता है और ऐसी कार्यवाही को स्वयं निपटा सकता है या उसे निपटाने के लिए किसी अन्य मजिस्ट्रेट को निर्देशित कर सकता है। (धारा 411)।

कोई सत्र न्यायालय या मजिस्ट्रेट जो इस अध्याय के अधीन कोई आदेश पारित करता है तो उसे कारण अभिलिखित करना होगा। (धारा 412)।

प्रश्नकोश

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा के अन्तर्गत वादों और अपीलों को अन्तरित करने की सत्र न्यायाधीश की शक्ति का उल्लेख किया गया है?

A. धारा 408।

Q. यदि कोई अभियुक्त जिसका विचारण नागपुर में न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय में चल रहा है, अपना मामला पटना के मजिस्ट्रेट के न्यायालय में स्थानान्तरित कराना चाहता है तब उसे आवेदन कहां देना होगा?

A. उच्चतम न्यायालय। (धारा 406)।

Q. मामलों और अपीलों को एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय को एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय को अन्तरित करने की उच्चतम न्यायालय की शक्ति का प्रयोग किसके आवेदन पर किया जा सकता है?

A. भारत के महाधिवक्ता या हितबद्ध पक्षकार के आवेदन पर। धारा 406(2)।

Q. आपराधिक मामलों के अन्तरण से सम्बन्धित उपबंध संहिता की किन धाराओं में व्यवस्थित हैं?

A. अध्याय 31 की धारा 406 से 412 तक में।

Q. संहिता की किस धारा में मामलों और अपीलों को अन्तरित करने की उच्चतम न्यायालय की शक्ति दी गयी है?

A. धारा 406 में।

Q. संहिता की धारा 406 के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय कब मामले का अंतरण करता है?

A. जब उसे यह प्रतीत कराया जाता है कि न्याय के उद्देश्यों के लिए ऐसा करना समीचीन है।

Q. मामलों के अंतरण के सम्बन्ध में धारा 406 के अन्तर्गत उच्चतम न्यायालय क्या निदेश दे सकता है?

A. वह यह निदेश दे सकता है कि कोई विशिष्ट मामला या अपील एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय को या एक उच्च न्यायालय के अधीनस्थ दण्ड न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय के अधीनस्थ, समान या वरिष्ठ अधिकारिता वाले दूसरे दण्ड न्यायालय को अन्तरित कर दी जाय।

Q. धारा 406 के अधीन आवेदन कैसे किया जायेगा?

A. इस धारा के अधीन प्रत्येक आवेदन समावेदन द्वारा किया जायेगा और हितबद्ध पक्षकार द्वारा दिया गया आवेदन शपथपत्र या प्रतिज्ञान द्वारा समर्थित होगा।

Q. धारा 406 के अंतर्गत किसी अपील या मामले के अन्तरण के लिए आवेदन को उच्चतम न्यायालय कब खारिज कर सकता है?

A. जब उसकी यह राय है कि आवेदन तुच्छ या तंग करने वाला था।

Q. उच्चतम न्यायालय, आवेदन को तुच्छ या तंग करने वाला होने पर आवेदक पर कितनी राशि का जुर्माना लगा सकता है?

A. एक हजार रुपया से अनधिक इतनी राशि का जितनी वह मामले की परिस्थितियों में आवश्यक समझे 406 (3))।

Q. उच्चतम न्यायालय इस तरह के जुर्माने की राशि किसको और किस रूप में दिये जाने का आदेश देगा?

A. आवेदक को आदेश देगा कि वह प्रतिकर के तौर पर उस व्यक्ति को वह जुर्माने की राशि दे, जिसने आवेदन का विरोध किया था।

Q. मामलों और अपीलों को अन्तरित करने की उच्च न्यायालय की शक्ति संहिता की किस धारा में उपबंधित है?

A. धारा 407 में।

Q. मामलों और अपीलों को अन्तरित करने की अपनी शक्ति का प्रयोग उच्च न्यायालय कब कर सकता है?

A. उच्च न्यायालय अपनी इस शक्ति का प्रयोग तब कर सकता है जब उसको यह प्रतीत कराया जाता है कि–(क) उसके अधीनस्थ किसी दण्ड न्यायालय में ऋजु और पक्षपात रहित जांच या विचारण न हो सकेगा, अथवा (ख) किसी असाधारणतः विधि प्रश्न उठने की संभाव्यता है, अथवा (ग) दण्ड प्रक्रिया संहिता के किसी उपबन्ध द्वारा धारा 407 के अधीन आदेश अपेक्षित है या पक्षकारों या साक्षियों के लिए साधारणतः सुविधाप्रद होगा या न्याय के उद्देश्यों के लिए आवश्यक है। (धारा 407(1))।

Q. धारा 407 के अंतर्गत उसका समाधान हो जाने पर उच्च न्यायालय क्या आदेश दे सकता है?

A. ऐसे में उच्च न्यायालय आदेश दे सकता है कि–(1) किसी अपराध की जांच या विचारण ऐसे किसी न्यायालय द्वारा किया जाय जो धारा 177 से 185 तक के अधीन तो अर्हित नहीं है किन्तु ऐसे अपराध की जांच या विचारण करने के लिए अन्यथा सक्षम है,

(ii) कोई विशिष्ट मामला या अपील या मामलों या अपीलों का वर्ग उसके प्राधिकार के अधीनस्थ किसी दण्ड न्यायालय से ऐसे समान या वरिष्ठ अधिकारिता वाले किसी अन्य दण्ड न्यायालय को अन्तरित कर दिया जाये,

(iii) कोई विशिष्ट मामला सेशन न्यायालय को विचारणार्थ सुपुर्द कर दिया जाय, अथवा

(iv) कोई विशिष्ट मामला या अपील स्वयं उसको अंतरित कर दी जाये और उसका विचारण उसके समक्ष किया जाए।

Q. उच्च न्यायालय आपराधिक मामले के अन्तरण की कार्यवाही किसकी प्रेरणा पर करेगा?

A. (क) निचले न्यायालय की रिपोर्ट पर
(ख) हितबद्ध पक्षकार के आवेदन पर, या
(ग) स्वप्रेरणा पर। (धारा 407 (2))।

Q. किसी मामले को एक ही सेशन खण्ड के एक दण्ड न्यायालय से दूसरे दण्ड न्यायालय को अन्तरित करने के लिए आवेदन उच्च न्यायालय से कब किया जायेगा?

A. ऐसा तभी किया जायेगा जब ऐसा अन्तरण करने के लिए आवेदन सेशन न्यायाधीश को कर दिया गया है और उसके द्वारा नामंजूर कर दिया गया है।

Q. उच्च न्यायालय को अन्तरण के लिए आवेदन कैसा होगा?

A. आवेदन समावेदन द्वारा किया जायेगा और उस दशा के सिवाय जब आवेदक राज्य का महाधिवक्ता हो, शपथपत्र या प्रतिज्ञान द्वारा समर्थित होगा (धारा 407 (3))।

Q. अभियुक्त व्यक्ति अन्तरण के आवेदन की सूचना लोक अभियोजक को लिखित रूप में देगा, आवेदन के गुणावगुण पर कब तक कोई आदेश उच्च न्यायालय द्वारा न दिया जायेगा?

A. जब तक ऐसी सूचना के दिये जाने और आवेदन की सुनवाई के बीच कब से कम 24 घण्टे न बीत गये हों (धारा 407(5))।

Q. यदि मामले या अपील के अन्तरण के लिए आवेदन को उच्च न्यायालय इस आधार पर खारिज कर देता है कि वह तुच्छ या तंग करने वाला था तो वह क्या आदेश दे सकेगा?

A. ऐसे में वह आवेदक को आदेश दे सकता है कि वह एक हजार रुपया से अनधिक इतनी राशि, जितनी वह न्यायालय उस मामले की परिस्थितियों में समुचित समझे प्रतिकर के तौर पर उस व्यक्ति को दे जिसने आवेदन का विरोध किया था (धारा 407(7))।

Q. संहिता की धारा 408 में क्या उपबन्धित है?

A. सेशन न्यायालय की मामलों एवं अपीलों को अन्तरित करने की शक्ति।

Q. यदि सेशन न्यायाधीश आवेदन को तुच्छ या तंग करने वाला होने के आधार पर खारिज कर देता है, तो आवेदक को, कितनी राशि आवेदन का विरोध करने वाले पक्षकार को देने का आदेश दे सकेगा?

A. दो सौ पचास रु. से अनधिक इतनी राशि, (प्रतिकर के तौर पर) जितनी समुचित समझे।

Q. संहिता की धारा 411 किस बारे में उपबंध करती है?

A. यह धारा कार्यपालक मजिस्ट्रेटों द्वारा मामलों का अपने अधीनस्थ मजिस्ट्रेटों के हवाले किये जाने या वापस लिये जाने से सम्बन्धित है।

दण्डादेशों का निष्पादन, निलंबन, परिहार और लघुकरण (Execution, Suspension, Remission and Commutation of Sentences) (धारा 413-435)

दण्डादेशों का निष्पादन जहां दण्ड न्यायालय/न्यायालयों के आदेशों का अनुपालन किया जाना नियत करता है वहीं दण्डादेशों का निलम्बन, परिहार और लघुकरण दण्डादेश के मानवीय पक्ष को दर्शित करता है जिसके तहत, किसी दोषसिद्ध व्यक्ति के दण्ड को मानवीय आधार पर शिथिल या कम कर दिया जाता है।

संहिता का अध्याय 32 (धारा 413 से 435) इस सम्बन्ध में कुल पाँच खण्डों में उपबंध करता है। दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा धारा 416 में संशोधन करके गर्भवती महिला के मृत्यु दण्डादेश को प्रत्यक्षतः आजीवन कारावास में लघुकरण किए जाने का उपबंध किया गया है।

क - मृत्यु दण्डादेश

जब मृत्यु दण्डादेश की पुष्टि के लिए उच्च न्यायालय को प्रस्तुत किसी मामले में, सेशन न्यायालय को उस पर उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि का आदेश या अन्य आदेश प्राप्त होता है तो वह वारंट जारी करके या अन्य ऐसे कदम उठाकर, जो आवश्यक हों, उस आदेश को क्रियान्वित कराएगा। (धारा 413)।

जब अपील में या पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय द्वारा मृत्यु दण्डादेश दिया जाता है तब सेशन न्यायालय उच्च न्यायालय का आदेश प्राप्त होने पर वारण्ट जारी करके दण्डादेश को क्रियान्वित कराएगा। (धारा 414)।

धारा 415 (1) के अनुसार जहां किसी व्यक्ति को उच्च न्यायालय द्वारा मृत्यु दण्डादेश दिया गया है और उसके निर्णय के विरुद्ध कोई अपील संविधान के अनुच्छेद 134 के खण्ड (1) के उपखण्ड (क) या उपखण्ड (ख) के अधीन उच्चतम न्यायालय को होती है वहां उच्च न्यायालय दण्डादेश का निष्पादन तब तक के लिए मुल्तवी किए जाने का आदेश देगा जब तक ऐसी अपील करने के लिए अनुज्ञात अवधि समाप्त नहीं हो जाती है अथवा यदि उस अवधि के अन्दर कोई अपील की गई है तो जब तक उस अपील का निपटारा नहीं हो जाता है।

जहां उच्च न्यायालय द्वारा मृत्यु दण्डादेश दिया गया है या उसकी पुष्टि की गई है, और दण्डादिष्ट व्यक्ति संविधान के अनुच्छेद 132 के अधीन या अनुच्छेद 134 के खण्ड (1) के उपखण्ड (ग) के अधीन प्रमाणपत्र दिए जाने के लिए उच्च न्यायालय से आवेदन करता है, तो उच्च न्यायालय दण्डादेश का निष्पादन तब तक के लिए मुल्तवी किए जाने का आदेश देगा जब तक उस आवेदन का उच्च न्यायालय द्वारा निपटारा नहीं हो जाता है या यदि ऐसे आवेदन पर कोई प्रमाणपत्र दिया गया है, तो जब तक उस प्रमाणपत्र पर उच्चतम न्यायालय को अपील करने के लिए अनुज्ञात अवधि समाप्त नहीं हो जाती है। (धारा 415 (2)।

जहां उच्च न्यायालय द्वारा मृत्यु दण्डादेश दिया गया है या उसकी पुष्टि की गई है और उच्च न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि दण्डादिष्ट व्यक्ति संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अपील के लिए विशेष इजाजत दिए जाने के लिए उच्चतम न्यायालय में अर्जी पेश करना चाहता है, वहां उच्च न्यायालय दण्डादेश का निष्पादन इतनी अवधि तक के लिए, जितनी वह ऐसी अर्जी पेश करने के लिए पर्याप्त समझे, मुल्तवी किए जाने का आदेश देगा। (धारा 415(3))।

संशोधित धारा 416 के अनुसार यदि वह स्त्री, जिसे मृत्यु दण्डादेश दिया गया है, गर्भवती पाई जाती है तो उच्च न्यायालय दण्डादेश का आजीवन कारावास के रूप में लघुकरण कर सकेगा।

ख - कारावास

धारा-417 (1) के अनुसार राज्य सरकार निदेश दे सकती है कि किसी व्यक्ति को जिसे इस संहिता के अधीन कारावासित किया जा सकता है या अभिरक्षा के लिए सुपुर्द किया जा सकता है किस स्थान में परिरुद्ध किया जाएगा।

यदि कोई व्यक्ति कारावासित किया जा सकता है या अभिरक्षा के लिए सुपुर्द किया जा सकता है, सिविल जेल में परिरुद्ध है तो कारावास या सुपुर्दगी के लिए आदेश देने वाला न्यायालय या मजिस्ट्रेट उस व्यक्ति के दांडिक जेल में भेजे जाने का निदेश दे सकता है। (धारा 417(2))।

कारावास के दंडादेश के निष्पादन के लिए प्रत्येक वारण्ट उस जेल या अन्य स्थान के भारसाधक, अधिकारी को निदिष्ट होगा, जिसमें बंदी परिरुद्ध है या परिरुद्ध किया जाना है। (धारा 419)।

जब बन्दी जेल में परिरुद्ध किया जाना है, तब वारण्ट जेलर को सौंपा जाएगा। (धारा 420)।

ग - जुर्माने का उद्ग्रहण

जब किसी अपराधी को जुर्माने का दंडादेश दिया गया है तब दण्डादेश देने वाला न्यायालय निम्नलिखित प्रकारों में से किसी या दोनों प्रकार से जुर्माने की वसूली के लिए कार्यवाही कर सकता है, अर्थात् वह–

(क) अपराधी की किसी जंगम संपत्ति की कुर्की और विक्रय द्वारा रकम को उद्गृहीत करने के लिए वारण्ट जारी कर सकता है,

(ख) व्यतिक्रमी की जंगम या स्थावर संपत्ति या दोनों से भू-राजस्व की बकाया के रूप में रकम को उद्गृहीत करने के लिए जिले के कलक्टर को प्राधिकृत करते हुए उसे वारण्ट जारी कर सकता है।

परन्तु यदि दण्डादेश निदिष्ट करता है कि जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर अपराधी कारावासित किया जाएगा और यदि अपराधी ने व्यतिक्रम के बदले में ऐसा पूरा कारावास भुगत लिया है तो कोई न्यायालय ऐसा वारण्ट तब तक न जारी करेगा जब तक वह ऐसा करना आवश्यक न समझे जब तक उसने जुर्माने में से व्यय या प्रतिकर के संदाय के लिए धारा 357 के अधीन आदेश न किया हो। (धारा 421 (1))।

जब अपराधी को केवल जुर्माने का और जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर कारावास का दण्डादेश दिया गया है और जुर्माना तत्काल नहीं दिया जाता है, तब न्यायालय–

(क) आदेश दे सकता है कि जुर्माना या तो ऐसी तारीख को या उससे पहले, जो आदेश की तारीख से तीस दिन से अधिक बाद की न होगी पूर्णतः संदेय होगा, या दो या तीन किस्तों में संदेय होगा जिनमें से पहली किस्त ऐसी तारीख से तीस दिन से अधिक बाद की न होगी और, अन्य किस्त या किस्तें, यथास्थिति, तीस दिन से अधिक के अन्तराल या अन्तरालों पर संदेय होगी या होगी:

(ख) कारावास के दण्डादेश का निष्पादन निलम्बित कर सकता है अपराधी द्वारा प्रतिभूओं सहित या रहित, इस शर्त का बन्धपत्र निष्पादित किए जाने पर कि, यथास्थिति, जुर्माना या उसकी किस्तें देने की तारीख या तारीखों को वह न्यायालय के समक्ष हाजिर होगा, अपराधी को छोड़ सकता है, और यदि, यथास्थिति, जुर्माने की या किसी किस्त की रकम, उस अंतिम तारीख को या उसके पूर्व प्राप्त न हो तो न्यायालय कारावास के दण्डादेश के तुरन्त निष्पादित किए जाने का निदेश दे सकता है। (धारा 424(1))।

घ - निष्पादन के बारे में साधारण उपबन्ध

वारण्ट कौन जारी कर सकेगा–दण्डादेश के निष्पादन के लिए प्रत्येक वारण्ट या तो उस न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट द्वारा, जिसने दण्डादेश पारित किया है या उसके पद-उत्तरवर्ती द्वारा जारी किया जा सकता है। (धारा 425)।

निकल भागे सिद्धदोष, पर दण्डादेश कब प्रभावशील होगा– (1) जब निकल भागे सिद्धदोष को मृत्यु, आजीवन कारावास या जुर्माने या दण्डादेश दिया जाता है तब ऐसा दण्डादेश इसमें इसके पूर्व अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अधीन रहते हुए तुरन्त प्रभावी हो जाएगा।

(2) जब निकल भागे सिद्धदोष को इस संहिता के अधीन किसी अवधि के कारावास का दण्डादेश दिया जाता है, तब,–

(क) यदि दण्डादेश उस दण्डादेश से कठोरतर किस्म का हो जिसे ऐसा सिद्धदोष, जब वह निकल भागा था, तब भोग रहा था तो नया दण्डादेश तुरन्त प्रभावी हो जाएगा;

(ख) यदि दण्डादेश उस दण्डादेश से कठोरतर किस्म का न हो तो नया दण्डादेश, उसके द्वारा उस अतिरिक्त अवधि के लिए कारावास भोग लिए जाने के पश्चात् प्रभावी होगा, जो उसके निकल भागने के समय उसके पूर्ववर्ती दण्डादेश की शेष अवधि के बराबर है। कठोर कारावास का दण्डादेश सादा कारावास के दण्डादेश से कठोरतर किस्म का समझा जाएगा। (धारा 426(1) एवं (2))।

ऐसे अपराधी को दण्डादेश जो अन्य अपराध के लिए पहले से दण्डादिष्ट है–जब कारावास का दण्डादेश पहले से ही भोगने वाले व्यक्ति को पश्चात्वर्ती–दोषसिद्धि पर कारावास या आजीवन कारावास का दण्डादेश दिया जाता है तब पश्चातवर्ती दण्डादेश ऐसे पूर्व दण्डादेश के साथ-साथ भोगा जाएगा, ऐसा कारावास या आजावीन कारावास उस कारावास की समाप्ति पर, जिसके लिए, वह पहले दण्डादिष्ट हुआ था, प्रारम्भ होगा :

जब आजीवन कारावास का दण्डादेश पश्चात्वर्ती दोषसिद्धि पर किसी अवधि के कारावास या आजीवन कारावास का दण्डादेश दिया जाता है तब पश्चात्वर्ती दण्डादेश पूर्व दण्डादेश के साथ-साथ भोगा जाएगा। (धारा 427)।

धारा 428 में अभियुक्त द्वारा भोगी गयी विरोध की अवधि का कारावास के दण्डादेश के विरूद्ध मुजरा किये जाने का उपबन्ध किया गया है। जिसके अनुसार जिस मामले में अभियुक्त को दोषसिद्ध पर कारावास से दण्डादिष्ट किया जाता है, उसी मामले के अन्वेषण, जांच अथवा विचारण के दौरान एवं दोषसिद्धि की तिथि से पूर्व उसके द्वारा भोगी गयी निरोध (Detention) की अवधि का, दोषसिद्धि किये जाने पर अधिरोपित कारावास की अवधि के विरूद्ध मुजरा किया जायेगा किन्तु इसमें जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम के लिए कारावास की अवधि का मुजरा नहीं किया जायेगा।

परन्तु धारा 433क में निर्दिष्ट मामलों (जिनमें न्यूनतम 14 वर्षों का कारावास प्रावधानित है) में निरोध की ऐसी अवधि का उस

धारा में निर्दिष्ट 14 वर्ष की अवधि के विरूद्ध मुजरा किया जायेगा।

धारा 430 के अनुसार जब दण्डादेश पूर्णतया निष्पादित किया जा चुका है तब उसका निष्पादन करने वाला अधिकारी वारण्ट को स्व-हस्ताक्षर सहित पृष्ठांकन द्वारा उस रीति को, प्रमाणित करते हुए, उस न्यायालय को जिसने उसे जारी किया था, लौटा देगा।

ङ - दण्डादेशों का निलम्बन, परिहार और लघुकरण

दण्डादेशों का निलम्बन या परिहार करने की शक्ति–जब किसी व्यक्ति को दण्डादेश दिया जाता है तब समुचित सरकार किसी समय, शर्तों के बिना या ऐसी शर्तों पर उसके दण्डादेश के निष्पादन का निलंबन या जो दण्डादेश उसे दिया गया है उसका पूरे का या उसके किसी भाग का परिहार कर सकती है। (धारा 432(1)।

जब कभी समुचित सरकार से दण्डादेश के निलम्बन या परिहार के लिए आवेदन किया जाता है तब समुचित सरकार उस न्यायालय के पीठासीन न्यायाधीश से जिसके समक्ष दोषसिद्धि हुई थी या जिसके द्वारा उसकी पुष्टि की गई थी, अपेक्षा कर सकेगी कि वह आवेदन मंजूर किया जाए या नामंजूर किया जाए, अपनी राय कारणों सहित कथित करे और कथन के साथ विचारण के अभिलेख की या उसके ऐसे अभिलेख की, प्रमाणित प्रतिलिपि भी भेजे। (धारा 432 (2))।

यदि कोई शर्त, जिस पर दण्डादेश का निलम्बन अथवा परिहार किया गया है, समुचित सरकार की राय में पूरी नहीं हुई है, तो समुचित सरकार निलम्बन या परिहार को रद्द कर सकती है। (धारा 432(3))।

दण्डादेश के लघुकरण की शक्ति–समुचित सरकार दण्डादिष्ट व्यक्ति की सम्मति के बिना–

(क) मृत्यु दण्डादेश का किसी अन्य दण्ड के रूप में लघुकरण कर सकती है;

(ख) आजीवन कारावास के दण्डादेश का, चौदह वर्ष से अनधिक अवधि के कारावास में या जुर्माने के रूप में लघुकरण कर सकती है:

(ग) कठिन कारावास के दण्डादेश का सादा कारावास में या जुर्माने के रूप में लघुकरण कर सकती है;

(घ) सादा कारावास के दण्डादेश का जुर्माने के रूप में लघुकरण कर सकती है। (धारा 433)।

धारा 433क के अनुसार जहां किसी व्यक्ति को ऐसे अपराध के लिए, जिसके लिए मृत्यु दण्ड विधि द्वारा उपबन्धित दंडों में से एक है आजीवन कारावास का दंडादेश दिया गया है या किसी व्यक्ति को दिये गये मृत्यु दण्डादेश का आजीवन कारावास के रूप में लघुकरण किया गया है वहां ऐसा व्यक्ति कारावास से तब तक नहीं छोड़ा जाएगा जब तक कि उसने चौदह वर्ष का कारावास पूरा न कर लिया हो।

प्रश्नकोश

Q. जिस स्त्री को मृत्युदण्ड दिया गया है, यदि वह स्त्री गर्भवती है, तो उच्च न्यायालय क्या कर सकता है?

A. दण्ड को आजीवन कारावास में लघुकरण कर सकेगा। धारा 416।

Q. अ चोरी का एक अभियुक्त था। अपनी गिरफ्तारी के बाद वह 90 दिवस तक निरोध में रहा। उसके पश्चात् 360 दिवस के कारावास भुगतने की सजा से दण्डित हुआ। क्या वह मजुराई का हकदार होगा?

A. हां। पूरे 90 दिन तक। (धारा 428)।

Q. अ को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय के द्वारा दोषी ठहराया जाकर, चार वर्ष के कठोर कारावास की सजा से दण्डित किया गया। 'अ' उसी मजिस्ट्रेट से अपनी सजा निलम्बित करने हेतु आवेदन द्वारा निवेदन करता है। उस मजिस्ट्रेट को तब कौन सी कार्यवाही अपनाना होगा?

A. अधिकारिता का अभाव होने से आवेदन का निरस्तीकरण। (धारा 432)।

Q. दण्डादेशों के निलम्बन या परिहार की शक्ति दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत किसे प्रदान किया गया है?

A. सरकार को। (धारा 432)।

Q. द.प्र.सं. के अन्तर्गत आजीवन कारावास के दण्डादेश का लघुकरण कौन कर सकता है?

A. समुचित सरकार (यथास्थिति राज्य सरकार या केन्द्र सरकार)। (धारा 433(ख))।

Q. आजीवन कारावास के दण्डादेश को सरकार कितने वर्षों के कारावास में लघुकृत कर सकती है?

A. 14 वर्ष। (धारा 433 (ख)।

Q. जब मृत्यु दण्डादेश की पुष्टि के लिए उच्च न्यायालय को प्रस्तुत किसी मामले में सेशन न्यायालय को उस पर उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि का आदेश या अन्य आदेश प्राप्त होता है तो, वह उस आदेश का क्रियान्वयन कैसे करायेगा?

A. ऐसी स्थिति में सेशन न्यायालय वारण्ट जारी करके या अन्य ऐसे कदम उठाकर, जो आवश्यक हों, उस आदेश का क्रियान्वयन करायेगा (धारा 413)।

Q. अपील में या पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय द्वारा दिये गये मृत्यु दण्डादेश का क्रियान्वयन कैसे होता है?

A. ऐसे में सेशन न्यायालय उच्च न्यायालय का आदेश प्राप्त होने पर वारण्ट जारी करके दण्डादेश का क्रियान्वयन करायेगा। (धारा 414)।

Q. कारावासित व्यक्ति या अभिरक्षा के लिए सुपुर्द किये गये व्यक्ति को, किस स्थान में परिरुद्ध किया जायेगा, यह कौन नियत करेगा?

A. राज्य सरकार (धारा 417, (1))।

Q. यदि कोई व्यक्ति जिसे संहिता के अधीन कारावासित किया जा सकता है, किसी सिविल जेल में परिरुद्ध है, तो उस व्यक्ति को दाण्डिक जेल में भेजे जाने का निदेश कौन दे सकता है?

A. कारावास या सुपुर्दगी के लिए आदेश देने वाला न्यायालय या मजिस्ट्रेट (धारा 417 (2))।

Q. जहां किसी मामले में अभियुक्त को आजीवन कारावास या किसी अवधि के कारावास के लिए दण्डादिष्ट किया गया है, वहां दण्डादेश देने वाला न्यायालय उसका निष्पादन कैसे करायेगा?

A. ऐसे दण्डादेश देने वाला न्यायालय उस जेल या अन्य स्थान को जिसमें वह परिरुद्ध है या उसे परिरुद्ध किया जाना है, तत्काल वारण्ट भेजेगा और यदि पहले से ही उस जेल या अन्य स्थान में बन्दी नहीं है तो वारण्ट के साथ उसे ऐसी जेल या अन्य स्थान को भिजवायेगा (धारा 418)।

Q. जब कारावास का दण्डादेश देते समय अभियुक्त न्यायालय में उपस्थित न हो, तो ऐसा न्यायालय दण्डादेश के क्रियान्वयन के लिए क्या करेगा?

A. ऐसे में वह न्यायालय उसे जेल या अन्य स्थान में, जहां उसे परिरुद्ध किया जाना है, भेजने के प्रयोजन से उसकी गिरफ्तारी के लिए वारण्ट जारी करेगा, ऐसे मामले में दण्डादेश उसकी गिरफ्तारी की तारीख से प्रारम्भ होगा (धारा 418 (2))।

Q. कारावास के दण्डादेश के निष्पादन के लिए प्रत्येक वारण्ट किसे निदिष्ट होगा?

A. उसे निदिष्ट होगा, जो उस जेल या अन्यस्थान का भारसाधक अधिकारी है, जिसमें बन्दी परिरुद्ध है या परिरुद्ध किया जाना है (धारा 419)।

Q. जुर्माने का दण्डादेश देने वाला न्यायालय किस रीति से जुर्माने की वसूली के लिए कार्यवाही कर सकता है?

A. निम्नलिखित रीतियों में से किसी एक या दोनों रीति से–(a) अपराधी की किसी जंगम सम्पत्ति की कुर्की और विक्रय द्वारा रकम उद्‌गृहीत करने के लिए वारण्ट जारी करके, (b) जिले के कलेक्टर को प्राधिकृत करते हुए वारण्ट जारी करके कि वह व्यतिक्रमी की जंगम या स्थावर सम्पत्ति या दोनों से भू-राजस्व की बकाया के रूप में रकम उद्‌गृहीत करें।

Q. जब न्यायालय ने कलेक्टर को जंगम या स्थावर या दोनों से बकाये की रकम वसूली के लिए वारण्ट जारी किया है, तो वह कैसे वसूल करेगा?

A. कलेक्टर उस रकम को भू राजस्व की बकाया की वसूली से सम्बन्धित विधि के अनुसार वसूल करेगा मानों ऐसा वारण्ट ऐसी विधि के अधीन जारी किया गया प्रमाण-पत्र हो (धारा 421 (3))।

Q. क्या कोई न्यायालय अपनी स्थानीय अधिकारिता के बाहर की किसी सम्पत्ति की कुर्की और विक्रय को प्राधिकृत कर सकेगा?

A. उसी दशा में प्राधिकृत करेगा, जब वह उस जिला मजिस्ट्रेट द्वारा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसी सम्पत्ति पायी जाए, पृष्ठांकित कर दिया गया है (धारा 422)।

Q. संहिता की धारा 423 क्या उपबंध करती है?

A. यह धारा जुर्माने के वसूली के लिए किसी ऐसे राज्य क्षेत्र के न्यायालय द्वारा जारी किये गये वारण्ट की प्रास्थिति के बारे में इंगित करती है, जिस पर इस संहिता का विस्तार नहीं है।

Q. जब अपराधी को केवल जुर्माने और जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर कारावास का दण्डादेश दिया गया है और जुर्माना तत्काल नहीं दिया जाता है, तो न्यायालय क्या आदेश दे सकता है?

A. ऐसे में न्यायालय जुर्माने की रकम तीस-तीस दिन की अंतराल वाली किश्तों पर वसूल करने का आदेश दे सकता है (धारा 424)।

Q. न्यायालय कब कारावास के दण्डादेश का निष्पादन निलम्बित करके अपराधी को छोड़ सकता है?

A. जब वह इस शर्त का बन्ध पत्र निष्पादित कर दे कि यथास्थिति जुर्माना या उसकी किस्तें देने की तारीख या तारीखों को वह न्यायालय के समक्ष हाजिर होगा (धारा 424 (1) (ख))।

Q. जब निकल भागे सिद्धदोष को इस संहिता के अधीन मृत्यु, आजीवन कारावास, या जुर्माने का दण्डादेश दिया जाता है, तब ऐसा दण्डादेश कब प्रभावी होगा?

A. तुरन्त प्रभावी हो जायेगा (धारा 426 (1))।

Q. जब निकल भागे सिद्धदोष को किसी अवधि के कारावास का दण्डादेश दिया जाता है, तब कब नया दण्डादेश तुरन्त प्रभावी हो जायेगा?

A. जब ऐसा दण्डादेश उस दण्डादेश से कठोरतर किस्म का हो जिसे ऐसा सिद्धदोष, जब वह निकल भागा था, तब भोग रहा था (धारा 426 (2))।

Q. जब किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्धा आजीवन कारावास या कारावास का दण्डादेश दिया जाता है, जो पहले से ही कारावास का दण्डादेश भोग रहा है, तब पश्चात्वर्ती दण्डादेश कब प्रारम्भ होगा?

A. जब तक न्यायालय दोनों दण्डादेशों को साथ-साथ भोगने का आदेश न दे पश्चात्वर्ती दण्डादेश तब प्रारम्भ होगा जब पहले वाला दण्डादेश भोग लिया जाता है (धारा 427 (1))।

Q. किस वाद में यह निर्धारित किया गया कि यदि बन्दी व्यक्ति निवारक निरोध में था, जो उस अवधि का गुजरा अपराध की दोषसिद्धि पर कारावास के दण्डादेश के विरुद्ध नहीं किया जा सकता है?

A. आन्ध्र प्रदेश सरकार बनाम अन्ने वेंकटेश्वर (1977) 3 एस. सी. सी. 297।

Q. जिस धन के संदाय करने का आदेश दिया गया है, और जिसकी वसूली का कोई ढंग अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबंधित नहीं है, उसे कैसे वसूल किया जा सकता है?

A. उसे ऐसे वसूल किया जा सकता है मानो वह जुर्माना है (धारा 431)।

Q. जब समुचित सरकार से दण्डादेश के निलम्बन या परिहार के लिए आवेदन किया जाता है, तब वह किससे और क्या अपेक्षा कर सकेगी?

A. तब वह उस न्यायालय के पीठासीन न्यायाधीश से जिसके समक्ष दोषसिद्धि हुई थी या जिसके द्वारा उसकी पुष्टि की गयी थी, यह अपेक्षा कर सकेगी कि वह इस बारे में कि आवेदन मंजूर किया जाय अथवा नहीं अपनी राय उसके कारणों के साथ अभिकथित करे और अपनी राय के साथ विचारण के अभिलेख की प्रमाणित प्रतिलिपि भी भेजे (धारा 432 (2))।

Q. यदि समुचित सरकार की राय में निलम्बन या परिहार की कोई शर्त पूरी नहीं हुई हो, तो वह क्या कर सकती है?

A. ऐसे में वह निलम्बन या परिहार को रद्द कर सकती है और सम्बन्धित व्यक्ति किसी पुलिस अधिकारी द्वारा वारण्ट के बिना गिरफ्तार किया जा सकता है और दण्डादेश के बचे हुए भाग को भोगने के लिए प्रतिप्रेषित किया जा सकता है (धारा 432 (3)।

Q. दण्डादेश के लघुकरण के लिए क्या दण्डादिष्ट व्यक्ति की सम्मति आवश्यक है?

A. नहीं! समुचित सरकार दण्डादिष्ट व्यक्ति की सम्मति के बिना ऐसा कर सकती है।

Q. कठिन कारावास के दण्डादेश का किस रूप में लघुकरण किया जा सकता है?

A. ऐसी किसी अवधि के सादा कारावास में जिसके लिए वह दण्डादिष्ट किया जा सकता है, या जुर्माने के रूप में।

Q. सादा कारावास के दण्डादेश का समुचित सरकार किस रूप में लघुकरण कर सकती है?

A. जुर्माने के रूप में (धारा 433 (घ))।

Q. यदि किसी व्यक्ति को किसी ऐसे अपराध के लिए, जिसके लिए मृत्युदण्ड विधि द्वारा उपबंधित दण्डों में से एक है, आजीवन कारावास का दण्डादेश दिया गया है या मृत्यु के दण्डादेश को आजीवन कारावास के रूप में लघुकृत कर दिया गया है, वहां ऐसे व्यक्ति को कब तक नहीं छोड़ा जायेगा?

A. जब तक कि वह 14 वर्ष का कारावास पूर्ण न कर ले (धारा 433 (क))।

Q. संहिता की धारा 434 क्या उपबंध करती है?

A. इस धारा में मृत्यु दण्डादेशों की दशा में केन्द्रीय सरकार की राज्य सरकार के समवर्ती शक्ति दी गयी है।

जमानत और बन्धपत्रों के बारे में उपबन्ध (Provisions as to Bail and bonds) (धारा 436-450)

जमानत और बंधपत्रों के सम्बन्ध में प्रावधान दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 33, धारा 436 से 450 में उपबंधित है। दण्ड प्रक्रिया-संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के द्वारा इस अध्याय में एक नयी धारा 437-क अन्तःस्थापित किया गया है जिसमें अगले अपीलीय न्यायालय के समक्ष उपसंजात होने की अभियुक्त से अपेक्षा करते हुए उसे जमानत पर छोड़ दिए जाने का प्रावधान किया गया है।

किन मामलों में जमानत ली जाएगी–धारा 436 (1) के अनुसार जब अजमानतीय अपराध के अभियुक्त से भिन्न कोई व्यक्ति पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा वारण्ट के बिना गिरफ्तार या निरुद्ध किया जाता है या न्यायालय के समक्ष हाजिर होता है या लाया जाता है और जब वह ऐसे अधिकारी की अभिरक्षा में है उस बीच किसी समय या ऐसे न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों के किसी प्रक्रम में, जमानत देने के लिए तैयार है तब ऐसा व्यक्ति जमानत पर छोड़ दिया जाएगा:

परन्तु यदि ऐसा अधिकारी या न्यायालय ठीक समझता है तो

''(संशोधन 2005 से संशोधित) वह ऐसे व्यक्ति से जमानत लेने के बजाय हाजिर होने के लिए प्रतिभूओं रहित बंध पत्र निष्पादित करने पर उसे उन्मोचित कर सकेगा और यदि ऐसा व्यक्ति निर्धन है और जमानत देने में असमर्थ है, तो उसे ऐसे उन्मोचित करेगा''। (धारा 436)।

''स्पष्टीकरण के अनुसार जहां कोई व्यक्ति अपनी गिरफ्तारी की तारीख के एक सप्ताह के भीतर जमानत देने में असमर्थ है वहां अधिकारी या न्यायालय के लिए यह उपधारणा करने का पर्याप्त आधार होगा कि वह इस परन्तुक के प्रयोजनों के लिए निर्धन व्यक्ति है''।

यदि कोई व्यक्ति, हाजिरी के समय और स्थान के बारे में जमानत की शर्तों का अनुपालन करने में असफल रहता है वहां न्यायालय उसे, जब वह उसी मामले में किसी पश्चात्वर्ती अवसर पर न्यायालय के समक्ष हाजिर होता है या अभिरक्षा में लाया जाता है, जमानत पर छोड़ने से इन्कार कर सकता है। (धारा 436(2))

धारा 436 के अन्तर्गत गिरफ्तार किया गया व्यक्ति एक अधिकार के रूप में जमानत पर छोड़े जाने का दावा कर सकता है यदि उसके द्वारा किया गया अपराध जमानतीय प्रकृति का है। ऐसा व्यक्ति जमानत के लिए आवेदन निम्न परिस्थितियों में दे सकता है–

(1) जब वह थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा गिरफ्तार किया गया है या निरुद्ध किया गया है; या

(2) जब वह न्यायालय के समक्ष हाजिर होता है या लाया जाता है।

अधिकतम अवधि जिसके लिए विचाराधीन कैदी निरुद्ध किया जा सकता है–जहां कोई व्यक्ति, किसी विधि के अधीन किसी अपराध के (जो ऐसा अपराध नहीं है जिसके लिए उस विधि के अधीन मृत्यु दंड एक दंड के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया है) इस संहिता के अधीन अन्वेषण, जांच या विचारण की अवधि के दौरान कारावास की उस अधिकतम अवधि के जो उस विधि के अधीन उस अपराध के लिए विनिर्दिष्ट की गई है, आधे से अधिक की अवधि के लिए निरोध भोग चुका है, वहां वह प्रतिभुओं सहित या रहित व्यक्तिगत बंधपत्र पर न्यायालय द्वारा छोड़ दिया जाएगा;

परन्तु न्यायालय, लोक अभियोजक की सुनवाई के पश्चात् और उन कारणों से जो उस द्वारा लेखबद्ध किए जाएंगे, ऐसे व्यक्ति के उक्त आधी अवधि से दीर्घतर अवधि के लिए निरोध को जारी रखने का आदेश कर सकेगा या व्यक्तिगत बंधपत्र के बजाय प्रतिभूओं सहित या रहित जमानत पर उसे छोड़ देगा;

परन्तु यह और कि कोई भी ऐसा व्यक्ति अन्वेषण, जांच या विचारण की अवधि के दौरान उस विधि के अधीन उक्त अपराध के लिए उपबंधित कारावास की अधिकतम अवधि से अधिक के लिए किसी भी दशा में निरुद्ध नहीं रखा जाएगा।

स्पष्टीकरण–जमानत मंजूर करने के लिए इस धारा के अधीन निरोध की अवधि की गणना करने में अभियुक्त द्वारा कार्यवाही में किए गए विलंब के कारण भोगी गई निरोध की अवधि को अपवर्जित किया जाएगा''।

इस शीर्षक के उपर्युक्त उपबंध दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 के द्वारा नयी धारा 436-क को अन्तःस्थापित करके किया गया है। इसका मुख्य प्रयोजन विचाराधीन कैदियों के मामलों का शीघ्र विस्तारण किया जाना तथा उन्हें अनावश्यक विरोध से सुरक्षा प्रदान करना है।

अजमानतीय अपराध की दशा में कब जमानत ली जा सकेगी–जब कोई व्यक्ति, जिस पर अजमानतीय अपराध का अभियोग है या यह सन्देह है कि उसने अजमानतीय अपराध किया है, पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा वारण्ट के बिना गिरफ्तार या निरुद्ध किया जाता है या उच्च न्यायालय अथवा सेशन न्यायालय से भिन्न न्यायालय के समक्ष हाजिर होता है या लाया जाता है तब वह जमानत पर छोड़ा जा सकता है, किन्तु

(i) यदि यह प्रतीत होता है कि ऐसा व्यक्ति मृत्यु या आजीवन कारावास से दण्डनीय अपराध का दोषी है तो वह इस प्रकार नहीं छोड़ा जाएगा;

(ii) यदि अपराध कोई संज्ञेय अपराध है और ऐसा व्यक्ति मृत्यु, आजीवन कारावास या सात वर्ष या उससे अधिक के कारावास से दण्डनीय किसी अपराध के लिए पहले दोषसिद्ध किया गया है, या वह ''तीन वर्ष या उससे अधिक के लिए किन्तु सात वर्ष से अनधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय किसी संज्ञेय अपराध'' के लिए दो या अधिक अवसरों पर पहले दोषसिद्ध किया गया है तो वह इस प्रकार नहीं छोड़ा जाएगा। (धारा 437 (1))।

परन्तु न्यायालय यह निदेश दे सकेगा कि खण्ड (i) या खण्ड (ii) में निर्दिष्ट व्यक्ति जमानत पर छोड़ दिया जाए यदि ऐसा व्यक्ति सोलह वर्ष से कम आयु का है या कोई स्त्री या कोई रोगी या शिथिलांग व्यक्ति है :

परन्तु केवल यह बात कि अभियुक्त की आवश्यकता, अन्वेषण में साक्षियों द्वारा पहुँचाने जाने के लिए हो सकती है, जमानत मंजूर करने से इन्कार करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं होगी, यदि वह अन्यथा जमानत पर छोड़ दिए जाने के लिए हकदार है और वह वचन देता है कि वह ऐसे निदेशों का, जो न्यायालय द्वारा दिए जाएं, अनुपालन करेगा।

''परन्तु यह और भी कि किसी भी व्यक्ति को, यदि उसके द्वारा किया गया अभिकथित अपराध मृत्यु, आजीवन कारावास या सात वर्ष अथवा उससे अधिक के कारावास से दण्डनीय है तो लोक अभियोजक को सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना न्यायालय द्वारा जमानत पर नहीं छोड़ा जाएगा''। [धारा 437(1) का तृतीय परन्तुक]

जब किसी व्यक्ति पर सात वर्ष या उससे अधिक के कारावास से दण्डनीय अपराध का अभियोग है या भारतीय दण्ड संहिता के अध्याय 6, 16 या 17 के अधीन कोई अपराध करने या ऐसे किसी अपराध का दुष्प्रेरण या षडयंत्र या प्रयत्न करने का अभियोग या संदेह है जमानत पर छोड़ा जाता है तो न्यायालय यह शर्त अधिरोपित करेगा–

(क) कि ऐसा व्यक्ति इस अध्याय के अधीन निष्पादित बंधपत्र की शर्तों के अनुसार हाजिर होगा;

(ख) किसी ऐसा व्यक्ति उस अपराध जैसा कि उस पर करने का अभियोग या संदेह है, कोई अपराध नहीं करेगा; और

(ग) कि ऐसा व्यक्ति उस मामले के तथ्यों से अवगत किसी व्यक्ति को न्यायालय या किसी पुलिस अधिकारी के समक्ष ऐसे तथ्यों को प्रकट न करने के लिए मनाने के वास्ते प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः उसे कोई उत्प्रेरणा, धमकी या वचन नहीं देगा या साक्ष्य को नहीं बिगाड़ेगा॥

और न्याय के हित में ऐसी अन्य शर्ते जिसे न्यायालय समझे अधिरोपित कर सकता है। [धारा 437(3)]

यदि मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय किसी मामले में ऐसे व्यक्ति का विचारण, जो किसी अजमानतीय अपराध का अभियुक्त है, उस मामले में साक्ष्य देने के लिए नियत प्रथम तारीख से साठ दिन की अवधि के अन्दर पूरा नहीं हो जाता है तो यदि ऐसा व्यक्ति अभिरक्षा में रहा है तो जब तक मजिस्ट्रेट अन्यथा निदेश न दे वह मजिस्ट्रेट को समाधानप्रद जमानत पर छोड़ दिया जाएगा॥ [धारा 437(6)]।

यदि अजमानतीय अपराध के अभियुक्त व्यक्ति के विचारण के समाप्त हो जाने के पश्चात् और निर्णय दिए जाने के पूर्व किसी समय न्यायालय की यह राय है कि अभियुक्त किसी ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और अभियुक्त अभिरक्षा में है, तो वह अभियुक्त को, निर्णय सुनने के लिए अपने हाजिर होने के लिए प्रतिभूओं रहित बन्धपत्र उसके द्वारा निष्पादित किए जाने पर छोड़ देगा। [धारा 437(7)]।

दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 के धारा 31 के द्वारा इस अध्याय के धारा 437 के बाद एक नयी धारा 437-क अन्तः स्थापित करके निम्न उपबंध किया गया है :

(1) विचारण के समाप्त होने के पूर्व तथा अपील के निस्तारण के पूर्व अपराध का विचारण करने वाला न्यायालय या अपीलीय न्यायालय अभियुक्त से यह अपेक्षा करेगा कि वह उच्चतर न्यायालय के समक्ष उपसंजात होने के लिए प्रतिभूओं सहित बंधपत्र निष्पादित करे जैसे और जब ऐसा न्यायालय क्रमिक न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध दाखिल की गयी अपील या याचिका के सम्बन्ध में सूचना जारी करता है और ऐसा जमानत बंधपत्र 6 माह तक प्रवर्तन में रहेगा॥

(2) यदि ऐसा अभियुक्त उपसंजात होने में विफल रहता है तब बंधपत्र का समयहरण हो जायेगा और धारा 440के अधीन की प्रक्रिया लागू होगी॥

अग्रिम जमानत–दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 कुछ विशिष्ट मामलों में अग्रिम जमानत का उपबंध करती है। वर्ष 2005 में इस धारा में व्यापक संशोधन किया गया, जिसका मूल प्रावधान निम्नवत् है :

गिरफ्तारी की आशंका पर जमानत–(1)जब किसी व्यक्ति को यह विश्वास करने का कारण है कि हो सकता है उसको किसी अजमानतीय अपराध के किए जाने के अभियोग में गिरफ्तार किया जाए तो वह इस धारा के अधीन निदेश के लिए उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय को आवेदन कर सकता है कि ऐसी गिरफ्तारी की स्थिति में उसको जमानत पर छोड़ दिया जाए, और उच्च न्यायालय अन्य बातों के साथ, निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखते हुए अर्थात्:–

(i) अभियोग की प्रकृति और गम्भीरता;

(ii) आवेदक को **पूर्ववृत्त (Antecedents)** जिसमें यह तथ्य भी है कि क्या उसने किसी संज्ञेय अपराध की बाबत किसी न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि पर पहले सजा भुगती है;

(iii) न्याय से भागने की आवेदक की संभाव्यता; और

(iv) जहां आवेदक को इस प्रकार गिरफ्तार कराकर क्षति पहुंचाने या अपमान करने के उद्देश्य से अभियोग लगाया गया है,

या तो तत्काल आवेदन अस्वीकार करेगा या अग्रिम जमानत मंजूर करने के लिए अन्तरिम आदेश देगा;

परन्तु यह कि जहां, यथास्थिति, उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय ने इस उपधारा के अधीन कोई अंतरिम आदेश पारित नहीं किया है या अग्रिम जमानत मंजूर करने के लिए आवेदन को अस्वीकार कर दिया है वहां किसी पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी इस बात के लिए मुक्त रहेगा कि ऐसे आवेदन में आशंकित अभियोग के आधार पर आवेदक को बिना वारण्ट के गिरफ्तार कर सके। (धारा 438(1)।

जहां न्यायालय उपधारा (1) के अधीन अंतरिम आदेश मंजूर

करता है वहां वह तत्काल एक सूचना जो सात दिवस से अन्यून की सूचना न होगी के साथ ऐसे आदेश की एक प्रति, न्यायालय द्वारा आवेदन की अंतिम रूप से सुनवाई के समय लोक अभियोजक को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देने की दृष्टि से, लोक अभियोजक और पुलिस अधीक्षक को देगा। (धारा 438(1) क))।

अग्रिम जमानत चाहने वाले आवेदक की उपस्थिति, यदि लोक अभियोजक द्वारा इसके लिए दिए आवेदन पर न्यायालय यह विचार करता है कि न्यायहित में ऐसी उपस्थिति आवश्यक है तो न्यायालय द्वारा आवेदन की अंतिम सुनवाई और अंतिम आदेश पारित करते समय, बाध्यकर होगी''। (धारा 438 (12) ख)

(2) जब उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय उपधारा (1) के अधीन निदेश देता है तब वह उस विशिष्ट मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए उन निदेशों में ऐसी शर्तें, जो वह ठीक समझे, सम्मिलित कर सकता है जिनके अन्तर्गत निम्नलिखित है–

(i) यह शर्त कि वह व्यक्ति पुलिस अधिकारी द्वारा पूछे जाने वाले परिप्रश्नों का उत्तर देने के लिए जैसे और जब अपेक्षित हो, उपलब्ध होगा;

(ii) यह शर्त कि वह व्यक्ति उस मामले के तथ्यों से अवगत किसी व्यक्ति को न्यायालय या किसी पुलिस अधिकारी के समक्ष ऐसे तथ्यों को प्रकट न करने के लिए मनाने के वास्ते प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः कोई उत्प्रेरणा, धमकी या वचन नहीं देगा;

(iii) यह शर्त कि वह व्यक्ति न्यायालय की पूर्व अनुज्ञा के बिना भारत नहीं छोड़ेगा;

(iv) ऐसी अन्य शर्तें जो धारा 437 (3) के अन्तर्गत अधिरोपित किए जा सकते हों। तत्पश्चात् यदि ऐसे व्यक्ति को ऐसे अभियोग पर पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी के द्वारा वारण्ट के बिना गिरफ्तार किया जाता है और वह या तो गिरफ्तारी के समय या जब वह ऐसे अधिकारी की अभिरक्षा में है तब किसी समय जमानत देने के लिए तैयार तब उसे जमानत पर छोड़ दिया जायेगा अथवा उपधारा (1) के अधीन जमानतीय वारण्ट जारी किया जायेगा। (धारा 438(3))।

दांडिक विधि (संशोधन) अधिनियम, 2018 द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 में उपधारा (4) अंतःस्थापित की है, जो इस प्रकार है, ''इस धारा की कोई बात, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 की उपधारा (3) या धारा 376 कख या धारा 376 घक और धारा 376 घख के अधीन अपराध किए जाने के अभियोग पर किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी की दशा में लागू नहीं होगी''।

धारा 440 के अन्तर्गत बंधपत्र की धनराशि का निर्धारण परिस्थितियों के अनुरुप निर्धारित किए जाने तथा अत्यधिक होने पर उसे कम किए जाने सम्बन्धी उपबंध हैं। अभियुक्त और प्रतिभूओं के द्वारा यथानिर्दिष्ट बंधपत्र निष्पादित किए जाने (धारा 441) के तत्काल बाद उस व्यक्ति/व्यक्तियों को अभिरक्षा से उन्मोचित कर दिया जायेगा (धारा 442)। यदि पूर्ववर्ती जमानत अपर्याप्त है तब न्यायालय पर्याप्त जमानत दिए जाने का आदेश कर सकता है।

अग्रिम जमानत के लिए आवेदन उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय में किया जा सकता है। उत्तर-प्रदेश राज्य के अन्तर्गत 01 मई, 1976 को इस धारा का लोप कर दिया गया है। अग्रिम सम्बन्धी प्रावधान समस्त गैर जमानतीय अपराधों पर भी लागू होते है। अग्रिम जमानत जमानत के लिए यह आवश्यक है कि किसी व्यक्ति पर कोई गम्भीर आरोप लगाया गया है और उसे कभी भी गिरफ्तार किए जा सकने की आशंका हो। अग्रिम जमानत की मांग वास्तविक रूप से गिरफ्तारी के पूर्व की जानी चाहिए। गिरफ्तार कर लिये जाने के पश्चात् अग्रिम जमानत की मांग नहीं की जा सकती। न्यायालय द्वारा स्वीकृत जमानत, वास्तविक गिरफ्तारी का प्रयास करते ही प्रभावी हो जाती है।

जमानत के बारे में उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय की विशेष शक्तियां–धारा 439 के अनुसार उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय यह निदेश दे सकता है कि–

(क) किसी ऐसे व्यक्ति को, जिस पर किसी अपराध का अभियोग है और जो अभिरक्षा में है, जमानत पर छोड़ दिया जाए और वह ऐसी कोई शर्त जो आवश्यक समझे, अधिरोपित कर सकता है;

(ख) किसी व्यक्ति को जमानत पर छोड़ने के समय मजिस्ट्रेट द्वारा अधिरोपित कोई शर्त अपास्त या उपातरित कर दी जाए; परन्तु उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय किसी ऐसे व्यक्ति की जो ऐसे अपराध का अभियुक्त है जो अनन्यतः सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है या जो आजीवन कारावास से दण्डनीय है, जमानत स्वीकृति के पूर्व जमानत के लिए आवेदन की सूचना लोक अभियोजन को उस दशा के सिवाय देगा जब उसकी, ऐसी कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे यह राय है कि ऐसी सूचना देना साध्य नहीं है। (धारा 439(1))।

दांडिक विधि (संशोधन) अधिनियम, 2018 द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 439 के उपधारा (1) में पहले परंतुक के पश्चात् निम्नलिखित परंतुक अंतःस्थापित किए गए हैं, परंतु यह और कि उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय किसी ऐसे व्यक्ति की, जो भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 की उपधारा (3) या धारा 376 कख या धारा 376 घक या धारा 376 घख के अधीन विचारणीय किसी अपराध का अभियुक्त है, जमानत लेने के पूर्व जमानत के

आवेदन की सूचना, ऐसे आवेदन की सूचना की प्राप्ति की तारीख से पन्द्रह दिन की अवधि के भीतर लोक अभियोजक को देगा।

439(1) (क) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 की उपधारा (3) या धारा 376 क या धारा घक या धारा 376 घख के अधीन व्यक्ति को जमानत के लिए आवेदन की सुनवाई के समय इत्तिला देने वाले या उसकी ओर से प्राधिकृत किसी व्यक्ति की उपस्थिति बाध्यकारी होगी।

उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय, किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसे जमानत पर छोड़ा जा चुका है, गिरफ्तार करने का निदेश दे सकता है और उसे अभिरक्षा के लिए सुपुर्द कर सकता है। (धारा 439 (2))।

ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जो जमानत पर अभियुक्त व्यक्ति के छोड़े जाने के लिए उसका प्रतिभू है, न्यायालय के समक्ष ऐसे व्यक्तियों के बारे में घोषणा करेगा जिनके लिए उसने प्रतिभूति दी है जिसके अन्तर्गत अभियुक्त भी है और उसमें सभी सुसंगत विशिष्टयाँ दी जाएंगी''। (धारा 441क)।

यदि भूल या कपट के कारण या अन्यथा अपर्याप्त प्रतिभू स्वीकार कर लिए गए है अथवा यदि वे बाद में अपर्याप्त हो जाते है तो न्यायालय यह निदेश देते हुए गिरफ्तारी का वारण्ट जारी कर सकता है कि जमानत पर छोड़े गए व्यक्ति को उसके समक्ष लाया जाए और उसे पर्याप्त प्रतिभू देने का आदेश दे सकता है और उसके ऐसा करने में असफल रहने पर उसे जेल के सुपुर्द कर सकता है। (धारा 443)।

जमानत पर छोड़े गए व्यक्ति की हाजिरी और उपस्थिति के लिए प्रतिभूओं में से सब या कोई बन्धपत्र के या तो पूर्णतया या वहां तक, जहां तक वह आवेदकों से सम्बन्धित है, प्रभावोन्मुक्त किए जाने के लिए किसी भी समय मजिस्ट्रेट से आवेदन कर सकते हैं।

प्रतिभूओं को उन्मोचित करने तथा जमानत पर छोड़े गये व्यक्ति को पुनः गिरफ्तार करने का आदेश देने की शक्ति मात्र मजिस्ट्रेट को है। (धारा 444)।

धारा 446 के अनुसार जहां कोई बन्धपत्र किसी न्यायालय के समक्ष हाजिर होने या संपत्ति पेश करने के लिए है और उस न्यायालय या किसी ऐसे न्यायालय को, जिसे मामला अंतरित किया गया है, समाधानप्रद रूप में यह साबित कर दिया जाता है कि बन्धपत्र **समपहृत (Forfeited)** हो चुका है, अथवा जहां किसी अन्य बन्धपत्र की बाबत उस न्यायालय को, जिसके द्वारा बन्धपत्र लिया गया था, या ऐसे किसी न्यायालय को, जिसे तत्पश्चात् मामला अंतरित किया गया है, या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट के किसी न्यायालय को, समाधानप्रद रूप में यह साबित कर दिया जाता है कि बन्धपत्र समपहृत हो चुका है। वहां न्यायालय ऐसे सबूत के आधारों को अभिलिखित करेगा और ऐसे बन्धपत्र से आबद्ध किसी व्यक्ति से अपेक्षा कर सकेगा कि वह उसकी शास्ति दे या कारण दर्शित करे कि वह क्यों नहीं दी जानी चाहिए। (धारा 446 (1))।

जहां बन्धपत्र किसी मामले में हाजिर होने के लिए है और उसकी किसी शर्त के भंग होने के कारण उसका समपहरण हो जाता है वहां–

(क) ऐसे व्यक्ति द्वारा निष्पादित बन्धपत्र तथा उसके प्रतिभूओं द्वारा निष्पादित एक या अधिक बन्धपत्र भी, यदि कोई हों, रद्द हो जाएंगे; और–

(ख) तत्पश्चात ऐसा कोई व्यक्ति उस मामले में केवल अपने ही बन्धपत्र पर छोड़ा नहीं जाएगा यदि, यथास्थिति, पुलिस अधिकारी या न्यायालय का, समाधान हो जाता है कि बन्धपत्र की शर्त का अनुपालन करने में असफल रहने के लिए बन्धपत्र से आबद्ध व्यक्ति के पास कोई पर्याप्त कारण नहीं था। (धारा 446 क)।

प्रतिभू के दिवालिया हो जाने या उसकी मृत्यु हो जाने या बन्ध पत्र का समपहरण हो जाने की दशा में प्रक्रिया–जब बन्धपत्र का कोई प्रतिभू दिवालिया हो जाता है या मर जाता है अथवा जब किसी बन्धपत्र का समपहरण हो जाता है तब वह न्यायालय, या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट उस व्यक्ति को, जिससे ऐसी प्रतिभूति मांगी गई थी, यह आदेश दे सकता है कि वह मूल आदेश के निदेशों के अनुसार नई प्रतिभूति दे और यदि ऐसी प्रतिभूति न दी जाए तो वह न्यायालय या मजिस्ट्रेट ऐसे कार्यवाही कर सकता है मानो उस मूल आदेश के अनुपालन में व्यतिक्रम किया गया है। (धारा 447)।

अवयस्क से अपेक्षित बन्धपत्र–बन्धपत्र निष्पादित करने के लिए किसी न्यायालय या अधिकारी द्वारा अपेक्षित व्यक्ति अवयस्क है तो वह न्यायालय या अधिकारी उसके बदले में केवल प्रतिभू या प्रतिभुओं द्वारा निष्पादित बन्धपत्र स्वीकार कर सकता है। (धारा 448)।

धारा 448 अवयस्क को बन्धपत्र निष्पादित किये जाने के बारे में विशेष रियायत प्रदान करती है। (वाधवा सिंह बनाम सम्राट, ए.आई.आर. 1928, लाहौर)।

धारा 450 के अनुसार उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय किसी मजिस्ट्रेट को निदेश दे सकता है कि वह उस रकम को उद्गृहीत करे जो ऐसे उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय में हाजिर और उपस्थित होने के लिए किसी बन्धपत्र पर देय है।

प्रश्नकोश

Q. अग्रिम जमानत दण्ड प्रक्रिया संहिता के किस धारा में परिभाषित है?

A. धारा 438।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता के (निम्न) किस धारा के अधीन एक पुलिस अधिकारी किसी अभियुक्त को गैर जमानती मामले में जमानत पर रिहाकर सकता है?

A. धारा 436।

Q. अग्रिम जमानत के लिए आवेदन किस न्यायालय के समक्ष किया जा सकता है?

A. उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय के समक्ष धारा 438 (1)।

Q. अग्रिम जमानत सम्बन्धी आदेश द. प्र. सं. की धारा 438 के अन्तर्गत कैसे अपराधों में दिया जा सकता है?

A. केवल अजमानतीय अपराधों में।

Q. धारा 438 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय आवेदन पर क्या निर्देश दे सकता है?

A. ऐसी गिरफ्तारी की स्थिति में उसे जमानत पर छोड़ दिया जाय।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 और धारा 439 के प्रावधानों में क्या समान बात है?

A. इन दोनों में से किसी भी प्रावधान के अधीन पारित आदेश केवल गिरफ्तारी पर ही प्रभावशील होगा।

Q. (निम्न में से) कौन सा वाद अग्रिम जमानत से सम्बन्धित है?

A. दिनेश डालमियां बनाम सी. बी. आई.।

Q. किसी व्यक्ति को जमानत पर छोड़ने के समय मजिस्ट्रेट द्वारा अधिरोपित कोई शर्त किस धारा के अन्तर्गत अपास्त या उपान्तरित किया जा सकता है?

A. धारा 439 (1) (ख)।

Q. प्रतिभूति पत्र के जब्त होने के पहले यदि प्रतिभू की मृत्यु हो जाती है तब उसकी सम्पदा पर उत्तरदायित्व की प्रकृति क्या होगी?

A. उत्तरदायित्व समाप्त हो जायेगा। धारा 446(4)।

Q. जमानत और बन्धपत्रों के विषय में उपबन्ध संहिता की किन धाराओं में है?

A. (अध्याय 33 की) धारा 436 से 450 तक में।

Q. संहिता की कौन सी धारायें जमानत के बारे में उपबन्ध प्रस्तुत करती है?

A. धारा 436 से लेकर 439 तक की धारायें।

Q. जमानत (Bail) शब्द से क्या तात्पर्य है?

A. जमानत कैदी की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए दी जाने वाली वह प्रतिभूति है, जिसके दिये जाने की स्थिति में अभियुक्त को अन्वेषण, जांच अथवा विचारण की लम्बितावस्था में छोड़ दिया जाता है।

Q. संहिता की धारा 436 किस प्रकार का उपबन्ध है?

A. यह धारा जमानत के सम्बन्ध में आज्ञापक उपबंध प्रस्तुत करती है?

Q. जब जमानतीय अपराध के किसी व्यक्ति को पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा वारण्ट के बिना गिरफ्तार या निरुद्ध किया जाता है, या वह न्यायालय के समक्ष लाया या हाजिर होता है और वह ऐसे अधिकारी की अभिरक्षा में हैं, तो धारा 436 क्या निदेश देती है?

A. ऐसी स्थिति में उस बीच जब वह अभिरक्षा में है किसी समय या ऐसे न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम में, जमानत देने के लिए तैयार है, तो उसे जमानत पर छोड़ दिया जायेगा।

Q. कोई पुलिस अधिकारी या न्यायालय अभियुक्त से जमानत लेने के बजाय कब उसे उन्मोचित कर सकता है?

A. जब वह अपने हाजिर होने के लिए प्रतिभूओं रहित बन्धपत्र निष्पादित करे।

Q. न्यायाधिपति वी. आर. कृष्णा अय्यर ने किस प्रकरण में अपना यह अभिकथन दिया कि ''लोक न्याय का यदि प्रवर्धन करना है, तो यन्त्रवत निरोध को कम करना होगा''?

A. गुडीकान्ती नरसिम्हुलू बनाम लोक अभियोजक, आन्ध्र प्रदेश, उच्च न्यायालय 1978 सु. कोर्ट के प्रकरण में।

Q. 'जो अपराध जमानतीय है, वहां एक नियम के रूप में जमानत मंजूर कर देना चाहिए और जो अपराध अजमानतीय है, वहां भी न्यायालय को अपने सद्विवेक का प्रयोग करते हुए जमानत मंजूर कर देना चाहिए, यदि कुछ आपवादिक परिस्थितियाँ विद्यमान न हों''। यह अभिकथन किस वाद में और किसके द्वारा प्रस्तुत किया गया?

A. यह अभिकथन मोतीराम बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 1979 के वाद में जस्टिस कृष्णा अय्यर ने प्रस्तुत किया।

Q. संहिता में जमानत के कितने प्रकार उपबंधित हैं?

A. 4 प्रकार–

(a) साधिकार जमानत (धारा 436 (1) 437 (2) (6) एवं (7)),

(b) स्वविवेकीय जमानत (धारा 436 (2) 437 (1) 438 एवं 439),

(c) अग्रिम जमानत (धारा 438),

(d) सशर्त जमानत (धारा 437 (3))।

Q. संहिता की धारा 437 का क्या उद्देश्य है?

A. इस धारा का उद्देश्य उन स्थितियों के लिए उपबन्ध प्रस्तुत करना है, जब अपराध अजमानतीय है।

Q. धारा 437 (1) के अधीन जमानत पर छोड़े जाने का स्वरूप क्या है?

A. निदेशात्मक अथवा विवेकात्मक।

Q. संहिता की धारा 437(1) के अधीन कब किसी व्यक्ति को जमानत पर छोड़ा जा सकता है?

A. जब वह अजमानतीय अपराध का अभियुक्त है और पुलिस अधिकारी द्वारा वारण्ट के बिना गिरफ्तार किया जाता है और उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय से भिन्न किसी न्यायालय में उपस्थिति होता है या लाया जाता है।

Q. अजमानतीय अपराध के अभियुक्त को किन दशाओं में नहीं छोड़ा जायेगा?

A. (1) जब यह विश्वास करने के लिए उचित आधार प्रतीत होते हैं कि वह मृत्यु या आजीवन कारावास से दण्डनीय अपराध का दोषी है, या

(2) जब वह संज्ञेय अपराध का अभियुक्त है, तथा वह मृत्यु, आजीवन कारावास या 7 वर्ष से अधिक के कारावास के लिए पहले दण्डित किया जा चुका है, अथवा पहले दो या अधिक अवसरों पर वह अजमानतीय तथा संज्ञेय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा चुका है। (धारा 437 (1) (i) (ii))।

Q. संहिता की धारा 437 (1) के खण्ड (i) एवं (ii) में आने वाले व्यक्ति किन दशाओं में जमानत पर छोड़े जा सकते हैं?

A. जब ऐसा व्यक्ति 16 वर्ष से कम आयु का है, या कोई स्त्री है, या कोई रोगी या शिथिलांग व्यक्ति है, तो उसे जमानत पर छोड़ा जा सकता है।

Q. यदि अन्वेषण, जांच या विचारण के किसी प्रक्रम में पुलिस अधिकारी या न्यायालय को यह प्रतीत हो कि, यह विश्वास करने के लिए उचित आधार नहीं है कि अभियुक्त ने अजमानतीय अपराध किया है, किन्तु उसके दोषी होने के बारे में जांच करने के लिए पर्याप्त आधार है, तो ऐसे में क्या प्रक्रिया विहित है?

A. ऐसी स्थिति में ऐसे अभियुक्त को ऐसे पुलिस अधिकारी या न्यायालय द्वारा, जैसी भी स्थिति हो, अपने हाजिर होने के लिए प्रतिभुओं रहित बन्धपत्र निष्पादित करने पर छोड़ दिया जायेगा (धारा 437 (2))।

Q. यदि किसी अजमानतीय अपराध के अभियुक्त का विचारण साक्ष्य लेने के लिए नियत प्रथम तारीख से 60 दिन के अंदर पूरा नहीं हो जाता है, तो ऐसे में मजिस्ट्रेट क्या करेगा?

A. ऐसे में यदि ऐसा व्यक्ति विचारण की सम्पूर्ण अवधि के दौरान अभिरक्षा में रहा है, जमानत पर छोड़ दिया जायेगा, जब तक कि कारणों को लेखबद्ध करते हुए मजिस्ट्रेट अन्यथा आदेश न दे (धारा 437(6)।

Q. संहिता की धारा 437 की उपधारा (7) में क्या उपबंधित है?

A. इस उपधारा के अनुसार यदि अजमानतीय अपराध में अभियुक्त व्यक्ति के विचारण समाप्त हो जाने के पश्चात् और निर्णय दिये जाने के पूर्व किसी समय न्यायालय इस विचार का है कि अभियुक्त ऐसे किसी अपराध का दोषी नहीं है, तो यदि वह अभिरक्षा में है, निर्णय सुनने और हाजिर होने के लिए प्रतिभुओं रहित बन्धपत्र निष्पादित किये जाने पर छोड़ दिया जायेगा।

Q. अभियुक्त पर किन अपराधों का अभियोग होने की स्थिति में उसे सशर्त जमानत दी जा सकती है?

A. (i) 7 वर्ष या उससे अधिक की अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध करने का, या

(ii) भारतीय दण्ड संहिता के अध्याय 6, अध्याय 16 या अध्याय 17 के अधीन कोई अपराध करने का, या

(iii) उक्त अपराधों में से किसी के दुष्प्रेरण, षड्यन्त्र या प्रयत्न करने का या उसके संदेह का अभियोग होने की स्थिति में।

Q. अभियुक्त को जमानत पर छोड़े जाते समय न्यायालय उस पर कौन सी शर्तें अधिरोपित कर सकता है?

A. (i) यह कि वह अध्याय 33 के अधीन निष्पादित बंधपत्र की शर्तों के अनुसार हाजिर होगा, अथवा

(ii) ऐसा अभियुक्त उस अपराध जैसा, जिसको करने का उस पर अभियोग या संदेह है, कोई अपराध नहीं करेगा, अथवा

(iii) न्याय के हित में अन्यथा कोई भी शर्त जो वह आवश्यक समझे अधिरोपित कर सकता है।

Q. संहिता की धारा 437 की किस उपधारा में जमानत पर छोड़े गये व्यक्ति, को गिरफ्तार करने और उसे अभिरक्षा में सुपुर्द करने की न्यायालय की शक्ति उपबंधित है?

A. दारा 437 की उपधारा (5) में।

Q. कौन से लोग जमानत अनुदानित कर सकते हैं?

A. (i) पुलिस अधिकारी (धारा 42, धारा 169, धारा 436, धारा 437)

(ii) मजिस्ट्रेट (धारा 167 (2), धारा 436 एवं धारा 437)

(iii) उच्च न्यायालय एवं सेशन न्यायालय (धारा 438 एवं धारा 439)।

Q. कोई व्यक्ति कब धारा 438 के अधीन निदेश के लिए उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय में आवेदन कर सकता है?

A. जब उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि हो सकता है कि उसको किसी अजमानतीय अपराध के किये जाने के अभियोग में गिरफ्तार कर लिया जाये (धारा 438 (1))।

Q. उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय अग्रिम जमानत के सम्बन्ध में निदेश देते समय ऐसे व्यक्ति पर कौन सी शर्तें उस निदेश में अधिरोपित कर सकता है?

A. (i) यह कि, जमानत पर छोड़ा जाने वाला व्यक्ति, पुलिस अधिकारी के परिप्रश्नों का उत्तर देने के लिए उपलब्ध रहेगा,
(ii) यह कि ऐसा व्यक्ति किसी भी ऐसे व्यक्ति को, जो उसके मामले के तथ्यों की जानकारी रखता हो, न्यायालय या पुलिस अधिकारी के समक्ष ऐसे तथ्य को प्रकट न करने केलिए कोई उत्प्रेरणा, धमकी या वचन नहीं देगा,
(iii) यह कि ऐसा व्यक्ति न्यायालय के पूर्व अनुमति के बिना भारत नहीं छोड़ेगा,
(iv) ऐसी अन्य शर्तें जो धारा 437 (3) के अधीन अधिरोपित की जा सकती है (धारा 438 (2))।

Q. अग्रिम जमानत के क्या परिणाम है?

A. निम्नलिखित परिणाम हैं–ऐसा व्यक्ति पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा वारण्ट के बिना गिरफ्तार किया जाता है तो यदि गिरफ्तारी के समय उपयुक्त प्रतिभूओं सहित या रहित बंधपत्र निष्पादित करे, तो–
(i) गिरफ्तारी के समय या जब वह ऐसे अधिकारी की अभिरक्षा में है, जमानत पर छोड़ दिया जायेगा,
(ii) यदि मजिस्ट्रेट किसी अपराध के लिए वारण्ट जारी करने के लिए आवश्यक समझता है तो जमानतीय वारण्ट जारी करेगा (धारा 438 (3))।

Q. क्या उत्तर प्रदेश में धारा 438 लागू है?

A. नहीं! उत्तर प्रदेश का अधिनियम संख्यांक (16), 1976 की धारा 9 द्वारा इस धारा का 01 मई, 1976से लोप कर दिया गया है।

Q. छज्जूराम बनाम स्टेट ऑफ हरियाणा, 1978 सु. कोर्ट के प्रकरण में क्या कहा गया?

A. यद्यपि धारा 438 कहती है कि अग्रिम जमानत देने की अधिकारिता उच्च न्यायालय एवं सेशन न्यायालय दोनों को हैं, किन्तु प्रथमतः उच्च न्यायालय के बजाय सेशन न्यायालय में आवेदन दिया जाना चाहिए।

Q. किस प्रकरण में यह धारित किया गया कि ''यदि अग्रिम जमानत की अर्जी सेशन न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी है, तो केवल उसी आधार पर उच्च न्यायालय में आवेदन नहीं किया जा सकता है''?

A. अभय कुमार बनाम स्टेट ऑफ वेस्ट बंगाल, 1978 Cr. L. J. के प्रकरण में।

Q. किस प्रकरण में यह अवधारित किया गया कि ''अग्रिम जमानत यदि उच्च न्यायालय द्वारा अनुदानित किया गया है तो उसे खारिज करने का अधिकार भी उसी को है, किसी अन्य दण्डाधिकारी को नहीं''?

A. भोले मिस्त्री बनाम स्टेट, 1977 Cr. L. J. के प्रकरण में।

Q. अग्रिम जमानत और सामान्य जमानत में क्या अंतर है?

A. सामान्य जमानत गिरफ्तारी के बाद, जबकि अग्रिम जमानत गिरफ्तारी के पूर्वानुमान के आधार पर, अनुदत्त की जाती है।

Q. गुरुबख्श सिंह बनाम स्टेट ऑफ पंजाब, 1980 सु. को. के वाद में अग्रिम जमानत के सम्बन्ध में क्या विचार व्यक्त किये गये?

A. अग्रिम जमानत देते समय न्यायालय को तथ्य और परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए, और यदि उसे लगता है कि सम्बन्धित व्यक्ति को अजमानतीय अपराध के लिए न्यायहित में नहीं बल्कि नीचा दिखाने के लिए गिरफ्तार किया जाने वाला है, तो उसे अवश्य जमानत दी जानी चाहिए, यदि उसे लगता है कि व्यक्ति इस नियम का फायदा उठाकर पलायित हो जायेगा तो उसे जमानत नहीं दी जानी चाहिए।

Q. जमानत के विषय में उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय की विशेष शक्तियाँ संहिता की किस धारा में व्यवस्थित हैं?

A. धारा 439 में।

Q. उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय अपनी विशेष शक्तियों का प्रयोग करते हुए क्या निदेश जारी कर सकते हैं?

A. (a) यह कि ऐसे किसी व्यक्ति को जिस पर किसी अपराध का अभियोग है और जो अभिरक्षा में है, जमानत पर छोड़ दिया जाय और यदि अपराध धारा 437 (3) में विनिर्दिष्ट प्रकार का है, तो वह कोई शर्त भी अधिरोपित कर सकता है।
(b) यह कि किसी व्यक्ति को जमानत पर छोड़ने के समय मजिस्ट्रेट द्वारा अधिरोपित कोई शर्त अपास्त या उपान्तरित कर दी जाये।
(c) यह कि, किसी ऐसे व्यक्ति को जिसे अध्याय 33 के अधीन जमानत पर छोड़ा जा चुका है, गिरफ्तार कर लिया जाय और उसे अभिरक्षा के लिए सुपुर्द कर दिया जाय।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता में जमानत रद्द करने सम्बन्धी प्रावधान कहां दिये गये हैं?

A. संहिता की धारा 437 की उपधारा (5) में एवं धारा 439 की उपधारा (2) में उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय द्वारा।

Q. संहिता की कौन सी धारायें बन्धपत्रों के सम्बन्ध में उपबन्ध करती है?

A. धारा 440 से लेकर 450 तक की धारायें।

Q. बन्धपत्र की रकम कितनी होगी?

A. यह मामले की परिस्थितियों का सम्यक् ध्यान रखकर नियत की जायेगी और अत्यधिक नहीं होगी (धारा 440 (1))।

Q. पुलिस अधिकारी या मजिस्ट्रेट द्वारा नियत की गयी जमानत को घटाने का निदेश कौन से न्यायालय दे सकते हैं?

A. उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय (धारा 440 (2))।

Q. बन्धपत्र (Bond) शब्द से क्या तात्पर्य है?

A. इस शब्द का तात्पर्य जमानतनामा या जमानत पत्र (bail Bond) से है जिसका तात्पर्य किसी कैदी और उसके प्रतिभू द्वारा किया गया ऐसा बन्धपत्र है जिसमें कैदी को किसी न्यायालय में किसी निश्चित दिन अथवा जब उसको बुलाया जाय, हाजिर होना सुनिश्चित किया जाता है।

Q. जब कोई अभियुक्त या प्रतिभू जमानत पर छोड़ा जाता है, तो न्यायालय या पुलिस अधिकारी उसके द्वारा निष्पादित बन्धपत्र में कौन सी शर्तें अधिरोपित कर सकते हैं?

A. यह कि ऐसा व्यक्ति बन्धपत्र में वर्णित समय और स्थान पर हाजिर होगा, और जब तक अन्यथा आदेश न दिया जाय बराबर हाजिर होता रहेगा।

Q. जब अभियुक्त द्वारा बन्धपत्र निष्पादित कर दिया जाता है तो उसे अभिरक्षा से उन्मोचित कर दिये जाने की प्रक्रिया किस धारा में उपवर्णित है?

A. धारा 442 में।

Q. यदि भूल या कपट के कारण अपर्याप्त प्रतिभू स्वीकार किये गये हैं अथवा यदि वे बाद में अपर्याप्त हो जाते हैं; तो न्यायालय क्या कर सकता है?

A. ऐसे में न्यायालय यह निर्देश देते हुए गिरफ्तारी का वारंट जारी कर सकता है कि जमानत पर छोड़े गये व्यक्ति को उसके समक्ष लाया जाय और वह पर्याप्त प्रतिभूति दे। (धारा 443)।

Q. पर्याप्त प्रतिभूति देने में असफल रहने पर न्यायालय क्या कर सकता है?

A. अभियुक्त को जेल के सुपुर्द कर सकता है। (धारा 443)।

Q. प्रतिभुओं के उन्मोचन से संबंधित धारा कौन-सी है?

A. धारा 444।

Q. कोई न्यायालय या उपयुक्त अधिकारी बन्धपत्र के निष्पादन के बदले में किसी रकम के सरकारी वचन-पत्र को निक्षिप्त करने की अनुज्ञा दे सकता है, यह नियम किस बन्धपत्र को लागू नहीं होती है?

A. सदाचार के लिए बन्धपत्र को। (धारा 445)।

Q. यदि शास्ति न देने के लिए पर्याप्त कारण दर्शित नहीं किया जाता है और शास्ति नहीं दी जाती है, तो न्यायालय क्या कर सकेगा?

A. ऐसे में न्यायालय शास्ति की वसूली जुर्माना के रूप में कर सकता है। (धारा 446(2))।

Q. शास्ति का भुगतान न किये जाने पर उसके प्रतिभू के रूप में आबद्ध व्यक्ति को शास्ति की वसूली का आदेश देने वाला न्यायालय क्या आदेश दे सकेगा?

A. ऐसे प्रतिभू के लिए ऐसा न्यायालय आदेश दे सकता है कि वह सिविल कारगार में 6 मास तक की अवधि के लिए कारावासित किया जाय। (धारा 446 (2))।

Q. जहां कोई बन्धपत्र किसी मामले में किसी व्यक्ति की उपस्थिति के लिए है, तथा वह किसी शर्त भंग के कारण समपहृत हो जाता है, तो इसका क्या प्रभाव होगा?

A. ऐसे में वह बंधपत्र रद्द माना जायेगा और ऐसा व्यक्ति उस मामले में केवल अपने निजी बंधपत्र पर छोड़ा न जायेगा। (धारा 446 (क)।

Q. ऐसा व्यक्ति जिसका बंधपत्र समपहृत कर लिया गया है, कब छोड़ा जा सकता है?

A. ऐसी धनराशि के लिए जैसा पुलिस अधिकारिता या न्यायालय पर्याप्त समझे, जब वह कोई नया व्यक्तिगत बन्धपत्र और एक या अधिक प्रतिभुओं के बन्धपत्र निष्पादित कर दे।

Q. प्रतिभू के दिवालिया हो जाने या उसकी मृत्यु हो जाने या बन्धपत्र का समापहरण हो जाने की दशा में क्या प्रक्रिया अपनाई जाती है?

A. ऐसी दशा में वह न्यायालय, जिसके आदेश से ऐसा बन्धपत्र लिया गया था या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट उस व्यक्ति को, जिससे ऐसी प्रतिभूति माँगी गयी थी, यह आदेश दे सकता है कि वह मूल आदेश के निर्देशों के अनुसार नई प्रतिभूति दे, और यदि ऐसी प्रतिभूति न दी जाय तो वह न्यायालय या मजिस्ट्रेट ऐसी कार्यवाही कर सकता है मानों उस मूल आदेश के अनुपालन में व्यतिक्रम किया गया है। (धारा 447)।

Q. यदि कोई न्यायालय किसी अवयस्क से बन्धापत्र निष्पादित करने की अपेक्षा करता है तो उसके बदले किसका बन्धपत्र स्वीकार कर सकता है?

A. ऐसा न्यायालय उसके बदले केवल प्रतिभू या प्रतिभुओं द्वारा निष्पादित बन्धपत्र स्वीकार कर सकता है। (धारा 448)।

Q. जब किसी व्यक्ति द्वारा निष्पादित बन्धपत्र के समपहरण का आदेश दिया जाता है, तो उसकी अपील कहां होगी?

A. (i) किसी मजिस्ट्रेट द्वारा किये गये आदेश की अपील सेशन न्यायाधीश को,

(ii) सेशन न्यायालय द्वारा किये गये आदेश की अपील उस न्यायालय को जिसे ऐसे न्यायालय द्वारा किये गये आदेश से अपील होती है। अर्थात् उच्च न्यायालय में (धारा 449)।

Q. मुचलकों पर देय धनराशि को वसूल करने की आदेश देने की शक्ति किसे है?

A. उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय को। (धारा 450)।

संपत्ति का व्ययन (Disposal of Property) (धारा 451-459)

न्यायालय के समक्ष किसी जांच या विचारण के दौरान प्रस्तुत की गयी सम्पत्ति के व्ययन से सम्बन्धित उपबंध संहिता के अध्याय 34 धारा 451 से 459 में किया गया है। प्रायः ऐसी सम्पत्तियां या तो कारित अपराध की विषय वस्तु होती हैं या अभियुक्त से जब्त अथवा न्यायालयी आदेश से कुर्क की गयी होती हैं। इन सम्पत्तियों न्यायालय की अभिरक्षा में माना जाता है और न्यायालय ही उसके व्ययन के सम्बन्ध में इस अध्याय के उपबंधों के अधीन समुचित आदेश दे सकती है।

विचारण लम्बित रहने के दौरान सम्पत्ति की अभिरक्षा और व्ययन–जब कोई संपत्ति, किसी दण्ड न्यायालय के समक्ष किसी जांच या विचारण के दौरान पेश की जाती है तब वह जांच या विचारण के समाप्त होने तक ऐसी सम्पत्ति की उचित अभिरक्षा के लिए ऐसा आदेश, जैसा वह ठीक समझे, कर सकता है और यदि करना अन्यथा समीचीन है तो वह ऐसा साक्ष्य अभिलिखित करने के पश्चात् उसके विक्रय या उसका अन्यथा व्ययन किए जाने के लिए आदेश कर सकता है। (धारा 451)।

विचारण की समाप्ति पर सम्पत्ति का व्ययन–किसी दण्ड न्यायालय में जांच या विचारण समाप्त हो जाने पर न्यायालय ऐसी सम्पत्ति या दस्तावेज जो उसके समक्ष प्रस्तुत की गयी है, अथवा उसकी अभिरक्षा में है या जिसके सन्दर्भ में कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है अथवा जो किसी अपराध करने में प्रयुक्त की गयी है के निम्न प्रकार से व्ययन का आदेश दे सकेगा–

(a) नष्ट करके,

(b) अधिकृत करके, या

(c) उस पर कब्जे का हकदार होने का दावा करने वाले व्यक्ति को परिदान करके, या

(d) किसी अन्य प्रकार से (धारा 452 (1)।

सम्पत्ति के हकदार व्यक्ति को उक्त सम्पत्ति यह बंधपत्र निष्पादित करने पर दिया जा सकता है कि वह व्यक्ति तब सम्पत्ति को न्यायालय को वापस कर देगा जब उपधारा (1) के अधीन आदेश को अपील या पुनरीक्षण में अपास्त या उपान्तरित कर दिया गया है। (धारा 451 (2))। उपधारा (1) के अधीन पारित आदेश ऐसे पारित होने के 2 माह तक या अपील किए जाने पर अपील के निपटारा होने कार्यान्वित नहीं किया जायेगा। सिवाय तब जब कि उक्त सम्पत्ति पशुधन या शीघ्रतया और प्रकृत्या क्षयशील है। (धारा 452 (4)।

चोरी की सम्पत्ति के व्ययन के सम्बन्ध में उपबंध धारा 453 में किया गया है जिसके अनुसार अभियुक्त के पास से मिले धन को निर्दोष क्रेता को संदाय किया जा सकता है।

धारा 452 या 453 के अधीन पारित आदेशों की अपील उस न्यायालय में होगी जिसमें उन आदेशों की अपील सामान्य प्रक्रिया के तहत होती (धारा 454)। न्यायालय अश्लील और अपमान लेखीय सामग्रियों को नष्ट कर देने का भी आदेश दे सकती है (धारा 455)।

यदि कोई व्यक्ति बल प्रयोग द्वारा किसी व्यक्ति के द्वारा अपनी सम्पत्ति से बेदखल कर दिया गया है तो अभियुक्त व्यक्ति के दोषसिद्धि के बाद उस सम्पत्ति का कब्जा हकदार व्यक्ति के पक्ष में लौटाने का आदेश दिया जा सकेगा किन्तु ऐसा आदेश ऐसी दोषसिद्धि की तारीख से एक माह के पश्चात् नहीं दिया जायेगा। (धारा 456)। यदि सम्पत्ति पुलिस अधिकारी के द्वारा अभिग्रहण किया गया है तो मजिस्ट्रेट हकदार व्यक्ति को सौंपे जाने का आदेश कर सकता है किन्तु ऐसे सम्पत्ति का दावा करने वाले व्यक्ति को ऐसी उद्घोषणा के 6 माह के भीतर अपना दावा साबित करना होगा (धारा 457)। यदि ऐसा दावा विफल हो जाता है तो मजिस्ट्रेट सम्पत्ति को राज्य में निहित हो जाने का आदेश देगा। धारा (458)। यदि सम्पत्ति का हकदार व्यक्ति अनुपस्थित अथवा अज्ञात है और सम्पत्ति शीघ्रतया और प्रकृत्या क्षयशील है या उसका विक्रय स्वामी के फायदे के लिए हो तथा उसका मूल्य 500/- रुपये से कम नहीं है, तब मजिस्ट्रेट उक्त सम्पत्ति के विक्रय का आदेश दे सकता है और उसका व्ययन धारा 457 व धारा 458 के अनुसार किया जायेगा।

प्रश्नकोश

Q. विचारण की समाप्ति के बाद दण्ड न्यायालय सम्पत्ति के निराकरण के लिए क्या आदेश कर सकता है? जो सही नहीं है?

A. ऐसा निराकरण नष्टीकरण द्वारा या कब्जे के अधिकृत व्यक्ति को कब्जा संदाय द्वारा या राज्यसात् द्वारा किया जा सकता है, किन्तु सम्पत्ति के स्वामित्व पर व्यक्ति के स्वत्व की घोषणा नहीं कर सकता है। (मोहम्मद इस्माइल बनाम फहमदा नाहिद, 1966 क्रि. लॉ ज. 1094)।

Q. दण्ड प्रक्रिया (संशोधन) अधिनियम, 2005 के द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 459 में ''दस रुपये से कम'' शब्दों को किन शब्दों से प्रतिस्थापित किया गया है?

A. ''पाँच सौ रुपये से कम''।

Q. संहिता की धारा 451 में क्या उपबंध किया गया है?

A. इस धारा में अभिकथित सम्पत्ति के अभिरक्षण और व्ययन के निमित्त जांच अथवा विचारण या जांच अथवा विचारण की समाप्ति पर अंतिम आदेश की लम्बितावस्था में अंतरिम आदेश या शीघ्रतया या प्रकृत्या क्षयशील सम्पत्ति के विक्रय आदेश पारित करने की न्यायालय की शक्ति उपबंधित है।

Q. किसी सम्मति के कब्जे का हकदार होने का दावा करने वाले व्यक्ति को उस सम्पत्ति का परिदान न्यायालय कैसे आदेश के द्वारा कर सकता है?

A. ऐसे परिदान का आदेश किसी शर्त के बिना या इस शर्त के साथ लिया जा सकता है कि वह प्रतिभुओ रहित या सहित बंधपत्र निष्पादित करे कि यदि उस सम्पत्ति के परिदान का आदेश अपील या पुनरीक्षण में उपांतरित या अपास्त कर दिया गया, तो वह उस सम्पत्ति को न्यायालय में लौटा देगा। (धारा 452(2))।

Q. धारा 452 (1) के अधीन सम्पत्ति के संबंध में न्यायालय द्वारा किया गया आदेश कब कार्यान्वित किया जा सकेगा?

A. 2 माह की अवधि व्यतीत हो जाने के पश्चात्, अथवा जहां अपील उपस्थित की गयी है वहां जब तक उस अपील का निपटारा न हो जाय, किन्तु यह अवधि शीघ्रतया या प्रकृत्या क्षयशील सम्पत्ति के संबंध में लागू नहीं होगी। (धारा 452 (4)

Q. किसी चुराई हुई सम्पत्ति के निर्दोष क्रेता द्वारा सम्पत्ति क्रय किये जाने के पश्चात् यदि अभियुक्त गिरफ्तार हो जाता है और उसकी शिनाख्त पर सम्पत्ति क्रेता द्वारा उसके स्वामी को लौटा दी जाती है, तो क्रेता को क्या राहत मिलेगी?

A. क्रेता को, जो राशि उसने अभियुक्त को परिदत्त किया है, उससे अनधिक राशि, दिलाया करेगा। (धारा 453)।

Q. संहिता की धारा 452 एवं 453 के अंतर्गत आदेशों के विरुद्ध अपील से संबंधित व्यवस्था किस धारा में दी गयी है?

A. धारा 454 में।

Q. स्थावर सम्पत्ति का कब्जा लौटाने के संबंध में न्यायालय कब अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकता है?

A. (i) जब, न्यायालय द्वारा किसी को अपराधिक बल या बल प्रदर्शन या आपराधिक अभित्रास से युक्त किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाय और

(ii) न्यायालय को यह प्रतीत हो कि ऐसे बल या बल प्रदर्शन या अभित्रास से कोई व्यक्ति किसी स्थावर सम्पत्ति से बेकब्जा किया गया है। (धारा 456(1) का परन्तुक)

Q. सम्पत्ति से बेकब्जा किये गये व्यक्ति को, कब्जा लौटाने का अभियुक्त को आदेश, दोषसिद्धि के पश्चात् कब तक दिया जा सकेगा?

A. दोषसिद्धि के 1 मास के अंदर तक ही। (धारा 456)।

Q. संहिता की कौन-सी धारा पुलिस अधिकारी द्वारा अभिग्रहण की गयी सम्पत्ति के लिए प्रक्रिया प्रस्तुत करती है?

A. धारा 457।

Q. यदि सम्पत्ति का हकदार अज्ञात व्यक्ति है, तो मजिस्ट्रेट उसके समक्ष पेश की गयी सम्पत्ति को निरुद्ध करते हुए, सम्पत्ति की अंगभूत वस्तुओं के विनिर्देश से युक्त, एक उद्घोषणा जारी करेगा, जिसमें सम्पत्ति पर दावा करने वाले व्यक्ति से क्या अपेक्षा की जायेगी?

A. यह अपेक्षा कि वह व्यक्ति मजिस्ट्रेट के समक्ष हाजिर हो और उद्घोषणा की तारीख से 6 माह के भीतर अपने दावे को सिद्ध करे। (धारा 457 (2))।

Q. यदि 6 मास के अंदर कोई व्यक्ति सम्पत्ति पर अपना दावा सिद्ध नहीं करता, और सम्पत्ति, जिस व्यक्ति के कब्जे में पायी गयी थी, वह उसे अपने वैध रूप से अर्जन को सिद्ध नहीं कर पाता, तो मजिस्ट्रेट क्या आदेश दे सकता है?

A. यह आदेश दे सकता है कि ऐसी सम्पत्ति राज्य सरकार के व्ययनाधीन होगी तथा उस सरकार द्वारा विक्रय की जा सकेगी। (धारा 458)।

Q. मजिस्ट्रेट किसी विनश्वर प्रकृति की सम्पत्ति को बेचने का आदेश कब दे सकता है?

A. जब–(a) सम्पत्ति पर कब्जे का हकदार व्यक्ति अज्ञात या अनुपस्थित है और सम्पत्ति शीघ्रतया और प्रकृत्या क्षयशील है, अथवा

(b) उस मजिस्ट्रेट की, जिसे उसके अभिग्रहण की रिपोर्ट की गयी है, यह राय है कि उसका विक्रय स्वामी के फायदे के लिए होगा, अथवा

(c) ऐसी सम्पत्ति का मूल्य 500 रुपये से कम है। (धारा 459)।

अनियमित कार्यवाहियां (Irregular Proceedings)

(धारा 460-466)

दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 35 के अन्तर्गत उन कार्यवाहियों का उल्लेख किया गया है जो दण्ड न्यायालयों के द्वारा कारित किसी अनियमितता से ग्रसित हैं। इस अध्याय में उन अनियमित कार्यवाहियों के प्रभाव का उल्लेख है जिन्हें या तो दूषित होने से मुक्त मान लिया गया है या वास्तव में उन्हें दूषित मान लिया गया है।

वे अनियमितताएं जो कार्यवाही को दूषित नहीं करती–यदि कोई मजिस्ट्रेट, जो निम्नलिखित बातों में से किसी को करने के लिए विधि द्वारा सशक्त नहीं है, गलती से सद्भावपूर्वक उस बात को करता है तो उसकी कार्यवाही को केवल इस आधार पर कि वह ऐसे सशक्त नहीं था अपास्त नहीं किया जाएगा, अर्थात्–

(क) धारा 94 के अधीन तलाशी–वारण्ट जारी करना;

(ख) किसी अपराध का अन्वेषण करने केलिए पुलिस को धारा 155 के अधीन आदेश देना;

(ग) धारा 176 के अधीन मृत्यु–समीक्षा करना;

(घ) अपनी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर के उस व्यक्ति को, जिसने ऐसी अधिकारिता की सीमाओं के बाहर अपराध किया है, पकड़ने के लिए धारा 187 के अधीन आदेशिका जारी करना;

(ङ) किसी अपराध का धारा 190 की उपधारा (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ख) के अधीन संज्ञान करना;

(च) किसी मामले को धारा 192 की उपधारा (2) के अधीन हवाले करना;

(छ) धारा 306 के अधीन क्षमादान करना;

(ज) धारा 410 के अधीन मामले को वापस मंगाना और उसका स्वयं विचारण करना; अथवा

(झ) धारा 458 या धारा 459 के अधीन सम्पत्ति का विक्रय। (धारा 460)

वे अनियमितताएं जो कार्यवाही को दूषित करती हैं–यदि कोई मजिस्ट्रेट, जो निम्नलिखित बातों में से कोई बात विधि द्वारा इस निमित्त सशक्त न होते हुए, करता है तो उसकी कार्यवाही शून्य होगी, अर्थात्:–

(क) सम्पत्ति को धारा 83 के अधीन कुर्क करना और उसका विक्रय;

(ख) किसी डाक या तार प्राधिकारी की अभिरक्षा में की किसी दस्तावेज, पार्सल या अन्य चीज के लिए तलाशी–वारण्ट जारी करना

(ग) परिशान्ति कायम रखने के लिए प्रतिभूति की मांग करना;

(घ) सदाचार के लिए प्रतिभूति की मांग करना;

(ङ) सदाचारी बने रहने के लिए विधिक पूर्वक आबद्ध व्यक्ति को उन्मोचित करना;

(च) परिशान्त कायम रखने के बन्धपत्र को रद्द करना;

(छ) भरणपोषण के लिए आदेश देना;

(ज) स्थानीय न्यूसेन्स के बारे में धारा 133 के अधीन आदेश देना;

(झ) लोक न्यूसेन्स की पुनरावृत्ति या उसे चालू रखने का धारा 143 के अधीन प्रतिषेध करना;

(ट) किसी अपराध का धारा 190 की उपधारा (1) के खण्ड (ग) के अधीन संज्ञान करना;

(ठ) किसी अपराधी का विचारण करना;

(ड) किसी अपराधी का संक्षेपत: विचारण करना;

(ढ) किसी अन्य मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित कार्यवाही पर धारा 325 के अधीन दण्डादेश पारित करना;

(ण) अपील का विनिश्चय करना;

(त) कार्यवाही को धारा 397 के अधीन मँगाना; अथवा

(थ) धारा 446 के अधीन पारित आदेश का पुनरीक्षण करना। (धारा 461)।

गलत स्थान में कार्यवाही का प्रभाव–किसी दण्ड न्यायालय का कोई निष्कर्ष, दण्डादेश या आदेश केवल इस आधार पर कि वह जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही जिसके अनुक्रम में उस निष्कर्ष पर पहुंचा गया था या वह दण्डादेश या आदेश पारित किया गया था, गलत सेशन खण्ड, जिला, उपखण्ड या अन्य स्थानीय क्षेत्र में हुई थी उस दशा में ही अपास्त किया जाएगा जब यह प्रतीत होता है कि ऐसी गलती के कारण वस्तुत: न्याय नहीं हो पाया है। (धारा 462)।

आरोप विरचित न करने या उसके अभाव या उसमें गलती का प्रभाव–(1) किसी सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय का कोई निष्कर्ष दण्डादेश या आदेश केवल इस आधार पर कि कोई आरोप विरचित नहीं किया गया अथवा इस आधार पर कि आरोप में कोई गलती, लोप या अनियमितता थी, उस दशा में ही अविधिमान्य समझा जाएगा जब अपील, पुष्टीकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की राय में उसके कारण वस्तुत: न्याय नहीं हो पाया है। (धारा 464(1)।

यदि अपील, पुष्टीकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की यह राय है कि वस्तुतः न्याय नहीं हो पाया है तो वह–

(क) आरोप विरचित न किए जाने वाली दशा में यह आदेश कर सकता है कि आरोप विरचित किया जाए।

(ख) आरोप में किसी गलती, लोप या अनियमितता वाली दशा में यह निदेश दे सकता है कि किसी ऐसी रीति से, जिसे वह ठीक समझे विरचित आरोप पर नया विचारण किया जाएं। परन्तु यदि न्यायालय की राय में मामले के तथ्य ऐसे हैं कि साबित तथ्यों की बाबत अभियुक्त के विरुद्ध कोई विधिमान्य आरोप नहीं लगाया जा सकता तो वह दोषसिद्धि अभिखण्डित कर देगा। (धारा 464(2) का परन्तुक)।

निष्कर्ष या दण्डादेश में गलती, लोप या अनियमितता का प्रभाव–धारा 465 के अनुसार ऐसे आक्षेपित किसी निष्कर्ष या दण्डादेश में गलती, लोप या अनियमितता अथवा पूर्व अनुमति में कारित लोप या अनियमितता को कोई अपील, पुष्टीकरण का पुनरीक्षण न्यायालय केवल तब ही उलटेगा या परिवर्तित करेगा जब कि न्यायालय इस राय में हो कि उसके कारण वास्तव में न्याय नहीं हो पाया है। इस धारा के अधीन कार्यवाहियों पर इस अध्याय के अन्य उपबंध यथावत् लागू होंगे।

कुर्की पर त्रुटि का प्रभाव–इस संहिता के अधीन की गयी कोई कुर्की किसी त्रुटि के कारण या प्रारुप के अभाव के कारण विधि विरुद्ध नहीं समझी जायेगी जो समन, दोषसिद्धि कुर्की की रिट या तत्सम्बन्धी अन्य कार्यवाही में हुई है और न ही उसे करने वाला कोई व्यक्ति अतिचारी समझा जायेगा। (धारा 466)।

प्रश्नकोश

Q. निम्नलिखित में से किस मामले में मजिस्ट्रेट द्वारा की गयी अनियमितता कार्यवाही को दूषित नहीं करेगी?

A. सहअपराधी को क्षमादान करना।

Q. किसी भी दोषपूर्ण न्यायालय (क्षेत्राधिकार विहीन) में कोई परीक्षण प्रारम्भ कर दिया जाता है, तो ऐसी परीक्षण की प्रकृति क्या होगी?

A. अवैधानिक, परिणामतः शून्य। (धारा 461 (ठ)।

Q. यदि कोई दण्डाधिकारी विधि के द्वारा अधिकृत न हो तब किस स्थिति में उसके द्वारा की गयी कार्यवाही विदूषित होगी?

A. जब वह अभियुक्त का संक्षिप्त विचारण करता है। (धारा 461 (एम)।

Q. गलत स्थान पर विचारण का क्या प्रभाव होगा?

A. विदूषित तभी होगा, जब न्याय विफल हो। (धारा 462)।

Q. संहिता के किस अध्याय में अनियमित कार्यवाहियों के संबंध में उपबन्ध किया गया है?

A. अध्याय 35 की (धारा 460 से लेकर 466 तक में)।

Q. संहिता की किस धारा में उन अनियमितताओं का उल्लेख किया गया है, जो कार्यवाही को दूषित नहीं करती?

A. धारा 460 में।

Q. यदि कोई मजिस्ट्रेट संहिता की धारा 94 के अंतर्गत तलाशी वारण्ट जारी करता है, जबकि वह उसके लिए सशक्त नहीं है, तो यह कार्यवाही कैसी होगी?

A. यदि वह मजिस्ट्रेट गलती से और सद्भावपूर्वक ऐसा वारंट जारी करता है तो यह मात्र अनियमितता होगी, और इससे कार्यवाही दूषित नहीं होगी।

Q. यदि कोई मजिस्ट्रेट, विधि द्वारा सशक्त न होते हुए, संहिता की धारा 306 के अधीन क्षमादान करता है, तो क्या कार्यवाही दूषित होने के कारण शून्य होगी?

A. नहीं। यदि मजिस्ट्रेट ने गलती से किन्तु सम्यक् सतर्कता और सावधानी से कार्य किया है तो यह मात्र अनियमितता होगी और इसलिए कार्यवाही शून्य नहीं होगी।

Q. वे कौन-सी कार्यवाहियाँ हैं जिसे मजिस्ट्रेट गलती से सद्भावपूर्वक करता है, तो मात्र इस आधार पर कि वह ऐसे सशक्त नहीं था, अपास्त न की जायेगी?

A. निम्नलिखित कार्यवाहियाँ–

(a) किसी अपराध का अन्वेषण करने के लिए पुलिस को धारा 155 के अधीन आदेश देना,

(b) धारा 176 के अधीन मृत्यु की समीक्षा करना,

(c) धारा 187 के अधीन आदेशिका जारी करना,

(d) किसी अपराध का धारा 190 की उपधारा (1) के खण्ड (क) एवं (ख) के अधीन संज्ञान करना,

(e) किसी मामले को धारा 192 (2) के अधीन हवाले करना,

(f) धारा 410 के अधीन मामले को वापस माँगना और उसका स्वयं विचारण करना,

(g) धारा 458 के अधीन सम्पत्ति का विक्रय।

Q. संहिता की धारा 461 किन अनियमितताओं से संबंधित है?

A. यह धारा उन अनियमितताओं से संबंधित हैं जो कार्यवाही को दूषित करती है।

Q. संहिता की धारा 461 के अंतर्गत कार्यवाहियाँ शून्य कब होंगी?

A. जब मजिस्ट्रेट द्वारा उनमें से कोई कार्यवाही विधि द्वारा उस निमित्त सशक्त न होते हुए की जाती है?

Q. यदि कोई मजिस्ट्रेट संहिता की धारा 125 के अधीन भरण-पोषण के निमित्त आदेश देने केलिए सशक्त नहीं है, और आदेश देता है, तो कार्यवाही कैसी होगी?

A. ऐसी कार्यवाही शून्य होगी, क्योंकि यह धारा 461 के अंतर्गत ऐसी अनियमितता है जो कार्यवाही को दूषित करती है।

Q. यदि कोई मजिस्ट्रेट सशक्त न होते हुए सम्पत्ति को धारा 83 के अधीन कुर्क और विक्रय करता है, तो यह कैसी कार्यवाही होगी?

A. यह धारा 461 (क) के अंतर्गत दूषित होने के कारण शून्य होगी।

A. यदि एक द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट परिशान्ति कायम रखने के लिए प्रतिभूति की माँग करता है, तो क्या यह वैध कार्यवाही मानी जायेगी?

A. नहीं! धारा 461 (ग) के अंतर्गत यह दूषित और शून्य होगी, क्योंकि परिशांति कायम रखने के लिए प्रतिभूति की माँग कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायालय कर सकता है।

Q. विधि द्वारा इस निमित्त सशक्त न होते हुए कोई मजिस्ट्रेट किसी अपराधी का विचारण करता है, क्या यह विचारण मान्य है?

A. नहीं! धारा 461 (ठ) के अधीन यह कार्यवाही शून्य होगी।

Q. कोई द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट जो उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त विशेषतया सशक्त नहीं है, किसी अपराधी का संक्षेपत: विचारण करता है, कार्यवाही कैसी होगी?

A. यह कार्यवाही दूषित होने के कारण शून्य होगी। (धारा 461 (ड)।

Q. कुछ ऐसी अनिमियतताओं का उदाहरण दीजिए जो कार्यवाही को दूषित करती हैं?

A. विधि द्वारा सशक्त न होते हुए यदि मजिस्ट्रेट निम्न से कोई भी बात करे तो वह कार्यवाही को शून्य बनायेगा अर्थात्–

(a) सदाचार के लिए प्रतिभूति की माँग करना,

(b) किसी डाक या तार प्राधिकारी की अभिरक्षा में के किसी दस्तावेज पार्सल के तलाशी वारण्ट जारी करना,

(c) परिशांति कायम रखने के बन्धपत्र को रद्द करना,

(d) स्थानीय न्यूसेंस के बारे में धारा 133 के अधीन आदेश देना,

(e) किसी अन्य मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित कार्यवाही पर धारा 325 के अधीन दण्डादेश पारित करना,

(f) अपील का विनिश्चय करना, अथवा

(g) कार्यवाही को धारा 397 के अधीन मँगाना आदि।

Q. धारा 462 किस बात से संबंधित है?

A. यह धारा ऐसे कार्यवाही के परिणाम से संबंधित है, जो किसी गलत स्थान में सम्पन्न की गयी है।

Q. किसी दण्ड न्यायालय का कोई निष्कर्ष दण्डादेश या आदेश, जो किसी ऐसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में पारित किया गया हो, जो गलत सेशन खण्ड, जिला, उपखण्ड, या अन्य स्थानीय क्षेत्र में हुई थी, किस दशा में अपास्त किया जायेगा?

A. जब यह प्रतीत होता हो कि ऐसी गलती के कारण वस्तुत: न्याय नहीं हो पाया है।

Q. संहिता की धारा 463 किस बात का उपबन्ध करती है?

A. इस धारा के अनुसार यदि किसी न्यायालय को इस बात का समाधान हो जाय कि साक्ष्य लेते समय संहिता की धारा 164 एवं 281 का अनुपालन नहीं किया गया था तो वह साक्ष्य अधिनियम की धारा 91 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसे अनुपालन के बारे में साक्ष्य ले सकता है।

Q. क्या किसी सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय का कोई निष्कर्ष, दण्डादेश या आदेश केवल इस आधार पर अविधिमान्य समझा जायेगा, कि कोई आरोप विरचित नहीं किया गया था, अथवा कि आरोप में कोई गलती, लोप या अनियमितता थी?

A. नहीं! केवल इस आधार पर अविधिमान्य नहीं होगा। (धारा 464)।

Q. सक्षम अधिकारिता वाले किसी न्यायालय के किसी दण्डादेश, निष्कर्ष, या आदेश को कब इस आधार पर अविधिमान्य समझा जायेगा कि आरोप में कोई गलती, लोप, या अनियमितता थी, या कि कोई आरोप विरचित नहीं किया गया था?

A. उस दशा में ही, जब अपील, पुष्टिकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की राय में उसके कारण वस्तुत: न्याय नहीं हो पाया है। (धारा (464)।

Q. जब अपील पुष्टिकरण या पुनरीक्षण न्यायालय की यह राय हो कि आरोप न विरचित करने से या उसमें किसी गलती, लोप या अनियमितता से वस्तुत: न्याय नहीं हो पाया है तो वह क्या आदेश दे सकता है?

A. (क) आरोप न विरचित किये जाने वाली दशा में न्यायालय यह आदेश कर सकता है कि आरोप विरचित किया जाये और आरोप की विरचना के ठीक पश्चात् से विचारण पुन: प्रारम किया जाये,

(ख) आरोप में किसी गलती, लोप या अनियमितता की दशा में यह निर्देश कर सकता है कि किसी ऐसी रीति से, जिसे वह

ठीक समझे, विरचित आरोप पर नया विचारण किया जाये। (धारा 464(2))।

Q. यदि न्यायालय को, मामले के साबित तथ्यों से यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त के विरुद्ध कोई विधिमान्य आरोप नहीं लगाया जा सकता तो वह क्या करेगा?

A. ऐसे में वह दोषसिद्धि को अभिखंडित कर देगा।

Q. सक्षम न्यायालय द्वारा पारित कोई निष्कर्ष, दण्डादेश, या आदेश, विचारण के पूर्व या दौरान, परिवाद, समन, वारण्ट, उद्घोषणा, आदेश, निर्णय या अन्य कार्यवाही में हुई किसी गलती, लोप, या अनियमितता या अभियोजन के लिए मन्जूरी में हुई किसी गलती या अनियमितता के कारण किस न्यायालय द्वारा और कब उलटा या परिवर्तित किया जायेगा?

A. अपील, पुष्टिकरण या पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा तब उलटा या परिवर्तित किया जायेगा जब ऐसे न्यायालय की यह राय है कि उसके कारण वस्तुतः न्याय नहीं हो पाया है। (धारा 465)।

Q. संहिता की किस धारा के अनुसार इस संहिता के अधीन की गयी कोई कुर्की ऐसी किसी त्रुटि के कारण या प्ररूप के अभाव के कारण विधि विरुद्ध न समझी जायेगी, जो समन, दोषसिद्धि, कुर्की की रिट या तत्संबंधी अन्य कार्यवाही में हुई है?

A. धारा 466 के अनुसार।

कुछ अपराधों का संज्ञान करने के लिए परिसीमा (Limitation for taking cognizance of certain offences) (धारा 467-473)

संहिता का अध्याय 36 (धारा 467 से 473) अपराधों के मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लिए जाने की समयावधि को नियत करता है। अतः इस अध्याय के उपबंध आज्ञापक प्रकृति के हैं।

परिसीमा काल–किसी अपराध का संज्ञान करने के लिए परिसीमा काल से तात्पर्य धारा 468 में विनिर्दिष्ट अवधि से है। (धारा 467)

परिसीमा-काल की समाप्ति के पश्चात् संज्ञान का वर्जन–कोई न्यायालय किसी अपराध का संज्ञान परिसीमा-काल की समाप्ति के पश्चात् नहीं करेगा।

(2) परिसीमा-काल–

(क) छह मास होगा, यदि अपराध, केवल जुर्माने से दण्डनीय है;

(ख) एक वर्ष होगा, यदि अपराध एक वर्ष से अनधिक की अवधि के लिए कारावास से दण्डनीय है;

(ग) तीन वर्ष होगा, यदि अपराध एक वर्ष से अधिक किन्तु तीन वर्ष से अनधिक की अवधि के लिए कारावास से दण्डनीय है।

(3) उन अपराधों के सम्बन्ध में, जिनका एक साथ विचारण किया जा सकता है, परिसीमा–काल उस अपराध के प्रति निर्देश से अवधारित किया जाएगा जो, यथास्थिति, कठोरतर या कठोरतम दण्ड से दंडनीय है। (धारा 468)।

परिसीमा-काल का प्रारम्भ–किसी अपराधी के सम्बन्ध में परिसीमा काल–

(क) अपराध की तारीख से प्रारम्भ होगा; या

(ख) जहां अपराध के किए जाने की जानकारी अपराध द्वारा व्यथित व्यक्ति को या किसी पुलिस अधिकारी को नहीं है वहां उस दिन प्रारम्भ होगा जिस दिन प्रथम बार ऐसे अपराध की जानकारी ऐसे व्यक्ति या ऐसे पुलिस अधिकारी को होती है, इनमें से जो भी पहले हो; या

(ग) जहां यह ज्ञात नहीं है कि अपराध किसने किया है, वहां उस दिन प्रारम्भ होगा जिस दिन प्रथम बार अपराधी का पता अपराध द्वारा व्यथित व्यक्ति को या अपराध का अन्वेषण करने वाले पुलिस अधिकारी को चलता है, इनमें से जो भी पहले हो। (धारा 465 (1)। उपधारा (2) के अनुसार उक्त अवधि की संगणना करने में, उस दिन को छोड़ दिया जायेगा, जिस दिन ऐसी अवधि की संगणना की जानी है।

इसी प्रकार धारा 470 (1) के अनुसार परिसीमा–काल की संगणना करने में, उस समय का अपवर्जन किया जाएगा, जिसके दौरान कोई व्यक्ति चाहे प्रथम बार के न्यायालय में या अपील या पुनरीक्षण न्यायालय में अपराधी के विरुद्ध अन्य अभियोजन सम्यक् तत्परता से चला रहा है;

परन्तु ऐसा अपवर्जन तभी किया जायेगा जब अभियोजन उन्हीं तथ्यों से सम्बन्धित हो, एवं ऐसे न्यायालय में सद्भावपूर्वक किया गया हो जो अधिकारिता में दोष अथवा इसी तरह के अन्य कारण से उसे ग्रहण करने में असमर्थ हो।

जहां अपराध की बाबत अभियोजन का संस्थित किया जाना किसी व्यादेश या आदेश द्वारा रोक दिया गया है वहां परिसीमा-काल की संगणना करने में व्यादेश या आदेश के बने रहने की अवधि को, उस दिन को, जिसको वह जारी किया गया था या दिया गया था और उस दिन को, जिस दिन उसे वापस लिया गया था, अपवर्जित किया जाएगा। धारा 470 (2)।

परिसीमा–काल की संगणना करने में, वह समय अपवर्जित किया जाएगा जिसके दौरान अपराधी–

(क) भारत से या भारत से बाहर किसी राज्यक्षेत्र से जो केन्द्रीय सरकार के प्रशासन के अधीन है, अनुपस्थित रहा है, या

(ख) फरार होकर या अपने को छिपाकर गिरफ्तारी से बचता है। (धारा 470 (4)।

यदि परिसीमा–काल उस दिन समाप्त होता है जब न्यायालय बन्द है तो न्यायालय उस दिन संज्ञान कर सकता है जिस दिन न्यायालय पुनः खुलता है। (धारा 471)।

किसी चालू रहने वाले अपराध की दशा में नया परिसीमा–काल उस समय के प्रत्येक क्षण से प्रारम्भ होगा जिसके दौरान अपराध चालू रहता है। (धारा 472)।

कोई भी न्यायालय परिसीमा काल के अवसान के पश्चात् भी, किसी अपराध का संज्ञान कर सकता है, यदि मामले के तथ्यों अथवा परिस्थितियों से उसका समाधान हो जाता है कि विलम्ब का उचित रूप से स्पष्टीकरण कर दिया गया है, या न्यायहित में ऐसा करना आवश्यक है। (धारा 473)।

प्रश्नकोश

Q. यदि अपराध केवल जुर्माने से दण्डनीय है तो उसका संज्ञान करने के लिए परिसीमा क्या होगा?

A. 6 मास। (धारा 468 (2) (क)।

Q. धारा 468 के अन्तर्गत कोई न्यायालय किसी ऐसे अपराध का संज्ञान, जो एक वर्ष से अनधिक की अवधि के लिए कारावास से दण्डनीय है, कितने समय पश्चात् नहीं लेगा?

A. एक वर्ष की समाप्ति के पश्चात्। (धारा 468(2) (ख))

Q. मानहानि के अपराध के संज्ञान हेतु धारा 468 दं.प्र.सं. में समय सीमा क्या है?

A. 6 माह।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के अनुसार दो वर्ष की अवधि के दण्डनीय अपराधों के लिए परिसीमा काल क्या है?

A. तीन वर्ष। धारा 468 (2) (ग)।

Q. तीन वर्ष से अधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध के लिए संज्ञान काल क्या होगा?

A. किसी परिसीमा काल का प्रावधान नहीं है।

Q. तीन वर्ष तक के कारावास से दण्डनीय अपराध का संज्ञान लेने के लिए विहित मर्यादा अवधि क्या है?

A. तीन वर्ष।

Q. किसी अपराध के संज्ञान के परिसीमा काल से संबंधित उपबंध संहिता की किन धाराओं में उपबंधित है?

A. इस संबंध में संहिता के अध्याय 36 की धारा 467 से 473 तक में उपबंध किया गया है।

Q. 'परिसीमा काल' की क्या परिभाषा है?

A. 'परिसीमा काल' का तात्पर्य किसी अपराध का संज्ञान करने के लिए धारा 468 में विनिर्दिष्ट अवधि अभिप्रेत है।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की किस धारा में अपराध के संज्ञान के लिए परिसीमा काल का निर्धारण किया गया है?

A. धारा 468 की उपधारा (2) में।

Q. यदि किसी अपराध के लिए 1 वर्ष से अधिक किन्तु 3 वर्ष से अनधिक अवधि के लिए कारावास का दण्ड निर्धारित हो, तो उसके संज्ञान का परिसीमा काल क्या होगा?

A. ऐसे अपराध के संज्ञान का परिसीमा काल 3 वर्ष होगा। (धारा 468 (2) (ग)।

Q. किस प्रकरण में यह अवधारित किया गया कि–''जब कोई अपराध 3 वर्ष से अधिक अवधि के कारावास से दण्डनीय है तो उस अपराध के संज्ञान की परिसीमा काल कोई नहीं है, और उसके लिए पूरी जिन्दगी संज्ञान कभी भी लिया जा सकता है''?

A. बाला जी ट्रेडर्स बनाम स्टेट, 1990 Cr.L.J. के प्रकरण में।

Q. परिसीमा काल का निर्धारण अपराधों में से किस निर्देश से लगाया जायेगा?

A. उस अपराध के निर्देश से अवधारित किया जायेगा, जो अपेक्षाकृत अधिक कठोर दण्ड से दण्डनीय है, अथवा सबसे कठोर दण्ड से दण्डनीय है। (धारा 468 (3))।

Q. किसी अपराध के संबंध में परिसीमा काल कब प्रारम्भ होता है?

A. (a) अपराध किये जाने की तारीख से, या

(b) यदि अपराध के बारे में भुक्तभोगी या पुलिस अधिकारी को ज्ञान नहीं है, तो उस दिन से, जिस दिन प्रथम बार ऐसे अपराध की जानकारी, ऐसे व्यक्ति या ऐसे पुलिस अधिकारी को होती है,

(c) यदि अपराधी के संबंध में जानकारी भुक्तभोगी या पुलिस अधिकारी, जो अन्वेषण कर रहा है, को नहीं है, वहां उस दिन से प्रारम्भ होगा, जिस दिन अपराधी का पता, प्रथम बार भुक्तभोगी या अन्वेषण अधिकारी को चलता है। (धारा 469(1))।

Q. परिसीमा-काल की संगणना करने में किस दिन को छोड़ दिया जायेगा?

A. जिस दिन ऐसी अवधि की संगणना की जाती है। (धारा 469 (2))।

Q. संहिता की धारा 470 में कुछ दशाओं में परिसीमा काल में से जिन समयावधियों को निकालने की व्यवस्था है, वे क्या हैं?

A. (i) अभियुक्त पर यदि अभियोजन द्वारा, अधीनस्थ, अपील या पुनरीक्षण न्यायालय में उसी आधार पर कोई मामला लम्बित है, तो ऐसी समयावधि को परिसीमा काल से निकाल दिया जायेगा,

(ii) यदि कोई स्थगनादेश विद्यमान है तो उस अवधि को भी परिसीमा काल से निकाल दिया जायेगा,

(iii) जहां अभियोजन के लिए सूचना दी गयी है, वहां ऐसे सूचना में लगे समय को भी परिसीमा काल से निकाल दिया जायेगा,

(iv) अभियुक्त के भारत से बाहर रहने की अवधि को भी परिसीमा काल से निकाल दिया जायेगा,

(v) यदि अभियुक्त फरार है या गिरफ्तारी से बच रहा है तो ऐसे फरारी या बचने की अवधि को भी परिसीमा काल से निकाल दिया जायेगा। (धारा 470)।

Q. यदि न्यायालय बंद रहे तो किस दिन संज्ञान किया जा सकता है?

A. बंद रहने के दिन को अपवर्जित करके, उस दिन जिस दिन न्यायालय पुनः खुलता है। (धारा 471)।

Q. किसी चालू रहने वाले अपराध की दशा में नया परिसीमा काल कब से प्रारम्भ होता है?

A. उस समय के प्रत्येक क्षण से प्रारम्भ होगा, जिसके दौरान अपराध चालू रहता है। (धारा 472)।

Q. संहिता की धारा 473 परिसीमा काल के विस्तार के संबंध में क्या उपबंध प्रस्तुत करती है?

A. कोई भी न्यायालय किसी अपराध का संज्ञान परिसीमा काल के बीत जाने पर भी कर सकता है, यदि मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों से उसका यह समाधान हो जाता है कि विलम्ब का उचित रूप से स्पष्टीकरण कर दिया गया है, या न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक है। (धारा 473 के अनुसार)।

Q. श्री वेंकटेश्वर ग्राउन्ड ऑयल मिल्स, 1984 क्रि. लॉ. ज. के प्रकरण में परिसीमा काल के सम्बन्ध में क्या धारित किया गया?

A. यदि किसी विशिष्ट विधि में परिसीमा काल के संबंध में विशिष्ट व्यवस्था की गयी है तो उस पर संहिता की धारा 468 का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

प्रकीर्ण (Miscellaneous) (474-484)

संहिता के अन्तिम अध्याय 37 (धारा 474 से 484) में विविध उपबंध किए गए हैं, जिनमें मुख्य प्रावधान निम्नवत् हैं–

उच्च न्यायालयों के समक्ष विचारण–जब किसी अपराध का विचारण उच्च न्यायालय के द्वारा धारा 407 के अधीन न करके अन्यथा किया जाता है तब वह अपराध के विचारण में वैसी ही प्रक्रिया का अनुपालन करेगा, जिसका सेसन न्यायालय अनुपालन करता यदि उसके द्वारा उस मामले का विचारण किया जाता। (धारा 474)।

धारा 475 के अधीन प्रक्रिया के तहत सेना न्यायालय के द्वारा विचारणीय व्यक्तियों का कमान अधिकारियों को सौंपा जा सकेगा।

उच्च न्यायालय की नियम बनाने की शक्ति–प्रत्येक उच्च न्यायालय राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी से निम्नलिखित के बारे में नियम बना सकेगा–

(क) वे व्यक्ति जो उसके अधीनस्थ दंड न्यायालयों में अर्जी लेखकों के रूप में काम करने के लिए अनुज्ञात किए जा सकेंगे;

(ख) ऐसे व्यक्तियों को अनुज्ञप्ति दिए जाने, उनके द्वारा कामकाज करने और उनके द्वारा ली जाने वाली फीसों के मापमान का विनियमन;

(ग) इस प्रकार बनाए गए नियमों में से किसी के उल्लंघन केलिए शास्ति उपबंधित करना और वह प्राधिकारी, जिसके द्वारा ऐसे उल्लंघन का अन्वेषण किया जा सकेगा और शास्तियां अधिरोपित की जा सकेंगी, अवधारित करना;

(घ) कोई अन्य विषय जिसका विहित किया जाना अपेक्षित है या जो विहित किया जाए। ऐसे बनाए गए सब नियम राजपत्र में प्रकाशित किए जाएंगे। [धारा 477

वह मामला जिसमें न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट वैयक्तिक रूप से हितबद्ध है–कोई न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट किसी ऐसे मामले का, जिसमें वह पक्षकार है, या वैयक्तिक रूप से हितबद्ध है, उस न्यायालय की अनुज्ञा के बिना, जिसमें उसके न्यायालय से अपील होती है, न तो विचारण करेगा और न उसे विचारणार्थ सुपुर्द करेगा न कोई न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट अपने द्वारा पारित या किए गए किसी निर्णय या आदेश की अपील ही सुनेगा।

स्पष्टीकरण के अनुसार कोई न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट किसी मामले में केवल इस कारण से कि वह उससे सार्वजनिक हैसियत से संबद्ध है या केवल इस कारण से उसने उस स्थान का, जिसमें

अपराध का होना अभिकथित है, या किसी अन्य स्थान का, जिसमें मामले के लिए महत्वपूर्ण किसी अन्य संव्यवहार का होना अभिकथित है, अवलोकन किया है और उस मामले के संबंध में जांच की है इस धारा के अर्थ में पक्षकार या वैयक्तिक रूप से हितबद्ध न समझा जाएगा। (धारा 479)।

विधि-व्यवसाय करने वाले प्लीडर का कुछ न्यायालयों में मजिस्ट्रेट के तौर पर न बैठना–कोई प्लीडर, जो किसी मजिस्ट्रेट के न्यायालय में विधि-व्यवसाय करता है, उस न्यायालय में या उस न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता के अन्दर किसी न्यायालय में मजिस्ट्रेट के तौर पर न बैठेगा। (धारा 480)।

विक्रय से संबद्ध लोक सेवक का सम्पत्ति का क्रय न करना और उसके लिए बोली न लगाना–कोई लोक सेवक जिसे इस संहिता के अधीन संपत्ति के विक्रय के बारे में किसी कर्तव्य का पालन करना है उस संपत्ति का न तो क्रय करेगा न उसके लिए बोली लगाएगा। (धारा 481)।

उच्च न्यायालय की अन्तर्निहित शक्तियों की व्यावृत्ति–इस संहिता की कोई बात उच्च न्यायालय की ऐसे आदेश देने की अन्तर्निहित शक्ति को सीमित या प्रभावित करने वाली न समझी जाएगी जो इस संहिता के अधीन किसी आदेश को प्रभावी करने के लिए या किसी न्यायालय की कार्यवाही का दुरुपयोग निवारित करने केलिए या किसी अन्य प्रकार से न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हो। (धारा 482)।

प्रत्येक उच्च न्यायालय अपने अधीनस्थ न्यायिक मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों पर अपने अधीक्षण का प्रयोग इस प्रकार करेगा जिससे यह सुनिश्चित हो जाए कि ऐसे मजिस्ट्रेटों द्वारा मामलों का निपटारा शीघ्र और उचित रूप से किया जाता है। (धारा 483)।

प्रश्नकोश

Q. धारा 482 के दं. प्र. सं. के अन्तर्गत अन्तर्निहित शक्तियों का प्रयोग किसके द्वारा किया जा सकता है?

A. उच्च न्यायालय द्वारा।

Q. सत्र न्यायालय की अन्तर्निहित शक्तियाँ किस धारा में दी गयी है?

A. दण्ड प्रक्रिया संहिता में कहीं भी नहीं।

Q. सिद्धदोष के मृत्यु दण्डादेश का निष्पादन ''जब तक वह मर न जाए, तब तक गर्दन से लटकाकर' करने का ढंग दण्ड प्रक्रियासंहिता, 1973 के किस उपबंध के अन्तर्गत विहित किया गया है?

A. संहिता की द्वितीय अनुसूची का प्रारुप 42।

Q. निम्न धाराओं के विषयों को सुमेलित रुप में लिखिए–धारा 366, 376, 437 व 482?

A. (a) धारा 366–सत्र न्यायालय द्वारा मृत्यु दण्डादेश की पुष्टि लिए उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाना।
(b) धारा 476–छोटे मामलों में अपील का न होना
(c) धारा 437–अजमानतीय अपराधों की दशा में जमानत
(d) धारा 482–उच्च न्यायालय की अन्तर्निहित शक्तियां।
[नोट–इसी प्रकार निम्नलिखित धाराओं को उनके सुमेलित होने या न होने से सम्बन्धित प्रश्न पूछे गए–
(i) धारा 384–अपील का संक्षेपतः खारिज किया जाना।
(ii) धारा 397–पुनरीक्षण हेतु अभिलेख मंगाया जाना।
(iii) धारा 154–संज्ञेय मामलों में इत्तिला
(iv) धारा 161–पुलिस द्वारा साक्षियों की परीक्षा
(v) धारा 166–तलाशी वारण्ट की अपेक्षा
(vi) धारा 171–परिवादी और साक्षियों से पुलिस अधिकारी के साथ जाने की अपेक्षा न किया जाना।
(vii) धारा 149–पुलिस का संज्ञेय अपराधों का निवारण
(viii) धारा 131–जमाव को तितर-बितर किया जाना
(x) धारा 45–सशस्त्र बलों के सदस्यों का गिरफ्तारी से संरक्षण
(xi) धारा 54-क–गिरफ्तार व्यक्ति की शिनाख्त
(xii) धारा 164क–बलात्कार पीड़िता की शारीरिक परीक्षा
(xiii) धारा 200–परिवादी की परीक्षा
(xiv) धारा 176–मृत्यु के कारण की मजिस्ट्रेटी जांच
(xv) धारा 106–दोषसिद्धि पर परिशांति हेतु प्रतिभूति
(xvi) धारा 107–परिशांति के लिए प्रतिभूति
(xvii) धारा 109–संदिग्ध व्यक्तियों से सदाचार के लिए प्रतिभूति
(xviii) धारा 110–आभ्यासिक अपराधियों से सदाचार के लिए प्रतिभूति।

Q. कथन (A)–आपराधिक न्यायालय के निर्णय के पुनर्विलोकन हेतु प्रावधान जीवन एवं स्वतंत्र के सम्यक् संरक्षण के लिए आवश्यक है।
कारण (R)–ये इस अवधारणा पर आधारित हैं कि न्यायाधीश एवं मजिस्ट्रेट भ्रमातीत नहीं हैं।
कूट : (a) A और R दोनों सही हैं और R, A का सही स्पष्टीकरण है
(b) A और R दोनों सही हैं, परन्तु R, A का सही स्पष्टीकरण नहीं है
(c) A सही है, परन्तु R गलत है
(d) A गलत है, परन्तु R सही है
सही विकल्प क्या होगा?

A. (a) A और R दोनों सही हैं और R, A का सही स्पष्टीकरण है।

Q. कोई उच्च न्यायालय यदि किसी अपराध का विचारण करता है तो वह कौन-सी प्रक्रिया अपनायेगा?

A. वैसी ही प्रक्रिया अपनायेगा, जिसको सेशन न्यायालय अपनाता, यदि उसके द्वारा उस मामले का विचारण किया जाता। (धारा 474)।

Q. सेना न्यायालयों द्वारा विचारणीय व्यक्तियों को किसे सौंपे जाने का उपबंध संहिता की धारा 475 किया गया है?

A. कमान ऑफिसरों को।

Q. सेना न्यायालय द्वारा विचारणीय अपराध के अभियुक्त को पकड़ने और सुरक्षित रखने के लिए प्रत्येक मजिस्ट्रेट अधिकतम प्रयास कब करेगा?

A. जब उसे किसी स्थान में नियोजित या आस्थित सैनिकों, नाविकों या वायु सैनिकों के किसी यूनिट या निकाय के कमान ऑफिसर से उस प्रयोजन केलिए लिखित आवेदन प्राप्त होता है। (धारा 475 (2)।

Q. सेना न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति के विचारण के संबंध में उच्च न्यायालय की क्या शक्ति है?

Q. दण्ड प्रक्रियासंहिता के अंतर्गत किस धारा में उच्च न्यायालय की नियम बनाने की शक्ति उपबंधित है?

A. धारा 477 में।

Q. उच्च न्यायाल किसकी पूर्व-मंजूरी से नियम बना सकेगा?

A. राज्य सरकार की।

Q. कोई न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट किस तरह के मामले का, न तो विचारण करेगा और न उसे विचारणार्थ सुपुर्द करेगा, और न ही, अपने द्वारा पारित या किये गये किसी निर्णय या आदेश की अपील ही सुनेगा?

A. ऐसे मामले का, जिसमें वह पक्षकार है, या वैयक्तिक रूप से हितबद्ध है। (धारा 479)।

Q. कोई न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट, जिसमें वह पक्षकार है या वैयक्तिक रूप से हितबद्ध है कब ऐसे मामले का विचारण करेगा या विचारणार्थ सुपुर्द करेगा?

A. उस न्यायालय की अनुज्ञा से जिसमें ऐसे न्यायालय या मजिस्ट्रेट के निर्णय से अपील होती है। (धारा 479)।

Q. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 480 में क्या उपबन्ध किया गया है?

A. इस धारा के अनुसार कोई प्लीडर, जो किसी मजिस्ट्रेट के न्यायालय में विधि व्यवसाय करता है, उस न्यायालय में या उस न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता के अंदर किसी न्यायालय में मजिस्ट्रेट के तौर पर न बैठेगा।

Q. संहिता की किस धारा के अनुसार कोई लोक सेवक जिसे इस संहिता के अधीन सम्पत्ति के विक्रय के बारे में किसी कर्तव्य का पालन करना है, उस सम्पत्ति का न तो क्रय करेगा और न उसके लिए बोली लगायेगा?

A. धारा 481 के अनुसार।

Q. उच्च न्यायालय अपनी अन्तर्निहित शक्तियों का प्रयोग किन उद्देश्यों के लिए कर सकता है?

A. (i) इस संहिता के अधीन किसी आदेश को प्रभावी करने के लिए, या

(ii) किसी न्यायालय की कार्यवाही का दुरुपयोग निवारित करने के लिए, या

(iii) किसी अन्य प्रकार से न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति सुनिश्चित करने केलिए (धारा 482)।

Q. **पी. विजय पाल रेड्डी बनाम राज्य,** 1978 सु.को. के प्रकरण में क्या धारित किया गया?

A. यह कि उच्च न्यायालय सामान्यतः अधीनस्थ न्यायालयों में लम्बित मामलों के अंतर्वर्ती प्रक्रम पर धारा 482 में निहित अपनी अन्तर्निहित शक्ति का प्रयोग नहीं करता।

Q. किस प्रकरण में यह अभिमत व्यक्त किया गया कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 (2) किसी अन्तर्वर्ती आदेश में पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप का अभिव्यक्त प्रतिषेध करती है। अतः ऐसे आदेश को अपास्त करने के लिए धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का अवलम्ब नहीं लिया जा सकता है?

A. **कैप्टन नानक प्रताप सिंह बनाम पंजाब राज्य,** 1979 के प्रकरण में।

Q. किस प्रकरण में यह कहा गया कि अन्तर्निहित शक्तियों का प्रयोग अधीनस्थ न्यायालय भी कर सकते हैं?

A. ठाकुर बनाम मैयाकौर प्रकरण में।

Q. संहिता की किस धारा के अनुसार प्रत्येक उच्च न्यायालय अपने अधीनस्थ न्यायिक मजिस्ट्रेटों के न्यायालयों पर अपने अधीक्षण का प्रयोग इस प्रकार करेगा जिससे यह सुनिश्चित हो जाये कि ऐसे मजिस्ट्रेटों द्वारा मामलों का निपटारा शीघ्र और उचित रूप से किया जाता है?

A. धारा 483 के अनुसार।

Q. संहिता की अंतिम धारा कौन-सी है और उसमें क्या उपबन्ध प्रस्तुत किया गया है?

A. अंतिम धारा 484 है इसमें निरसन तथा व्यावृत्तियों का उपबन्ध किया गया है।

Q. संहिता की किस धारा में निहित प्राधिकार से दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1898 का निरसन किया गया है?

A. धारा 484 में निहित प्राधिकार से।

दण्ड प्रक्रिया संहिता के विविध प्रावधानों पर निर्णीत महत्वपूर्ण वाद निर्णय

1. टी. जी. एन. कुमार बनाम केरल राज्य एवं अन्य (2011) 2 ACC (SH) 243–उच्चतम न्यायालय की तीन सदस्यीय पूर्णपीठ ने दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 205, 311 और 482 की व्याख्या करते हुए निम्नलिखित सम्प्रेक्षण दिया–

(1) संहिता की धारा 205 मजिस्ट्रेट को विवेकीय शक्ति प्रदान करती है कि वह अभियुक्त को व्यक्तिगत उपस्थिति से विमुक्ति प्रदान कर सकता है। यह धारा न्यायालय (मजिस्ट्रेट) को यह विवेक प्रदान करता है वह अभियुक्त व्यक्तिगत उपस्थिति से उस समय तक के लिए उसे छूट प्रदान कर सकता है जब तक कि उसकी उपस्थिति विचारण के दौरान आवश्यक नहीं समझी जाती।

धारा 205 के अन्तर्गत किसी प्रार्थना पत्र के विमर्शन के दौरान मजिस्ट्रेट के लिए वाद की प्रकृति तथा समनित किए गए व्यक्ति के आचरण पर विचार करना आवश्यक है। मजिस्ट्रेट इस बात का भी परीक्षण करेगा कि क्या अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति से कोई उपयोगी प्रयोजन का समाधान होता है या क्या उसकी अनुपस्थिति से विचारण के प्रगति में अवरोध उत्पन्न होने की सम्भावना है। अतः इन बातों पर मजिस्ट्रेट का समाधान उसके स्वयं के विवेक से ही अवधारित किया जा सकेगा। वह विचारण की प्रगति के संदर्भ में न्यायालय का मालिक है, कोई अन्य नहीं।

अतः उच्च न्यायालय भी दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 205 के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट के द्वारा विवेकाधिकार के प्रयोग के सम्बन्ध में कोई निर्देश निर्धारित नहीं कर सकता है (मनोज नारायण अग्रवाल बनाम राशि अग्रवाल और अन्य, (2009) 6 SCC 385 के निर्णय की पुष्टि करते हुए)।

2. संहिता की धारा 313 की भाषा से यह स्पष्ट होता है कि समन वादों में जब अभियुक्त को धारा 205 के अन्तर्गत व्यक्तिगत उपस्थिति से विमुक्त कर दिया जाता है, मजिस्ट्रेट के समक्ष यह स्वविवेकाधिकार निहित होता है कि वह अभियुक्त को संहिता की धारा 313 के अन्तर्गत व्यक्तिगत परीक्षण की परिदृढ़ता से भी विमुक्त कर सकता है।

धारा 313 (1) के खण्ड (ख) में प्रयुक्त शब्द ''करेगा'' का निर्वचन न्यायालय के ऊपर बाध्यकारी बनाया गया है तथा इसका अनुपालन उस दशा में किया जाना चाहिए जब यह अभियुक्त के हित में हो..... यदि अभियुक्त को हाजिर होने में कोई कठिनाई हो तो उसे उससे मुक्त किया जायेगा। (वासव राज आर. पाटिल एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य (2000) 8 SCC 740 में पूर्णपीठ के निर्णय का अनुसमर्थन करते हुए)।

3. संहिता की धारा 482 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय के द्वारा अन्तर्निहित शक्तियों का प्रयोग विरल अवसरों पर ही और सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए तथा दुर्लभ अवसरों पर प्रत्यक्ष अधिकताओं के सुधार अथवा न्याय की हानि के निवारण के सम्बन्ध में किया जाना चाहिए। (मधु लिमये बनाम महाराष्ट्र राज्य (1977) 45 SCC 351 के निर्णय का अनुसरण)।

2. सेल्वी और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य (2010) 7 SCC 263–इस वाद में उच्चतम न्यायालय की तीन सदस्यीय पूर्णपीठ ने अन्वेषण के दौरान अन्वेषण संस्था के द्वारा अपनाये जा रहे आधुनिक तकनीकों यथा नार्को परीक्षण, पालीग्राफ परीक्षण तथा बीप परीक्षण के द्वारा साक्ष्य एकत्र किए जाने की प्रक्रिया के वैधता एवं संवैधानिकता का परीक्षण करते हुए निम्नलिखित निर्णय दिया :

(1) नार्को परीक्षण, पालीग्राफ अर्थात् लाई-डिक्टेटर टेस्ट तथा बीप परीक्षण अर्थात् ब्रेन इलेक्ट्रिकल एक्टिवेशन प्रोफाइल परीक्षण भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 (3) और 21 तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता के धारा 161 (2) का उल्लंघन करते हैं।.....अतः किसी भी व्यक्ति को बलपूर्वक ऐसे किसी भी तकनीक के अधीन नहीं रखा जायेगा चाहे दाण्डिक मामलों के अन्वेषण के सम्बन्ध में या अन्यथा। ऐसा किया जाना किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत स्वतंत्रता में हस्तक्षेप माना जायेगा। फिर भी कुछ सुरक्षा मानकों के अधीन इन परीक्षणों की अनुमति दिया जा सकता है।

(2) यदि ऐसा परीक्षण अभियुक्त व्यक्ति को बाध्य करके उस पर किया जाता है तब वह उसके भारत के संविधान अनुच्छेद 20(3) के अन्तर्गत आत्म अभिशंसन के विरुद्ध अधिकार तथा अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत व्यक्ति के व्यक्तिगत स्वतंत्रता और उसके स्वच्छ विचारण के अधिकार का और दण्ड प्रक्रिया संहिता के धारा 161 (2) के अन्तर्गत चुप रहने के अधिकार का उल्लंघन करता है।

(3) इन परीक्षणों के द्वारा किसी व्यक्ति से मौखिक साक्ष्यों का अनिवार्य निष्कर्षण संविधान के अनुच्छेद 20(3) और दण्ड प्रक्रिया संहिता के धारा 161(2) के अन्तर्गत प्रतिबंधित है।

3. हरियाणा राज्य और अन्य बनाम जगदीश (2010) 4 SCC 216–यह वाद दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 के धारा 432, 433 और 433-क अन्तर्गत किसी दोषसिद्ध व्यक्ति को समय पूर्व

रिहा करने के लिए प्रस्तुत उसके आवेदन के समय पर अस्तित्व में रहे विधि के प्रवर्तन पर निर्णीत है। इस वाद के पूर्ण पीठ के समक्ष विचार किए जाने के लिए निम्न प्रश्न एक खण्डपीठ के द्वारा संदर्भित किया गया था–कि किसी दोषसिद्ध व्यक्ति की समय पूर्व रिहाई के लिए सरकार के किस विधि (नियमावली) को आधार बनाया जाना चाहिए–

(i) वह विधि जो दोषसिद्धि और दण्डादेश के समय अस्तित्व में था; अथवा

(ii) वह नीति जो आवेदक के समय-पूर्व रिहाई के लिए प्रस्तुत प्रार्थना-पत्र पर विचार किए जाने के समय विद्यमान था?

उच्चतम न्यायालय की तीन सदस्यीय पूर्णपीठ ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 72 और 161 (क्षमादान सम्बन्धी राष्ट्रपति व राज्यपाल की शक्ति) का संदर्भ लेते हुए उपर्युक्त प्रश्नों पर निम्नलिखित समाधान पूर्ण निर्णय दिया–

(1) कार्यपालिका की राज्य क्षमा शक्ति निरपेक्ष है और हमेशा निर्बन्धित रहता है क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 72 और 161 के प्रावधान दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 432, 433 और 433A के प्रावधानों के द्वारा प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता है।.....किन्तु अनुच्छेद 72/161 के अन्तर्गत राज्य क्षमा शक्ति का उपयोग, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल के द्वारा संक्षिप्त दण्ड नीति में उपबंधित कारावास की अवधि पूर्ण होने के पहले नहीं किया जा सकता है।

(2) समय-पूर्व रिहाई के संदर्भ में दोषसिद्ध व्यक्ति का अधिकार इस विस्तार तक सीमित है कि उसके दावे पर सुसंगत नियमों, नीतियों आदि के अनुसार विचार किया जाय। वह समय पूर्ण रिहाई का दावा एक अधिकार के रूप में नहीं कर सकता है।

(3) वर्तमान मामले में, जब आवेदक को दोषसिद्ध तथा दण्डादिष्ट किया गया, उस समय नीति दिनांक 4.2.1993 अस्तित्व में था, जिसके तहत 10 वर्ष का कारावास भुगत चुका दोषसिद्ध व्यक्ति समयपूर्ण रिहाई के लिए आवेदन कर सकता था, जिसके लिए शक्ति प्रयोग का उपबंध अनुच्छेद 161 के अन्तर्गत किया जाना था जबकि आवेदन प्रस्तुत किए जाने की तिथि पर घोषित नीति दिनांक 13.8.2008 में संहिता की धारा 432 सपठित धारा 433 और 433-A के अन्तर्गत शक्ति प्रयोग का उपबंध है, जो कि प्रक्रियात्मक नियम होते हुए संविधान के अधीन है। अतः नीति दिनांकित 13.8.2008 नीति दिनांकित 4.2.1993 पर अभिभावी नहीं हो सकता।

अतः प्रत्युत्तरदाता उस समय विशेष पर जब वह एक कैदी था, प्रवृत्ति नीति अर्थात् 4.2.1993 का लाभ प्राप्त करने का हकदार था, जिसे नीति दिनांक 13.8.2008 से वंचित नहीं किया जा सकता है। उच्च न्यायालय यह अभिनिश्चित करने में पूरी तरह से न्यायोचित था कि प्रत्युत्तरदाता के समय-पूर्व रिहाई के लिए प्रस्तुत आवेदन पर उस नीति के तहत विचार किया जाना चाहिए जो उसके दोषसिद्धि के समय विद्यमान था। अतः इस मामले में धारा 433 सपठित दण्ड नीति के प्रावधान लागू होंगे, जिसके अन्तर्गत कारावास की अवधि को केवल कम किया जाता है।

4. सुहेल खान खुदयार खान और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, (2009) 5 SCC 586–यह वाद दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 133 के अन्तर्गत न्यूसेंस हटाने के लिए मजिस्ट्रेट की शक्ति पर उच्चतम न्यायालय के पूर्णपीठ के द्वारा निर्णीत है।

नगर निगम के दूकान को एक किरायेदार अपीलार्थी को हटाने के लिए उपखण्ड अधिकारी के आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने अपील किया जिसे विचारण न्यायालय एवं उच्च न्यायालय ने भी निरस्त कर दिया। अन्ततः उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी ने अपील किया जिस पर तीन सदस्यीय पूर्णपीठ ने धारा 133 की व्याख्या करते हुए मजिस्ट्रेट की शक्ति को निम्नवत् अवधारित किया–

1. धारा 133 के अन्तर्गत की प्रक्रिया संक्षिप्त प्रकृति की होती है, जिसे दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय X के अन्तर्गत लोक व्यवस्था और परिशांति बनाये रखने के लिए स्थापित किया गया है और जिसे निम्न चार वर्गों में विभाजित किया गया है–

(क) विधि विरुद्ध जमाव (धारा 129, 132)।

(ख) लोक न्यूसेंस (धारा 133 से 143)।

(ग) न्यूसेंस या आशंकित खतरे के अर्जेंट मामले (धारा 144); और

(घ) स्थावर सम्पत्ति के सम्बन्ध में विवाद (धारा 145 से 149)।

न्यूसेंस (उपताप) दो प्रकार का होता है–

(i) एक उपताप, और

(ii) दूसरा निजी उपताप। इसके लिए सामान्यतया दो प्रकार के उपचार उपलब्ध है–(i) दीवानी, (ii) आपराधिक।

वर्तमान प्रकरण आपराधिक उपचार के अन्तर्गत आता है और इस निमित्त धारा 133 से 144 तक की प्रक्रिया अपनाया जा सकता है।

(2) धारा 133 अपने उपाय में विस्तृत एवं व्यापक है। इस धारा के अधीन कार्यवाही लोक की असुविधा के विरुद्ध कार्यवाही है। यह विशेषतः आपराधिक के बजाय एक दीवानी प्रकृति की कार्यवाही है। इसकी व्यापकता धारा 133 (2) से ही स्पष्ट है, जिसमें उपबंधित है कि इस धारा के अधीन मजिस्ट्रेट के द्वारा सम्यक् रूप से जारी

किए गए किसी भी आदेश को किसी दीवानी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जायेगा।

(3) धारा 133 (1) के खण्ड (ख) के सपठन से स्पष्ट है कि जब कभी सशक्त मजिस्ट्रेट किसी पुलिस अधिकारी से रिपोर्ट या अन्यथा प्राप्त होने पर, जैसा वह ठीक समझे, यह विचार है कि किसी व्यापार या उपजीविका को चलाना या किसी माल या पण्य वस्तु को रखना समाज के स्वास्थ्य या शारीरिक सुख के लिए हानिकर है और परिणामतः ऐसा व्यापार या उपजीविका प्रतिषिद्ध या विनियमित की जानी चाहिए या ऐसा माल या पण्य वस्तु हटा दी जानी चाहिए या उसको रखना विनियमित की जानी चाहिए, तो साक्ष्य लेने के बाद मजिस्ट्रेट ऐसे व्यक्ति से अपेक्षा करते हुए सशर्त आदेश जारी कर सकता है कि वह ऐसा व्यापार या उपजीविका चलाना छोड़ दे या निर्दिष्ट रीति से उसे बंद कर दे।

इस धारा के अधीन आदेश पारित किए जाने के लिए मजिस्ट्रेट का यह समाधान होना आवश्यक है कि यदि मजिस्ट्रेट ने आदेश पारित नहीं किया तो उससे लोक को अपूरणीय क्षति होगी और यह भी उक्त आक्षेपित उपताप अस्तित्व में हो केवल सम्भावना मात्र नहीं। इस मामले में मजिस्ट्रेट का आदेश समुचित है।

5. मनुशर्मा बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली) (2010) 6 SCC–दिल्ली के चर्चित जेसिका लाल हत्या कांड (29.4.1999) के मुख्य आरोपी अपीलार्थी को विचारण न्यायालय से बरी किए जाने तथा उच्च न्यायालय के द्वारा दोषसिद्ध किए जाने के निर्णय के विरुद्ध इस अपील में उच्चतम न्यायालय ने दोषसिद्धि को विधिपूर्ण घोषित करते हुए निम्न निर्णय दिया–

1. रहस्यात्मक टेलीफोनिक संदेशों (सूचनाओं) को (जिसके द्वारा पुलिस को घटना की जानकारी दी गयी थी), प्रथम सूचना रिपोर्ट नहीं माना जा सकता है क्योंकि उसका प्रयोजन पुलिस को घटनास्थल पर पहुँचने के लिए संकेत (सूचना देना) करना था न कि धारा 154 के अर्थों में प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करवाया जाना।

2. धारा 172 के अन्तर्गत डायरी का अनुरक्षण किया जाना पुलिस अधिकारी या पुलिस थाने के लिए आज्ञापक है। यद्यपि इसका उपयोग साक्ष्य के रुप में नहीं किया जा सकता है किन्तु विचारण में इससे सहायता लेने के लिए न्यायालय सशक्त है। अन्वेषण अधिकारी स्मृति ताजा करने के लिए इसका उपयोग कर सकता है।

3. न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों व अभिकथनों को प्राप्त करने का अभियुक्त का अधिकार आत्यन्तिक है और अभियोजन के द्वारा इसका अनुपालन किया जाना चाहिए तथा न्यायालयों को ऐसा किया जाना अथवा करवाया जाना सुनिश्चित करना चाहिए।

4. जब कोई अपीलीय न्यायालय दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील पर विचार कर रहा होता है, तब उसे निम्नलिखित सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए–

(i) उस साक्ष्य पर, जिस पर दोषमुक्ति का आदेश आधारित है, उसका पुनर्विलोकन करने के अपीलीय न्यायालय के शक्ति पर कोई परिसीमा नहीं है। वह सम्पूर्ण साक्ष्य का पुनर्विलोकन कर सकता है और अपना स्वयं का निष्कर्ष निकाल सकता है।

(ii) अपीलीय न्यायालय तथ्य एवं विधि दोनों के ही सम्बन्ध में आदेशों का पुनर्विलोकन कर सकता है।

(iii) दोषमुक्ति के आदेश में हस्तक्षेप केवल तब ही किया जाना चाहिए जब ऐसा करने के लिए विवशकारी और सारवान् कारण विद्यमान हों। स्पष्टतः अयुक्तियुक्त आदेश इसका एक दृष्टान्त है।

(iv) यदि आक्षेपित आदेश गलत, त्रुटिपूर्ण अथवा असमर्थनीय है तब साक्ष्यों का पुर्नमूल्यांकन करते हुए अपीलीय न्यायालय स्वयं का निष्कर्ष प्रदान कर सकता है तथा उक्त आदेश को अपास्त कर सकता है।

वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने कोई त्रुटि कारित नहीं किया है। अतः अपील निरस्त किए जाने के योग्य है।

6. मो. शहाबुद्दीन बनाम बिहार राज्य और अन्य (2010) 4 SCC 653–इस चर्चित मामले में उच्चतम न्यायालय ने दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 9 (6), 11, 327 और 407 पर निम्नलिखित महत्वपूर्ण अभिनिश्चय प्रदान किया है–

(1) संहिता के धारा 9(6) के अन्तर्गत उच्च न्यायालय के द्वारा जारी अधिसूचना के अनुपालन में अपीलार्थी के प्रकरण के विचारण के लिए जेल परिसर में ही विशेष सत्र न्यायालय के गठन से उसके किसी भी अधिकार का उल्लंघन नहीं होता है।

(2) इस प्रकार गठित विशेष सत्र न्यायालय धारा 9 (6) के अधीन उच्च न्यायालय के निर्देश के अनुसार अपना स्थान चयनित करने के लिए स्वतंत्र है।

(3) इस प्रकार गठित विशेष न्यायालय के कार्य-प्रणाली को धारा 327 के अन्तर्गत भी चुनौती नहीं दिया जा सकता है क्योंकि इससे यावी के किसी अधिकार का उल्लंघन नहीं होता है।

(4) जब कभी सत्र न्यायालय का स्थान किसी जेल परिसर में विधिक प्रावधानों के तहत किया जाता है तब उसे धारा 407 के अर्थों में किसी मामले का अन्तरण किया जाना नहीं माना जा सकता है।

7. शैल कुमारी देवी और एक अन्य बनाम कृष्णकुमार भगवान् पाठक (2008) 4 Cr. L. J. 3881 (S.C.)–यह वद दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 पर निर्णीत एक महत्वपूर्ण वाद

है जिसमें भरण पोषण का भुगतान करने के लिए आदेश दिए जाने हेतु मजिस्ट्रेट की शक्ति एवं उपचार की प्रकृति पर स्पष्टीकरण दिया गया है, जो निम्नवत् है–

'दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अन्तर्गत पत्नी, बच्चों और माता-पिता के भरण-पोषण का आदेश करने की मजिस्ट्रेट की शक्ति दाण्डिक नहीं है। इस धारा के अधीन प्रदत्त उपचार सक्षम सिविल न्यायालय के द्वारा आज्ञप्ति पारित किए जाने तक संक्षिप्त रूप से प्रदान किया गया एक उधार है जिसमें भरण-पोषम के रूप में कुछ धनराशि उपलब्ध करवायी जाती है। प्रकृति में इसका एक अन्तरिम आदेश के रूप में अर्थान्वयन किया जा सकता है।

मजिस्ट्रेट जब भी धारा 125 के अन्तर्गत भरण-पोषण स्वीकार अथवा अस्वीकार करने का आदेश पारित करे तब उसे वैसा करने के अपने आदेश का कारण भी दर्शित करना चाहिए। ऐसा भरण-पोषण का आदेश, यदि प्रदान किया जाना है, तब उसे इस निमित्त किए गए आवेदन की तारीख से दिया जाना चाहिए और ऐसा आदेश बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिए।

8. शबाना बानो बनाम इमरान खान (2010) 1 SCC 15– यह वाद दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अन्तर्गत किसी मुस्लिम महिला, जिसकी कि उसके पति से विवाह विच्छेद हो गया, के भरण-पोषण प्राप्त करने के अधिकार पर निर्णीत है।

अपीलार्थी शबानो बानो का विवाह वर्ष 2001 में प्रत्युत्तरदाता के साथ ग्वालियर में सम्पन्न हुआ था। किन्तु शीघ्र ही उनका विवाह विच्छेद हो गया। अन्ततः उसने धारा 125 के अन्तर्गत आवेदन किया जिसे स्वीकार करते हुए न्यायालय ने 2000/- रुपये प्रतिमाह भरण-पोषण भत्ता का भुगतान करने के लिए प्रत्युत्तरदाता को आदेश दिया। उच्च न्यायालय ने भी उक्त आदेश की पुष्टि कर दिया जिसके विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में विशेष अनुमति याचिका प्रस्तुर किया गया।

उच्चतम न्यायालय ने दानी लतीफ और एक अन्य बनाम भारत संघ (2001) 7 SCC 740 में संविधान पीठ के निर्णय और मोहम्मद अहमद खान बनाम शाहबानों बेगम एवं अन्य (1985) 2 SCC 556 के मामले में उच्चतम न्यायालय न्यायालय के निर्णयों का अनुसरण करते हुए सार-संक्षेप में निम्नवत् अभिनिश्चित किया–

''यदि कोई मुस्लिम महिला का विवाह-विच्छेद हो गया है तब वह दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के अन्तर्गत अपने पति से इद्दत अवधि के समाप्त हो जाने के बाद भी तब तक भरण-पोषण का दावा करने का हकदार है जब तक कि वह पुनर्निवाह नहीं कर लेती है''।

9. पंजाब राज्य बनाम प्रेम सागर (2008) 3 क्रि. लॉ. ज. 3533 (सु. को.)–यह वाद मुख्यतः दोषसिद्धि या दोषमुक्ति के प्रश्न पर अभियुक्त को सुने जाने से सम्बन्धित दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 235 के प्रावधानों पर निर्णीत है। इस वाद में उच्चतम न्यायालय ने दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2006 (अधिनियम संख्या 2/2006) के तहत संहिता में जोड़े गए नये अध्याय 21क, धारा 265-क से ठ के प्रावधानों के प्रवर्तन एवं आवश्यकता पर भी निर्णय प्रदान किया है, जो निम्नवत् है :

''दण्डादेश देने की न्यायालय की शक्ति विवेकीय है किन्तु इसका प्रयोग न्यायिकतः किया जाना चाहिए। दण्डादेश दिए जाते समय न्यायालय को निम्न बातें ध्यान में रखना चाहिए–

(i) कि अभियुक्त द्वारा कारित अपराध की प्रकृति कैसी है;

(ii) अभियुक्त की सामाजिक पृष्ठभूमि क्या हैं;

(iii) अभियुक्त की आयु क्या है।

कुछ अपराध ऐसे हैं जो हमारे सामाजिक ताने-बाने से जुड़े हैं। हमें याद रखना चाहिए कि दण्ड प्रक्रिया संहिता में अभिवचनों की सौदेबाजी का सिद्धान्त (सौदा अभिवाक्) लाते समय उक्त सिद्धान्त को ध्यान में रखा जाय।

संहिता की धारा 235 (2), 248 (2), 325, 360 और 361 में दण्डादेश पर सुनवायी के सम्बन्ध में कुछ सिद्धान्त दिए गए हैं, जिनमें यह अधिकथित किया गया है कि दण्डादेश देते समय न्यायालयों को अनेक सुसंगत तथ्यों का अवलोकन करना चाहिए जिनमें से अभियुक्त की सामाजिक पृष्ठभूमि और उसकी आयु भी है।

10. जाहिरा हबीब उल्ला शेख बनाम गुजरात राज्य, (2004) Cr. L. J. 2050 (SC) एवं (2006) Cr. L. J. 1694–गुजरात दंगे से जुड़े 'बेस्ट-बेकरी' मामले के नाम से विख्यात इस मामले में उच्चतम के न्यायालय समक्ष अपराधों के अन्वेषण जांच एवं विचारण, साक्षियों की परीक्षा, (पुलिस एवं मजिस्ट्रेट के द्वारा), अपीलीय न्यायालयों की शक्तियां (धारा 386 एवं 391) तथा मामलों के अन्तरण (धारा 407) पर अनेक प्रश्न उठाये गए, जिन पर न्यायालय ने निम्न महत्वपूर्ण निर्णय दिया है;

(1) विचारण सभी संम्बद्ध व्यक्तियों के लिए निष्पक्ष होनी चाहिए अन्यथा अभियुक्त के साथ अन्याय होगा। सारभूत साक्षियों की सुनवायी न करना स्पष्टतः निष्पक्ष विचारण से इंकार करना है।

राज्य को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि न्यायालय में विचारण के दौरान साक्षी सुरक्षित रहते हुए और वे जिनके विरुद्ध परिसाक्ष्य दे रहे हैं, उनसे भय रहित रहते हुए साक्ष्य दे सकें।

आजकल बाहुबलियों, धनाढ्यों और राजनैतिक शक्ति से सम्पन्न व्यक्तियों के विरुद्ध साक्ष्य देने से साक्षीगण हिचकते हैं तथा अपनी अनिच्छा व्यक्त कते हैं। (Cr. L. J. 2050 SC)

(2) यदि साक्षियों को धमकाया जाता है या उन्हें गलत साक्ष्य देने के लिए विवश किया जाता है तो विचारण ऋजु नहीं कहा जा सकता है। प्रत्येक आपराधिक विचारण में प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है कि उसके साथ ऋजु व्यवहार किया जाय। यदि साक्षीगण धमकी, प्रपीड़न, प्रलोभन, आर्थिक प्रतिफल, राजनीतिक दबाव और संरक्षण तथा सत्य से विचलन के कारण पक्षाद्रोही हो जाते हैं तो विचारण ऋजु नहीं कहा जा सकता है। (2006) Cr. L. J. 1694 (SC)।

(3) संहिता की धारा 161 के अन्तर्गत पुलिस द्वारा साक्षी की परीक्षा के मामले में पुलिस अधिकारी की ओर से उसके समक्ष किए गए अभिकथन को उसी भाषा में और लिपिबद्ध किया जाना उसके लिए बाध्यकर नहीं है। इसी प्रकार लिपिबद्ध किए गए किसी कथन पर हस्ताक्षर करने के लिए कथन कर्त्ता भी बाध्य नहीं है। (2004 Cr L. J. 2050)।

(4) संहिता की धारा 311 के अन्तर्गत शक्ति पूर्णतया न्यायालय के विवेकाधीन है, फिर भी इसका उपयोग न्यायिकत: किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय से अपेक्षा की जाती है कि वह निर्णय के दौरान अनपेक्षित टिप्पणी नहीं करे और अपेक्षित न्यायिक संतुलन तथा शालीनता बनाये रखे। (2004, Cr. L. J. S. C. 2050)।

(5) संहिता की धारा 391 धारा 386 का एक अपवाद है। अपील न्यायालय को इस बात की पूरी छूट है कि अपील का निपटारा करने से पूर्व वह साक्ष्य की मांग कर सके। धारा 391 का उद्देश्य न्याय के उद्देश्यों को पूर्ण करना तथा सत्य का पता लगाना है।

वर्तमान प्रकरण अर्थात् बेस्ट बेकरी का मामला एक ऐसा मामला है जिसके इतिहास में व्यापक आतंक और विप्लव हुआ; मुख्य साक्षियों ने झूठा बयान दिया; विचारण न्यायालय के द्वारा अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया गया; उच्च न्यायालय ने भी अतिरिक्त साक्ष्यों पर विचार नहीं किया और दोषमुक्ति के आदेश को कायम रखा; अन्वेषण मनगढंत था; अभियोजक सिद्धान्तहीन रहा; विचारण धमकाए गए और आतंकित साक्षियों के साक्ष्य पर आधारित रहा।

अत: ऐसी दोषमुक्ति विधि पर आधारित नहीं कहा जा सकता है न ही ऐसे निष्कर्ष को मान्यता प्रदान किया जा सकता है। मामले में यही न्यायपूर्ण होगा कि दोषमुक्ति अपास्त कर दिया जाय और विचारण नये सिरे से राज्य के बाहर किया जाय। तद्नुसार उच्चतम न्यायालय ने आदेश/निर्देश पारित किया। (2004, Cr. L. J. 2050)।

(6) उच्चतम न्यायालय अपील न्यायालय के रूप में संविधान के अनुच्छेद 136 के अन्तर्गत अपनी स्पष्ट शक्तियों का प्रयोग करते हुए स्थान या न्यायालय नियत कर सकता है जहां दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में निरस्त आदेश के मामले का पुनर्विचारण किया जा सकता है। यह बात महत्वहीन है कि मामले का अन्तरण करने के लिए कोई आवेदन दिया गया है अथवा नहीं। मामले का स्थानान्तरण याचिका के मुख्य अनुतोष के एक आनुषांगिक अनुतोष के रूप में आदेशित किया जा सकता है। (2004) Cr. L. J. 2855 SC)।

11. महाराष्ट्र राज्य बनाम प्रफुल बी. देसाई (2003) क्रि. लॉ. ज. 2033 (सु. को.)–यह वाद दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 273 (साक्ष्य का अभियुक्त की उपस्थिति में लिया जाना) पर निर्णीत अपनी तरह का पहला मामला है। इस वाद में न्यायालय ने निम्न अभिमत व्यक्त किया है :

धारा 273 के अन्तर्गत अभियुक्त को उपस्थिति से मुक्ति प्रदान करता है। ऐसी स्थिति में अभियुक्त के अधिवक्ता की उपस्थिति में साक्ष्य अभिलिखित किया जा सकता है। यह धारा आन्वयिक उपस्थिति को उपदर्शित करती है, शारीरिक उपस्तिति को नहीं।

दोनों पक्षकारों के विडियो-कांफ्रेंसिंग के माध्यम से साक्ष्य अभिलिखित किए जा सकते हैं और यदि ऐसा अभिलेखन अभियुक्त या उसके अधिवक्ता की उपस्थिति में किया गया है तो उक्त साक्ष्य को धारा 273 के अन्तर्गत लिया गया साक्ष्य माना जायेगा। ऐसा साक्ष्य स्वयं मजिस्ट्रेट के द्वारा या उसके बोलने पर खुले न्यायालय में लिखा जायेगा। ऐसी प्रक्रिया में धारा 274 और 275 की अपेक्षा भी पूर्ण हो जायेगी। इस पद्धति की एक खामी भी है। यदि साक्षी विडियों कान्फ्रेंसिंग के दौरान न्यायालय की अवहेलना या अवमानना करता है तो उसे दण्डित नहीं किया जा सकता है। अत: जब इस पद्धति को अपनाया जाय तो यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि यदि साक्षी विदेश में है, तब उस देश के साथ प्रत्यर्पण संधि हो।

जब ऐसा साक्षी विदेश में है और न्यायालय अनुभव करता है कि साक्षी की उपस्थिति विलम्ब, व्यय और असुविधा के बिना नहीं प्राप्त की जा सकती है, तब न्यायालय वीडियो कांन्फ्रेंस के माध्यम से साक्ष्य अभिलिखित करने हेतु संहिता की धारा 284 के अन्तर्गत कमीशन जारी कर सकती है।

उच्चतम न्यायालय का महत्वपूर्ण निर्धारण

आन्ध्र प्रदेश राज्य बनाम वी. वी. पांडूरंग राव (2009) 3 Cr. L. J. 2972 (S.C.)–किसी संज्ञेय अपराध से सम्बन्धित टेलीफोन पर दी गयी रहस्यात्मक सूचना प्रथम सूचना रिपोर्ट नहीं मानी जायेगी किन्तु यदि संज्ञेय अपराध का विस्तृत विवरण देते हुए घटनास्थल पर पुलिस को पहुँचने हेतु टेलीफोन पर सूचना दी गयी है, तब वह प्रथम सूचना रिपोर्ट मानी जायेगी।

किरेन्दर सरकार और अन्य बनाम असम राज्य और अन्य (2008)। Cr. L. J. 372 (S.C.)–प्रथम सूचना रिपोर्ट समस्त

घटनाओं का 'इन साइक्लोपीडिया (Encyclopedia) अर्थात् विश्वकोष नहीं है और न ही इसमें घटना का सूक्ष्मतम विस्तार दिया जाना आवश्यक है।

राज्य बनाम एन. एम. टी. ज्वाय इमाकुलेट (2004) Cr. L. J. 2515 (S.C.)–जब धारा 160 के अधीन पुलिस कार्यवाही करती है तब वह किसी अपराध के किसी अभियुक्त व्यक्ति को पुलिस थाने में हाजिरी की अपेक्षा सम्बन्धी सूचना जारी नहीं कर सकता है, यह धारा केवल साक्षियों के हाजिरी के लिए है किन्तु यह संदिग्ध व्यक्तियों पर भी लागू हो सकता है।

हीरा बनाम राजस्थान राज्य (2007) Cr. L. J. 3514 (S.C.)–पहचान परीक्षण परेड दण्ड प्रक्रिया संहिता के धारा 162 के अन्तर्गत अन्वेषण कार्यवाही का अभिन्न अंग है, किन्तु परीक्षण न कराया जाना पहचान की साक्ष्य को अमान्य नहीं बना देगा।

सुरेन्द्र नाथ बनाम राजस्थान राज्य (2006) Cr. L. J. 2897 (S.C.)–पुलिस के द्वारा धारा 173 (2) के अन्तर्गत प्रषित रिपोर्ट, चाहे पक्ष में हो या प्रतिकूल, प्रस्तुत कर दिए जाने के बाद भी न्यायालय आगे अन्वेषण का आदेश है। धारा 178 (8) के अन्तर्गत दे सकती है, किन्तु नये सिरे से अन्वेषण अथवा पुनः अन्वेषण का नहीं (रामचन्द्रन बनाम आर. उदय कुमार अन्य,(d) (2008) Cr L. J. 4309 (S.C.)।

शिवदयाल बनाम उ. प्र. राज्य (2009) 3 Cr. L. J. 3487 (S.C.)–धारा 174 का उद्देश्य केवल यह सुनिश्चित करना है कि कारित मृत्यु आत्महत्या से हुई अथवा मानव वध या दुर्घटना से। इसके अधीन कार्यवाहियों में साक्षियों का बयान दर्ज किया जाना आवश्यक नहीं है।

राजेन्द्र रामचन्द्र कावलेकर बनाम महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य, (2009) 2 Cr. L. J. 1592 (S.C.)–दाण्डिक अपराधों के सम्बन्ध में किसी न्यायालय का क्षेत्राधिकार घटनास्थल के आधार पर निश्चित किया जायेगा न कि इस आधार पर कि परिवाद कहां प्रस्तुत किया गया।

चितरंजन मिर्धा बनाम दुलाल घोष और अन्य (2009) 3 Cr. L. J. 343–धारा 173 (2) के अधीन रिपोर्ट प्राप्त होने पर मजिस्ट्रेट धारा 190 (1) (ख) के अन्तर्गत अपराध का संज्ञान लेने के लिए हकदार है, भले ही पुलिस रिपोर्ट में कहा गया है कि अभियुक्त के विरुद्ध कोई मामला नहीं बनता है। अपराध का निर्धारण आरोप विरचन के समय होता है।

पूनम चंद जैन बनाम फजरु (2005) Cr. L. J. 100 (S.C.)–प्रथम परिवाद बिना कारण बताये निरस्त हो जाने पर पर्याप्त आधार होने पर उन्हीं तथ्यों पर द्वितीय परिवाद प्रस्तुत किया जा सकता है और मजिस्ट्रेट धारा 200 के अन्तर्गत कार्यवाही कर सकता है।

माहे असलम बनाम उ. प्र. राज्य (2005) Cr. L. J. 4554 (इला.)–धारा 233 के अधीन न्यायालय अभियुक्त को उसके द्वारा अफनी प्रतिरक्षा में परीक्षा के लिए बुलाये जाने वाले साक्षियों के व्यय का भुगतान करने के लिए निर्देश/आदेश जारी कर सकती है।

मध्य प्रदेश राज्य बनाम सलीम (2005) Cr. L. J. 3435 (S.C.)–अपराधी को दिया गया दण्ड अपराधी के विरुद्ध समाज की न्याय की पुकार का प्रत्युत्तर होना चाहिए। अपराधी को हल्का दण्ड देने का उदार मनोभाव प्रत्युत्पादक होगा।

मध्यप्रदेश राज्य बनाम मुन्ना चौबे (2005) Cr. L. J. 913 (S.C.)–विधि का उद्देश्य है समाज की सुरक्षा करना और आपराधिक वर्चस्व को समाप्त करना जिसे समुचित दण्ड अधिरोपित करके प्राप्त किया जा सकता है। (पंजाब राज्य बनाम राकेश कुमार (2009) Cr. L. J. 396 (S.C.)।

टी. मोज बनाम सब इंस्पेक्टर ऑफ पुलिस अर्नाकुलम (2006) Cr. L. J. 1922–कुछ सहअपराधियों की दोषमुक्ति अपने आप में अन्य अभियुक्तों के मामले में विचारण पर प्रतिबंध लगाने का उचित कारण नहीं है।

हरियाणा राज्य बनाम भूप सिंह (2009) Cr. L. J. 434 (S.C.)–न्यायालय स्वयं दोषसिद्ध व्यक्तियों को रिहा कर देने आदेश सरकार को नहीं दे सकती है। यह सरकार को केवल निर्देश दे सकती है कि दोषसिद्ध व्यक्तियों को रिहा किए जाने के प्रश्न पर विचार करे। वस्तुतः यह सरकार का नीतिगत मामला है, नीति वही लागू होगा जो दोषसिद्धि के समय अस्तित्व में था न कि पश्चात्वर्ती नीति।

वामन नारायण मिश्रा बनाम राजस्थान राज्य (2009) 2 Cr. L. J. 1311 (S.C.)–धारा 438 के अन्तर्गत ऐसे अस्पष्ट आदेश के आधार पर अग्रिम जमानत का निर्देश नहीं दिया जाना चाहिए, जैसे कि 'जिस किसी' पर 'जैसे अपराध के लिए गिरफ्तार किया जाय तो आवेदक को जमानत पर छोड़ दिया जाय। जब धारा 439 के अधीन जमानत दिया जाय तब आवेदक का अभिरक्षा में रहना आवश्यक है।

सुरेश नंदा बनाम सी.बी.आई. (2002) Cr. L. J. 1599 (S.C.)–धारा 102 के अन्तर्गत सम्पत्ति को जब्त किया जा सकता है किन्तु 'सम्पत्ति' के अन्तर्गत पासपोर्ट को जब्त नहीं किया जा सकता है। ऐसा केवल पासपोर्ट अधिनियम के अन्तर्गत ही किया जा सकता है।